# शारीरिक शिक्षा विषयों का सरल अध्ययन

लेखक

डा० एल० डब्लू० लायल

एम. ए., बी. डी., डी. टी. एच., डी. पी. एड., बी. एम. एस.

प्रथम संस्करण

प्रकाशक

शकुन्तला प्रकाशन

बाईन, वार्न हाल, इनायत बाग,

लखनऊ

प्रकाशक
शकुन्तला लायल
नार्न हाल, इनायत बाग,
लखनऊ।



प्रथम संस्करण, नवम्बर, १९६४

मूल्य १२ रुपये ५० पैसे

मुद्रक :—
बिकास प्रिंटिंग प्रेस, विद्यांत रोड, लखनऊ।

# दो शब्द

शारीरिक शिक्षा विद्यालय तथा एल० टी० प्रशिक्षण विद्यालय में तेइस वर्ष से सेवा करते हुए यह अनुभव हुआ कि हिन्दी भाषा में शारीरिक शिक्षा विषयों पर पुस्तकों का अभाव रहा है तथा छात्रों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अधिकांश पुस्तकें विदेशियों द्वारा तथा विदेशी भाषा में हैं।

अभी तक कोई ऐसी पुस्तक नहीं है जो शारीरिक शिक्षा अध्यापक की सहायता उसके दैनिक कार्यों में पर्याप्त रूप से कर सके। विशेषकर खेलों और ऐथलेटिक्स की कोचिंग पर उन्हें हिन्दी भाषा में सहायता नहीं के बराबर है।

इन अभावों को दृष्टि में रखते हुए लेखक ने इस "शारीरिक शिक्षा विषयों के सरल अध्ययन" का प्रयास किया है और आशा है कि यह पुस्तक शारीरिक शिक्षा डिप्लोमा, सर्टीफिकेट के विद्यार्थियों, प्रशिक्षण विद्यालयों के छात्रों, शारीरिक शिक्षा अध्यापकों और जिन्हें शारीरिक शिक्षा में रुचि है और इसके विषयों को एक स्थान में सरल रूप में एकत्रित चाहते हैं; अत्यन्त ही उपयुक्त सिद्ध होगी। पुस्तकालयों के लिए भी यह एक बहुमूल्य पुस्तक होगी। इस अर्थ में यह शारीरिक शिक्षा की पुस्तक राष्ट्रभाषा में अपने प्रकार की पहली पुस्तक है।

शारीरिक शिक्षा की प्रगति वैसी नहीं हुई है जैसी होनी चाहिए थी। शारीरिक शिक्षा संसार में हाकी को छोड़ कर हमारा स्थान नहीं के बराबर है। हमारा स्वास्थ्य तथा शारीरिक शक्ति का विकास अत्यन्त ही निम्न स्तर का है। कारण अनेक हैं। एक मुख्य कारण शारीरिक शिक्षा विषयों की आम अज्ञानता भी है।

राष्ट्रीय गौरव को उच्च तथा स्थित रखने के लिए शारीरिक शिक्षा अनिवार्य है।

यह पुस्तक सामान्य तथा विशेष शारीरिक शिक्षा ज्ञान के लिये अत्यन्त ही लाभकर सिद्ध होगी।

पुस्तक में कुछ त्रुटियाँ हो गयी हैं जो दूसरे संस्करण में ठीक कर दी जायेंगी। इसके लिए लेखक क्षमा प्रार्थी है।

पाठकों से अनुरोध है कि विशेष त्रुटियों की ओर तथा उन सुझाओं को जिनके द्वारा पुस्तक को उत्तम तथा उपयोगी बनाया जा सके, लेखक का ध्यान आकर्षित करेंगे जिनके लिये लेखक सदैव आभारी रहेगा।

**एल० डब्लू० लायल**

नवम्बर २, १९६४ — कालेज आफ फिजीकल एज्यूकेशन
लखनऊ

---

# विषय सूची

# शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त

## सिद्धान्त तथा दर्शन

सिद्धान्त ऐसे साधारण विचार हैं जो वैज्ञानिक तथ्यों पर या दार्शनिक निर्णयों पर निर्धारित हैं तथा जो व्यक्ति के अभ्यान्तरिक दृष्टि या अनुभव के द्वारा प्राप्त होते हैं।

शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त उनके सहायक गुणों के आधार पर ही स्थिर करना चाहिये जिससे शारीरिक शिक्षा के स्पष्ट उद्देश्यों का ज्ञान हो तथा उन प्रणालियों को चुन लिया जाये जिनके द्वारा सीखने में दक्षता आये तथा कम समय लगे।

कुछ आधारित तथ्य जिन पर सिद्धान्त बनाये जा सकते हैं वे निम्न लिखित अध्ययन से प्राप्त किये जा सकते हैं:—

मनुष्य का जीव वैज्ञानिक आधार, मनुष्य की विशेषता जिसके द्वारा उसकी शिक्षा सम्भव होती है, शिक्षा की प्रकृति, शिक्षा कैसे होती है समाजका चरित्र, चरित्र निर्माण कैसे होता है तथा वे प्रणालियाँ जो व्यक्ति विकास में सम्मिलत हैं।

उपरोक्त अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि सिद्धान्त दो मुख्य स्त्रोतों से प्राप्त किये जा सकते हैं:–

(१) वैज्ञानिक तथ्यों से प्राप्त सिद्धान्त तथा

(२) दर्शन शास्त्र पर आधारित सिद्धान्त।

## वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित सिद्धान्त

वैज्ञानिक रीति से सिद्धान्तों का निर्माण आरम्भ में ही प्रमाणित करके नहीं स्थिर किया जाता। यह प्रायः असम्भव होगा। वास्तविकता यह है कि विज्ञान सत्य की खोज में रहता है। सत्य

तो स्वयं सिद्ध है। इस लिये सत्य का अविष्कार नहीं होता किन्तु सत्य का अविष्कार किया जाता है। कितने सत्य ऐसे भी हैं जिनको हम अभी तक नहीं जानते। कितने सत्य हैं जिनके विषय में हम कुछ ही जानते हैं जैसे अणु की सत्यता अनन्त काल से थी किन्तु उसका अविष्कार अभी किया गया है। कभी कभी हम कितनी चीजों को सत्य मानते हैं और उनके आधार पर काम भी करते हैं जब तक उसे असत्य न प्रमाणित कर दिया जाये। जैसे प्राचीन काल में यह विश्वास था कि पृथ्वी स्थिर है और सूरज घूमता है और अब हम यह जानते हैं कि सत्य बिलकुल इसके विपरीत है वैज्ञानिकों के दृष्टि कोण से तथ्यों को सत्य के बहुत निकट ही समझा जाता है जब तक वे असत्य प्रमाणित न कर दिये जायें। ये सिद्धान्त अपनी अन्तिम स्थिति तक परीक्षात्मक अवस्था में रहते हैं जब तक उन्हें सत्य या असत्य न बताया जाय। इस विचार से सत्यता की प्रकृति अस्थायी समझी जाती है तो भी अनेक सत्य हैं जो ऐसे वैज्ञानिक स्त्रोत तथा आधार से प्राप्त किये गये हैं जिनके ऊपर सिद्धान्त आधारित हो सकते हैं और वे सत्य माने जाते हैं, जैसे शरीर रचना शास्त्र, शरीर क्रिया शास्त्र, मनोविज्ञान, जीव विज्ञान, मानव शास्त्र आदि। इन विषयों में प्रायः अन्तिम शव्द कहा जा चुका है और यदि सत्य में कुछ अपूर्णता है तो प्रायः नहीं के बराबर और स्थिति यह है कि प्रमाण न दे सकने पर भी सत्य की वास्तविकता का ज्ञान है।

वैज्ञानिक अध्ययन विधि के द्वारा जिसमे प्रदत्त इकट्ठे किये जाते हैं, वर्गीकरण किये जाते, कल्पना की सृष्टि निरीक्षण और

प्रयोग और अन्त में नियम को स्थिर करना होता है, इसके द्वारा सिद्धान्त बनाये जा सकते हैं, जैसे डार्रविन का प्राकृतिक चुनाव न्यूटन का आकर्षण शक्ति आदि । कभी कभी सिद्धान्त इतने स्पष्ट होते हैं कि वे अटल प्रतीत होते हैं और प्राकृतिक नियमों के द्वारा मान्यता प्राप्त करते हैं ।

शारीरिक शिक्षा के अनेक सिद्धान्त वैज्ञानिक तथ्यों पर निर्भर हैं ।

भिन्न भिन्न विज्ञान अनेक प्रकार से सिद्धान्त सिद्ध करने में सहायक होते हैं जैसे जीव विज्ञान से आन्तरिक अंगों के विकास का ज्ञान तथा सिद्धान्त, शरीर रचना शास्त्र से अस्थि पंजर की बनावट तथा उस पर आधारित सिद्धान्त, शरीर क्रिया शास्त्र से श्वास की उपयोगिता तथा आक्सिजन की आवश्यकता, मनोविज्ञान से सीखने के नियम, बालकों की विशेषता आदि प्राप्त होता है, पिण्ड गर्भ शास्त्र से बढ़ान तथा विकास का ज्ञान । इन्हीं शास्त्रों के आधार पर लड़के तथा लड़कियों की प्रकृति तथा बनावट के अनुसार कार्यों का कराना, एथेलेटिक में तथा जिमनास्टिक में सेन्टर आफ ग्राविटि (**centre of gravity**) का सही प्रयोग आदि विज्ञान के ज्ञान पर ही आधारित है इस ओर से प्राप्त सिद्धान्तों का आधार वैज्ञानिक है ।

## दर्शन शास्त्र पर आधारित सिद्धान्त

दर्शन शास्त्र में स्थूल पदार्थ का अध्ययन नहीं होता बल्कि सूक्ष्म पदार्थ का अध्ययन होता है । दर्शन शास्त्र यह बताता है कि कोई चीज क्यों होनी चाहिये तथा क्या होना चाहिये, कैसे होना चाहिये

यह विज्ञान का विषय है। अतएव दर्शन शास्त्र पर आधारित सिद्धान्त विज्ञान पर नहीं किन्तु अभ्यांतरिक दृष्टि, समय तथा अनुभव पर होता है। दर्शन शास्त्र विशेष कर समाज पर तथा उनके अनुभव पर निर्भर होता है।

जब समाजिक जीवन के प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त अपने ध्येय दर्शाता है तो इस का आधार मनुष्य का मान, बराबर अवसर का प्राप्त होना, व्यक्तिगत मनुष्य का मूल्य, मानव विभिन्नता तथा समानता आदि तथ्यों पर होता है राष्ट्रीय जीवन में यह एक महत्व पूर्ण विषय है और यह सिद्धान्त राष्ट्र के लिये एक श्रेष्ठ सिद्धान्त होता है।

शारीरिक शिक्षा में अनेक सिद्धान्त दर्शन शास्त्र से लिये गये हैं। शिक्षा का ध्येय, आदर्श, स्तर तथा मूल्य दर्शन शास्त्र से ही निर्धारित होते हैं। बालक की स्वतंत्रताको मान्यता देते हुये कार्य क्रम का सिद्धान्त बालक केन्द्रित होता है पहले कार्यक्रम पाठ्य केन्द्रित हुआ करता था।

इसी स्वतन्त्रता के दर्शन के कारण हम यह जानते हैं कि प्रत्येक बालक को उपयुक्त शिक्षा का अवसर, विकास का अवसर तथा उपयुक्त शारीरिक शिक्षा प्रदान करनी चाहिये। प्रत्येक बालक की व्यक्तिगत महत्ता मानी जाती है वह केवल एक इकाई नहीं समझा जाता। प्रत्येक विषय में बालक के लाभ पर न कि संस्था के लाभ पर ध्यान दिया जाता है। अनुशासन में आत्म अनुशासन पर अधिक जोर दिया जाता है न कि अधिकार के औपचारिक अनुशासन पर। बालकों की योग्यता के अनुसार उनको अनेक कार्यों में नियोजन तथा संचालन की स्वतन्त्रता दी जाती है।

शिक्षा विषयों का अध्ययन बिषय के लिये नहीं किन्तु उनमें समाजिक लाभ प्राप्ति का ध्येय रहता है। शिक्षित वही कहा जाता है जो समाज का योग्य सदस्य है यह सब दर्शन शास्त्र के आधार पर ही होता है।

समाज परिवर्तन शील है। इस लिये समाज का दर्शन भी परिवर्तन शील है अतएव वे सिद्धान्त जो दर्शन शास्त्र पर आधारित हैं वे भी परिवर्तन शील हैं। इस परिवर्तन के कारण शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त जो इन आधारों पर निर्भर हैं अवश्य प्रभावित होगें। समाज की प्रगति के साथ शारीरिक शिक्षा में परिवर्तन अवश्य होता है।

वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित सिद्धान्त जो दृढ़ हैं वे परिवर्तित नहीं होते, जैसे चलने में हाथ पैर का मेल। भिन्न भिन्न विज्ञानों पर आधारित सिद्धान्त जो ,प्रायः पूर्ण विज्ञान कहे जाते हैं उन में परिवर्तन होना असम्भव है।

सिद्धान्त सत्य होते हैं जो सभी विषय में आधार का काम देते हैं। इन्हीं की कसौटी पर आवश्यक तथा अनावश्यक, सत्य तथा असत्य और उचित तथा अनुचित का ज्ञान होगा।

शिक्षकों के प्रशिक्षण में सिद्धान्तों का उपयोग व्यवसाय के दावे के कारण उचित समझा जाता है। व्यवसाय तथा व्यापार में अन्तर है। व्यवसाय के सिद्धान्त दर्शन तथा विज्ञान पर निर्भर होते हैं, किन्तु व्यापार में इस की आवश्यकता नहीं होती इस में केवल नियम आदेश तथा प्रणालियाँ होती है। व्यापार नें नियम विज्ञान तथा दर्शन के आधार पर हो भी सकते हैं या नहीं

भी हो सकते हैं किन्तु इस का ज्ञान व्यापारी को आवश्यक नही किन्तु व्यवसायी की उसके सिद्धान्त के ज्ञान की आवश्यकता है क्योकि व्यवसाय की विशेषता के अनुसार उसमें प्रणालियों को निर्धारित करने में प्राकृतिक वैज्ञानिक तथा दार्शनिक तथ्यों पर निर्भर होना पड़ता है ।

यदि शिक्षा में किसी विषय या कौशल को सिखाने ही पर ध्यान दिया जाये तो व्यवसायिक संस्था व्यापारी हो जायगी । शिक्षा में तथा शारीरिक शिक्षा में कार्य क्रम के लिये निर्णय, व्यक्तिगत विभिन्नता का ध्यान दूसरे व्यक्तियों के प्रस्तावों को स्वीकार या अस्वीकार करने, शिक्षा देने, तथा सीखने की विस्तृत समस्याओं का हल, ध्येय का निर्णय, बालक की विशेषता के अनुसार पाठ्य क्रम को निर्धारित करने आदि पर ध्यान देना अनिवार्य है । इन समस्याओं को समझने तथा सामना करने के लिये एक विस्तृत तैय्यारी की आवश्यकता होती है ऐसी तैय्यारी की आवश्यकता किसी विषय के कौशल के केवल सिखाने में नहीं होती ।

किसी विचार या विश्वास के मतभेद में सिद्धान्तों की सहायता से सही निर्णय किया जा सकता हैं ।

एक महत्वपूर्ण विषय यह है कि कभी कभी असत्य पर निर्भर विश्वास उसी तरह मान्यता प्राप्त करता है जिस तरह सत्य पर निर्भर सिद्धान्त । सिद्धान्त शब्द का अर्थ सदैव सत्यता से है। इस सत्य की कसौटी पर तौले हुये निष्कर्ष को अपनाने से मतभेद होना सम्भव नहीं ।

शारीरिक शिक्षा में उसके भिन्न भिन्न अंगों पर चाहे वह सामाजिक हो, या व्यक्तिगत हो, व्यायाम सम्बन्धी हो, या शारीरिक क्रिया परिणाम सम्बन्धी हो, जो भी उसकी महत्ता हम समझें किन्तु इसके सम्बन्ध में जो दूसरी आवश्यकतायें तथा अवसर प्राप्त होतें हैं इनकी महत्ता को हम भूल नहीं सकते। इस से सम्बन्धित मूल्य का सिद्धान्त शारीरिक शिक्षा में विशेष महत्व रखता है।

राष्ट्र को शक्तिशाली युवकों की आवश्यकता है। परिवर्तन शील संसार को विशेष शक्ति की आवश्यकता है। अणु युग के कारण एक विशेष प्रकार के जीवन की आवश्यकता हो गई है। शिल्पकारी तथा उद्योग की उन्नति तथा भिन्न भिन्न अविष्कारों के कारण जीवन तेज गति से चल रहा है। ध्वनि से तेज वायुयान हैं। शीघ्र वाही यातायात, मानव समूह की भीड़, पारस्परिक प्रतियोगिता आदि के कारण कई एक विशेष गुणों के सिखाने की आवश्यकता हो गयी है, जैसे शरीर के भिन्न भिन्न अंगों का श्रेष्ठ सहयोग, जो कठिन से कठिन तथा बारीक काम को सरलता से कम समय में कर सके, उचित निर्णय कर सकना, साहस तथा तत्परता के साथ प्रतिक्रिया का होना, दूसरों के अधिकार तथा आवश्यकता को ध्यान में रखना, अवकाश का सदुपयोग तथा उचित मनोरंजन, अपराध वृत्ति का अवरोध, संवेगात्मक संतुलन तथा संतोष आदित्त समस्यायें हमारे सामने प्रस्तुत होती हैं जिनका सही उत्तर देना है। यदि हम इन समस्याओं की ओर ध्यान न दें और इन की अनिवार्य आवश्यकताओं को न समझे तो हम

मानव चेष्टा को निरर्थक कर देते हैं। इस परिवर्तन शील संसार मे परिर्वतित समाज की आवश्यकताओं को भुला देने का अर्थ है समय से पीछे होना, शारीरिक शिक्षा को समाज के साथ साथ चलना है और उसकी आवश्यकताओं का पग पग पर उचित हल करना है।

भारतवर्ष की शारीरिक शिक्षा किसी विदेशी शारीरिक शिक्षा के आधार पर नही हो सकती। हमारी अपनी समस्यायें हैं तथा हमारी आवश्यकता दूसरों से भिन्न हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि बहुत सी वातों में समानता भी हो सकती है। इस लिये शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त ऐसे होने चाहिये जिस में हमारे परिर्वतन शील संसार के तथ्य उस भविष्य के आइने में जिसे हम रूप देना चाहते हैं प्रतिबिम्बित हो।

हमारी समस्यायें भिन्न भिन्न हैं और उनकी महत्ता भी भिन्न भिन्न है। कुछ समस्यायें, जैसे तेज गति वाही यातायात, शिल्प कारी में विशेषज्ञता, नियमों के प्रति साधारण असावधानी, जन समूह की नगरों में भीड़, उचित अवसर का प्रत्येक के लिये उपलब्ध होना, व्यापारिक मनोरजन, अवकाश की समस्यायें आदि तात्कालिक अध्ययन तथा ध्यान आकर्षित करती हैं किन्तु देर तक खेलना दूर फेकना आदि कम महत्व रखती है और उनकी तात्कालिक आवश्यकता नही हैं।

वे वैज्ञानिक विशेष विद्या सम्बन्धी तथ्य तथा दार्शनिक आदेश जो शारीरिक शिक्षा के प्रयोग को उस के अनेक रूप में धनी, उचित तथा पूर्ण ठहराते हैं उन्हें कभी भी तुच्छ समझा नहीं जा

सकता । वे महत्वपूर्ण हैं ।

कितनी ही महत्वपूर्ण समस्याओं के हल की आवश्यकता है । शिक्षा में उद्देश्य माध्यम से कहीं महत्वपूर्ण है । उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये माध्यम का प्रयोग करनाहै। समाज के आदेशानुसार मानव चेष्टा को सर्वश्रेष्ठ मानना होगा । इस उद्देश्यकी पूर्ति के लिये माध्यम उपलब्ध करना होगा ।

उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये सिद्धान्त निर्धारित हैं । यदि सिद्धान्त सत्य हैं तो उन्हे प्रत्येक अवस्था में उचित स्थान देना चाहिये । सिद्ध सिद्धान्त में परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन करना भूल होगी ।

शारीरिक शिक्षा में सिद्धान्त को क्रियात्मक रुप देना आवश्यक है और प्रत्येक अवस्था में उसी के आधार पर चलना अनिवार्य है।

## शारीरिक शिक्षा के कुछ सिद्धान्त

शरीर क्रिया तथा शरीर रचना शास्त्र पर आधारित सिद्धान्तः--

(१) शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में बड़ी माँस पेशियों के प्रयोग के लिये पर्याप्त क्षेत्र तथा अवसर प्राप्त होना चाहिये।

(२) बालक के बढ़ाव तथा विकास सम्बन्धी तथ्यों के अनुसार कार्य क्रम का निर्माण होना चाहिये ।

(३) व्यक्तिगत असमानता तथा योग्यता का ध्यान रखते हुये विभिन्न प्रकार की क्रियाओं का चुनाव करना चाहिये ।

(४) अन्दर के कार्यों (Indoor Activities)की अपेक्षा बाहरके कार्यों(OutdoorActivities) को प्रोत्साहित करना चाहिये ।

(५) उन कार्यों का जिस से संवेग के द्वारा आन्तरिक रसों

का प्रवाह होता है उनका प्रयोग होना आवश्यक है ।

(६) उन कार्यों को जिनसे माँस पेशियों का विरोधी स्वभाव भंग होता है, कार्य क्रम में सम्मिलित नहीं करना चाहिये ।

(७) दौड़ने से पूर्व झुकी हुई अवस्था लेना चाहिये ।

(८) लडके तथा लडकियों का कार्य क्रम भिन्न होना चाहिये ।

(९) दौड़ने से पूर्व भोजन तथा पानी खाना पीना नही चाहिये ।

(१०) चलने में पांव सीधा रखना चाहिये ।

## मनोविज्ञान पर आधारित सिद्धान्त

(१) शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में प्राकृतिक खेल की क्रियायें बहुतायत से होनी चाहिये ।

(२) क्रियायें मनोवैज्ञानिक आयु की विशेषताओं तथा शरीर क्रिया शास्त्र के नियम के अनुसार चुनना चाहिये ।

(३) व्यक्तिगत विभिन्नता का ध्यान रखना चाहिये ।

(४) सीखने के नियमों के अनुसार सिखाना चाहिये ।

(५) क्रियायें जो संवेग तथा स्थायीभाव में सहायक हों उन्हें करना चाहिए ।

(६) क्रियाओं का चुनाव ऐसा हो जिनमें प्रगति की सम्भावना हो ।

(७) उपयुक्त अभ्यास तथा पुनरावृत्ति के लिए पर्याप्त अवसर प्राप्त होना चाहिये ।

## सामाजिक आधार पर निर्धारित सिद्धान्त

(१) कार्य क्रम में ऐसी क्रियायें हो जो अवकाश के समय प्रयोग में आ सकें ।

(२) क्रियाओं का चुनाव उनके प्रजातान्त्रिक नागरिकता के प्रशिक्षण के सम्भावित देने के अनुसार होना चाहिये ।

(३) समाज की आवश्यकताओं तथा आदर्श के अनुसार कार्यक्रम होना चाहिये ।

(४) चरित्र निर्माण में सहायक क्रियाओं का चुनाव आवश्यक है ।

(५) वे क्रियायें कार्य क्रम में होनी आवश्यक है जो वर्तमान समाज को प्रतिविम्बित करती हैं तथा भविष्य के रूप का अनुमान करती हैं ।

(६) कार्य क्रम के द्वारा जीवन में अनुशासन तथा नियन्त्रण की शिक्षा हो ।

(७) शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम, देश की आर्थिक स्थिति, सामाजिक जीवन, सभ्यता तथा राजनीतिक व्यवस्था पर आधारित होना चाहिये ।

## स्वास्थ्य के आधार पर निर्धारित सिद्धान्त

(१) कपड़े तथा शरीर साफ़ और स्वच्छ होना चाहिये ।

(२) खेल में भाग लेने के लिये जिस यूनीफार्म का प्रयोग किया जाय वह धुली हुई हो या धूप में सुखाई गई हों जिस से किसी प्रकार के संक्रामक रोग लगने का भय न हो ।

(३) वायु, प्रकाश तथा शुद्ध जल का प्रबन्ध ।

(४) दैनिक कार्य जैसे स्नान, भोजन, शौच आदि, निद्रा इत्यादि समय पर होना चाहिये ।

(५) संतुलित भोजन का प्रयोग।

(६) मादक द्रव्यों में प्रयोग से वंचित रहना।

—०—

(२)

# सामान्य शिक्षा में शारीरिक शिक्षा का स्थान

शारीरिक शिक्षा साधारण शिक्षा के अनुकूल है। और उस प्रणाली का अंग है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति की योग्यताओं को नियमानुसार उचित रीति से विकास के लिये वातावरण, सुविधायें तथा सुझाव उपलब्ध किये जाते हैं। यह उसका एक भाग है जिससे व्यक्ति सर्वश्रेष्ठ जीवन, उच्च सेवा तथा परिपूर्णता का जीवन व्यतीत करने के सुयोग्य हो सके।

यह मानव शरीर के गति कौशल को विकास करता है। नाड़ी पेशीय निपुणता तथा आन्तरिक अंगों की शक्ति को उत्पन्न तथा सुरक्षित रखने की कला तथा विज्ञान है जो इस प्रकार कार्य करता है जिससे न केवल शारीरिक स्वास्थ्य तथा संतोष ही प्राप्त हो बल्कि उचित मानसिक भाव तथा स्वस्थ संवेगात्मक जीवन प्राप्त हो सके। उचित रूप से नियंत्रण तथा आदेश के द्वारा जीवन के चार मुख्य मूल्य, स्वास्थ्य, प्रसन्नता, निपुणता तथा चरित्र प्राप्त होते हैं जो साधारण शिक्षा के भी उद्देश्य हैं।

सामान्य शिक्षा के सात मुख्य सिद्धान्त हैं :–

स्वास्थ्य।

आधारभूत वस्तुओं का विकास।

समाज तथा परिवार का योग्य सदस्य बनाना।

उद्यम या धन्धे की तैयारी करना।

उंच्च नागरिकता की तैयारी करना ।

अवकाश का सदुपयोग करने की शिक्षा तथा तैय्यारीं ।

चरित्र का निर्माण ।

यह स्पष्ट है कि शारीरिक शिक्षा साधारण शिक्षा से घनिष्ठ अनुकूलता दिखलाती है और साथ ही शारीरिक स्वास्थ्य, शक्ति तथा गतिवाही कौशल के उद्देश्य प्राचीन विचारों की तुलना में कहीं अधिक विस्तृत रूप में प्रकाशित करती है और उन्हें वर्तमान ऊंचे शिक्षा विचार धाराओं से परिपूर्ण करती है। यही नहीं इससे महत्वपूर्ण बात यह है कि शारीरिक शिक्षा सामान्य शिक्षा के ध्येय तथा उद्देश्य को अपनाती है और उसकी पूर्ति की पूर्ण चेष्टा करती है ।

दूसरे शिक्षा साधारण शिक्षा के ध्येय तथा उद्देश्य को निर्धारित करने में सहयोग देती हैऔर उनके सहयोग के बिना साधारण-शिक्षा के ध्येय तथा उद्देश्य अपूर्ण रह जाते हैं। शारीरिक शिक्षा भी इस कार्य में सहयोग देती है। यहां तक कि शिक्षा संस्था का उद्देश्य, कार्यक्रम तथा संगठन एक प्रकार से शारीरिक शिक्षा का उत्तरदायित्व हो जाता है और यह दूसरी शिक्षा के विशेष विभागों की तरह सामान्य शिक्षा के ध्येय तथा उद्देश्य, कार्यक्रम, संगठन तथा संचालन के आदर्श को निर्धारित करने में सहायक ही नहीं होता है बल्कि महत्वपूर्ण आदेश देता है ।

समाज अपनी आवश्यकताओं के पूर्ति के लिए शिक्षा संस्थायें स्थापित करता है। समाज की बदलती हुई दशा उस की संस्थाओं में प्रतिबिम्बित होती है। यह शिक्षा संस्थाओं का उत्तरदायित्व हैं कि समाज की मान्यता दी हुई आवश्यकताओं और आदर्श को

सर्वे प्रथम स्थान दें इन आवश्यकताओं और आदर्श में मनुष्य का स्वास्थ्य तथा शारीरिक शिक्षा विकास सर्व प्रथम स्थान रखता है क्योंकि इस की अनुपस्थिति में जीवन की प्रत्येक चीज अधूरी रह जाती है। यह बिलकुल स्पष्ट है कि किसी दिये हुये समय में समाज का रूप जो भी हो या समाज में जो भी परिवर्तन होते जायें सभी स्थिति में सम्पूर्ण मानव समाज का स्वास्थ्य एक विशेष महत्व रखता है और राष्ट्र के दृष्टिकोण से एक बहुमूल्य राष्ट्रीय धन है। वह राष्ट्र जो अस्वस्थ है उन्नति नहीं कर सकता, गौरव प्राप्त नहीं कर सकता तथा विश्व के राष्ट्रों में अपना उचित स्थान प्राप्त नहीं कर सकता। इस का अर्थ यह है कि शारीरिक शिक्षा के गुण तथा कर्त्तव्य शब्दों में वर्णित नहीं किये जा सकते इस की महत्ता स्वर्णाक्षरों में होनी चाहिये। यहाँ स्पष्ट है कि शारीरिक शिक्षा प्रत्येक के लिये विशेषतया बालक तथा युवकों के लिये एक अनिवार्य आवश्यकता है और किसी भी समाज के लिये उसके मनोरंजन, दिलबहलाव, स्वास्थ्य, प्रसन्नता तथा अच्छी नागरिकता के विषय से सम्बन्धित हैं।

ऐसे महत्वपूर्ण विषय का उत्तरदायित्व भी महत्वपूर्ण है अतएव इन विचारों को ध्यान में रखते हुये यह पूर्ण रूप से कहा जा सकता है कि यह शैक्षणिक नेतृत्व का अनिवार्य कर्त्तव्य है कि वे अच्छी रीति से उन उपायों का उपयोग करें जिसके द्वारा युवकों के नैसर्गिक बढ़ाव तथा विकास के आदेश तथा उन्नति सुचारु रूप से हो सके।

यदि हम इस ओर ध्यान नहीं देते तो हमारा पतन अवश्य

होगा। इस पतन का सर्व प्रथम प्रभाव बालकों पर होगा। बालक ऐसे छोटे जीव का विध्वंस करना सरल है, किन्तु उसकी वास्तविक उन्नति तथा प्रगति एक कठिन कर्त्तव्य है और यह शिक्षा संस्थाओं का कर्त्तव्य है कि वे बालक के अनमोल जन्म जात गुणों को धूल में मिलने से बचायें, उस के जन्मजात कौशल की शक्ति, ताकत, सहन शक्ति का विकास करें तथा आन्तरिक गुणों के साथ वाह्य जीवन के स्वास्थकर रुचियों को उभारें और उन की पूर्ति के लिये उचित साधन तथा सामग्री उपलब्ध करें।

बालक का अधिकतर समय शिक्षा संस्थाओं में व्यतीत होता है। दैनिक जीवन के अधिक घन्टे अध्ययन सम्बन्धी वातावरण में तथा जीवन का एक बड़ा महत्वपूर्ण भाग शिक्षा की संस्थाओं में व्यतीत होता है। शिक्षा संस्थाओं से बाहर निकल कर वह वातावरण के अनेक प्रभावों के सम्पर्क में आता है, परिवार में जा कर वह सामाजिक वंशानुक्रम से प्रभावित होता है और वंशानुक्रम के गुण उस में वर्तमान रहते ही हैं। ये सब मिल कर बालक के ऊपर कहीं अधिक प्रभाव डालती हैं और कभी कभी शिक्षा संस्था के सुन्दर प्रभाव को नष्ट कर देती हैं।

यह होते हुये भी युवकों के दोष के लिये शिक्षा संस्थायें ही दोषी ठहराई जाती हैं। दूसरे प्रभावों की ओर विचार नहीं किया जाता। यह मान लिया जाता है कि बालक के सही विकास का उत्तर-दायित्व शिक्षा संस्थाओं का ही है। जब युवकों का डील डौल स्तर नीचा हो, उनकी गति शोभायमान न हों, खेल न सकते हों, अस्वस्थ हों, स्पोर्टस मैन की भावना न हो, चरित्र तथा आचार विचार में त्रुटि हो तो जनता शिक्षा संस्थाओं के कार्य क्रम तथा आदर्श की

ओर देखती है। जब युवकों के मानसिक तथा शारीरिक अस्वस्थता की बुरी आदतें प्रकट होती है तब भी समाज इन संस्थाओं की ओर ही देखता है। जब युवक समाज की मान्यता की ओर ध्यान न देते हुए समाज में नियमानुसार कार्य नहीं करते तब भी स्कूल की ही कड़ी आलोचना होती है। इन सब परिस्थितियों में समाज प्रत्येक दूसरे प्रभावों को भूल जाता है किन्तु बालक से सम्बन्धित शिक्षा संस्थायें सदैव सामने आती हैं।

कभी-कभी शिक्षा के ध्येय तथा उद्देश्य के सम्बन्ध में मतभेद हो जाता है क्योंकि भिन्न-भिन्न संस्थायें किसी एक ध्येय तथा उद्देश्य पर अधिक जोर देने लगती हैं। वास्तव में जहां शिक्षा का ध्येय बालक के पूर्ण विकास का है यहां मत वैभिन्य का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। जैसे यदि प्रश्न किया जाय कि शिक्षा का कर्त्तव्य अच्छे व्यक्ति विकास में है या अच्छे नागरिक षिकास में ? अधिकतर लोग यही कहेंगें कि इन दोनों में कोई अन्तर नहीं क्योंकि एक के बिना दूसरे का होना कठिन ही नहीं असम्भव है। इस स्थिति में अच्छा हीं व्यक्ति अच्छा नागरिक होगा और अच्छा ही नागरिक अच्छा व्यक्ति होगा। हो सकता है कि एक संस्था अच्छे व्यक्ति के विकास का ध्येय रखती हो और दूसरी अच्छा नागरिक बनाने का और इस प्रकार की विभिन्नता संस्थाओं में पायी जा सकती है। किन्तु यदि वास्तविक रूप में देखा जाये तो पता चलेगा कि संस्थायें इन दोनों को ही अपनाती हैं क्योंकि बालक के आत्म प्रदर्शन तथा आत्म विकास के शैक्षणिक कार्यक्रम सामाजिक तथा व्यक्तिगत दोनों ही हैं। व्यक्ति के आधार पर समाज है और समाज के

आधार पर व्यक्ति। एक के बिना दूसरे की स्थिति सम्भव नहीं। यह तो स्पष्ट है कि प्राणी के व्यक्तित्व तथा सामाजिकता की आवश्यकतायें शिक्षा संस्थाओं का साथ ही साथ पूर्ण करना है और साधारणत: यह बालक की शिक्षा आवश्यकताओं में देखा भी जाता है। जैसे युवक का व्यवसायिक ज्ञान प्राप्त करना, जिससे आर्थिक दृढता रहे अच्छा स्वास्थ्य, शारीरिक क्षमता, अवकाश का सदुपयोग, बुद्धि ग्रहण करना तथा बुद्धिमता से विचार प्रकट करना, आदि व्यक्तिगत ध्येय के आधार पर हैं, और परिवार तथा समाज की उत्तम-सदस्यता, सेवा तथा सामग्री का सही मूल्य समझना, दूसरों के अधिकार को मान्यता देना, शासन में रहना, योग्यता विकसित करने का समाज में उचित साधन तथा अवसर प्राप्त करना आदि सामाजिक ध्येय के आधार पर हैं।

ये व्यक्तिगत तथा सामाजिक शैक्षणिक ध्येय तथा उद्देश्यों में अधिकतर शारीरिक शिक्षा की सत्यता भी है, क्योंकि शारीरिक शिक्षा भी व्यक्ति के पूर्ण विकास के ओर अग्रसर है और इस लिये ये शारीरिक शिक्षा अध्यापक के लिये भी अत्यन्त महत्व पूर्ण प्रमाणित होती है।

अतएव इस निष्कर्ष पर पहुंचने में कि शारीरिक शिक्षा सामान्य ध्येय तथा उद्देश्य को निर्धारित करने में शिक्षा का एक विशेष अंग है तथा उसका पूरक है कोई अपत्ति नहीं हो सकती।

आधुनिक शारीरिक शिक्षा तथा सामान्य शिक्षा में घनिष्ठ समानता तथा सम्बन्ध है।

प्राचीन शारीरिक शिक्षा का जोर सामूहिक व्यायाम तथा औपचारिक ड्रिल आदि में था किन्तु वह वर्तमान शिक्षा के ध्येय के अनुसार

बिल्कुल परिवर्तित हो गया है । यही नहीं, बुद्धिमत्ता से दिये गये शैक्षणिक नेतृत्व का उत्तरदायित्व जिसके में अन्तर्गत संस्था के सम्पूर्ण कार्य क्रम में रूचि लेना उस के उत्तरदायित्व कों अपना समझना, उसमें सहायक होना आदि शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य समझा गया है ।

शारीरिक शिक्षा का सामान्य शिक्षा के सम्बन्ध में यह मुख्य निर्णय उन विचारों पर निर्धारित थे जिनको यह मान्यता प्राप्त थी, कि शारीरिक शिक्षा व्यक्तिगत तथा सामाजिकता की शिक्षा में उत्तम देन देने में समर्थ है।

यदि हम शिक्षा की परिभाषा का, जो समय समय पर और भिन्न भिन्न लोगों से दी गयी है, परीक्षा करें तो शारीरिक शिक्षा के देन का सही सही पता लग जायेगा । सारांश में शिक्षा का अर्थ तैयारी करना, अनुशासन, नियमों की आधीनता, सभ्यता, सुधार, विकसित होना, विधिवत करना, अवकाश का सदउपयोग, प्रसन्नता, सन्तोष आदर्श व्यवहार, कौशल का सीखना आदि से है ।

ये शिक्षा के गुण शारीरिक शिक्षा के पांच अंगों के अन्तर्गत दिखाई देते हैं और यही शारीरिक शिक्षा की देन सामान्य शिक्षा की है ।

### (१) शरीर के अंगों का विकास

शिक्षा मनुष्य की इन्द्रियों के द्वारा होती है । ये इन्द्रियाँ ज्ञान के द्वार हैं और यह शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य है कि वह इन द्वारों को सही हालत में रखे ।

शरीर के मुख्य अंग और उन की बनावट तथा क्रिया जैसे,

अस्थि संस्थान, मांस संस्थान, रक्त परिभ्रमण संस्थान लसिका संस्थान श्वास संस्थान, पाचन : संस्थान, निष्क्रमण संस्थान, सन्तानोपत्ति संस्थान, वात संस्थान जीव सम्बन्धी महत्वपूर्ण अंग हैं।

इन अंवगों के उच्च कोटि के कार्य शरीर की शक्ति शाली गति तथा कार्यो पर निर्भर है। भिन्न भिन्न शक्ति शाली तथा तेज वेग से किये गये कार्य अपना प्रभाव आन्तरिक अगों पर डालते हैं और उनके कार्यों को बढ़ाते तथा उन्हें निपुण करते हैं। मनुष्य की शक्ति तथा जीवन इस तरह माँस पेशियों तथा मुख्य आन्तरिक अगों की उमत्त परिचर्या में ही है। यह शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य है कि इनकी परिचर्या शक्ति, बाल्यावस्था तथा युवावस्था में जिस समय इन का क्रमशः विकास होता है व्यायाम, खेल कूद तथा अन्य अन्य, कार्यो के द्वारा बढायें। इस के अतिरिक्त बालक के विकास के लिए और कोई दूसरा मार्ग नहीं है। यह विकास वाल्यवस्था से आरंम्भ होकर युवावस्था में पूर्णता प्राप्त करता है। अतएव जीव शक्ति के विकास के लिए बालकों की नैसर्गिक क्रियाओं में जैसे दौड़ना, कूदना, चढना, लटकना खिचना तथा अपने को अनेक रीति से दूसरों के साथ परीक्षित करना पड़ता है।

## (२) स्नायु मांस पेशियों का समन्वय

शरीर में अंगों का समन्वय तथा शोभायमान शारीरिक गति स्नायु मांस पेशियों के समन्वय पर निर्भर है। छोटी अवस्था ही से बालक इसका प्रयोग करता तथा क्रमशः प्रगति करता है। मानव प्राणी कौशल का भूखा है क्योंकि जीवन के पूर्ण विकास में ये अत्यन्त सहायक है। बालक अपनी नैसर्गिक क्रियाओं के द्वारा जो

वह करता ही रहता है कौशल सीखता है। मूलप्रवृत्तियों के कारण वह किसी विशेष कार्य की ओर रुचि रखता है। और उसे सीखने के लिये चुन लेता है सामाजिक वशानुक्रम तथा वातावरण से इस चुनाव में सहायता मिलती है। ये कार्य तात्कालिक वर्त्तमान से सम्बन्धित होते हैं। बालक अनेक प्रकार के कौशल सीख सकता है और कौशल सिखाये जा सकते हैं किन्तु वही कौशल उसके लिये उपयोगी हैं जो उसकी शिक्षा में उसके जीवन के विकास के लिये सहायक हों। मूल प्रवृत्ति के आधार पर चुने हुए कौशल से उसे संतोष होता है और जीवन पर्यन्त वह प्रयोग में आता है। अन्त लाभ परिणामिक कौशल वे हैं जिनमें दैनिक जीवन के व्यवहार में स्नायु मांस पेशियों का सहयोग होता है जैसे चलना, दौड़ना, बैठना, खड़ा होना, उठाना, चढ़ना, वस्तु ले जाना आदि, उन कौशल से जिनसे संतोष तथा मनोरंजन होता है वे हैं खेल, स्पोर्ट्स, एथेलैटिक, नृत्य, आत्मपरीक्षा आदि क्रिया। इनसे कौशल के कार्य उपयोगिता का प्रमाण मिलता तथा शैक्षणिक प्रभाव प्रदर्शित होता है। शारीरिक शिक्षा कार्य उपयोगी स्नायु मांस पेशियों के कौशल की शिक्षा सदैव देता है और यह आजीवन रहता है। यह शिक्षा घंटे के चालीस मिनट तक ही सीमित नहीं या संस्था की चहार दीवारी तक इसका अन्त नहीं हो जाता या उस समय या स्थान पर सीख कर भूला नहीं जाता बल्कि वह संस्था से अलग वनों में, अवकाश में खेल तथा सदुपयोग में, जहां जिस समय उचित समय मिले वहीं वर्तमान रहता है। कार्य प्रद कौशल का स्थानान्तर जीवन के भिन्न-भिन्न कार्यों में सम्भव है और इससे अधिक सहायता मिलती है। कार्य गति जितनी

प्राकृतिक होगी उतनी ही रुचिकर तथा जीवन उपयोगी होगी ।

## (३) खेल तथा मनोरंजन में रुचि

स्वास्थकर खेल तथा मनोरंजन में रुचि उत्पन्न करना तथा उस ओर व्यक्ति को जागरूक रखना व्यक्ति की शिक्षा में एक विशेष देन है । वर्तमान जीवन में खेल तथा मनोरंजन की अत्यन्त उपयोगिता है । मनुष्य दैनिक कार्य तथा कर्त्तव्यों के भार से जब थक जाता है तो उसमें विश्राम तथा मन बहलाव के लिये यह अत्यंत ही उत्तम प्रमाणित होते हैं । इसकी अपेक्षा अनेक बार मनुष्य ऐसी स्थिति में कार्य करता है जहां संवेग का सही प्रदर्शन नहीं होता और यह कुछ समय के बाद हानिकारक सिद्ध होता है । खेल तथा मनोरंजन के कार्यों के द्वारा इन रुके हुये संवेगों का प्रयोग होता है जिससे व्यक्ति को संतोष होता है और वह अपना साधारण रूप पुनः प्राप्त करता है ।

सभी बालक आरंभ ही से खेल में रुचि दिखलाते हैं । दूसरे पशुओं की अपेक्षा मनुष्य जीवन में अधिक समय तक खेलता है । यह प्राकृतिक प्रबन्ध है कि बालक खेल के द्वारा शिक्षा प्राप्त करें जो उनमें भविष्य के जीवन में उपयोगी हो । यह बालक के विकास का उपाय है । जैसे-जैसे बालक बढ़ता जाता है उसे उतना ही नियन्त्रण प्राप्त होता है और जैसे-जैसे कौशल में प्रगति होती है वैसे ही कार्य की संभावना का मूल्य पहचान में आता है और रुघि में वृद्धि होती है । इन साधारण कौशल के अनुभव के द्वारा व्यक्ति क्रमशः जटिल कौशल की रुचि प्राप्त करता और करने की चेष्टा करता है । यह प्रगति होती रहती है और प्रौढ़ अवस्था में उच्च

कोटि के कौशल में भाग लिया जाता है वाल्यपन के कौशल का अनुभव तथा प्राकृतिक क्रियाओं का जटिल खेल तथा मनोरंजन में स्थानान्तर किया जाता है जिसे वर्तमान समय में हम नृत्य गौफ़या टेनिस, मछली मारना फुटबाल आदि के नाम से पुकारते हैं। कार्य में भाग लेने से कौशल में बृद्धि होती है और इसके कारण व्यक्ति में एक तैयारी तथा संतोष होता है और वह निपुणता की ओर बढ़ता जाता है। अतएव निपुणता तथा भाग लेना साथ ही साथ चलते है।

## (४) चरित्र का निर्माण

सभी शिक्षा का मुख्य ध्येय चरित्र निर्माण है। चरित्र निर्माण के लिये शारीरिक शिक्षा माध्यम से बढ़ कर और कोई शिक्षा है ही नहीं जो इतनी सरलता से चरित्र निर्माण कर सके। शारीरिक शिक्षा के चरित्र निर्माण की विशेषता यह है कि यह स्वतंत्रता से तथा प्राकृतिक स्थितियों के माध्यम से ऐसी अवस्था उपलब्ध करता है जो चरित्र निर्माण के लिये अत्यन्त लाभदायक प्रमाणित होते हैं। बालक को पता भी नहीं चलता और वह सीखता जाता है।

मनुष्य आदत तथा व्यवहार वातावरण से अर्जित करता है। प्रत्येक आदत में एक व्यवहार है। शिक्षा सभ्य व्यवहार की आशा करती है इस लिये उत्तम आदतों का होना आवश्यक है। जीवन के महत्वपूर्ण अनुभवों में भाग लेते हुये हम भिन्न प्रकार के व्यवहार या आदत अर्जित करते हैं जिन्हे हम उदार चरित्र, दयालुता, इमानदारी, मित्रता, सहन शक्ति आदि नाम से पुकारते हैं। यही जीवन में जड़

पकड़ते जाते और स्थित हो जाते हैं। जब जीवन की चेष्टाओं को आदेश तथा नियत्रंण इन गुणों के द्वारा होता है तो उसे सभ्य व्यवहार कहते हैं और व्यक्ति चरित्रवान कहलाता है। ऐसे चरित्र-वान व्यक्ति समाज तथा राष्ट्र के लिये अनमोल होते हैं।

यह सभ्य व्यवहार वातावरण से सीखता जाता है इसलिये शिक्षकों को आदर्श बनने के लिये बाध्य किया जाता है। अच्छे उपदेश की अपेक्षा अच्छे उदाहरण से सफलता मिलती है। व्यवहार सिखाया जाता है और इसका उत्तरदायित्व शिक्षकों तथा नायकों पर है।

## (५) अवकाश का सदुपयोग

कोई भी व्यक्ति सही अर्थ में शिक्षित नहीं कहा जा सकता तथा कोई राष्ट्र किसी हालत में भी उन्नतित नहीं कर सकता यदि वह अपने अवकाश का सदुपयोग न करे। शिक्षा में शरीरिक शिक्षा की यह विशेष देन है कि वह इतनी सामग्री तथा कौशल देती है जो अवकाश में प्रयोग में लाये जा सकते हैं। इस में विशेषता यह है कि ये शारीरिक शिक्षा में कार्य जो अवकाश में किये जा सकते हैं शिक्षाप्रद, संतोष जनक तथा मनोरंजक होते हैं। दूसरी विशेषता यह है कि जितना इनमें भाग लिया जाय उतनी निपुणता होगी और उतना हीं संतोष होगा। ये अवकाश के समय की जाने वाली क्रियायें, आजन्म, प्रत्येक अवस्था तथा स्थित तथा हर समय की जा सकती है।

शिक्षा में अवकाशन का सदुपयोग अनेक अनुशास तथा चारित्रिक

समस्या को सरलता से हल कर देगा। कहा जाता है कि जिस के पास कुछ करने को न हो वह बुरा ही करेगा। शारीरिक शिक्षा में करने के अनेक कार्य हैं जो, आयु, रुचि, समय, अवस्था, स्थिति आदि के अनुकूल है। अवकाश के सदुपयोग के लिये शारीरिक शिक्षा की अपेक्षा किसी और दूसरे माध्यम का मिलना कठिन ही नहीं असम्भव है।

शिक्षा का प्राचीन उद्देश्य जो मूख्य मूल प्रवृत्ति स्वयं तथा जाति के आधार पर निर्धारित है अब भी सत्य है और विशेष रूप से उपस्थित है। प्रजातान्त्रिक विचारों के कारण इस की महत्ता और भी है। स्वयं तथा जाति के रूप में व्यक्ति तथा उसके सामाजिक गुणों को विकसित करना है। शिक्षा के सब प्रभावों के सहयोग से यह सम्भव है। दोनो की आवश्यकतायें एक हैं और दोनों परस्पर एक दूसरे पर निर्भर है। इस विचार के अनुसार व्यक्ति तथा राष्ट्र एक हो जाते हैं। शारीरिक स्वास्थ्य की व्यक्तिगत आवश्यकता नागरिकों की शक्ति की राष्ट्रीय आवश्यकता के समान हो जाती है। किसी के होने की व्यक्तिगत आवश्यक राष्ट्रीय प्रेम की आवश्यकता के समान हो जाती है। ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति तथा समाज, नागरिक तथा राष्ट्र एक ही हो जाते हैं।व्यक्तिगत में उचित शिक्षा नियोजन से ही राष्ट्र के शुभ का विचारउत्पन्न होगा तथा व्यक्ति के लाभ के विचार से ही राष्ट्र का निर्माण तथा उसका अस्तित्व हो सकता है।

कोई राष्ट्रीय श्रेष्ठता नहीं जो व्यक्ति की श्रेष्ठता के उपयुक्त

न हो तथा कोई व्यक्तिगत श्रेष्ठता नहीं जो राष्ट्रीय जीवन के सहायता तथा मजबूती में सहायक न हो।

शारीरिक शिक्षा सामान्य शिक्षा की चुनौतियों को उपयुक्त उत्तर देता है।

—०—

(३)

# शारीरिक शिक्षा का आधुनिक रूप, ध्येय एवं उद्देश्य, क्षेत्र, शारीरिक शिक्षा के सम्बन्ध में मिथ्या धारणायें

## शारीरिक शिक्षा का आधुनिक रूप

शिक्षा का अभिप्राय है कि व्यक्ति विशेष का शारीरिक मानसिक नैतिक तथा सामाजिक शक्तियों का विकास हो जिससे मानव का सर्वांगणि विकास सम्भव हो सके। शारीरिक शिक्षा का भी एक शिक्षा होने के कारण यही ध्येय है जो उक्त परिभाषा में स्पष्ट है।

मानव शक्तियों का पुञ्ज है। इसकी यह सम्पूर्ण शक्तियाँ इन्ही तीन रूपों में प्रकट होती हैं। इनमें से यदि किसी एक शक्ति का भी विकास दूसरों की अपेक्षा कम या अधिक हो जाता है तो व्यक्तित्व में सन्तुलन का अभाव हो जाता है। शारीरिक शक्तियाँ तथा मानसिक शक्तियाँ परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करती रहती है और एक के बिना दूसरी अधूरी रह जाती है। मनोविज्ञान से भी इस मत की पुष्टि होती है कि प्रत्येक मानसिक विचार की क्रिया होती है तथा प्रत्येक शारीरिक क्रिया मानसिक विचार पर आधारित होती है। इस प्रकार दोनो परस्पर सम्बन्धित हैं। साधारण शिक्षा हो या शारीरिक शिक्षा, शिक्षा का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति अपनी शारीरिक,मानसिक तथा आत्मिक शक्तियों का पूर्ण विकास कर सके, वास्तविक व्यक्तित्व के निकटतर हो जाए। जिस प्रकार शिक्षा अपने में पूर्ण एक इकाई है उसी प्रकार व्यक्ति भी एक है।

न शिक्षा के टुकड़े हो सकते है ना व्यक्ति के मानसिक,शारीरिक तथा आद्यात्मिक वर्गों में बाँटा जा सकता है । इससे यह प्रमाणित होता है कि आधुनिक शारीरिक शिक्षा केवल व्यायाम,स्वास्थ्य तथा शारीरिक क्रियाए न हो कर विशेष रूप से शिक्षा से सम्बन्धित है । शारीरिक शिक्षा साधारण शिक्षा की पूरक होने के कारण उसके ध्येय तथा उद्देश्यों को पूर्ण करने की चेष्टा करती है । शारीरिक शिक्षा साधारण शिक्षा के पूर्ति का माध्यम है ।

शारीरिक शिक्षा का अपने में एक अन्त ( End ) नहीं है किन्तु दूसरे अन्त के पहुँचने का माध्यम है । वास्तविक शारीरिकि शिक्षा शरीर की शिक्षा तथा शरीर के द्वारा शिक्षा है ।

"Physical Education is education throgh physical activity for the development of the total personality of the child to its fulness and perfection in body, mind and spirit."

आधुनिक शारीरिक शिक्षा वह साधन है जो कि मानव को उसके वातावरण और जीवन की कठिन परिस्थितियों में अच्छी तरह से रहने और लोक सेवा का अवसर प्रदान करती है । व्यक्ति इसी रीति से अपने को पूर्णत्व की ओर विकसित करता है । Norwodकहते है ।

"To help each individual to realise the full powers of his personality in body, mind and spirit and through active membership of society."

सामाजिक दृष्टि से आधुनिक मत है कि मानव अपना मानसिक,आध्यात्मिक और शारीरिक विकास इस प्रकार से करे कि अच्छा नागरिक वन सके । एक अच्छा नागरिक समाज में तथा वातावरण में ऐसे साधन तथा परिस्थितियाँ और कार्य जुटायेगा जिससे परहित भावना के साथ समाज का विकास करते हुये अपने को भी विकसित करेगा । व्यक्ति समाज का एक अमूल्य अंग है जो बिना समाज के कोई अस्तित्व नहीं रखता किन्तु बिना व्यक्ति के समाज भी अधूरा है । वे दोनो एक दूसरे पर आधारित हैं ।

समाज के उत्थान में मानव विकास के साथ मनोविनोद, स्वस्थ्य जीवन,शुद्ध आचरण,आदि गुण स्वयं प्रकट होंगे जिससे साधारण शिक्षा तथा शारीरिक शिक्षा और स्वास्थ्य शिक्षा आदि को नया मार्ग मिलेगा और उनके स्तर में वास्तविकता होगी ।

शारीरिक शिक्षा में गतिवाही शक्तियों को मांस पेशियों के द्वारा विकसित होने का अवसर प्राप्त होता है । शारीरिक शिक्षा व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए सुन्दर सुडौल बनने की चेष्टा, हृष्ट पुष्ट बनने की भावना, शरीर में स्फूर्ति और शक्ति प्रदान करने के साथ साथ एक ऊँचा नैतिक स्तर तथा मानसिक प्रवृत्तियों और शक्तियों के संगठन करने की भावना उत्पन्न करता है ।

---

समझे। व्यक्ति में सहिष्णुता, उदारता, आत्मनिर्भरता, खोज की भावना, शुद्धता, निश्चयात्मकता, एकाग्रता, मध्यवसाय, स्वरूप जीवन, समृद्ध राष्ट्र की इच्छा, शारीरिक संतुलन, सहयोग की भावना, प्रत्येक की पूर्णप्राप्त का अवसर तथा साधन आदि शारीरिक शिक्षा के द्वारा ही सरलता से प्राप्त किए जा सकते हैं।

## शारीरिक शिक्षा के ध्येय तथा उद्देश्य

ध्येय किसी दिशा की ओर विचार या अन्त प्रकट करता है। प्रकृति में साधारणतया होता है। उद्देश्य विधिपूर्वक ठीक उचित तथा सीमित वर्णन उन खंडो के होते हैं जिनके प्रयोग से ध्येय प्राप्ति में सहायता मिलती है। तथा उद्देश्य के बीच कुछ ऐसे वर्णन की भी आवश्यकता होती है जो इतने साधारण नहीं हैं कि ध्येय बन सकें, न इतने विधि पूर्वक कि उनको उद्देश्य की संज्ञा दी जा सके। इन्हें तात्पर्य कहा जा सकता है। श्री मान विलियम के अनुसार शारीरिक शिक्षा का ध्येय बहुत स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार है, "शारीरिक शिक्षा का ध्येय व्यक्ति तथा समाज के लिए योग्य नेतृत्व, उपयुक्त साधन तथा पर्याप्त समय उपलब्ध कराना है, जिससे ऐसी परिस्थिति का निर्माण हो जो व्यक्ति तथा समाज के लिए शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ, मानसिक दृष्टि से प्रेरक तथा संतोष प्रद तथा सामाजिक दृष्टि से दृढ़ हो।"

"Physical Education should aim to provide skilled leadership and adequate facilities which will affoıd an opportunity for or group to act in situationswhich are physically wholesome, mentally stimulating and satisfying and socially sound,,

F. J. William.

उक्त परिभाषा में शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ का अर्थ उन साधारण अवस्थाओं से है जो मनुष्य के लिए उचित तथा उत्तम हो तथा वैज्ञानिक आधार के हों या अनुभव के द्वारा प्रमाणित हों। इसका अर्थ होगा वातावरण पर नियन्त्रण जिन में स्वास्थ्य सम्वन्धी विषय जैसे वायु, धूल, स्वच्छता, संक्रामक रोग आदि होंगे। स्वस्थकर शारीरिक शिक्षा में व्यायाम की 'शारीरिक क्रिया प्रभाव' का होना आवश्यक है जो तीव्र गति तथा कठिन परिश्रम के व्यायाम से ही प्राप्त होगा। स्वस्थकर शरीर का परिणाम व्यक्ति से सम्बन्धित होगा। कितने ही बार स्वस्थ कर शारीरिक कार्य किसी विशेष व्यक्ति के लिए विश्राम ही हो सकता है। स्कूल तथा कालेजों में बहुत अस्वस्थ शारीरिक शिक्षा का प्रचार है। जो विद्यार्थियों के लक्षण से आवश्यकता की पहचान नही करता और न ही बालक बालिकाओं का उचित वर्गीकरण करता है।

इसी परिभाषा में दिए गए वाक्य मानसिक दृष्टि से प्रेरक तथा संतोष प्रद का अर्थ शारीरिक शिक्षा द्वारा प्रस्तुत उन अवस्थाओं से है जिसमें क्रिया के साथ विचार करना पड़ता है तथा जिसके करने से अन्त परिणाम में संतोष मिलता है। अतएव यही चेष्टा होनी चाहिए कि सही उत्तेजनाओं तथा प्रतिक्रियाओं से कार्य करने वालों को संतोष मिले और अनुचित से असंतोष। सर्व प्रमुख आवश्यकता जन्मजात प्रवृत्तियों के संतोष की व्यवस्था है। जिनके द्वारा समाज की उपयोगी सेवाऐं होती हैं। मानसिक दृष्टि से प्रेरक तथा संतोष प्रद अवस्थाएँ संवेगात्मक क्रिया पर ज्ञानात्मक नियन्त्रण तथा स्वीकृति प्रदान करेंगी।

शारीरिक शिक्षा के अन्तर्गत शारीरिक क्रियाएँ व्यक्ति की प्रकृति पर निर्भर होनी चाहिए तथा उसकी रुचि तथा कौशल की प्रगति के हेतु होना चाहिए। हमें सदैव इस बात को ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि बालक के सम्मुख ऐसी अवस्थाएँ प्रस्तुत होतीं रहें जिसमें उसे सोचने विचारने को अवसर मिल सके। यह वहीं सम्भव है जहाँ उसके पास ध्येय हो, उसकी प्राप्ति की योजना हो तथा वह उसकी प्राप्ति के लिए ज्ञानात्मक चेष्टा करें। प्रायः ऐसी स्थिति उत्पन्न करने के लिए शिक्षक विद्यार्थियों के समीप से बिल्कुल हट जाते है। यह अनुचित है। ऐसी अवस्था में बालक बिना किसी सहायता के ध्येय बनाने के लिए बाध्य होता है। बिना किसी सहायता के उपाय नियोजन करता है तथा उस सहायता से जो उसे श्रेष्ठ चेष्टा की प्रेरणा दे सकता है, वंचित रह जाता है। किसी अध्यापक में जब उच्च श्रेणी की योग्यता होगी तभी वह समझ सकेगा कि सीखने की क्रिया में कितने अधिक या कितने कम आदेश अथवा सुझाव की आवश्यकता बालक को है। शारीरिक शिक्षा इस अवस्था में इस प्रकार होगी कि मानसिक गति विधियों से शारीरिक क्रियाओं में परस्पर सन्तुलन स्थापित हो सके।

सामाजिक दृष्टि से दृढ़ का अर्थ है कि शारीरिक शिक्षा ऐसी उपयुक्त व्यवस्था कर ले जिसके द्वारा आध्यात्मिक तथा सामाजिक मूल्यों का दर्शन तथा विकास हो सके। यह गुरूजनो के द्वारा ही सम्भव है। वे गुण जिनकी शिक्षा देनी है वे अध्यापकों में स्वयं उन गुणों का होना आवश्यक है तथा वे उस गुण से ऐसे प्रभावित हों जिससे उसके प्रति कार्य करने के लिए उत्सुक तथा तैय्यार हों।

आध्यात्मिक तथा सामाजिक गुणों के सीखने में सही भावनाओं के निर्माण की आवश्यकता होती है और उचित ज्ञान के विकास की आवश्यकता होती है जिससे शारीरिक शिक्षा के प्रति जो प्रतिक्रियाएँ हों वह एक विशेष प्रकार की प्रतिक्रियाएँ हों जो सदैव प्राप्त हो सकें। खेल में इमानदारी की अपनी महत्ता है किन्तु इसका प्रमुख मूल्य उस अवसर के बयान करने में है जो शिक्षक को दिया जाता है कि वह ऐसी भावना उत्पन्न करे जिससे इमानदारी एक ऐसा गुण हो जाए जो सर्वत्र तथा हमेशा व्यवहार करने की इच्छा हो।

इस बात को ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि समाज शिक्षण संस्थाओं का निर्माण करता है जिससे उसके आधार मज़बूत हों जैसे जैसे समाज परिवर्तित होता है वह परिवर्तन स्कूल में भी प्रतिबिम्बित होता है।

यह सम्भव है कि जो एक युग में सामाजिक दृष्टि से उचित हो और दृढ़ता से समाज में निहित हो वह दूसरे युग के द्वारा स्वीकार न किया जाए। अनेक ऐसे गुण हैं जो एक लम्बे समय के अवसर में स्थापित हो चुके हैं और आज हम साधारणतः उसे अपनाते तथा प्रयोग करते हैं और कदाचित वे अपनी योग्यता के कारण सामाजिक नियन्त्रण तथा मनुष्य के सुख एवं प्रसन्नता के प्रति अपनी देन के कारण योग्य माने जाते रहे हैं। कुछ ऐसे गुण हैं सभ्यता, इमानदारी, अपक्षपात, लेन देन की भावना, भक्ति पवित्रता, समूह के विचाराधीन होना, आत्मनियन्त्रण, आत्मशासन, तम्रता, नम्रता, साहस उदारता, उत्साह आदि।

आज कल की भयंकर वास्तविकता के युग में प्रजातन्त्रीय आदर्श में सन्देह नहीं। राष्ट्र मार्ग दर्शन सैनिकों के द्वारा नहीं किन्तु आदेश तथा विचार के द्वारा होता है। यदा कदा राष्ट्र को विदेशी शत्रुओं से रक्षा करनी पड़ती है जिसमें बहुतों के प्राण भी जाते हैं। आदर्श तथा विचार जो राष्ट्र को उठाए रहते हैं उनकी शिक्षा अध्यापकों के द्वारा ही होती है इस लिए शारीरिक शिक्षा के अध्यापक का भी यह उत्तरदायित्व है कि दूसरे शिक्षकों के साथ वे भी सामाजिक दृष्टि से दृढ़ गुण प्रजातन्त्रीय आदर्शों में अनुवाद करें।

उद्देश्य का अर्थ यहां ध्येय से नहीं है किन्तु विधि पूर्वक, उचित अर्जित योग्य परिस्थिति से है। उद्देश्य तात्कालिक तथा दूरकालिक होते हैं। शारीरिक शिक्षा का उद्देश्य ऐसे कार्यक्रम को प्रस्तुत करना है जिसमें अवरोधक रीतियाँ तथा चिकित्सा योग्य शारीरिक दोषों का उपचार संभव हो यह गति वाही यन्त्र उपयुक्त पौष्टिक भोजन, शक्तिशाली मांस पेशियों, उचित वस्त्र तथा जूते आदि के धारण करने से अनेक दोषों का अवरोध हो सकता है। मानसिक स्वास्थ्य तथा साधारण रुचि भी कुछ दोषों का अवरोध कर सकती है। उत्तम डील-डौल की समस्या में जो उद्देश्य है वे शरीर के कार्य करने की तैय्यारी की अवस्था से सम्बन्धित है। उत्तम डील-डौल का अर्थ

(१) **विरोध सिद्धान्तः**—जैसे प्रत्येक फेकने चढ़ने चलने

है शारीरिक अंगों का पारस्परिक समायोजन जिस के द्वारा सीधा खड़ा हुआ सावधान पूर्ण मानसिक तथा शारीरिक चेष्टा की तैय्यारी का रूप हो।

शारीरिक शिक्षा में मानव गति वाही यन्त्र का शारीरिक नियन्त्रण परिश्रम का खिचाव तथा शक्ति के व्यय के सम्बन्ध में अध्ययन करना है।

शारीरिक शिक्षा के उद्देश्य के अन्तर्गत खेल, एथेलेटिक्स, स्पोर्टस, जल क्रीड़ा नीति जो मुख्य अंगों का विकास कार्यवाही कौशल निश्चयात्मकता जो खाली समय में व्यवहृत हो सके, खेल में रुचि की प्रेरणा तथा श्रेष्ठ स्तर के व्यवहार आते हैं।

इस समूह का कार्यक्रम कठिन परिश्रम तथा तीव्र गति से होना चाहिए जिससे मुख्य आन्तरिक अंग उत्तेजित हो जाएँ। कौशल तथा खेल में प्रेम ऐसा होना चाहिए जिससे रुचि आजन्म बनी रहे तथा वह कार्य करते रहें।

नृत्य भी अपने अनेक रूप में शारीरिक शिक्षा का एक अंग हो गया है। नृत्य के अन्तर्गत लोक, राष्ट्रीय, सामाजिक तथा आधुनिक नृत्य आते हैं और संगीत व नाट्य खेल आदि भी। आधुनिक शारीरिक शिक्षा व्यक्ति के पूर्ण विकास से सम्बन्धित है। प्राचीन काल से नृत्य एक मनुष्य के आधारभूत भाव के रूप में

चला आ रहा है ।

आत्म परीक्षा कार्य, आपरेटस के ऊपर कार्य, व्यक्तिगत विरोधी खेल भी शारीरिक शिक्षा के उद्देश्य के अन्तर्गत आते हैं इनके द्वारा शारीरिक शिक्षा की ध्येय कीं पूर्ति होती है । इनका उद्देश्य उन कौशल तथा योग्यता की प्राप्ति में है जो दैनिक जीवन के व्यवहार में आएँ जैसे किसी बाधा को ध्यान में रखते हुए एथेलेटिक्स के कौशल की प्राप्ति । बढ़ी हुई शारीरिक क्षमता के द्वारा शरीर के प्रयोग में योग्यता जिसमें नाड़ी मांसपेशियों का कौशल किसी विषय के सम्बन्ध में विकसित हों । जैसे शरीर पर पूर्ण रूप से विजय प्राप्त करना । शारीरिक संकट में आत्म निर्भरता तथा साहस को बढ़ने का अवसर देना । बनावटी स्थितियों तथा बनावटी साधनों के द्वारा इनका अभ्यास करना ।

शारीरिक शिक्षा के उद्देश्य में पर्यटन कैम्पिग तथा खुला वाह्य जीवन महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं । उद्देश्य के अन्तर्गत आधारभूत कौशल में जो गति के आधार हैं उन्हें अनुकूल करना आवश्यक है । जैसे सही रीति से चलना, दौड़ना, कूदना, उछलना, फेंकना लटकना, चढ़ना, उठाना ले जाना आदि ।

शारीरिक शिक्षा के उद्देश्य के अन्तर्गत आये हुए सभी कार्यों में गति का सिद्धान्त प्रदर्शित होना चाहिए । इन में छः मुख्य हैं:—

तथा दौड़ने की गति में हाथ तथा पैर का विरोध।

(२) **शक्ति कार्य का प्रमाण सिद्धन्तः**—वह कार्य जिनमें शारीरिक अंगों का सन्तुलन हो। जिन कार्यों में उचित प्रमाण में शक्ति का व्यवहार नथा सरलता से व्यवहार हो।

(३) **गुरुत्व समायोजन सिद्धान्तः**—उचित समय पर किसी गति में शक्ति में शक्ति तथा शीघ्रता का प्रयोग।

(४) **कार्य समाप्ति पर गति को पूर्ण रूप से प्राकृतिक अन्त तक जाने देने का सिद्धान्तः—**

अर्थात गतिवाही अंग को गति की दिशा में निश्चित कार्य हो जाने के बाद भी जाने देना।

(५) **बाह्य वस्तु पर ध्यान का सिद्धान्तः—**

इसमें वाह्य स्थित वस्तु जो सम्मुख हो ध्यान में आना चाहिए न कि आन्तरिक सवेदना जैसे बॉल पर आँख रखना।

(६) **पूर्णमेल का सिद्धान्तः—**

गति में शरीर के अंगो का पूर्ण मेल हो न कि केवल

एक भाग का इस में सम्पूर्ण नाड़ी मांस पेशियाँ एक अन्त की ओर उत्तेजित होती है।

शारीरिक शिक्षा का ध्येय तथा उद्देश्य की सफलता सम्पूर्ण मानव विकास का एक साधन होने में हैं। H. C. Buck महशाय कहते है;:—

"Physical Education is part of the function of fitting the individual to live best and to serve most,to aburdurt life. It is the drawing of or developing of the motor powers of the human body,the art and the science of maintaining and creating neuro muscular efficiency and organic vigour in such a way that not only does physical health and satsfaction in result,but there also results proper mental attitude hand wholesome emotional life. Properly direted it soould resulc in healch,happiness,etfciency and character."

## (५) मिथ्या धारणायें

कतिपय व्यक्ति शारीरिक शिक्षा के सम्बन्ध में ऐसी धारणाएँ फ़ैला रहे है जो उचित नहीं हैं। कई स्थानों पर यह मिथ्या धारणाएं दृष्टि गत होती हैं उदाहरणार्थ फिजिकल ट्रेनिग के सम्बन्ध में यह कहते हैं कि शारीरिक शिक्षा प्रातः काल की जाने वाली

व्यायाम की ऐसी श्रंखला है जिससे सेना अथवा सामुदायिक व्यक्ति स्वस्थ रह सके। इसी प्रकार कुछ व्यक्ति गलती से फुटबाल हाकी खेलना, दौड़ना, तैरने आदि को ही शारीरिक शिक्षा समझते है। इसी प्रकार कुछ व्यक्ति स्वदेशीय कसरतों को सिखाना ही तथा इन्हे तालबद्ध करना शारीरिक शिक्षा समझे हुए हैं। कुछ व्यक्ति स्काउटिंग तथा हाइकिंग को शारीरिक शिक्षा कहते हैं। कुछ व्यक्ति जमनास्टिक को शारीरिक शिक्षा समझते हैं मांस पेशियो को विकसित करना ही कुछ व्यक्ति शारीरिक शिक्षा की संज्ञा देते हैं। वास्तव में यह सभी शारीरिक शिक्षा स्वयं न होंकर शारीरिक शिक्षा के साधन हैं।

## (६) शारीरिक शिक्षा का क्षेत्र तथा प्रकृति

शारीरिक शिक्षा का कार्यक्रम निम्नलिखित आधारों पर प्रतिपादित किया जाता है।

### (१) स्वाभाविक जन्मजात प्रवृत्तियों के आधार पर :-

इसके अन्तरगत निम्नलिखित कार्य आते हैं जैसे एथेलेटिक्स, खेल, ट्रैक और फील्ड स्पोर्टस्, चलना, घूमना, तैरना, चढ़ना, पर्वतारोहण, वालटिंग, झूलना, परिक्षण नाटक कला, बाँकसिंग, कुश्ती, नृत्य कैम्प तथा पर्यटन तथा लघु उपकरण के खेल आदि।

(२) **औपचारिक कार्यः––**

इसके अन्तरगत कैलसथनिक,जमनास्टिक,मार्चिग सुधारात्मक तथा शरीर विकास के कार्यक्रम आदि।

(३) **स्वास्थ्य सम्बन्धी आदत पर सुझवाः––**

स्वास्थ्य परिक्षण,स्वास्थ्य का अभ्यास, स्वास्थ्य सेवा, स्वास्थ्य शिक्षा।

(४) **वैज्ञानिक विषयः–**

इसके अन्तरगत उन वैज्ञानिक विषयों का अध्ययन समाहित है जो शारीरिक तथा स्वास्थ्य शिक्षा पर प्रकाश डालती है जैसे जीव विज्ञान,मनोविज्ञान,शरीर रचना शास्त्र तथा शरीर क्रिया शास्त्र आदि।

शारीरिक शिक्षा वैज्ञानिक है और उचित मनोवैज्ञानिक तथा शरीर क्रिया शास्त्र पर आधारित है। मनोवैज्ञानिक सत्यता के कारण कार्यक्रम प्राकृतिक,जाति सम प्राचीन क्रियाओं जैसे दौड़ना कूदना,चढ़ना, कलाबाज़ी फेंकना तथा मारना आदि जिनके आधार पर आधुनिक खेल बने हुए हैं और यह रुचिकर तथा आनन्द-दायक हैं। इनके द्वारा उचित आदतों तथा चरित्र निर्माध आदि में सहायता मिलती है। इसी प्रकार शारीरिक क्रिया के उचित परिणाम स्वरूप यह कार्य आन्तरिक मुख्य अगों को प्रभावित करने

के उपयुक्त साधन हैं क्योंकि यह आधारभूत क्रियाएँ हैं। कुछ औपचारिक कार्य की भी आवश्यकता,अवरोध तथा सुधार के लिए किन्तु जहाँ तक सम्भव है शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में प्राकृतिक कार्यों का प्रयोग होना चाहिए।

आधुनिक शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम केवल क्रियाओं तक सीमित नहीं है। यह केवल मांस पेशियों के बनाने, स्थिर प्रणालियों या किसी प्रकार की नयी वस्तु उत्पन्न करने के लिए उत्सुक नही है, तथा व्यवस्था प्राकृतिक बढ़ाव तथा विकास, जीव शक्ति, स्वास्थ्य प्रसन्नता, पूर्णता तथा चरित्र से परम सम्बन्धित है। इस प्रकार यह सर्वदा ऊँचे स्तर के स्वास्थ्य तथा सर्वश्रेष्ठ तैय्यारी के साथ स्पोंट संभव शिप के ऊँचे आदर्श और उचित सामाजिक भावनाओं को प्राप्त करने तथा उन्हें यथास्थित रखने की चेष्टा करता है। अतएंव वैज्ञानिक शारीरिक शिक्षा को बाल प्रकृति, युवा प्रकृति तथा प्रौढ़ प्रकृति से सम्बन्धित होना हैं क्योंकि यह प्रमाणित है कि यदि शैक्षणिक चेष्टाएँ तथा प्राकृतिक क्रियाएँ परस्पर सहयोग न करें तो कुपरिणाम होगा।

---

[४]

# शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम में स्वास्थ्य शिक्षा तथा मनोरजंन का संतुलन

जीवन में सफलता तथा आनन्द प्राप्त करने के लिये अच्छे स्वास्थ्य की आवश्यकता है और यह मानी हुई बात है कि शारीरिक शिक्षा की कोई भी प्रणाली जिसमें स्वास्थ्य शिक्षा न हो उपयुक्त प्रमाणित नहीं हो सकती है। वह शारीरिक शिक्षा जिस से स्वास्थ्य ज्ञान न हो तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी आदतें तथा भावनाएँ अर्जितन ना की जा सकें वह कभी भी ऊँचे स्तर का नहीं हो सकता। शारीरिक शिक्षा तथा स्वास्थ्य शिक्षा का सहयोग आधारभूत आवश्यकता है। यह दोनों समान नहीं हैं परन्तु परस्पर सम्बन्धित हैं।

स्वास्थ्य की परिभाषा है स्वस्थ रहने कीं दशा। स्वस्थ कर दशा में यह आवश्यक है कि व्यक्ति पूर्ण रूप से स्वस्थ हो अर्थात व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक, तथा आध्यात्मिक स्वास्थ्य प्राप्त हो। किसी रोग से या दुःख से मुक्त होना स्वास्थ्य नहीं कहा जा सकता यद्यपि रोग तथा दुःख से मुक्त होना स्वास्थ्य की एक दशा है। स्वास्थ जीवन का यह गुण है जिसके द्वारा मनुष्य भरपूर जीवन व्यतीत करता है तथा उत्तम रीति से सेवा करता है। स्वास्थ्य जीवन का

वह गुण है जो व्यक्ति को विकास के योग्य या पतन के योग्य बना देता है किन्तु इस गुण में अपार योग्यता है। सर्व श्रेष्ठ दृष्टि जीवन जो संभव है उसका आधार इसमें निहि त है। इस जीवन में उच्च कोटि के अर्जित शारीरिक गुण उसी प्रकार के संवेगात्मक मानसिक नियन्त्रण से बराबर किए जाते है।

यह विचार कि स्वास्थ्य का अभ्यास तथा अध्ययन किसी संगठित शिक्षा प्रणाली का एक अनिवार्य अंग है विश्व व्यापी है। स्वास्थ्य की परिभाषा में कहा गया है कि यह शिक्षा संस्था तथा उसके बाहर के अनुभवों का योग है जो आदत भावनाओं व्यक्ति सम्बन्धी तथा जाति सम्बन्धी एवं समाज स्वास्थ्य के ज्ञान को लाभप्रद रूप में प्रभावित करता है।

इसके अनुसार स्वास्थ्य शिक्षा सम्पूर्ण संस्थात्मक कार्य है जो परिवार तथा समाज तक पहुंचता है। इसके द्वारा एक प्रयोगात्मक ज्ञान, स्वस्थ जीवन व्यतीत करने के नियम, स्वास्थ्य सम्बन्धी आदतों की प्राप्ति की महत्ता तथा स्थायी रुचि की प्रेरणा जिसके कारण आत्म सहायता बहुतायत से उपलब्ध हो, उत्पन्न होता है।

स्वास्थ्य शिक्षा प्रयोगात्मक होनी चाहिए। जितना ही स्वास्थ्य स्कूल के जीवन में होगा उतना ही समाज को लाभ होगा।

स्वास्थ्य के दो मुख्य भाग हैं प्रथम रोग की चिकित्सा तथा अप्राकृतिक अवस्थाओं का सुधार । द्वितीय भाग है रोग तथा अवस्थाओं का अवरोध तथा एक शक्ति शाली स्वास्थ जाति निर्माण जिसमें अस्वस्थता की अवस्थाओं तथा करणों का निवारण कर दिया जाता है ।

अभी तक शारीरिक तथा स्वास्थ्य शिक्षा को साधारण शिक्षा में यह स्थान प्राप्त नहीं है होना चाहिए था । किन्तु अब स्थिति में परिर्वतन हो रहा है ।

स्कूल में दिए जाने वाली शारीरिक तथा स्वास्थ्य शिक्षा को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है ।

(१) शारीरिक कार्यक्रम ।

(२) स्वास्थ्य शिक्षा तथा स्वास्थ्य की आदतों के विकास के उपाय ।

(३) शारीरिक तथा डाक्टरी परीक्षा तथा परीक्षा के परिणाम नुसार कार्य

(४) स्वास्थ्य के दृष्टि कोण से स्कूल का वातावरण ।

न केवल उपयुक्त शारीरिक शिक्षा का कार्यक्रम स्कूल में आवश्यक है वरन् स्वास्थ्य शिक्षा के अन्तर्गत सिद्धान्त के घण्टे होने भी आवश्यक है । भारत वर्ष में अधिक दु:ख अप्रसन्नता का

कारण प्रायः अज्ञानता है। इसके अवरोध के लिए जो सुझाव रखे जाते हैं उन पर भी चलने की चेष्टा नहीं की जाती। स्कूल ही वास्तविक स्थान है जहां से स्वास्थ्य शिक्षा आरम्भ की जा सकती है। यहीं से स्वास्थ्य सम्बन्धी आदते अर्जित की ज्रा सकती है और जिवन में प्रयोग किया जा सकता है। इसके द्वारा अज्ञानता, अन्धविश्वास तथा अस्वस्थता कम हो जायगी तथा जीवनवधि बढ़ जायेगी।

प्रत्येक व्यक्ति को शारीरिक स्वास्थ्य मानसिक स्वास्थ्य तथा सामाजिक स्वास्थ्य इन तीनों की आवश्यकता होती हैं। ये ज्ञान स्वास्थ्य शिक्षा पाठ्य क्रम के द्वारा दिया जा सकता है जिसमें व्यक्तिगत सामूहिक स्वास्थ्य, प्रारम्भिक शारीरिक क्रिया लैंगिक स्वास्थ्य तथा प्रारम्भिक चिकित्सा आता है। स्वास्थ्य सम्बन्धी मासिक नियम से सभी को परिचित होना चाहिए इसके द्वारा व्यक्ति की प्रसन्नता तथा चतुरता में वृद्दि होगी। इसके द्वारा जीवन की विभिन्न अवस्थाएँ तथा समस्याओं का सामना किया जा सकता है।

आत्म मानसिक स्वास्थ्य के चार चित्र है। स्वास्थ भावना, नियन्त्रित इच्छा सशोधितं मूल प्रत्तियाँ तथा उपयुक्त ज्ञान। मानसिक तथा शारीरिक स्वास्थ्य में घनिष्ठ सम्बन्ध तथा यह एंव दूसरे को प्रभावित करती है।

इसके साथ ही साथ मनुष्य को सामूहिक स्वाथ्य का भी ज्ञान होना चाहिए। मनुष्य सामाजिक प्राणी है और जो कुछ वह करता है उसका प्रभाव दूसरे व्यक्ति पर भी पड़ेगा। व्यक्तिगत स्वास्थ्य तथा सामुहिक स्वास्थ्य में भी घनिष्ट सम्बन्ध है। पारिवारिक स्वास्थ्य तथा सामूहिक स्वास्थ्य में भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। स्कूल के कमरे तथा फील्ड इत्यादि वहुत ही साफ सुथरा होना चाहिए शुद्ध पीने का जल की व्यवस्था होनी चाहिए तथा अच्छे मेज़ तथा कुर्सी होना चाहिये। कमरे खुले तथा प्रकाश पूर्ण हों। शौचालय तथा स्नानागार आदि साफ तथा स्वच्छ हों। सर जार्ज न्यूमन ने लिखा है कि स्कूल स्वास्थ्य सेवा का उद्देश्य बालक की शिक्षा तथा नागरिकता की शिक्षा के लिए है।

बालक को इस योग्य कर दिया जाये जिससे वह शिक्षा उस के लिये आयोजित है वह उसमें भाग ले सके। इस हेतु शिक्षा बालक के शारीरिक योग्यता तथा शक्ति के अनुसार प्रणाली का प्रयोग करें।

साधारण शारीरिक क्रिया में स्वास्थ्य तथा बढ़ाव, निर्बलता सत्य मार्ग से भटकाव दोष या शारीरिक अथवा मासिक रोग का पता लगाना तथा चिकित्सा की सलाह देना, होना चाहिये इन दोषो का कारण तथा अवस्था का पता चलाना और उनका अवरोध।

व्यक्तिगत स्वास्थ्य की शिक्षा तथा अभ्यास स्कूलों में जिससे बालकों में स्वास्थ्य की अदात स्थापित हो जाये ।

**मनोरंजन:----**

मानव जाति की आधारभूत आवश्यकता है । मनोरंजन शारीरिक शिक्षा से एक विस्तृत अर्थ लिये हुये शब्द है । इसके अन्तर्गत स्पोटस खेल ताल बद्द क्रिया तथा वे क्रियाएँ जिनमें व्यक्ति केवल प्रसन्नता के लिये भाग लेना है आते है । मनोरजंन क्रिया में भाग है ऐच्छिक रीति तथा अपने आप लिया जाता है तथा उसके लिये किसी ज़ोर या परितोषिक की आवश्यकता नही होती शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में मनोरंजन बहुत महत्व रखता है । इसमें इसका अपना एक विशेष स्थान है । शारीरिक शिक्षा में अधिकता से भाग लेना मनोरंजन ही है । किसी भी क्रिया में किसी की रुचि हो जाने के कारण वह मनोरंजन का कारण बन जाता है । खाली समय सदोउपयोग मनोरंजन पर ही आधारित होता है । मनोरंजन का अर्थ है अपने को शरीर आत्मा तथा मन को बिलकुल परिर्वातित कर देना । खाली समय में यही होना चाहिए । मनोरंज़न से मन को शान्ति शरीर को आराम और आत्मा को प्रेरणा मिलती है । आधुनिक जीवन जाटिलता, रूखापन, कार्य में अथवा यन्त्रों तथा मशीनो के साथ कार्य करना जहाँ परस्पर मनुष्यों में लेन देन संभव

नही है वहाँ मनुष्य अपने को ऐसी स्थिति में पाता है जो शोचनीय है। ऐसी अवस्था में यदि वह मन बहलाव मनोरंजन के द्वारा न करें तो उसका मस्तिष्क विकृत हो जायगा।

मनोरंजन को अब कोई बेकार चीज़ नहीं बल्कि स्वास्थ्य के लिये परमावश्यक समझा जाता है। यह पूर्ण सन्तुलित व्यक्तित्व के लिए अनिवार्य है। यह खाली समय को शैक्षणिक तथा सामग्री से व्यतीत करने का एक मार्ग जिससे खाली समय भी उपयोगी सिद्ध होता है। L. P. Jacks कहते हैं कि, "It is not a escape from the toil of Education into the emptiness of a vocation ! but a vitali Zing element in the process of edu cation itself."

मनोरंजन के अभाव में शैक्षणिक प्रणालियाँ अपना कार्य सही रूप से नहीं कर सकती। बालकों के शिक्षा के लिए मनोरंजन तथा खेल के द्वारा शिक्षा प्रणाली ही एक केवल शिक्षा देने का साधन है। मनोरंजन के ही कारण प्रत्येक बालक वातावरण के प्रभाघ से धूप, छाँह, सर्दी, गर्मी से नहीं डरता। अपनी थकावट को वह भूल जाता है। क्रिया जिसके द्वारा मनोरंजन न मिले शरीर के सुस्त होते हुए भी शिथिल रहता है तथा रुचि समाप्त हो जाती है।

यह कहा जा सकता है कि मनोरंजन से प्रत्येक बालक आत्म स्वतंत्रता और आनन्द प्राप्ति करता है तथा अपने आप को भूल जाता है तथा सहृदयना से पूर्ण रूप से क्रिया में भाग लेता है तथा उससे संतोष सफलता तथा आनन्द प्राप्त करता है Salvson महाशय की परिभाषा अति उत्तम है उनका कहना है, "Recieation is not a matter of motion but rather of emotian, it is a Personal response, a Psychological reaction, an attetude, an approach, a way of life" अर्थात मनोरंजन गतिविधि नहीं है किन्तु भावनाओं से ओत प्रोत है यह व्यक्तिगत प्रतिकर है, मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया दृष्टि कोण, सामीप्य और जीवन का एक मार्ग है।

मनोरंजन रुचियों तथा मनोवांछित कार्यों को विकसित करता है। मनोरंजन कार्य के करने में नहीं है किन्तु यह एक प्रेरणा एक भाव तथा व्यक्ति के कार्य का मूल्य है जिसके कारण किसी कार्य को मनोरंजन महत्ता मिलती है।

किसी स्कूल के मनोरंजन के कार्य क्रम में निम्नलिखित कार्य हो सकते है। आजन्म मनभावन कार्य का विषय तथा रुचि का विकास अच्छी पुस्तकों को पढ़ने में प्रसन्नता तथा आन्नद बनाना बाह्य जीवन व्यतीत करने में प्रसन्नता, कैम्पिंग, पर्यटन, बागबानी आदि के द्वारा।

संगीत ।

कला कौशल ।

गतिवाही कौशल ।

सामूहिक मनोरंजन ।

स्पोर्ट्स आदि से प्रसन्नता ।

जल क्रीड़ा ।

विश्राम ध्यान की आदत ।

शिक्षा की महत्ता और युवकों के लिए उसकी सम्भावना उसी समय समझी जा सकती है जब शिक्षा तथा मनोरंजन पृथक नहीं किन्तु एक साथ कर दिए जाते हैं। शिक्षा मनोरंजन नहीं है वह अपाहिज अपूर्ण तथा आधी की हुई चीज़ है और वह मनोरंजन जिसमें शिक्षा नहीं है उसमें मन बहलाव का कोई मूल्य नही हैं ।

एक स्वास्थ सुसगंठित समतुल्य शरीर किसी भी मनुष्य तथा राष्ट्र के लिए एक श्रेष्ठ लाभ कर वस्तु है। जब तक कि सहीरीति से हृष्ठ पुष्ठ स्वस्थ शरीर का आधार न हो तब तक अच्छी वस्तुओं की ओर बहुत अधिक प्रगति नही हो सकेगी। यह आवश्यक है कि शिक्षा का यह दृष्टि कोण ऊँचा किया जाय जिससे शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन उसमें अपनी वास्तविक महत्वपूर्ण स्थिति लें।

एक उपयुक्त शिक्षा में स्वास्थ्य, शारीरिक शिक्षा

तथा मनोरंजन के सर्थाक अनुभव है । अंगों के समतुल्य तथा मेल के सिद्धान्त के कारण ही नहीं किन्तु अंगों तथा वातावरण के पारस्परिक सम्वन्ध के कारण यह अनिवार्य हो जाता है कि यह शिक्षा यदि इसे उपयुक्त होना है तो इसे नेतृत्व, कार्य क्रम तथा साधन का उत्तरदायित्व लेना है । यह निम्नलिखित विकास से सम्भव है:—

एक तो बालकों के लिए कि विस्तृत स्वास्थ्य सुरक्षा कार्यक्रम जिसमें उपयुक्त शारीरिक परीक्षा संक्रामक रोग पर नियन्त्रण तथा स्कूल के सम्पूर्ण कार्यक्रम में स्वास्थ्य स्कूल जीवन जिसका आदेश शिक्षा के ध्येय की ओर हो जिसमें स्वास्थ्य सम्बन्धी बातों में आत्मनिर्देश की योग्यता विकसित की जाए ।

वैज्ञानिक सामग्री पर आधारित स्वास्थ्य शिक्षा जो क्रमशः दिए गए हों जिनका उद्देश्य आत्म प्राप्ति तथा सामाजिक आदेश हों । एक दैनिक शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम सबो के लिए जिस में शैक्षाणिक रूप से स्वस्थ तथा विकास के लिये ऐच्छिक कार्य हो, जो विधिवत हो तथा जिससे व्यक्तिगत तथा सामूहिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके ।

कौशल तथा मनोरंजन पूर्ण तथा मन भावना कार्य में रूचियों के विकास का अवसर जो सम्पूर्ण कार्य क्रम में उपलब्ध हो किन्तु

प्रायः संगीत, शास्त्र, नाटक, कला, शारीरिक शिक्षा तथा स्कूल में क्लबों के कार्य पर अधिक बल दिया जाये ।

कमरे के बाहर (outdoor) तथा भीतर (indoor) में उपयुक्त साधन तथा समय पाठ्य क्रम के प्रत्येक हिस्सों के लिये तथा प्रशिक्षित व्यक्ति तथा छात्रों का संगठन जिस से शिक्षा का कार्य हो, उत्तम रूप से हो सके ।

सामान्य शिक्षा में जो व्यवस्था अपनायी जाती है उसी के आधार पर वैज्ञानिक वर्गीकरण अंक प्राप्ति तथा उत्तीर्ण करना आदि प्रयोग करना चाहिये ।

स्कूल में स्वास्थ्य, शरीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन का संगठन तथा संचालन एक ही प्रवर्तक विभाग के आधीन जो समाज तथा स्कूल की चेष्टाओं तथा उपाय का उपयोग एक सर्वसाधारण उद्देश्य तथा सिद्धान्तों के लिये जिसमें धन, साधनों का उपयोग तथा कर्मचारियों में सहयोग शिक्षा के साधारण उद्देश्यों के साथ मिलते हुये हों तथा उसी ओर आदेशित हो, करें ।

---

(५)

# शारीरिक शिक्षा का व्यवसाय

व्यवसाय तथा धन्धा साधारण बोल चाल के शब्द हैं। इनमें सबसे बड़ा अन्तर यह है कि व्यवसाय को दार्शनिक तथा वैज्ञानिक विचारों पर चुना जाता है। हर एक मानव अपने व्यवसाय को चुनते समय अपने आगामी सारे भविष्य को रख लेता है लेकिन किसी धन्धे को चुनने वाला केवल धन्धे की कीमत तथा प्रसार पर ही ध्यान देता है। धन्धा नियम प्रणाली और निर्देशन के आधार पर चलता है। धन्धा कभी भी बदला और बनाया जा सकता है। समाज में धन्धें की जैसी मांग है उसी के अनुसार उसे परिवर्तित कर लिया जाता है। धन्धें में किन्हीं मान मर्यादा की आवश्यकता नहीं। किन्तु व्यवसाय का चुनने वाला सभी पहलुओं से उसे देखता है। यदि इसमें भावी जीवन के उत्थान का कोई स्थान दिखाई पड़ता है तो परीक्षणो और सुझाओं के व्यवसाय से सहमत हो जाता है। व्यवसाय को अपनाने के बाद व्यक्ति क्रमवद्ध तथा विधिवत रूप से चलता है। व्यवसाय की निम्नलिखित विशेषतायें हैं:—

(१) व्यवसाय को अपनाने वाले व्यक्ति कभी अपने स्वार्थ या लाभ को नहीं सोचते। इसमें सेवा का आदर्श उन्हें प्रेरित करता है। उन्हें व्यवसाय से समाज की सेवा करने का लक्ष्य रहता है।

(२) व्यवसाय में प्रवेश मिलने से पहिले एक विशेष परिवृत्त आवश्यक है। परिवृत्त की अवधि योग्यता पर निर्भर है।

(३) व्यवसाय में व्यवहारिक कार्य का आधार एक सूत्र बद्ध वैज्ञानिक ज्ञान है प्रत्येक मानव अपने व्यवसाय को एक निश्चित क्रम से चलाने का भरसक प्रयत्न करता है।

(४) जो व्यक्ति एक व्यवसाय को अपना लेता है उसे उस व्यवसाय में आजीवन रहने की प्रेरणा स्वयं मिल जायी है। वह जीवन में उन्नति केवल उसी व्यवसाय में करता है।

(५) व्यवसाय को अपनाने वाले सभी व्यक्ति कार्य करने में तेज एवं संगठित होते हैं। ओर सर्वदा अपने व्यवसाय में उज्वल भविष्य की आकांक्षा करते हैं।

(६) अपने व्यवसाय पर आये हुए संकट के निवारण के लिये संघर्ष करने की भावना स्वसं ही उत्पन्न होती है। यदि व्यवसाय गलत भी चुन विया गया है तो अन्तः प्रेरणा द्वारा स्वयं रुचि पैदा हो जाती है।

**शारीरिक शिक्षा** साधारणतया देखा गया है कि शारीरिक शिक्षक अपने व्यवसाय को और व्यवसायों की भाँति विकासित

नहीं कर सके यह व्यवसाय नवीन है। आरम्भ में काफी संकट उठाने पड़ते है। शिक्षण, वकालत तथा डाक्टरी जैसे पुराने व्यवसायों की भाँति वास्तविक रूप नहीं ले सका। इसके विकसित न होने के निम्नलिखित कारण हैं:—

(१) इस व्यवसाय को समाज और वातावरण का उचित सहारा नहीं मिल सका।

(२) इसकी अर्थिक तया वित्तम स्थिति कमजोर है।

(३) इस व्यवसाय में सदस्य पूर्ण प्रशिक्षित नहीं होते।

(४) सामाजिक उदासीनता के कारण इसे क्रियात्मक रूप प्राप्त नहीं होता कहीं कहीं पर तो इसकी अनुपस्थित में ही मिथ्या धारणायें प्रचलित हैं।

(५) इस व्यवसाय मे अज्ञानी विशेषज्ञा तथा कुछ उन आलसी शिक्षकों की उदासीनता जो कि अयोग्य हैं उनके कारण प्रसार नहीं हो रहा है।

(६) और व्यवसायों की भांति शासन भी समान हितों की रक्षा नहीं कर रहा है।

(७) कुछ लोग इस व्यवसाय को क्रियात्मक रूप में आने से पूर्व ही आलोचनात्मक दृष्टि से देखते हैं और व्यवसाय के मार्ग मे वाधा बनाते हैं।

**व्ययवसायिक गुण**:----अन्य व्यवसायों की भाँति इस व्यवसाय में भी व्यवसायिक गुण है। निम्नलिखित व्यवसायिक गुण दिये गये हैं।

(१) **सेवा का आदर्श**:----समाज में और कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जिसमें इस व्यवसाय की अपेक्षा जन समुदाय की सेवा करने का अधिक अवसर मिले। जितने व्यक्ति इस व्यवसाय की सेवा के आदर्श से सम्बन्धित है। अन्य किसी व्यवसाय नही उदाहरण स्वरूप किसी प्रतियोगिता में उसके संगठन कर्त्ता और संचालक जो सेवा कर रहें उनसे अधिक करते हैं जो प्रतियोगिता में भाग ले रहे हैं और उनसे भी अधिक जो दर्शकगण हैं।

यदि शारीरिक शिक्षक अपने व्यवसाय को एक निश्चित आदर्श और नैतिकता को लेकर चलें और अपने उत्तारदायित्व को समझें तो समाज पर सबसे अच्छा व्यवसायिक प्रभाव पड़ेगा। शारीरिक शिक्षा को राष्ट्र भावना और समाज सेवा की भावना को रखते हृमे व्यक्तिगत स्वार्थ और आर्थिक लाभ त्यागना पड़ेगा। व्यवसाय की उन्नति करने के लिए सेवा का आदर्श सर्वोत्तम पहलू है। सेवा करते समय सामप्रदायिकता, ऊँच नीच, छूआ छूत सभी छोड़ना पड़ता है।

(२) **क्रम बद्ध ज्ञान**:----शारीरिक व्यवसाय एक क्रम बद्ध

सूत्रवद्ध श्रृंखला है जिसको अपनाने वाले व्यक्ति अनुकरण करते हैं। और सभी सदस्य समान रूप से अपने कार्य मार्ग पर बढ़ते हैं। व्यवसायिक रूप प्रदान करने वाले शिक्षकों का जीवन भी क्रमवद्ध होता है जिसमें प्राप्ति के लिये उन्हें प्रशिक्षण दिया जाता है।

(३) **अजीवन सदस्यता----**जो व्यक्ति जिस व्यवसाय को अपना लेता हैं उसी में रहने की इच्छा करता है पदोन्नति, धनोपार्जन उसी व्यवसाय में करने की चेष्टा करता है। धनोपार्जन शारीरिक शिक्षा में अवनति करने के लिये नहीं किया जाता है वरन उसको उन्नति करने के लिये। शारीरिक शिक्षा में भी सदस्यता के सभी गुण विद्यमान हैं।

(४) **प्रतिशिक्षण की अवधि:----**शारीरिक शिक्षा बनने निम्नलिखित व्यवसायिक प्रमाण पत्र लेने पड़ते हैं। जिनकी योग्यता निश्चित हैं।

| | | |
|---|---|---|
| हाई स्कूल | १ साल | प्रमाण पत्र |
| इन्टरमीडियेट | १ साल | उच्च श्रेणी सार्टिफिकेट |
| बी० ए०, वी० एस सी० | १ साल | डिप्लोमा |
| हाई स्कूल इन्टरमीडियेट के बाद। | ३ साल | डिग्री |

इनके अतिक्ति व्यायामशालाओं, अखाड़ों सेना तथा राजकुमारी अमृत कौर प्रतिशिक्षा के अन्तर्गत छोटे छोटे प्रतिशिक्षण जिनका स्तर उचित नहीं। अब बी० ए० और एम० ए० करने के बाद M. P. Ed. P. h.d. के प्रदान करने के साधन जुटाये जा रहे हैं। जिससे व्यवसाम में और लोग रूचि तथा ध्यान आकर्षित करें।

(५)**व्यवसायिक संस्था:**----यह व्यवसाय की एक संस्था है और इस संस्था के सभी सदस्यस शक्ति और कार्य करने में समर्थ हैं इस संस्था का रूप मजदूर पार्टियों की तरह होकर एक व्यवस्थपित रूप है जिससे व्यवसाय और व्यवसायिक ज्ञान हो सके काफी शारीरिक शिक्षा विशेषज्ञ इस व्यवसाय में हैं।

(६)**व्यवसायिक आर्कषण:**---इस व्यवसाय में समाज को आर्कषित करने के गुण हैं। जिससे मानव अपने आप इस ओर आते हैं।

**शारीरिक शिक्षा का स्तर तथा आर्थिक स्तर:**----इसका स्तर ऊँचा हैं। शारीरिक शिक्षकव्यवसायिक गुण के प्रभावित हैं। वह स्टाफ के सदस्य के सभी सदस्यता कर सकते हैं। उसकी योग्यता उसी के स्तर के किसी अध्यापक से कम नहीं रहती है।

भारतवर्ष में शारीरिक शिक्षक को जो वेतन मिलता हैं वह वहुत कम हैं सभी प्रान्तों में विभिन्न वेतन हैं। इस वेतन से शारीरिक शिक्षक संतुष्ट नहीं हैं न उसकी आजीवका चल सकती इसलिए सरकार को उनके आय तथा आर्थिक स्तर पर ध्यान देना चाहिए।

---

(६)

# शारीरिक शिक्षा के आधार

The, sources on which physical education is based lie he in seveal fields of human knowledge particalarly philosophy,physiology.Anatomy,sociology psychology psychiatry,Art chemistry, physics and Economics

उपरोक्त वर्णन से विदित है कि शारीरिक शिक्षा के आधार दो प्रकार से विभाजित किये जा सकते हैं दार्शनिक तथा वैज्ञानिक

दार्शनिक आधार शारीरिक शिक्षा में प्रकट करता कि शारीरिक शिक्षा के ध्येय तथा उद्देश्य कैसे निर्धारित होगें और भिन्न-भिन्न आदर्श में किस प्रकार प्रयोग होंगे। यह आधार समाज के दर्शन तथा अनुभव से प्राप्त किये जाते हैं और सत्य माने जाते हैं। जैसे जैसे नये आदर्श तथा विचार प्राप्त होते जाते वैसे ही इन में भी परिवर्तन होता है। समाज का दर्शन समाज के हाथ परि- वर्तनशील है। इसी कारण शारीरिक शिक्षा में ध्येय तथा उद्देश्य में समाज के दर्शन में परिवर्तन के साथ साथ परिवर्तन करना अनिवार्य होता है क्योंकि शारीरिक शिक्षा में भी समाज पग पग पर प्रतिबिम्बित होता है।

एक सही सफल शारीरिक शिक्षा का कार्यक्रम मांस पेशियों में

शक्ति तथा कौशल के ज्ञान पर ही नहीं होता । यह आवश्यक है कि मानव ज्ञान के सर्वोत्तम प्राप्त आंकड़े शारीरिक शिक्षा के ध्येय और अभ्यास दोनों को निर्धारित करे । शारीरिक शिक्षा के सम्भावित प्रश्नों में 'क्यों' और 'क्या' का का उत्तर दर्शन शास्त्र से प्राप्त होता है । 'कैसे' प्रश्नों का उत्तर अन्य विज्ञानों से प्राप्त होता है ।

## शारीरिक शिक्षा का जीव वैज्ञानिक आधार

मनुष्य के जीव वैज्ञानिक पृष्ठभूमि से हमें अनेक विचार मिलते हैं जो शारीरिक शिक्षा की योजना तथा शिक्षा के कार्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं । इस स्त्रोत से तथ्यों का उपार्जन निम्न-लिखित के अध्ययन से हो सकता है––

(१) मनुष्य का एक कोष्ठ प्राणी से बहु कोष्ठ प्राणी को वर्त्तमान रूप अनेक जीव वैज्ञानिक जटिलताओं के अन्तर्गत होते हुये पाना ।

(२) मानव अस्थि पंजर का विकास भिन्न भिन्न आयु स्तर पर ।

(३) पुरुष तथा स्त्रियों में रचनात्मक तथा भावात्मक विभिन्नता ।

(४) वार्षिक आयु,रचनाशास्त्र आयु तथा शरीर क्रिया शास्त्र आयु में भिन्नता ।

(५) शरीर की रचना प्रकार ।

(६) वायुतन्त्रों का कार्य ।

(७) नाड़ी तन्त्रों का कार्य।

(८) भोजन प्रणाली जिसके द्वारा शरीर को शक्ति मिलती है।

(९) मासिक तथा संवेगात्मक जोखिम जिनके द्वारा बालकों को हानि पहुँच सकती है।

(१०) रोग तथा दुर्घटनाओं का भय।

(११) वंशानुक्रमिक प्रतिक्रियाओं का उपाय जो मनुष्य अपने सुधार में प्रति व्यहार करती है।

जीव विज्ञान आधार में प्रारम्भिक प्रश्न मनुष्य के जीवन की उत्पति का है। इस का सही उत्तर उस के वंशानुक्रम तथा वातावरण के प्रभाव के अध्ययन के द्वारा हो सकता है। समय समय पर कभी एक पर कभी दूसरे पर जोर दिया गया और महत्ता गयी किन्तु इस विषय में वर्त्तमान स्थिति यह है कि दोनों का प्रभाव अपने अपने स्थान पर महत्वपूर्ण है और मनुष्य दोनों के सयुक्त प्रभाव हो उत्पन्न तथा जीवित रहता तथा बढ़ता है। वर्त्तमान समय में उतनी महत्ता अच्छी प्रकार मालूम होती है। पहिले यह समझा जाता था कि मनुष्य के अवगुण उस के वंशानुक्रम के कारण होते हैं किन्तु अब यह प्रमाणित हो चुका है कि इन का सही कारण मनुष्य के वातावरण की शक्तियों का उचित प्रयोग न होना तथा सम्भावित शक्तियों का उचित रचनात्मक प्रयोग के असमर्थता के कारण है।

मनुष्य वातावरण को अपने अनुकूल करने की अत्यन्त चेष्टा करता चला जा रहा है। सभ्यता का चित्र बिलकुल परिर्तित हो गया। मनुष्य प्रकृति तथा वातावरण के ऊपर अपने अविष्कारों तथा वैज्ञानिक उन्नति के कारण नियन्त्रण कर रहा है आन्तरिक्ष यात्रा इसका एक प्रमाण है। अणु अविष्कार ने युग में घोर परिवर्तन कर दिया। समाज अपने को शासन तथा अधिकार से मुक्त समझ रहा है और तेजी से परिवर्तनशील है। ऐसी अवस्था में मनुष्य के व्हार पर यदि समाज का नियन्त्रण न हो तो वह अपनी पायी हुयी स्वतंत्रता से खुद अपने आप को विध्वंस कर लेगा मनुष्य के व्यवहार पर समाज के नियन्त्रण में शारीरिक शिक्षा का सहयोग आवश्यक है। मनुष्य के सही व्हार के लिए वातावरण का सही नियन्त्रण आवश्यक है। मनुष्यों के प्रकृति बदलने में वातावरण के नियन्त्रण की आवश्यकता है। मनुष्य की मूल प्रवृत्ति तथा संवेग आदि में परिवर्तन वातावरण में नियन्त्रण के द्वारा ही होगा वातावरण के नियन्त्रण से हम अपने आप में परिवर्तन ला सकते हैं जीवन की नयी तथा अच्छी आदतों को अर्जित कर सकते हैं और उन प्रभावों से वंचित रह सकते है जो हमें पतन की ओर ले जाती है। इस मानव परिवर्तन में वंशानुक्रम तथा वातावरण दोनों का सहयोग है -

वातावरण के नियन्त्रण पर ज़ोर देने के कारण यह भूलना

नहीं चाहिये कि वंशानुक्रम का महत्त्व उससे कम है। वंशानुक्रम के प्रभाव को हम कभी भी कम नहीं समझ सकते। वंशानुक्रम वह बीज है जो वातावरण के मिट्टी में उगता है। बीज के अन्दर कितनी ही सम्भावनायें है जो सही मिट्टी में सफल हो सकती है। वंशानुक्रम के कारण ही मनुष्य पहले से अधिक समर्थ है कि वह इस जीवन में ही ऐसे वातावरण में रह सके जो वर्तमान वातावरण से कहीं भिन्न है। वह संस्कृति,अविष्कार,भाषा, यन्त्र,शास्त्र तथा भिन्न भिन्न ज्ञान के द्वारा ऐसी परिस्थिति सम्भव कर लेता है। और ऐसे परिस्थति के उपलब्ध करने में उसे अपने में परिवर्तन लाना पड़ता है जिससे वह समाज का एक उत्तम सदस्य हो सके, दूसरों के साथ कंधा मिलाकर चल सकें, दूसरों के अधिकार को समझे। अपनी प्रकृति की वास्तविकता रखते हुये भी वह अपने में परिवर्तन लाता है। प्रकृति के कारण उसे पीड़ा होती अपनी आवश्यकता के लिए लड़ता तथा विरोध करता है, जो कुछ उसे मिल जाता उसे सराहता है और उस से संतोष करना सीखता है।

वंशानुक्रम की प्रकृति से हम इस बात का समर्थन करते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति अपने विशेष प्रणोदन,आवेश तथा अभिप्राय के द्वारा भिन्न भिन्न प्रकार में व्यवहार का प्रदर्शन करता है।ये व्यवहार समाज के नियम के अनुसार होना आवश्यक हैं। इस हेतु इनको

कभी कभी बलिष्ठ करना,कभी निर्बल करना,कभी विलयन या दमन करने की आवश्यकता होती है। आवेशों की प्रकृति को समझने के लिये इसका अध्ययन आवश्यक है नहीं तो इच्छा तथा रुचि को सही रीति से समझ नहीं सकते। वर्तमान समय में अनुशासन तथा स्वतंत्रता के श्रेष्ठ विषय को उचिय प्रयोग के लिये इसे जानना आवश्यक है।

मूल प्रवृत्तियों के कारण मनुष्य कुछ कार्यों की ओर विशेष ध्यान देता है। हम यह भी देखते हैं कि इसी शक्ति के कारण मनुष्य भिन्न प्रकार के मांस पेशियों के कौशल सीखने के योग्य हैं और इसी शक्ति के कारण वह भिन्न भिन्न कार्यो की ओर प्रेरित होता है। इस व्यवहार को समाज से मान्यता प्राप्त लक्ष्य की ओर ले चलना है। व्यवहार के इस परिवर्तन मनोविज्ञान विशेष सहायक सिद्ध होता है। यह सत्य ज्ञान की मनुष्य की यह प्रकृति है कि वह कुछ विशेष कार्य करने के लिये प्रेरित होता है शारीरिक शिक्षा में बहुतपूर्ण स्थान रखता है। बालक सदैव प्राकृतिक क्रियाओं में व्यस्त रहते हैं अप्राकृतिक क्रियाओं में उन की रुचि नहीं होगी। वर्तमान वातावरण के कारण कभी कभी अप्राकृतिक सुविधाओं तथा सामग्री का प्रयोग सफलता प्राप्त करने के लिये लायी जाती हैं जैसे जिमनास्टिक के कुछ आपरेट्सपर और इन का करना परिस्थिति के

कारण अनिवार्य हो जाता है तो भी यदि इन कार्यों को करने में मानव प्रकृति तथा रुचि का ध्यान रखा जाय तो सफलता अधिक होगी।

अनेकों क्रियायें जिन्हें आधुनिक काल में प्राकृतिक कहा जाता है वे अपनी प्रारम्भिक अवस्था में वैसी नहीं थी। वर्त्तमान समय के खेल तथा मनोरंजन की क्रियायें प्रारम्भिक प्राकृतिक अवस्था में परिवर्तन के कारण आज परिवर्तित रूप में दिखायी देती हैं। जैसे भाला फेंकना जेवलिन के रूप में पत्थर फेंकना शाट के रूप में। ये प्रारम्भिक प्राकृतिक क्रियाओं ने वातावरण के कारण और उसकी आवश्यकताओं के अनुसार परिवर्तित रूप धारण कर लिया है।

इस बात पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है कि वंशानुक्रम के गुणों को वातावरण के द्वारा समाज की आवश्यकता तथा मान्यता के अनुसार आदेशित तथा नियन्त्रित किया जाय। इसी के द्वारा मूल प्रवृत्तियों में परिवर्तन सम्भव है। वे आन्तरिक गुण सदा वर्तमान रहते है किन्तु उनके काम करने का मार्ग तथा आर्दश समाज के आदेश के अनुसार होता है जिससे समाज का हित हो।

मनुष्य की गतिवाही क्रिया में कोई विशेष परिर्वतन नहीं

हुआ वे क्रियायें जो इतिहास के आरम्भ में थी वह ही अब भी हैं उनके प्रयोग करने से सतोष। समाज की दशा जैसी भी हो। इन क्रियायों का मूल्य जो था वह रहेगा बल्कि यह भी कहा जा सकता है कि वर्त्तमान समाज के लिये इन क्रियायों में निपुणता तथा फुर्तीलेपन से कार्य करने में अधिक संतोष होगा।

मनुष्य अपने शारीरिक तथा मानसिक गुणों को समाजिक वंशानुक्रम के द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाता है। वह अपनी भाषा, यन्त्र, कला, नियम, विज्ञान, दर्शन, अनुभव तथा बुद्धि के द्वारा अपने विचारों तथा कार्यों को परम्परा को देता है। सामाजिक वंशानुक्रम का दूसरा नाम सभ्यता है जो चलता रहता तथा बदलता रहता है।

आधुनिक सभ्यता में बैठ कर करने का व्यवसाय किसी एक कार्य में विशेषज्ञ होना, विशेष मानसिक शक्तियों का प्रयोग, अधिक अवकाश, मशीन तथा यन्त्रों से कार्य, शारीरिक शक्ति का अल्प प्रयोग आदि विशेष रूप से पाया जाता है। इनके कारण मानसिक तथा शारीरिक स्वास्थ्य की कितनी समस्यायें खड़ी हो चुकी हैं। ऐसी अवस्था में यह शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य है कि वह इस बात की ओर समाज का ध्यान आकर्षित करें की मनुष्य की प्रारम्भिक तथा अचल आवश्यकता प्रक्रिया में है और इसके बिना

संतोष प्राप्त करना असम्भव है और इस कारण सही व्यवहार का होना दुर्लभ होगा ।

शारीरिक शक्ति आदि नाड़ी तन्तुओं के कार्य के आधार हैं । बाल्यकाल में खेल के द्वारा ही मानसिक विकास होता है । जिन बालकों को बाल्यकाल में सही खेल का साधन तथा अवकाश प्राप्त नहीं होता, उनका सही विकास नहीं होता और परिणाम स्वरूप शारीरिक दोष, शक्ति का अभाव तथा बढ़ाव में कमी होगी अमेरिका के एक आंकडे से से पता चला है कि जिन्हे बाल्यकाल में विशेष रूप से खेलने का अवसर मिला तथा, युवा, काल, में भी खेलते रहे वे उतम तथा चतुर अधिकारियों में से हैं ।

जीव वैज्ञानिक रीति से तथा दूसरी रीतियों से मनुष्य का अध्ययन कोई सरल विषय नहीं । मनुष्य के अध्ययन तथा उसके विषय में सही ज्ञान प्राप्त करने के लिये उसे भिन्न भिन्न भागों में विभक्त करना पड़ता है । जिनकी परीक्षा तथा निरीक्षण करना होता है किन्तु इन भागों के अध्ययन ले सम्पूर्ण मनुष्य का ज्ञान नहीं हो सकता क्योंकि पूर्ण मनुष्य इन भगों के योग से अधिक है । क्यों कि पूर्ण मनुष्य इन भागों के योग से अधिक है । इतना होते हुये भी इस पूर्ण को जानने के लिये इन भिन्न भिन्न भागों के जो उसके बनावट तथा कार्य पर प्रकाश डालती है अध्ययन करना अनिवार्य हो जाता है । शारीरिक शिक्षा में

भिन्न भिन्न भाग पर ध्यान रखते हुये सम्पूर्ण मनुष्य की समस्या पर ध्यान देना है। यह हम निश्चित रूप से जानते हैं कि जैसे प्राचीन काल में वैसे ही वर्त्तमान में, और भविष्य में भी मनुष्य को उसकी मांस पेशियों की आवश्यकता होगी और इन की शक्ति के बिना वह अपने कार्य में पूर्ण रूप से सफलता प्राप्त नहीं कर सकता। क्योंकि हम अनुभव से जानते हैं कि जो निर्बल हैं वे सदा अपने कार्य मे असफल होते हैं। इन सब को देखते हुये इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि निर्बलता जीवन को हानि पहुँचायेगी, शरीर के अंगों की अज्ञानता रोग फैलायेगी तथा व्यक्ति के बढ़ाव तथा विकास की ओर से लापरवाही में राष्ट्र तथा मानव समाज को खतरा होगा। इस परिर्वतित संसार में हम किसी बात पर भरोसा कर सकें या न कर सकें किन्तु उपरोक्त कथन निश्चयात्मकता हम नहीं टाल सकते।

अतएव शारीरिक शिक्षा में जीवन की पूर्णता पर ध्यान देना आवश्यक है और उसके प्रारम्भिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। यदि हम इन सरल प्रारम्भिक आवश्यकताओं की ओर ध्यान देते हैं तो वे बातें जिनके विषय में हम निश्चित नहीं है अपने आप ही सम्भल जायेंगी। जैसे निर्बलता के स्थान में शक्ति लाना स्वस्थ जीवन की आवश्यकतायें, समाज के प्रत्येक सदस्य का स्वस्थ और सुखी होना राष्ट्र का धन है, तथा शक्ति शाली युवकों का

निर्माण । राष्ट्र की उन्नति के लिये अवकाश का सदुपयोग । अणु युग में अवकाश अत्याधिक होगा और इस कारण अवकाश के सदुपयोग की समस्या बहुत ही अधिक बढ़ जायेगी । इस आने वाली समस्या का हल अभी से करना है । यदि युवकों को उन कौशल तथा चातुर्यों में प्रशिक्षण दिया जाय तो इन्हें अपने अवकाश में व्यवहार कर वह समय का सदुपयोग तथा अपना विकास कर सकेंगे । जो राष्ट्र समय का सदुपयोग नहीं कर सकता वह कभी भी किसी हालत में उन्नति नहीं कर सकता । इसके लिए यह अति आवश्यक है कि अवकाश के सदुपयोग के लिये विशेष प्रशिक्षणं बाल्यकाल ही से हो । इस प्रशिक्षण के लिये खेल तथा मनोरंजन की सुविधायें तथा नगरों में खेल के मैदान की समस्या का हल नेतृत्व के लिये धन तथा खेल और मनोरंजन को शिक्षा से संतुलित करने की बहुत आवश्यकता है । यहाँ यह समझना आवश्यक है कि शिक्षा या शारीरिक शिक्षा पूर्ण मनुष्य की है । शारीरिक शिक्षा केवल शरीर की ही नहीं जिसमें आसन पसीना या व्ययाम ही हो यह शिक्षा जीवन सम्बन्धी है और जीवन का पूर्ण विकास इसके द्वारा होना चाहिए । इसलिये शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य हो जाता है कि बालक बालिकाओं की आवश्यकताओं को स्थिर करें और इस बात को स्पष्ट कर दे कि राष्ट्र को प्रसन्न

स्वस्थ युवक तथा युवतियों की आवश्यकता है जिनमें स्वास्थ, प्रसन्नता, निपुणता तथा चरित्र पूर्ण मात्रा में हो।

आधुनिक काल में जीवन पर भिन्न भिन्न बोझ के कारण मनुष्य जटिल समस्याओं में पड़ जाता है जिससे मोसिक विकार हो जाता है जिसका परिणाम मोसिक रोग होता है। मानसिक संतुलन के लिये शारीरिक शिक्षा अत्यन्त उपयोगी हैं। इसके द्वारा नाड़ी तन्तुओं में आधारित केन्द्रों को बलिष्ठ करें।

शारीरिक शिक्षा मानसिक तथा शारीरिक निर्बलताओं को दूर करने में समर्थ हैं यह विकार दूर करता, मांस पेशियों को बलिष्ठ करता, शक्ति के बढ़ाने मानसिक तथा शारीरिक विकास करने में समर्थ हैं और यही वर्त्तमान समय की विशेष समस्या हैं और इसका हल शारीरिक शिक्षा में है।

इसे हल करने का अर्थ है बैठकर व्यवसाय करने का विरोध, स्वस्थ जीवन की आवश्यकता का प्रचार, आजीवन शारीरिक कार्यों के प्रति रुचि का उद्‌गम तथा विकास, मनोरंजन के अवसर प्राप्त करना, बाहर प्रकृति में रहने का प्रेम वर्त्तमान काल के भय को ध्यान में रखते हुये कार्यों का चुनाव, हानिकारक प्रभावों का विरोध तथा पूर्ण विकास के साधन को उपलब्ध कराना।

साधारण मनुष्य अपने व्यवसाय में पूरी रीति से लगा रहता और ९९०/० दास की तरह लग जाते हैं जिससे वे धन उपार्जन कर सकें और संसार की प्रसन्नता मोल ले सकें किन्तु वास्तविक प्रसन्नता आर्थिक रीति से प्राप्त नहीं की जा सकती। शारीरिक शिक्षा,खेल तथा मनोरंजन के द्वारा जो जीवन का एक मुख्य हिस्सा हो जाता है, वास्तविक प्रसन्नता प्राप्त की जा सकती है।

जीव विज्ञान शास्त्र के द्वारा मनुष्य के माँस पेशियों, मुख्य अंगों तथा नाड़ी तन्तुओं का अध्ययन होता है। माँस पेशियों की उत्पति एक कोष्ठ से हुई और बढ़ते बढ़ते वर्तमान अवस्था को पहुची जो बहु कोष्ठ है और सरल जीवन से क्रम विकास के द्वारा जटिल हो गयी है। जैसे जैसे इन माँश पेशियों ने विशेष कार्य किये वे रक्त संचालन प्रणाली,श्वांस,पाचन,,मलमूत्र त्याग क्रियाओं की प्रणालि के रूप में बन गये।

मांश पेशियों के द्वारा मनुष्यो को चलने की शक्ति प्राप्त हुयी और इस व्यक्ति के द्वारा नये नये वातावरण का अविष्कार हुआ। इन नये वातावरण के कारण नयी स्थितियाँ उपस्थित हुयीं। इन नयीं स्थितियों के तय करने में क्रमशः नाड़ी तन्त्रुओं का विकास हुआ यह मनुस्यों के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण अंग हुआ यह शरीर को अन्तिम और बहुत ही जटिल मुख्य अंग है जो ऐच्छिक तथा

अनऐच्छिक क्रियाओं का नियन्त्रण करता है पूरे शरीर का नियन्त्रण नाड़ी तन्त्रुओं के द्वारा होता है। जो नाड़ी केन्द्र बड़ी बड़ी मांस पेशियों का नियन्त्रण करता है जैसे धड़ की मांस पेशियाँ के सब से पुरानी तथा शक्तिशाली है और यह आवश्यक है कि इनके ये गुण अच्छी अवस्था में रखे जायें जिनसे वर्तमान जीवन के बोझ के उठाने में सहायता मिल सके। यह कर्त्तव्य शारीरिक शिक्षा का है इस शिक्षा में बालकों तथा युवकों के शक्ति पूर्ण कार्य, उपयुक्त समय, शिक्षा तथा चातुर्य में प्राप्ति के लिए उपाय उपलब्ध करना है। ये शरीर के शक्ति शाली तथा तेज रीति से कार्य करने के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इन सब कार्यो के लिए स्कूल में कितना अवसर प्राप्त है यह अनेकों विषयों पर निर्भर है। यदि इसके लिये पर्याप्त अवसर स्कूल में नहीं तो स्कूल समय के बाद मिलना चाहिये जिसमें खेल तथा उसके सम्बंधित शिक्षा स्कूल के घण्टों में दी जा सकें और स्कूल समाप्त होने के बाद बालक खेल तथा अनेकों अभ्यास में भाग ले सकें।

यह एक अत्यन्त शोचनीय विषय है कि जीव वैज्ञानिक आधार पर जिस पर मनुष्य की नीव है उतना ध्यान नहीं दिया जाता जितना देना चाहिये। और इस लापरवाही से मनुष्य को विशेष हानि होगी इसका एक कारण यह है कि उन चीजों पर जो वास्तव

लिये समाजिक वस्तु तथा सांस्कृति पर भरोसा न कर के कार्यक्रम तथा यन्त्र कला आदि विषयों पर भरोसा रखना। इस पिछले विचार में मनुष्य में जीव वैज्ञानिक आधार की विशेषता को भुला दिया जाता है।

फिर देखने में आता है कि मनुष्य की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिये जो योजनायें बनायी जाती हैं उन में विशेषता आर्थिक्र समस्याओं पर अधिक ध्यान दिया जाता है और उनकी प्रकृति तथा उसके प्रसन्नता के साधारण स्त्रोत पर ध्यान नहीं दिया जाता। वर्त्तमान संसार में इस की हानिकारक परिणाम सर्वत्र देखने में आते हैं।

कितनी बार यह विचार किया जाता है कि मनुष्य में परिवर्तन लाने के लिये और उसकी प्रसन्नता के लिए सदाचार सम्बन्धी शिक्षा केवल उपयुक्त है किन्तु विचार यह है कि सदाचार का भी सम्बन्ध शरीर तथा उसकी अवस्था से है। इसका कारण है कि मनुष्य पूर्ण है बँटा हुआ नहीं। मनुष्य के पूर्णत्व में उसका शरीर मन तथा आत्मा मिले हुये हैं। इसी पूर्णत्व के नीव पर वर्त्तमान शरीर क्रिया शास्त्र चिकित्सा आदि निर्भर है जिसमें मानसिक तथा स्नायविक दुर्बलतायें खेल तथा व्ययाम के द्वारा ठीक किये जाते हैं इन क्रियाओं में व्ययाम पर विशेष जोर न देते हुये

खेल के साधारण गति तथा संतुलन,बाह्य चीजों की ओर आर्किषत करने के द्वारा और उनमें प्रति क्रिया करने के द्वारा एक ऐसा जीवन दर्शन उपलब्ध किया जाता है जो रुचि में संतुलन और व्यक्ति में एकता उत्पन्न करता है कि मानसिक विकारो के रोक थाम के लिये शारीरिक शिक्षा सहायक है ।

जीव विज्ञान के अध्ययन से हम मनुष्य के क्रमानुसार परिर्वतन की अवस्थाओं में असुविधायें देखते हैं । जैसे चौपाया से द्विपद अवस्था प्राप्त करने में लाभ होते हुये असुविधा बहुत है । इस अवस्था में आने से हाथों की स्वतंत्रता हुयी और मस्तिष्क का विकास हुआ किन्तु साथ ही साथ मानवतुला [Balance], आसन की समस्यायें सामने आ गयीं । इस समस्याओं का सुधार होते रहना आवश्यक है इसलिये शारीरिक शिक्षा के द्वारा बालकों के आसम के आधार जैसे बैठना, खड़ा होना तथा चलना आदि पर ध्यान देना आवश्यक है । सभ्यता के कारण इन पर बुरे तथा अच्छे प्रभाव दोनों पड़ते हैं । वर्त्तमान सभ्यता की तुलना प्राचीन सभ्यता से की जाय तो बहुत अन्तर मालूम होगा और क्रमशः उनके कार्यों में परिवर्तन होता गया किन्तु आधारभूत प्राकृतिक कार्य जैसे दौड़ता कूदना, उठाना ले जाना फेकना, । चढ़ना तथा झूलना आदि में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ वे एक से ही हैं ।यह सत्य है कि वर्तमान सभ्यता के वातावरण में उनके रूप तथा नाम बदल दिये जा सकते

हैं जिसके आधुनिक सभ्यता की सामग्री मालूम हों।

शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में इन जातीय प्राकृतिक क्रियाओं का उपयोग आवश्यक है और इन्हीं के आधार पर बालकों का उचित शारीरिक विकास सम्भव हो सकेगा। वर्तमान समय के जटिय खेल इत्यादि इन्हीं सरल कार्यो पर आधारित हैं।

सभ्यता के विकास के कारण बालक को अप्राकृतिक वातावरण में रहना पड़ता है और इस कारण उस पर तथा उसके शरीर पर बुरा प्रभाव पड़ता है। अस्थि पंजर जो सदैव मानव शरीर का ढांचा होता है प्रत्येक आयु में भिन्न होते हैं। बालक पन में इन पर बुरा प्रभाव बहुत शिघ्रता से हो जाता है। शारीरिक शिक्षा के द्वारा इस ढांचे की ओर ध्यान देना तथा उपयुक्त सुधार करना अति आवश्यक है।

जीव विज्ञान के द्वारा बहुत ही महत्व पूर्ण वातें मानव शारीरिक के विषय में जानी जाती है। जैसे जन्म के समय बच्चे की रीढ़ की हड्डी लचीली होती है और रीढ़ के हड्डी का प्राकृतिक सुझाव बनाये रखना शरीर के लिये अति उपयोगी है। स्त्रियों का पेलबीस Pelvis पुरुषों से चौड़ा होता है इस कारण उनके दौड़ने की योग्यता कम होती। पुरुष तथा स्त्रियों में शरीर रचना तथा शरीर क्रिया में अन्तर है और शारीरिक शिक्षा के सही विकास के योजना में

इनका ध्यान रखना अति अवश्यकता है । पूर्ण परिपक्वता Puberty के बाद लड़कियों के हाथ की शक्ति लड़कों से कम होती हैं इस लिये जहाँ वजन उठाने के लिये हाथों की अवश्यकता होती है वैसे कार्य लड़कियों को नहीं देना चाहिए । आपरेटस से लटकना या झुलना उनके लिये उचित नहीं ।

व्यक्ति के बढ़ाव तथा विकास की देख रेख शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य है । बढ़ाव का अर्थ विशेष रूप से तन्तुओं के समूह का एकत्रित होना और इनका कार्य तथा शक्ति में विकसित होना है । बढ़ाव तथा विकास एक साथ होना चाहिये । शारीरिक शिक्षा बढ़ाव को प्रभावित करता है किन्तु उसका मुख्य कर्त्तव्य विकास से है । इस प्रणाली में वंशानुक्रम का बहुत हाथ है । वातावरण अच्छा पौषटिक भोजन, सूर्य की रोशनी, बालक के देख रेख द्वारा, विश्राम तथा खेल के द्वारा बहुत ही महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है । बढ़ाव तथा विकास का विरोध पौषटिक भोजन न मिलना, ऐन्डोक्रिन ग्लान्ड का सही कार्य न करना, जलवायु शारीरिक व्यायाम की कमी तथा भिन्न भिन्न खतरे की अवस्थाओं के द्वारा होता है ।

बढ़ाव तथा विकास के साथ साथ न होने से बालक के वार्षिक आयु, शरीर रचना आयु तथा शरीर क्रिया आयु में अन्तर हो सकता है शरीर क्रिया आयु में चार या पाँच वर्ष का अन्तर हो

सकता है । यह सम्भव है कि चौदह साल की वार्षिक आयु की बालिका कीं शरीर क्रिया आयु १६ साल की हो शारीरिक क्रिया क्रम में इन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है । शरीर क्रिया आयु को ध्यान विशेष रूप से होना चाहिये क्योंकि शरीर के विकास के कारण तथा एक आयु के दोनों लिंग के बच्चे किसी समय में एक साथ तथा दूसरे समय में बिलकुल अलग हो कर खेलना तथा रहना चाहते हैं ।

स्वास्थ्य तथा शारीरिक विकास शारीरिक शिक्षा के द्वारा ही होता है । यह व्ययाम के कारण या दैनिक जीवन के परिमाण स्वरूप प्राप्त हो सकता है । शरीर की बनावट के अनुसार मनुष्य तीन मुख्य वर्गो में विभाजित किये जा सकते हैं

(१) ऐसथेनिक-लम्बे दुबले व्यक्ति ,सीना चपटा और गिरते हुये कंधे । कम ताकत वाले जिन में पाचन क्रिया की त्रुटियाँ विशेष रूप से रहती है ।

(२) पायकनिक छोटे मोटे । गर्दन मजबूत । पीपे की तरह सीना । खाने में रुचि रखने वाले और अधिक खाने वाले पाचन क्रिया सही । ताकत वाले ।

(३) ऐथलेटिक दोनों के बीच औसत कद मजबूत मांश पेशियां चौड़ा सीना बड़े हाथ तथा पैर ।

बहुत लोग इन वर्गों में नहीं आते। कुछ लोग इन वर्गों के बीच में हैं इन वर्गों का लाभ शारीरिक शिक्षा में यह है कि बनावट के अनुसार कार्य होता है और होना चाहिये।

कोई इन तीन वर्गों को ऐकटोमोर्फ,एन्डोमौर्फ तथा मेसमोमौफ के नाम से पुकारते हैं।

शारीरिक शिक्षा में अंगों के विकास के लिये शरीर रचना शास्त्र तथा शरीर क्रिया शास्त्र का ज्ञान आवश्यक है क्योंकि यदि कार्य उनके आधार पर नहीं होता तो हानि होगी।

पैरों की मजबूती और उसके बनावट पर विशेष ध्यान देना चाहिये क्योंकि शरीर का पूरा वजन उसी पर रहता है और उसकी स्थिति शरीर के सम्पूर्ण सम्बन्ध के अनुसार होना चाहिये।

शरीर में पेट के मांस पेशियों को शक्ति शाली करना बहुत आवश्यक है। आधुनिक जीवन का व्यवसाय अधिकतर बैठकर होता है और इस कारण पेट की मांस पेशियां निर्बल हो जाती है। इस के सुधार के लिये उन आसनों को सीखाना जो पेट की मांस पेशियों ठीक रखती हैं तथा उन कार्यो और सुडौल शरीर की बनावट में रुचि उत्पन्न करना जिससे ये प्रारम्भिक मांस पेशियां अच्छी अवस्था में रहें।

शारीरिक क्रिया के आरम्भ करने में पहिले प्रकृतिक क्रियाओं के द्वारा शरीर को गर्म करना आवश्यक है जिससे शरीर कार्य

करने के लिए तैयार हो जाये। शारीरिक क्रिया तथा प्रशिक्षण स्वस्थकर वातावरण में होना चाहिये जिसमें उपयुक्त भोजन, प्रयार्प्त निद्रा तथा विश्राम,सही तथा शुद्ध वातावरण उचित मनोवृति आदि सम्मिलित है।

शारीरिक शिक्षा में भाग लेनेवालों के लिये उचित डाक्टरी परीक्षा होना अनिवार्य है जिससे शरीर की शारीरिक स्थित कार्य में भाग लेने के लिये सही रीति से जान लिया जाये। इस कारण कार्य काम करने वाले के योग्यता के अनुसार दिया जाना चाहिये तथा यदि ऐसा कोई रोग हो जो लगने वाला हो तो उसे भाग लेने से रोक देना चाहिये।

मनुष्य के जीवन के लिये सांस लेना आवश्यक है। सांस लेने की क्रिया के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातों को जानना चाहिये। सांस लेने के शरीर यन्त्रों की आवश्यकता के लिये प्रर्याप्त आँक्सिजन साधारण वायु से ले लेते हैं। कोष्ठों की आवश्यकता के अनुसार ही आक्सिजन जलता है सांस लेने के व्ययाम से शरीर के विशेष आन्तरिक अंगों का संतुलन बिगड़ जाता है अतएव इसके सिखाने की आवश्यकता नहीं।

साधारणतया कार्य में ही कभी कभी किसी किसी को हफनी आ जाती हैं और अधिक स्वास लेना पड़ता है। कुछ दिन व्यायाम करने

के पश्चात यह हालत नहीं होगी । इसी के आधार पर स्कैंडर ने कहा है कि कार्य के समय आवश्यकतानुसार आक्सिजन कितना नार्मल लोड है, किन्तु जब श्वास प्रश्वास संस्थान पूर्ण गति से कार्य करते हुये आक्सिजन की मात्रा न बढ़ा सके तो क्रेस्ट लोड कहते है और यदि व्यक्ति में आक्सिजन पहुंच रहा हो तो ओवर लोड कहते हैं ।

साधारणतया कार्य करने की स्थिति में शरीर में तनाव न हो किन्तु ढीलापन हो कार्यक्रम में वैसी अवस्थायें हो जो शिष्यों को अपनी योग्तता से अधिक कार्य में परिश्रम करने के लिये प्रेरित कर सके ।

जीव वैज्ञानिक आधार के कारण यह पता चलता है कि कमर तथा पुट्ठों के जोड़ के बड़े शक्तिशाली मांस पेशियों का व्यवहार अनिवार्य है ।

मांस पेशियों के कार्य में उनका विरोधी स्वभाव जानना आवश्यक है । मांस पेशियों का स्वभाव यह है कि जब एक प्रकार के मांस पेशियों को कार्य करने की उत्तेजना मिलती है तो उसी समय उनके विपरीत मांस पेशियों को उनके विपरीत कार्य करने की उत्तेजना मिलती है यही मांस पेशियों का विरोधी स्वभाव है ।

शारीरिक शिक्षा में युवकों की योग्यता का कार्य क्रम किसी

योजना पर नहीं किन्तु चालक व्यक्ति पर निर्भर है। इस कार्य क्रम के कर्त्ताओं के लिये चार नियम हैं जिनके द्वारा उन्हें निर्देशित होना चाहिये।

(१) स्वयं स्वस्थ्य तथा योग्य होना।

(२) स्वस्थ्य तथा योग्य हीने का अर्थ समझना।

(३) अपने कार्य क्रम की परीक्षा करना जिससे से सही स्तर पर हो।

(४) सब कुछ अपने ही आप करना है और अपने ऊपर निर्भर करना।

(७)

# शारीरिक शिक्षा का सामाजिक आधार

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य तथा समाज दोनों वास्तविक हैं और अपने स्थिति में रहते हुये एक दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व कठिन ही नहीं असम्भव है व्यक्ति का निर्माण समाज की रीति तथा संस्कृति के द्वारा होता है और फिर व्यक्ति समाजिक वंशानुक्रम के द्वारा समाज की रीति तथा संस्कृति को अच्छा या बुरा बनाता है।

मनुष्य अपनी जन्म जाति की शक्तियों के कारण कुछ कार्य करने को बाध्य है और इन प्रप्त्तियों के साथ वह एक वातावरण के सर्म्पक में आता है जो उसे, बाहर से प्रभावित करती है और इन दोनों प्रभावों के योग से वह एक व्यवहार चुन लेता है। यह कहा जा सकता है कि मनुष्य का प्रत्येक व्यवार वंशानुक्रम तथा वातावरण के आपस में एक दूसरे पर कार्य करने का परिणाम है। इन्हीं के द्वारा मनुष्व की आदत, जागृति तथा प्रतिक्रिया होती हैं। बालक के जन्म के समय जो योग्यतायें उसमें छिपी हैं उनका विकास किया जा सकता है किन्तु वह आगे चल कर क्या अर्जित करता हैं उसके अनुभव पर निर्भर रहता है।

जब व्यक्ति परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं

और एक दूसरे के प्रति प्रक्रिया या पारस्परिक क्रिया होता है तो परिणाम स्वरूप किसी न किसी प्रकार का परिवर्तन होगा। आपस में एक दूसरे के साथ सम्पर्क के साथ सामाजिक अनुभव भी प्राप्त होगा शारीरिक शिक्षा में इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि प्रत्येक शारीरिक क्रिया से सामाजिक अनुभव प्राप्त होता है।

मनुष्य वातावरण के भिन्न भिन्न स्थितियों तथा वस्तुओं आदि से प्रभावित होता है। संस्कृति के कारण भी कई एक प्रकार के व्यवहार हो सकते हों और जो व्यवहार सामाजिक मान्यता प्राप्त करता है वे समाज के द्वारा अपनाये जाते हैं। मनुष्य की नैतिक व्यवहार परिवार गृह आदि संस्थाओं के द्वारा सिखाए जाते हैं। वहुत से ऐसे व्यवहार है जो समय के कारण लोक विचार के कारण या किसी प्रकार किसी चीज के होने के कारण भी मान्यता प्राप्त करते है। यदि इन व्यवहारों में परिवर्तन करने की चेष्टा की जाये तो बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ेगा क्योंकि ये आसानी से परिर्वतित नही होते। शारीरिक शिक्षा का भी यह दायित्व है कि वह समाजिक व्यवहार चलन तथा संस्थायों को रूप देने में सहयोग दें क्योंकि कहा जा चुका है कि प्रत्येक शारीरिक कार्य से लगा हुआ कुछ न कुछ समाजिक अनुभव अवश्य होगा। व्यक्ति वास्तविक संसार में कार्य करता है जहाँ शिक्षक तथा शिष्य खेलने

वाले तथा दर्शक तथा प्रतियोगिता,अग्रसर होना,मय आदर्श,आदेश, खेल के मैदान,वस्त्र, सामग्री आदि से सम्पर्क होता है।

शारीरिक शिक्षा मानव जीवन में महत्वपूर्ण कार्य करती है अतएव उसे अपनी चेष्टाये प्रचलित रखनी चाहिये जिस से खेल, स्पोर्ट्स तथा नृत्य आदि भारतीय संस्कृति की वास्तविक शक्ति बन जाये। यह सदैव ध्यान में रखना है कि खेल का प्रभाव तथा प्रकार ऐसे न हो जायें जो जिस का ध्येय बहुत निम्न श्रेणी के हों तथा कार्य खेल में वास्तविक अर्थ को भूल जाये और खेल के सुन्दर नाम के नीचे हीनता के कार्य हो। खेल के द्वारा सही संवेगातमक विकास होना आवश्यक है। खेल,कला,गायन,नृत्य,ड्रामा, प्रकृति आदि में संवेग तथा इन्द्रिय कार्य नवीन तथा अर्थ पूर्ण महत्व जीवन में लाने के योग्य हैं। इनके द्वारा व्यक्ति के भाव में अपूर्व परिवर्तन लाया जा सकता है। इन में वह शक्ति है जिन के द्वारा मनुष्य अगाध तथा मृदुल बन जाये,वुद्धि तथा सहानुभूति का विस्तार करे। मनुष्य के शिष्टाचारिक चरित्र के निर्माण में इनसे बहुत सहायता मिलती है और इसी कारण शारीरिक शिक्षा में इस के ऊपर विशेष ध्यान देना चाहिये क्योंकि जीवन के मूल आधार यहीं है।

भारतीय संस्कृति में धार्मिक विचारों के कारण शरीर पर वह ध्यान नहीं दिया गया जो देना चाहिए था। हिन्दू दर्शन शास्त्र के

अनुसार शरीर का त्याग ही मोक्ष था। अतएव आत्म के निर्वाण के किये शरीर को नष्ट करना धर्म था। शारीरिक शिक्षा को अपना कार्य महत्यपूर्ण समझना चाहिये क्योंकि उसमें मनुष्य के शारीरिक पक्ष पर उचित ध्यान दिया जाता है। वास्तविकता यह है कि शब्द जैसे शारीरिक मानसिक तथा सामाजिक किसी एकत्व का भाग है तथा ये व्यक्ति में संयुक्त रूप से है और उसके विकसित भाग हैं। केवल सिखाने के लिये शारीरिक प्रभाव, मानसिक गुण तथा सामाजिक मूल्य ऐसे शब्दों तथा भावों का प्रयोग किया जाता है। ये एक सम्पूर्ण जीवन के भिन्न-भिन्न अंग हैं। शारीरिक शिक्षा· में इस बात को स्पष्ट करना है कि शारीरिक अंग पूर्ण एक्य व्यक्ति का एक रूप है। शारीरिक शिक्षा शारीरिक बनावट, दोष सुधार तथा स्वास्थ्य ही नहीं किन्तु इनसे कहीं अधिक है। शारीरिक क्रिया सामाजिक प्रभाव से पृथक नही की जा सकते । यद्यपि मनुष्य को सामाजिक वंशानुक्क प्राप्त होता है तथापि हमें यह नहीं भुलाना चाहिये कि सामाजिक वंशानुक्रम मनुष्य को केवल गोद लेता है और अपनी तरह उसे बना लेता है वह अपने आपको अपने भाग्य का मालिक समझ सकता है किन्तु उसकी भाषा, धर्म, सामाजिक संगठन जीवन कोष्ठ में नहीं ले जाये जाते हैं। सामाजिक संस्कृति ही वह सामग्री है जिसके सम्पर्क से वह जीवन का विकास करता है। सामाजिक अनुभव को किसी प्रकार पृथक किया नहीं

बहुत से कारणों को समझते हैं। तभी वैसा आचरण जिससे संकट उत्पन्न हो हम नही चाहते। इसी हेतु स्कूल में भी शिक्षा होती है जिससे उन व्यवहारों के जिनसे संकट होने की सम्भावना दूर कर दिये जायें। किन्तु इस बड़े कार्य में केवल स्कूल की ही चेष्टा असफल होगी यदि सम्पूर्ण समाज इसमें सहयोग न दे।

यह स्मरण योग्य है कि बालक स्कूल के बाहर दूसरी संस्थाओ के सम्पंक में आता है और उसका एक हिस्सा हो जाता ररिवार बच्चे का ऊदाहरण सूचना तथा मनोरंजन के स्थान, राजनैतिक अधिकारियों के कार्य, दूकानदार, पड़ोसी, जटिल व्यवसाय तथा व्योपार के भिन्न भिन्न सामाजिक शक्तियाँ। इनका प्रभाव बालक के ऊपर बड़े वेग से होता है।

इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि बालक केवल उपदेश से नहीं सिखाये जा सकते है। सिखाने वाले जिस बात की शिक्षा बालकों में देना चाहते हैं पहले उसे अपने जीवन में दिखलाये। बालक सुनने की अपेक्षा देखकर शीघ्र सीखता है। ऐसा कदाचित सम्भव न हो कि सिखाने वाले व्यक्ति सम्पूर्ण निपुणता प्राप्त किये हुए हों किन्तु यदि वे अपने तथा बालकों के व्यक्तित्व विकास के आवश्यकताओं की ओर जागरूक रहे तो अच्छा कार्य कर सकेगें।

जा सकता । इस विशेषता के कारण मानसिक तथा शारीरिक सम्बन्ध की श्रेष्ठता बढ़ जाती है ।

शारीरिक शिक्षा में शिष्टाचार तथा शरीर के घनिष्ठ सम्बन्ध पर भी जोर देना चाहिये । शिष्टाचार का क्षेत्र चेतना तथा संवेग होते हुये भी कितनी ही शिष्टाचारिक समस्यायें, अपने हाथ में लिये, पदार्थिक तथ्यों जिनसे शारीरिक सम्बन्ध समझा जाता है, जैसे घर की समस्या, थकान, मनोरंजन का अवसर, नागरिक जीवन में पर्याप्त स्थान प्राप्त करना, उचित शारीरिक क्रिया का अवसर, अवकाश में सदुउपयोग का प्रशिक्षण, वालकों के विकास तथा बढ़ाव की सामग्री की आवश्यकता, लोक विचार के जटिल भावों का समझना तथा प्रचार, सुविधाये आदि पर निर्भर है । शिष्टाचारिक निर्णय हवा में तो होती नहीं किन्तु राजनैतिक औद्योगिक शिक्षा तथा सामाजिक जीवन से सम्बन्धित होती है ।

समाज ने अपने गुणों को स्थिर रखने तथा उनकी प्रगति के लिये संस्थाओं का निर्माण कर रखा है और यह उनका कर्त्तव्य है कि वे उस ओर सदैव अग्रसर रहें । इन संस्थाओं में से एक शिक्षा संस्था भी है । समाज यह आशा करता है कि सामाजिक मूल्यों की शिक्षा स्कूल के द्वारा होगी । व्यवहार में भय का बहुत हाथ है । अनजाने में संकट का आने का भय होता है । विज्ञान के द्वारा हम

बालक ऐसे पौधे को यदि आरम्भ ही से सींचा जाये तथा उचित देख रेख रक्खी जाय तो बहुत उत्तम कार्य हो सकेगा। बचपन में वह सभी पर विश्वास करता है। सभी व्यवहार को ठीक तथा सत्य समझता है। यदि एक बार किसी व्यक्ति या चीज पर से विश्वास हट जाये तो परिणाम बुरा होगा। बालक को बचपन में प्रेम तथा सुरक्षा चाहिये। क्रमशः वह दूसरों पर विश्वास तथा अविश्वास करना सीखता है। जैसे जैसे जीवन की बाधाओं का सामना करता है आत्मनिर्भरता तथा विश्वास प्राप्त करता है निर्बलता तथा भय से निराशा होती है। जैसे वह बढ़ता है कुछ न कुछ स्वतंत्रता आ जाती है। वह मूल प्रवृति के आत्म प्रदर्शन करना चाहता है। इस इच्छा का नाश न हो 'किन्तु प्रोत्साहित करना चाहिये क्योंकि नेतृत्व आदि के गुण इससे बढ़ाये जा सकते हैं। स्वतंत्रता के बढ़ाव के कारण आरम्भ की इच्छा तथा प्रयत्न को उत्तेजित तथा उत्सहित करनी चाहिये। जीवन में सफलता तथा असफलता का सही मूल्य समझना अति आवश्यक है क्योंकि सही अर्थ के न समझने के कारण विकास में कमी हो सकती है। असफलता के कारण बालक अपने को दोषी समझ सकता है किन्तु यह भावना गलत है। असफलता को सफलता की सीढ़ी बनाना चाहियें।

सफलता, असफलता, श्रेष्ठ, हीनचरित, सभ्य आदि जो

अगणित सामाजिक धारायें हैं उनकी सही सूचना तथा ज्ञान बालक को होना चाहिये जिससे वह समझ सके कि वह क्या कर है? क्या करना चाहिये,? कैसे करना चाहिये? तथा क्यों करना चाहिये? यदि बालक को मालूम हो जाये कि चरित्र के गुण आसानी से नहीं प्राप्त होते तथा उनके लिये व्यक्तिगत प्रयत्न तथा परिश्रम और लगे रहने की आवश्यकता है तो यह उसके लिये लाभ कर होगा।

जीवन के श्रेष्ठ गुण बलपूर्वक नहीं सिखाये जा सकते। क्योंकि इसे जीवन का अंग बनाना है स्वीकृत उसकी आन्तिरिक होनी चाहिये। इन गुणों के सिखाने की प्रणाली प्रजातान्त्रिक होनी चाहिये। सही सामाजिक गुण प्रजातान्त्रिक रीति से ही भली भाँति सिखाये जा सकते हैं। खेल में दूसरे की भावनाओं तथा अधिकार को समझना, तथा इमानदारी से खेलना, न्याय ज्ञान, लगे रहना बदला न लेना आदि बालक के जीवन में आरम्भ ही से उत्पन्न किये जा सकते हैं। इन गुणों की आवश्यकता खेल में ही नहीं किन्तु मानव जीवन के प्रत्येक सम्बन्ध में है। ये गुण जीवन के प्रत्येक कार्य में ध्रुव होना चाहिये। खेल की उत्तम स्थितियों का स्थानान्तर जीवन के वास्तविक स्थितियों में करने की शिक्षा एक उत्तम शिक्षक का कर्त्तव्य है।

मनुष्य कुछ क्रियायें करने के लिये बाध्य है आधुनिक काल में क्रिया के विना हम जीवित नहीं रह सकते। क्रिया का होना

आवश्यक है। किस रूप में करें, यह समाज के द्वारा निर्धारित किया जायेगा किन्तु क्रिया भी प्राकृतिक आवश्यकता सदैव उपस्थित है। जीव आधार के कारण मनुष्य कुछ क्रियायें करता रहा है और वह जटिल होती गयी है तथा सभ्यता के अनुकूल होती गयी हैं। यह क्रम चलता रहेगा। अतएव शारीरिक शिक्षा में प्रचलित व्यवहा तथा प्रचार प्रकाशित होते रहना चाहिये इसी कारण किसी राष्ट्र को उसके खेल तथा मनोरंजन से समझा जा सकता है और व्यक्ति का चरित्र भी उसके खेल तथा मनोरंजन से मालूम किया जा सकता है।

समाज की समस्याओं में बालापराधी की समस्या अकाल प्रौढ़ के स्तर से नीचे बालक आदि की समस्यायें महत्वपूर्ण हैं। सही विकास के न होने से ये समस्यायें, उपस्थित होती है।

समाज के खेलों में तथा मनोरंजन के द्वारा यदि युवकों को प्राकृतिक प्रेरणाओं के पूर्ति का अवसर प्रदान न हो तो यह समस्यायें बनी रहेंगीं। उचित नियोजन की आवश्यकता है जिसके द्वारा समाज में से मान्यता प्राप्त मार्गों में इन प्राकृतिक प्रेरणाओं का विकास हो। शारीरिक शिक्षा के द्वारा, युवा कर्त्तव्य हीनता तथा चरित्र के अभाव के कारण, माता पिता को बताया जाना चाहिये। इसमें माता पिता की सहायता आवश्यक होती है जिससे यें

सामाजिक अवगुण दूर किये जा सकें। स्कूल, क्लब, खेल के मैदान ऐसी सामाजिक संस्थाओं के द्वारा ये अवगुण दूर करने में भी सहायता प्राप्त होगी।

समाज में अवगुण होने का एक विशेष कारण यह है कि व्यक्ति समाज में सही रीति से अपना स्थान नहीं ले पाता या यह वह कह सकते हैं कि समाज उसको सही स्थान लेने में सहायता नहीं देता। व्यक्ति जो आज है वह सैकड़ों वर्षों की परम्परा से जमे हुये गुणों का एक प्रभाव है जो इन गुणों को अपने में पूर्ण रूप से रखता है। अचानक उसे एक ऐसे वातावरण में डाल दिया जाये जिसका प्रभाव इससे पहले मालूम न हुआ हो तो उसके सामने अपने को उसे वातावरण के अनुकूल बनाने में समस्या होगी। जैसे वर्त्तमान बालक अपने को आणुयुग में पाता है। इस समस्या का हल समाज को ही करना है।

आधुनिक काल के मानव का मुख्य ध्येय क्या है ? यह सामाजिक आदर्शों पर निर्धारित किया गया है। जीव विज्ञान के द्वारा पता चलता है कि मनुष्य का परम ध्येय कार्य है। इस के बिना वह जीवित भी नहीं रह सकता। इसका अर्थ यह होगा की मनुष्य जीवन में पूर्णतया जीवित रहे, अधिकता से जीवित रहे, और अपने व्यक्तित्व के प्रत्येक अंग में क्रियाशील रहे। समाज में प्रत्येक

को कार्य का अवसर मिले । प्रत्येक प्राणी अपने को विकसित करने के लिये स्वतंत्र हो । चरित्र, बुद्धि, उत्साह और व्यक्तित्व में एक दूसरे में अन्तर होना स्वभाविक है किन्तु सामाजिक विचार का आदर्श यही है कि प्रत्येक को अपने गुणों और कार्यों में बढ़ने का पर्याप्त अवसर तथा अवकाश सुविधा साधन प्रप्त हो सके ।

सामाजिक विचार तथा सिद्धांत शारीरिक शिक्षा के द्वारा प्रदर्शित होते हैं ।

भारतीय शारीरिक शिक्षा को भारतीय समाज के सिद्धांत तथा आदर्श प्रदर्शित करना चाहिये । आधुनिक भारतीय शारीरिक शिक्षा भारतीयों की आवश्यकता, आदेश, प्रकृति समय तथा स्थान से सम्बन्धित होना चाहिये । शारीरिक शिक्षा भारतीय समाज दर्पण के द्वारा प्रतिबिम्बित होना चाहिये । समाज के निर्माण में शारीरिक शिक्षा का उत्तरदायित्व महत्वपूर्ण है इस लिये समाज के उच्च विचारों, गूढ़ आवश्यकताओं तथा श्रेष्ठ अभिप्राय को प्राप्त करने में सहायक होना चाहिये ।

शारीरिक शिक्षा का यह सर्वोत्तम कर्त्तव्य होगा कि अपने उद्देश्यों का निर्माण करते हुये बालकों की आवश्यकतायें गतिविधि कौशल अनुभव में तथा उन उच्च अभिप्रायों को आकर्षिक करने में जिसके लिये युवक सदा तैयार रहते हैं अपना उत्तरदायित्व समझे ।

---

[८]

# शारीरिक शिक्षा में शरीर क्रिया शास्त्र के आधार

उत्तम शारीरिक क्रिया शारीरिक शिक्षा के वैज्ञानिक कार्यो द्वारा,जो ताल के साथ तेज गति तथा शक्ति के साथ किये जाते हैं, सम्भव है। आन्तरिक अंगों का विकास तथा उनका सुचारु रूप से कार्य करना शारीरिक क्रियाओं पर ही निर्भर है।

बालक के अंगो का विकास साधारणतः प्राकृतिक गतियों के द्वारा जिनमें वह मूल प्रवृत्तियों के कारण रुचि लेते हैं, होना चाहिये। शारीरिक शिक्षा में अप्राकृतिक व्यायाम तथा गतियों का भी उपयोग किया जाता है जो वर्त्तमान सभ्यता के कुप्रभावो को दूर करने में सहायक होते हैं जैसे आपरेट्स गेंद जिमनेज़ियम आदि। तो भी जहाँ तक सम्भव हो शारीरिक शिक्षा में प्राकृतिक गतियों के द्वारा तथा खुले शुद्ध वातावरण में कार्य होना चाहिये।

शारीरिक शिक्षा में बालक के बढ़ाव तथा विकास पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। आरम्भ में उसकी बनावट की गति तेजी से होती है अतएव बड़ी मांस पेशियों की गति की अत्याधिक आवश्यकता है हृदय तथा फेफड़े कमजोर होते है इस लिये किसी

प्रकार की थकान उसे नही होने देना चाहिये। क्रिया के साथ पर्याप्त विश्राम बालक को अवश्य मिलना चाहिये।

शारीरिक कार्य करने के पहले शरीर को तैयार करने की आवश्यकता शारीरिक शिक्षा में अवश्य है। यह कार्य शरीर के गर्म करने की क्रिया के द्वारा होता है। तेजी के साथ कार्य करने में हृदय शरीर के अंगों में तेज गति से रक्त संचार करता है जिससे मांस पेशियों को उपयुक्त भोजन प्राप्त होता है।

शारीरिक शिक्षा के कठिन कार्यो के लिये जैसे बड़े खेल, ऐथेलटिम्स आदि के लिये कार्य करने की डाक्टरी परीक्षा होनी अति आवश्यक है जिससे हृदय की अवस्था का सही ज्ञान हो। कठिन परिश्रम के जोर को यदि हृदय नहीं सह सकता तो वैसी व्यस्था में व्यक्ति को कठिन शारीरिक शिक्षा में भाग नहीं लेने देना चाहिये।

श्वास क्रिया के द्वारा शरीर में आक्सिजन गैस पहुंचाया जाता है और इसके द्वारा शरीर के विकार रक्त के द्वारा दूर किये जाते है। कार्वनडाईअक्साइड जो काफी मात्रा में कार्य करते समय जमा हो जाता इसी क्रिया के द्वारा हटाया जाता है।

श्वास प्राणी का जीवन है। इस के विना मनुष्य जीवित नहीं

रह सकता। आक्सीजन शरीर में शक्ति तथा ताप का संचार करती है।

शारीरिक शिक्षा में श्वास क्रिया का व्यायाम करते की आवश्यकता नहीं क्योंकि जितनी आक्सीजन की आवश्यकता शरीर को होती है उतना शरीर अपने आप ही ले लेता है। श्वास क्रिया व्यायाम के द्वारा शरीर के जीव अंगों का संतुलन तथा रसायनिक संतुलन असंतुलित हो जाता है।

शारीरिक शिक्षा में श्वास की क्रिया जिस ताल से चलना है चलने देना चाहिये। कभी कभी कठिन कार्य करते समय श्वास बीच बीच में रोक लिया जाता है इस से हानि होती है। अभ्यास से फेफड़ों पर कठिन परिश्रम के द्वारा किसी प्रकार की हानि होने की सम्भावना नहीं। कठिन परिश्रम के पश्चात हृदय तथा फेफड़े जितनी ही शीघ्रता से अपने वास्तविक प्राकृतिक गति पर आ जायें उतना ही उनके स्वस्थ्य होने का चिन्ह है।

शरीर को स्वस्थ तथा उत्तम दशा में रखने के लिये संतुलित भोजन की आवश्यकता है। शारीरिक शिक्षा में शरीर को उसकी आवश्यकता के अनुसार उचित भोजन मिलना चाहिये। शरीर की आवश्यकता प्रोटीन, कार्बोहाइट्रेट, चर्बी, पानी, विटामिन तथा रसायनिक पदार्थो की होती है। इन को उचित मात्रा में शरीर में पहुंचाना चाहिये।

भोजन पचने के समय रक्त की आवश्यकता होती है और यदि किसी कारण रक्त पर्याप्त मात्रा में न पहुंच पाये तो पाचन क्रिया सही कार्य नहीं कर सकेगी। अतएव शारीरिक शिक्षा में इस बात पर ध्यान देना है कि भोजन के बाद किसी प्रकार का विशेष परिश्रम न किया जाये जिससे पाचन क्रिया के लिये रक्त कीं कमी हो जाये। छोटी आँत से भोजन निकलने में प्राय: दो घंटा लग जाता है।

भोजन के पश्चात किसी प्रकार की उत्तेजना नहीं होनी चाहिये क्योंकि इसके कारण भी पाचन क्रिया में विकार हो जाता है।

शरीर के अंग अपनी क्रियाओं के द्वारा अपना भोजन प्राप्त कर लेते हैं और जो व्यर्थ पदार्थ होते हैं वे शरीर के बाहर निकाल दिये जाते हैं। इन व्यर्थ पदार्थों का निकालना उचित रूप से होना चाहिये।

शारीरिक शिक्षा में व्यायाम के द्वारा शरीर से व्यर्थ पदार्थों के निकालने में सहायता मिलती है। ये व्यर्थ पदार्थ मल मूत्र तथा पसीने के रूप में शरीर से बाहर निकालते हैं। अपनी नाड़ी ततुओं के कारण मनुष्य अपने वातावरण में प्रतिक्रिया करता है और अपने शारीरिक तथा मानसिक कार्यो में सपन्वत्र करता है वात संस्थान का

स्वास्थ्य भी शरीर के दूसरे अंगों की भाँति सन्तुलित भोजन शुद्ध वायु स्वच्छता व्यायाम तथा विश्राम पर निर्भर है। मस्तिक में स्थित भिन्न भिन्न केन्द्र विभिन्न आयु में कार्य करना आरम्भ करते है।

शरीरिक शिक्षा में युवक तथा युवतियों के परिपक्ता का ध्यान रखते हुये शारीरिक कार्य कराना चाहिये। परिपक्वता के अनुसार शारीरिक क्रिया स्वरूप रहने पर ही अच्छी तरह कीं जा सकती है।

इस समय मानसिक तथा शारीरिक समन्वय की अधिक आवश्यकता है क्योंकि मांसिक रूप से भावना ग्रन्थियां हो जाने की सम्भावना है। शारीरिक शिक्षा के द्वारा मांसिक तथा शारीरिक संतुलन प्राप्त किया जा सकता है। संवेग की तृप्ति खेल ड्रामा तथा स्पोर्टस आदि से ऊचित रीति से हो सकती है।

मानसिक तथा शारीरिक विकास साथ साथ होना चाहिये। विकास के समय ये आपस में एक दूसरे को प्रभावित करते हैं।

शरीर की मांसपेशियां ऐच्छिक तथा अनऐच्छिक दोनों हैं। शरीर के विशेष अंगो में अधिकतर अनऐच्छिक मांस पेशियां है। इनके विकास तथा स्वास्थ्य के लिये उचित शारीरिक व्यायाम आवश्यक है। व्यायाम के समय मांस पेशियों की आक्सिजन की आवश्यकता बढ़ जाती है और उसी समय मांस पेशियों के द्वारा कार्बनडाईआक्साइड फेफडों में भेज दिया जाता है वहां रक्त के

द्वारा हटा दिया जाता हैं । श्वास क्रिया तथा रक्त संचालन क्रिया मिल कर इस कार्य को करती हैं ।

शारीरिक शिक्षा में यह ध्यान देने योग्य है कि शारीरिक क्रिया उचित रीति से करने के लिये व्यक्ति गत स्वास्थ्य की बड़ी आवश्यकता है । व्यक्तिगत स्वास्थ्य में सफाई कपड़े तथा शरीर की मानसिक तथा शारीरिक विश्राम तक परिश्रम तथा दैनिक तेजी तथा शक्ति के साथ शारीरिक व्ययाम, कार्य क्रम के अनुसार दैनिक कार्य महत्व पूर्ण हैं ।

शरीर में ढिलेपन Relaxation की बड़ी आवश्यकता है । व्यक्ति यदि संसार के शोर गुल, बोझ परिश्रम, परेशानी से यदि सदैव दबा रहे तो उसके लिये यह बहुत हानिकरक सिद्ध होगा । यह आवश्यक है व्यक्ति मानसिक तथा शारीरिक रीति से अपने को ढीला करे और मन बहलाव के कार्यो का प्रयोग करे जिसके लिये शारीरिक शिक्षा के कार्य बहुत ही उपयुक्त होंगे ।

मनुष्य क्रिया, विचार, संवेग आदि में भिन्न नहीं । मनुष्य एक ही है और उसके भिन्न भिन्न कार्य उसके लिये उसी के द्वारा होते हैं । इन सब कार्यो में संतुलन की आवश्यकता है । भिन्न भिन्न अंगों के संतुलित क्रिया तथा विकास में ही मनुष्य का सर्वोतम हित है ।

जीव विज्ञान से पता चलता है कि मनुष्य क्रिया के लिये ही उत्पन्न हुआ है। सभ्यता के वर्त्तमान अविकारों के कारण उसकी क्रिया में कमी होती जा रही है और वह विश्राम पसन्द हो गया है।

औषधि तथा उपायों से व्यक्ति अपने आप को स्वस्थ रख सकता है किन्तु उसकी जीव वैज्ञानिक आवश्यकता जो क्रिया में ही है जब तक न हो वह ठीक (Fit) नहीं हो सकता।

ठीक रहने या फिट होने की विशेषता ही यह है कि व्यक्ति में कार्य करने की योग्यता हो। ठीक होना व्यक्तिगत प्रश्न है। इस का अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति प्रभावित रुप में रहे। कार्य की योग्यता मानसिक, शारीरिक, संवेगात्मक सामाजिक नैतिक गुणों के द्वारा होती हैं जो एक दूसरे के पारस्पारिक सम्बन्ध पर निर्भर हैं।

अतएव प्रत्येक व्यक्ति के लिये को अपनी आवश्यकतों की पूर्ति के लिये तथा समाज की भलाई के लिये जो देन देनी है उसके लिये उत्तम जीव अंग स्वस्थ्य, शक्ति तथा बल का उचित समवय संवेगात्मक स्थिरता, समस्याओं का हल का ज्ञान भाव, मूल्य तथा कौशल जो दैनिक जीवन के कार्य में सहायक हैं, नैतिक तथा अर्कषक गुण जो प्रजातान्त्रिक जीवन के लिये लाभ दायक है, उपार्जन करे।

शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य तथा क्रिया एक शक्ति शाली प्रभाव हैं जो परिवर्तित होता रहता है शरीर के विकास तथा बढ़ाव की आयु में सही स्वास्थ्य प्राप्त करना अति आवश्यक है जिसे भाविष्य के जीवन में व्यक्ति स्वास्थ रह सके।

शारीरिक स्वास्थ्य के लिये शारीरिक शिक्षा में स्वास्थ्य शिक्षा मन वहलाव तथा मनोरंजन, शारीरिक क्रिया, आदि आवश्यक है।

बालक के आरम्भ के वर्ष बढ़ने तथा विकास के लिये ही होते हैं। बालक गति वाही मानसिक शक्ति तथा कार्य शीघ्र सीख जाता है और शरीर के बनावट में वढ़ता है।

इस आयु में वह आत्म नियन्त्रण में निर्बल होता तथा मानसिक विकास कम होता है। शारीरिक निवर्लता के कारण रोग प्राप्त अधिक होता हैं।

बालक का अधिक समय खेलने में व्यतीत होता है जिसके द्वारा उसकी शिक्षा, विकास तथा बढ़ाव होता है।

जैसे ही बालक स्कूल जाने के योग्य हों उसकी सही डाक्टरी परीक्षा होना आवश्यक है, और यदि किसी प्रकार का शारीरिक या मानसिक दोष हो नो उसका उचित सुधार होना आवश्यक है।

६-८ वर्ष का बालक तेजी से शक्ति प्राप्त करता है और बढ़ता है। व्यायास उसे एक प्राकृतिक भूख रहती है। उसका हृदय तथा

फेफड़ा की शरीर की तुलना में निर्बल होते हैं अतएव कठिन परिश्रम तथा कार्य उसके लिये हानि कारक होगा। कठिन प्रति-योगिता के कार्य उसे नहीं देना चाहिए। उसके स्वास्थ्य में उन्नति होती है। वह अच्छी तरह से फेंक तथा पकड़ सकता है। आत्म प्रदर्शन की प्रबल इच्छा होती है नाच से प्रेम होता है नकल अच्छी तरह से करता है।

शारीरिक शिक्षा में इनके बढ़ाव का विशेष ध्यान देना चाहिए। अधिक शारीरिक कार्य बाहर खुले में होना चाहिये। गति वाही क्रिया विशेष ध्यान देना चाहिए। लिंगीय भेद का विशेष अर्थ इस आयु में नहीं होता।

९-१२ वर्ष के बालकों में ऊँचाई तथा वजन धीरे-धीरे बढ़ता है। सामान्य स्वास्थ्य अच्छा रहता है। बीमारी आसानी से नहीं लगती। सहने की शक्ति अधिक होती है। समन्वय अच्छा होता है बहुत कुछ कौशाल अपने आप आप आ जाते हैं। गति वाही क्रिया में चतुर होता जाता है। लम्बे समय तक अभ्यास कर सकता है। प्रायोगिता में रुचि रखता और टीम में खेलना चाहता है। लिंगीक भेद का अर्थ मालूम होता है। इस आयु के अन्त में लड़के तथा लड़कियों का क्लास पृथक होना चाहिए।

लड़के तथा लड़कियों में परिपक्वता तथा प्रौढ़ अवस्था में शारीरिक मानसिक रुचि, योग्यता तथा जीवन में विशेष परिवर्तन

होता है। इस अवस्था में लिंगीय तथा इससे सम्बन्धित विकास होता और इस के कारण वैयक्तिक परिवर्तन होता है।

बड़े संगठित खेलों में रुचि होती है। वढ़ाव की आवश्यकता के कारण शारीरिक कार्य के चुनाव में उसे सहायता प्राप्त होना चाहिये।

परिपक्वता की अवस्था मे युवकों को बहुत ही सहानुभूति की आवश्यकता है। इस समय युवक की समाज में स्थान प्राप्त करने के लिये उचित सहायता मिलना चाहिये। उनकी समस्याओं को उचित रीति से हल करना चाहिये। यह एक विशेष व्यवस्था पन का समय होता है। यदि यह उचित रीति से नहीं हुआ तो जीवन पर्यन्त इन के चिन्ह देखे जायेगें।

---

[६]

# शारीरिक शिक्षा का मनोवैज्ञानिक आधार

मनोविज्ञान का आरम्भ अरस्तू के समय से समझा जाता है। समय समय पर इस की भिन्न भिन्न परिभाषा रही और इसी सम्बन्ध में शरीर तथा मन को भी भिन्न भिन्न तरह से समझा जाता था। इन तथ्यों के विषय में जैसी समझ थी उसी के आधार पर उद्देश्य, शिक्षा तथा प्रणाली निर्धारित होती थी। साधारणतः शरीर तथा मन एक दूसरे से पृथक समझे जाते थे। आधुनिक मनोविज्ञान इस विचार से सहमत नहीं। अब शरीर तथा मन की एकता में कोई संदेह नहीं। शरीर के भिन्न भिन्न अंगों के द्वारा मन प्रभावित हो सकता है। और मन भी अंगों को प्रभावित करता है। जैसे पाचन क्रिया विचार पर प्रभाव डाला सकता है तथा विचार पाचन क्रिया को प्रभावित कर सकता है। यहाँ तक कहा जाता है कि सोचने के काम केवल मन ही नहीं करता। मनोविज्ञान के इस वर्त्तमान विचार के द्वारा मन शरीर में कोई वस्तु नहीं समझा जाता किन्तु पूर्ण व्यक्ति का कार्य समझा जाता है।

प्राणी संगठन में सम्बन्ध ही नहीं मालूम होता वरन् भिन्न

भिन्न प्रकार की विशेषतायें भी मालूम होती है। ये भिन्न भिन्न शक्तियाँ भिन्न भिन्न अंगों की क्रिया से सम्बन्ध रखती हैं। व्यक्ति को या इन शक्तियों को समझने के लिये उसके अंगों को विभाजित नहीं किया जा सकता। व्यक्ति को उसके एकत्व में समझना आवश्यक है। बालक की शिक्षा में उसकी विशेष शक्तियों तथा उनके कार्यों का ध्यान रखना है और उनके कार्यों का ध्यान रखना है और उनके आपस के सम्बन्ध को समझना है। यह सत्य है कि जब यह कहा जाता है कि पूर्ण बालक की शिक्षा होती है तो शिक्षा देने के समय उसे पृथक पृथक विशेष बातों में शिक्षा दी जाती है जैसे उसे गिनती गिनना, पढ़ना, गेंद मारना आदि अलग अलग सिखाया जाता है। ये पृथक विशेष पूर्णत्व के ध्यान से शिक्षित लिये जाते हैं। इसके द्वारा शरीर तथा मन की एकता के सम्बन्ध का विचार दृढ़ होता है।

शारीरिक शिक्षा में भी प्रशिक्षण इस विचार से नहीं होता कि शारीरिक शिक्षा देने के बाद बालक को मानसिक शिक्षा के लिये अलग छोड़ दिया जाये। शारीरिक एक ऐसी प्रणाली समझी जाती है और सामान्य शिक्षा का एक अंग समझा जाता है जिसके द्वारा सम्पूर्ण बालक का प्रशिक्षण होता है। बालक केवल अंग, नाड़ी संवेग, विचार, आशा, निराशा, मांसपेशियाँ तथा अस्थियां आदि नहीं हैं। वह इन सब के साथ एक व्यक्ति है जो मानसिक, शारीरिक

तथा नैतिक एक ही साथ है और उसके साथ जो कुछ होगा उसके पूर्ण व्यक्तित्व के साथ होगा। शारीरिक शिक्षा को मनुष्य के एकत्व पर पूर्ण विश्वास है अतएव जब शारीरिक शिक्षा के द्वारा कौशल, शक्ति, लचीलापन, वेग, सुरक्षा आदि के ऊपर ध्यान दिया जाता है तो साथ ही साथ रुचि, आदत, भाव, नैतिकता, आदर्श तथा आचरण आदि भुलाये नहीं जाते किन्तु इन पर भी उतना ही जोर दिया जाता है। व्यक्ति का एकत्व बिल्कुल उसी प्रकार है जैसे खेलने वाले व्यक्ति, अलग अलग खिलाड़ी होते हैं किन्तु एक साथ खेलने में वे टीम हो जाते है। इसके द्वारा शारीरिक शिक्षा का मानसिक तथा शारीरिक एकत्व पर जोर का पता चलता है जिसे हम मानसिक कहते हैं वह भी पूर्ण का विकास है। जिसे हम शारीरिक कहते हैं वह पूर्ण का ही एक अंग है।

मनुष्य अपने मानसिक ताथा शारीरिक गुणों के कारण कुछ क्रियाओं के करने के लिये विशेष रूप से प्रेरित होता है लम्बे अरसे के अनुभव जो उसे वंशानुक्रम तथा सामाजिक वंशानुक्रम के द्वारा मिले है वह जटिल प्रवृत्तियों के रूप में उसके जीवन में आते हैं। और वह उन्हीं के द्वारा प्रत्येक पग पर प्रेरित होता है। वह किसी चीज को चुन लेता किसी को छोड़ देता, किसी तरफ आकर्षित होता है। यह सब इन्ही प्रवृत्तियों की प्रेरणा के कारण होता है।

इन्हीं प्रवृत्तियों के कारण मनुष्य किसी प्रकार के गतिविधि के लिये तैयार होता है। प्रेरणायें, प्रभाव इच्छा आदि किसी ध्येय की ओर प्रेरित करती है और यह विभिन्न रीतियों से प्रकट होती हैं। बालक की प्राकृतिक गति जैसे दौड़ना कूदना, फेंकना, चढ़ना तथा झूलने में भाग लेने के लिये प्रेरित होते हैं और यह खेल के मनोप्रवृत्ति के कारण होता है। यह प्रेरणा व्यक्ति को विशेष कार्य के लिये तैय्यार करती है। यह तैय्यारी शरीर के किस भाग में स्थित है या शरीर का कौन सा अंग प्रेरित होता है यह कहना कठिन है। यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि तैय्यारी सम्पूर्ण व्यक्ति में होती है ओर इसकी बनावट ग्रन्थियों, नाड़ीतन्त्रुओं, अस्थियों, मांसपेशियों, तथा गतिवाही के संयुक्ति से होता है।

प्राणी के किसी प्रकार के कार्य की तैय्यारी के कारण आदत निर्माण होता है। आदत मूल प्रवृत्तियों की सहायता से बनती है और यह अर्जित होती है। प्राणी के अनुभव शिथिल नहीं होते। उत्तेजना की प्रतिक्रिया में व्यक्ति अपने को भिन्न भिन्न स्थितियों में लगा कर अनुभव के नये नये क्षेत्र में अपने को पहुंचाता है। इन प्रतिक्रियाओं से वह संतोष प्राप्त करना चाहता है। जिस उत्तेजना से उसे संतोष

मिलता है वह उसे बार बार करता है और इसके द्वारा ही आदत बन जाती है। आदत वातावरण में व्यवहार करने का तरीका है। आदत में व्यक्ति तथा वातावरण का समन्वय होता है। आदत जटिल रूप धारण कर लेती है जिस में परिवर्तन करना कठिन ही नहीं असम्भव हो जाता है। यह एक दूसरी प्रकृति के रूप में हो जाता है। कभी कभी आदत का ऐसा प्रयोग होता है जिसमें वे बिल्कुल मूल प्रवृत्तियों के समान मालूम देती हैं।

व्यक्ति वातावरण के सर्म्पक में आ कर अनेक प्रकार की चेष्टा करता है। अपने को नयी नयी स्थितियों और अनुभव में लाता है और इनके कारण उसे प्रसन्नता तथा दु:ख होता है। जिन बातों से उसे संतोष होता है वह बार बार करना चाहता है। इसी प्रकार वह सीखता है।

मनोविज्ञान के सिद्धान्त के अनुसार किसी विशेष कार्य के होने के लिये उस अंग की परिपक्वता का होना आवश्यक है जिसके द्वारा वह कार्य होता है। इसी सिद्धान्त के अनुसार युवकों में मांसपेशियों की योग्यता उसी समय आती है जब वह उसके अनुसार परिपक्व हो जाये। प्रत्येक बालक को उसकी मास पेशियों के विकास के लिये अवसर मिलना चाहिये किन्तु उस की परिपक्वता के क्षेत्र के बाहर उससे कौशल में निपुणता की आशा नहीं करनी

चाहिये। परिपक्वता तथा सीखना आपस में भिन्न नहीं है किन्तु वे एक ही वृक्ष की दो शाखायें हैं। कार्य के लिए बनावट की आवश्यकता है और बनावट में कार्य के द्वारा विकास होता है। गतिवाही कौशल का सीखना दूसरे सीखने से भिन्न नहीं क्योंकि दोनों में एक ही सीखने के सिद्धान्त प्रयोग में आते हैं।

वातावरण व्यक्ति को सदैव प्रभावित करता रहता है और वातावरण के सम्पर्क में आकर व्यक्ति को भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रतिक्रिया करनी पड़ती है। जितनी अधिक प्रतिक्रिया होगी उतना ही सीखना अधिक होगा छोटे वातावरण में सीखना कम होगा। विशाल वातावरण में सीखना अधिक होगा। इसी वातावरण के सम्पर्क में सामाजिक व्यवहार का ज्ञान होता है। हमारी भावनायें विचार तथा व्यवहार, परिवार, स्कूल तथा दूसरी सामाजिक संस्थाओं के द्वारा ही निश्चित होता है।

वातावरण का परिवर्तन होता रहता है और सीखने वाले को इस परिवर्तन के अनुकूल उपाय तथा योजना का विचार करना पड़ता है जिससे वह वातावरण में सही रीति से अपना स्थान प्राप्त कर सकें और सही प्रतिक्रिया कर सके। दौड़ने वाले को मैदान की प्रकृति की अनुसार ही कदम रखना पड़ेगा खेलने वाले को हवा के विरुद्ध गेंद मारने में हवा की बाधा का विचार करते हुये एक विशेष

कोण से गेंद मारा जायेगा। तैरने में यदि लहर मुख्य तेजी से आने लगे तो तैराने का तरीका बदल दिया जायेगा।

किसी कार्य के सीखने के लिये उसके लिये तैय्यार होना आवश्यक है। शारीरिक शिक्षा में भी तैय्यारी के मनोविज्ञान का ध्यान रखना है। सीखने में सीखने के विषय के अनुकूल परिपक्वता की आवश्यकता है और कभी कभी मांसपेशियों की शक्ति की भी आवश्यकता होती है किन्तु तैय्यारी प्रशिक्षण तथा उत्तेजना पर भी निर्भर रहती है। सामग्री के प्रस्तुत करने तथा कार्य में सफलता प्राप्त करने के द्वारा शिक्षक विद्यार्थियों को तैय्यार करते हैं। इससे यह विदित होता है कि सीखने की वस्तु बालक की योग्यता से कम या अधिक नहीं होना चाहिये। कार्य न बहुत सरल न बहुत कठिन कठिन होना चाहिये।

जब व्यक्ति सीखने के उद्देश्य से कोई कार्य करता है तो परिणाम अच्छा होता है क्योंकि उद्देश्य परिणाम की ओर व्यक्ति को प्रेरित करता है। इसके लिये इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि वातावरण अनुकूल हो और ध्येय योग्य हो। यदि सीखने वाला अनुभव को प्रेरणा से संयुक्त करे तो सीखना शीघ्र होगा।

सीखने वाले को सदा उत्साहित करना चाहिये। इच्छा तथा प्रेरणा, जिनसे सीखने वाला उत्साहित होता है उसको उत्तेजित

करना आवश्यक है। यह एक आन्तरिक शक्ति के रूप में कार्य करता है। आन्तरिक प्रेरणा स्थायी होती है और व्यक्ति अपने आप उसकी उत्पत्ति करता है। बाह्य प्रेरणा बलपूर्वक कार्य कराती है वह अस्थायी होती है क्योंकि जैसे ही वाह्य प्रभाव समाप्त हो जायेगा वैसे ही कार्य में शिथिलता आ जायेगी।

प्रेरणा का कारण कार्य का चुनाव होता है और व्यक्ति किसी काय को दूसरे की अपेक्षा करना चाहता है।

यदि कार्य की उपयोगिता सीखने वाले को अच्छी तरह मालूम हो तो वह एक शक्तिशाली प्रेरक का कार्य करती है। सीखना बहुत कुछ सीखने वाले के कार्य के प्रति भाव, मानसिक प्रवृत्ति तथा कार्य के प्रति प्रेरणा पर निर्भर करता है। अग्रसर करने वाली इच्छा शक्ति से भी सीखना सम्भव है।

जिससे संतोष प्राप्त होता उससे सीखना शीघ्रता से तथा उत्तम होता है। शारीरिक शिक्षा में वैसी क्रियाओं का प्रयोग होना चाहिये जिनसे संतोष प्राप्त हो। साधारणतया जिन चीजों से उसकी आवश्यकता की पूर्त्ति होती है उससे उसे संतोष होता है। जिन क्रियाओं से संतोष होता है उसे वह बार बार करना चाहता है और इस प्रकार सीखने की क्रिया होती है।

सफलता तथा असफलता चेष्टा में स्तर से सम्बन्धित है। यदि

ध्येय बहुत ही ऊँचा है तो असफल होना स्वाभाविक होगा । अकसर सफलता की नाप वास्तविक कार्य से नहीं किन्तु चेष्टा से होती है ।

भिन्न-भिन्न सीखने के द्वारा व्यक्ति में परिवर्तन होते रहते हैं । यह परिवर्तन नाड़ी तन्तुओं में और विभिन्न अंगों में भी होता है । यह इसलिये सम्भव है कि सीखने में सम्पूर्ण व्यक्ति सीखता है ।

सीखने का ध्येय यदि स्पष्ट हो तो सीखना उत्तम होगा । शारीरिक शिक्षा में भी ध्येय स्पष्टता से बनाना आवश्यक है । यह सीखने की पहली सीढ़ी है । जब सीखने वाले को ध्येय तथा उद्देश्य का पता होगा तो वह प्रत्येक प्रयत्न पर अपनी क्रिया की नाप कर सकता है और सफलता की ओर बढ़ने का प्रयत्न कर है । अच्छे शिक्षक का कर्त्तव्य है कि वह सीखने वाले को उसकी त्रुटियां बता दे और उनके सुधार का उपाय बता दें ।

उत्तम सीखने के लिये यह आवश्यक है कि गतिवाही समन्वय के लिये उसमें स्पष्ट विश्लेषण के द्वारा अभ्यान्तरिक दृष्टि प्राप्त हो । इसके द्वारा सीखने वाले को वास्तविक स्थिति का ज्ञान होगा । और सीखना सुगमता से होगा ।

सीखना सम्पूर्ण व्यक्ति के द्वारा होता है । इसमें केवल विद्या-विशेष पर ही केवल ध्यान नहीं देना है किन्तु उन बातों पर भी जो कार्य करने वाले को प्रभावित करती है ध्यान देना है । जैसे एक

एथलिट को दौड़ने की विद्याविशेष के बारे में ही बताया जाये और दूसरे व्यक्तियों के सम्पर्क का प्रभाव, दर्शकों का प्रभाव, , साथियों का प्रभाव वस्त्र तथा जूते, भिन्न भिन्न क्रियाये जो इस कार्य से सम्बधित हैं उनका प्रभाव यदि उसे नहीं मालूम है तो सही सफलता प्राप्त करना असम्भव होगा ।

सीखने में सम्पूर्ण तथा विशलेषित भागों का प्रयोग आवश्यक है। शारीरिक शिक्षा में भी इसका प्रयोग होना चाहिये । विशलेषित अंग करने योग्य [Functional whole] पूर्ण हो। सीखने की पूर्ण रीति सर्वदा श्रेष्ठ है। शारीरिक शिक्षा कार्यों में कार्य क्रम का बड़ा हिस्सा करने योग्य पूर्ण हैं जैसे खेल नृत्य तथा आदि । पूर्ण रीति से सीखने में सीखने वाला कार्य में एक पूर्ण मानसिक चित्र बना लेता है और विशलेषित अंगों के अभ्यास में भी वह इनका सम्बन्ध पूर्णता की दृष्टि से देखता है। इस कारण क्रिया शीघ्रता से सीखी जा सकती है। जटिल किया के विश्लेषित अंगों का अभ्यास करना आवश्यक होता है। विश्लेषित अंगों का अभ्यास जितनी शीघ्रता से पूरी की जाये करना चाहिये और फिर सम्पूर्ण के रूप में जितनी शीघ्रता से अभ्यास करा जाय उतना ही उत्तम होगा ।

शारीरिक कौशल का स्थानान्तर सम्भव है। जैसे पैरों में किसी

कार्य के द्वारा शक्ति लाकर दूसरे कार्य किये जा सकते है जिसमें में यह अर्जित शक्ति उपयुक्त तथा उपयोगी सिद्ध होगी ।

यह स्थानान्तर अपने आप नहीं होता है । कौशल के साथ उस में सम्बन्धित प्रतिक्रिया का ज्ञान आवश्यक है । और इसी ज्ञान के कारण स्थानान्तर भी सम्भव है । अनुभव में जितना अधिक अर्थ होगा उतनी अधिक स्थानान्तर में सरलता होगी । स्थानान्तर करने में इच्छा शक्ति का प्रयोग करना चाहिये । खेल में समन्वय सीखा जाता है । दैनिक जीवन में कार्यों में समन्वय कर प्रयोग उचित अवस्था में इच्छा शक्ति के द्वारा स्थानान्तर करना पड़ेगा ।

जिस कौशल का दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं उनका स्थानान्तर सम्भव नहीं ।

स्थानान्तर के विचार से निषेध विशेषकर जिमनास्टिक के कार्य में महत्वपूर्ण है । शरीर साधन के कार्य में अत्याधिक कार्य झुकने के रुझान के निषेध में है । विविध आन्तरिक अंगो का एक साधारण कार्य जब किसी मांस पेशी पर निषेध होता है तो वह उतना ही कार्य करने के लिये तैयार हो जाता है । इस से यह निष्कर्ष निकलता है कि निरोध कार्य रोकना ही नहीं किन्तु उससे और अधिक है । यह कहा जा सकता है कि यह कार्य की तैयारी है । इसे शारीरिक गति के आरम्भ की तैयारी समझना चाहिये ।

सीखने में एक ऐसी अवस्था आ जाती है जिसमें यह मालूम होता है कि कोई प्रगति नहीं होती। सीखने के आरम्भ में सफलता अधिक होती है। और फिर कुछ समय तक प्रगति रुक जाती है। यह वह स्थान तथा समय हैं जहाँ मानसिक संगठन होता है और इममें अनेकों प्रकार से बाधाये प्रस्तुत हो सकती हैं। सीखने में उन्नति को इस प्रकार रुकने में सीखने का पठार कहते हैं। पठार के कई एक कारण हो सकते हैं जैसे परिश्रम न करना, गलत पद्वति को अपनाना निरूत्साह, उन्नति वहुत धीरे धीरे होती जो दिखायी नहीं देती, अदि। फिर उन्नति लाने के लिये इन कारणों को दूर करना आवश्यक है। पठार एक प्रकार का ही नहीं भिन्न भिन्न प्रकार के हो सकते हैं और यह कौशल जो सीखता है, सीखने वाले की पिछला अनुभव अभ्यास के समय में बाँटने और सीखने वाले की योग्यता पर निर्भर होता है।

सीखने में अभ्यास तथा प्रयोग के बिना निपुणता प्राप्त नहीं हो सकती। शारीरिक शिक्षा में भी सिद्धान्तों को अपनाना चाहिये। अभ्यास का उचित समय निश्चित करना आवश्यक है। अभ्यास थोड़े थोड़े समय के लिये विस्तृत अवधि में होना चाहिये। एक साथ देर तक अभ्यास करने से लाभ नहीं होता किन्तु हानि होने की सम्भावना है। दण्ड के रूप में अभ्याय नहीं करना चाहिये।

सीखने में यदि आत्म विश्वास हो तो अच्छी सफलता प्राप्त होगी। भय से हिचकिचाहट होती है और शरीर तथा मानसिक स्थिति ठीक नहीं रहती। आत्म विश्वास के साथ किसी कार्य के आरम्भ करने में शरीर में एक लोच (Relaxation) रहता जिससे कार्य आसानी से होता है।

यह आवश्यक है की किसी चीज के सीखने के लिये उसे करना आवश्यक है। केवल सिद्धान्त के जानने से सीखना पूर्ण नहीं होता। पूर्ण सीखने के लिये कार्य करना आवश्यक है। यदि वह कार्य जिसे सीखना है प्रदर्शित कर दिया जाये तो सीखने में सरलता होगी।

शारीरिक शिक्षा में ये मनोवैज्ञानिक आधार यदि प्रयोग में न लाये जायें तो शिक्षा अच्छी प्रकार से न हो सकेगी। यह आवश्यक है कि शारीरिक शिक्षा अपने कार्य में पग पग पर मनोवैज्ञानिक आधार का सहारा ले, क्योंकि शरीर मन के साथ पूर्ण व्यक्ति के लिये कार्य कर रहा है जिसमें पूर्ण व्यक्ति स्वयम् लीन है।

---

## [१०]

# शारीरिक शिक्षा का इतिहास

किसी देश की उन्नति की माप हम उस देश के इतिहास से लगा सकते है। पहले इतिहास का अर्थ लड़ाइयों, तिथि और नाम से था किन्तु वर्तमान समय में इतिहास से उन्नति को आप करते हुये भिन्न देशों में समय समय के प्रभाव तथा उनका संयुक्त प्रभाव वर्तमान काल क्या होता है हम देखते हैं। अतएव इतिहास अनुभव तथा प्रगति का एक लेखा है।

**प्राचीन काल :---**

वर्तमान काल में भी कुछ ऐसी जाति के लोग हैं जो आज के संसार की आधुनिक सभ्यता से वहुत पीछे है। इनसे हम इतिहास की आरम्भिक दशा का अनुभव कर सकते हैं।

प्राचीन काल में किसी प्रकार की संगठित शिक्षा नहीं थी। मानव अपने अनुभव से नई नई बातें सीखता जाता था। तथा प्रगति करता था जो कुछ वह सीखता था वह दैनिक जीवन के फलस्वरूप था। इतना हम जानते है कि उनका मुख्य कार्य शारीरिक था जो मनोरंजन तथा दैनिक शक्तियों को प्रसन्न करने के लिए नृत्य के रूप में भोजन तथा आहार के लिए, परिश्रम के रूप में ओर किसी न किसी प्रकार से समय व्यतीत करने के लिये क्रीड़ा था। मनुष्य

प्राकृतिक जीवन में प्राकृतिक गतियों का प्रयोग करता था और मूल प्राकृतियों के प्राकृतिक आधार पर खेलता था। प्राचीन काल में शारीरिक विकास तथा उपार्जित बल दैनिक जोवन के कार्य के फल स्वरूप था। केवल शारीरिक कार्य होने के कारण शारीरिक विकास उत्तम था किन्तु शारीरिक संतुलन का अभाव था।

सभ्यता के इतिहास से हम जानते हैं मनुष्य पत्थर काल लौह काल, इत्यादि से होता हुआ आवश्यकताओं के अनुसार वातावरण पर नियन्त्रण करता हुआ अपने गोत्र परिवार और समाज का निर्माण किया जिसके द्वारा परिश्रम का विभाजन भी हुआ। यहीं से सभ्यता का आरम्भ है और जैसे सभ्यता का आरम्भ हुआ साथ ही साथ संगठित शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता का एहसास हुआ।

## प्राचीन सभ्यताओं में शारीरिक शिक्षा :—

### चीन :—

प्राचीन काल ही से यहां के लोग दूसरे संस्कृति से पृथक रहना चाहते थे। चीन की बड़ी दीवार इसकी साक्षी है। चीन की सभ्यता संसार की सभ्यताओं में से प्राचीनतम है इनकी सभ्यता तथा संस्कृति गति विहीन रही है। भाषा की कठिनाई के कारण शिक्षा कठिन थी। ये धार्मिक भावना के थे और काँनपुशश की धार्मिक शिक्षा को मानते थे। इनकी शिक्षा का ध्येय भी धार्मिक

था। उच्च परिवार के बालकों को शिक्षा दी जाती थी। लड़कियों की शिक्षा का अभाव था व्यक्ति विकास की ओर किसी प्रकार का ध्यान नहीं दिया जाता था अतएव शारीरिक शिक्षा का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। चीन के लोग अपने को सुरक्षित समझते थे अतएव सेना की आवश्यकता भी नहीं थी।

चीन की वर्तमान शारीरिक शिक्षा बिलकुल भिन्न है। चीन दो हिस्सों में विभाजित हो गया है इनकी आपस की लड़ाइयों तथा दूसरे से लड़ाइयों के कारण सेना शक्ति में बढ़ती हुई है। शारीरिक शिक्षा सैनिक भावनाओं से तथा कम्युनिजम के दृष्टिकोण से दी जा रही है। गोरिला लड़ाई में इनकी दक्षता है। सर्वसाधारण को स्वास्थ्य का ध्यान बहुत नहीं है किन्तु सैनिक शारीरिक शिक्षा बहुतायत से है। चीन अपना प्रभुत्व दिखाने के लिए उचित या अनुचित उपायों का उपयोग कर रहा है जिसमें शारीरिक शिक्षा भी एक है चीन की शारीरिक शिक्षा का प्रभाव भारतवर्ष पर शून्य के बराबर है।

**यूनान** :---

संसार का कोई भी देश सभ्यता में यूनान की तुलना नहीं कर सकता। ईसा से २५०० साल पहले यूनान की सभ्यता में वे बातें थीं जो आज बीसवीं शताब्दी में श्रेष्ठ मानी जाती हैं। यूनान की

सभ्यता सबसे प्राचीन तथा उच्चकोटि की थी। वर्तमान संसार प्राय: सभी विषयों में उसका ऋणी है। शारीरिक शिक्षा का महत्व जितना यूनान में था किसी भी देश में नहीं पाया गया। संसार की शारीरिक शिक्षा जितनी यूनान से प्रभावित हुई उतनी किसी और देश से नहीं।

भारतवर्ष के समान प्राय: ईसा से १००० साल पहले उत्तरी दिशा से आर्यो की तरह सुन्दर सुडौल परदेशी आये और यूनान के ओजियन के साथ जो अत्यन्त सभ्य, काले और छोटे कद के थे, मिल गये। इनका ही मिश्रण भविष्य के यूनानियों के पूर्वज हुए।

इस काल के इतिहास का पता अंधे कवि होमर के इलियड तथा ओडसी ग्रन्थों से पता चलता है। इससे पता लगता है कि इनका जीवन साधारण था भारतवर्ष के ग्रामीणों की तरह लोग रहते थे तथा उन्ही की तरह स्त्रियों का आदर तथा अतिथि सत्कार करते थे। यूनान के धर्म का आरम्भ इसी समय हुआ जेउस सर्वश्रेष्ठ देवता था जिसकी बारह देवताओं की एक सभा थी देवता का निवास स्थान ओलिम्पस पहाड़ था। यहीं से यह देवता यूनान के भाग्य का निर्णय करते तथा नेतृत्व करते थे ऐसा युनानियों का विश्वास था। इनके अतिरिक्त और भी छोटे देवता थे। देवताओं के गुण दोष मनुष्यों के समान थे। कहा जाता है यूनान

की शारीरिक शिक्षा में धार्मिक महत्व था। शारीरिक व्यायाम खेल कूद आदि देवताओं के लिये, मनोरंजन तथा अन्तेष्ठ क्रिया के अवसर पर हुआ करते थे। युनान के लोगों में शारीरिक खेल कूद में ऐसी रुचि रखी जाती थी कि किसी समय भी लोग बल तथा कौशल की प्रतियोगिता में भाग लेने को तैय्यार रहते थे। खेलों के नियम, स्थान तथा प्रशिक्षण के विषय में कुछ पता नहीं चलता है। नृत्य में भी लोगों की रुचि थी।

युनान एक पहाड़ी देश है। उस समय यह देश छोटे छोटे पहाड़ी टुकड़ों में बटां हुआ था। यह सभी स्वतन्त्र प्रदेश की तरह थे। इनमें से दो मुख्य थे स्पार्टा तथा ऐथेन्स। यहीं से युनान के सर्वश्रेष्ठ काल का आरम्भ होता है। ईसा से पूर्व चौथी तथा पाँचवी शताब्दी में युनान ने अत्याधिक उन्नति की। उस समय का व्यापार, आर्थिक दशा, दूसरे देशों से पारस्परिक सम्बन्ध, प्रजातान्त्रिक राज्य, उनके विद्वान, कलाकार, दार्शनिक, राजनेता इत्यादि की तुलना ससांर के किसी देश से की जा सकती है। यद्यपि उनमें पारस्परिक मत्त वैभिन्य था किन्तु वे शारीरिक तथा सैनिक शिक्षा के प्रति एक मत थे। वर्तमान शारीरिक शिक्षा इस काल की अभारी है क्योंकि वे और दूसरों से शारीरिक राष्ट्रीय प्रतियोगिता, शारीरिक शिक्षा की महत्ता तथा विजय की उच्च भावनाओं में बहुत ही बढ़े चढ़े थे जिसका कि मुकाबला अभी भी

नहीं हो सकता है युनान की शारीरिक शिक्षा स्पार्टा और ऐथेन्स में झलकती है।

**स्पार्टा**—आरम्भ से ही ये लोग देशभक्त वीरता तथा युद्ध आदि को पसन्द करने वाले थे। प्रत्येक स्पार्टा के नागरिक का जीवन स्पार्टा लिए था।

बालक के जन्म लेते ही राज्य कर्मचारियों द्वारा उसका निरीक्षण होता और यदि वह अस्वस्थ पाया जाता तो मृत्यु हेतु कहीं छोड़ दिया जाता। स्वस्थ बालक मां बाप की देख रेख में सात वर्ष तक पलते थे। मां का ध्यान बच्चे के चरित्र, बलिष्ठ शरीर, आज्ञा पालन, आदर, वीरता, सब तरह की सहने की शक्ति की ओर सदैव रहता था।

घर के प्रशिक्षण के पश्चात वह सार्वजनिक निवास स्थान में जो उसका गृह तथा स्कूल दोनो होता था चला जाता था। यहाँ दलों में बटे हुये दल नायकों द्वारा उनका प्रशिक्षण होता था। भोजन वस्त्र तथा जीवन अत्यन्त ही साधारण था। उनकी दैनिक शारीरिक शिक्षा दौड़ना, कूदना, तैरना, जावलिन इत्यादि फेंकना, दूर दूर तक पैदल चलने आदि के रूप में होता था।

बारहवें वर्ष में उन के दल का पुनः संगठन होता और कुछ कठिन प्रशिक्षण का आरम्भ होता जो बड़ों की देख रेख में होता।

वीसवें वर्ष में युवक दल नायक होता । उसे भिन्न भिन्न कठिन परीक्षण देना पड़ता और दल की भोजन इत्यादि आवश्यकताओं का भी भार उसी पर रहता था । उसे इन आवश्यकताओं के लिए उपाय करना पड़ता था चाहे वह जैसे भी करे चाहे चोरी ही के द्वारा क्यों न हो परन्तु उसके साथ यह भी शर्त थी कि चोरी करते समय पकड़ा न जाए अन्यथा कड़ी सज़ा दी जाती थी ।

उनके शिष्टाचार के प्रशिक्षण पर बहुत ध्यान दिया जाता था और यह शिक्षा दी जाती कि स्पार्टा सब कुछ है तथा व्यक्ति का उसकी भावनाओं का स्पार्टा के सम्मुख कुछ मूल्य नहीं है । वहाँ कहावत था कि "वह नगर सुरक्षित है जिस की दीवार ईट की नही बल्कि मनुष्यों की बनी है ।"

स्पार्टा के निवासी युद्ध पसन्द थे । संसार में स्पार्टा की सेना का मुकाबला कहीं नहीं हो सकता किन्तु यह उनकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बलिदान के कारण ही संभव रहा । बीसवें वर्ष में युवक युद्ध के लिए पूर्व प्रशिक्षण प्राप्त किए हुए युद्ध के लिए तैय्यार रहता था ।

तीस साल की आयु में उसे गृहस्थ जीवन में पदार्पण करना पड़ता था तथा स्पार्टा के निमित्त बच्चों को जन्म देना पड़ता था ।

प्रायः साठ वर्ष की आयु तक राज्य की सेवा में रहते थे। समाज में स्त्रियों का स्थान उच्च था। बालिकाओं को शारीरिक शिक्षा दी जाती थी जो कि स्त्रियों की देख रेख में होती और बालकों के समान होती थी।

युद्ध प्रेमी स्पार्टा के लोगों को किसी दूसरे प्रकार के परिश्रम तथा हाथ के काम में रुचि न थी। दास प्रथा का प्रचलन था। नृत्य में भी स्पार्टा के लोगों की रुचि थी। नृत्य तीन प्रकार के होते थे जिमनास्टिक सैनिक तथा उत्सव सम्बन्धी नृत्य।

**एथेन्स**—यहाँ की सभ्यता तथा शारीरिक शिक्षा भी अत्यन्त उच्चकोटि की थी। बालक के जन्म लेने पर पिता निर्णय करता था कि वह जीवित रहेगा कि नहीं। बालक सात वर्ष तक माता तथा धाई की देख रेख तथा शिक्षा में रहते थे।

सातवें वर्ष से लड़कों की शिक्षा का आरम्भ होता और लड़कियाँ घरों में ही रहती थीं। एथेन्स की शिक्षा का ध्येय वहाँ के सामाजिक, धार्मिक राजनैतिक तथा सैनिक जीवन के योग्य होना था। इसका अर्थ था व्यक्ति की शारीरिक मानसिक तथा आत्मिक शिक्षा जिसके लिए जमनास्टिक, व्याकरण तथा संगीत उपयुक्त समझा जाता था।

बालकों को आधुनिक खेल की सामग्री के प्रकार के खेलने

की वस्तुयें मिलती तथा एक शिक्षक और एक दास सदैव साथ साथ रहत था।

पालेस्ट्रा जिमनास्टिक स्कूल थे जहाँ जिमनास्टिक का प्रशिक्षण दिया जाता था। ये अनेक थे। साधाणत: नदियों के किनारे स्थित थे जहाँ तैरने की सुविधा भी होती थी। संस्थाओं की उन्नति के साथ सुविधाओं की भी उन्नति हुई और प्राय: वर्तमान वनाए हुए तैरने के स्थानो की सुविधाओं की तरह सुविधाएँ उपलब्ध थी। ये संस्थाएँ प्राइवेट थी किन्तु राज्य शासन के नियमों के अन्तरगत थीं। इनके लिए विशेषज्ञ रखे जाते थे जो भिन्न शारीरिक खेलों में प्रशिक्षण देते थे। पिता तथा शिक्षक सदैव बालक की उन्नति, आदतों तथा शिष्टाचार के निर्माण का ध्यान रखते थे। शारीरिक शिक्षा के साथ ही साथ मानसिक शिक्षा के लिए बालक स्कूल जाता था। जहाँ उसे लिखना पढ़ना तथा साधारण गणित का अभ्यास कराया जाता था। यूनान की शास्त्रीय पुस्तको में से कंठ करना पड़ता था। युनानियों का यह विचार था कि प्रत्येक सभ्य मनुष्य युनान के गीत गा सके और वीणा बजा सकें।

अट्ठारवें वर्ष में युवक प्रौढ़ माने जाते थे तथा सेना में भर्ती होते थे। इस समय उन्हे युनान की प्रसिद्ध प्रतिज्ञा लेनी पड़ती थी "मैं पवित्र हथियार का अनादर कभी नहीं करूगा युद्ध में अपने

साथियों को नही छोडूँगा। मैं व्यक्तिगत रीति तथा सामुहिक रीति से मंदिरों,सार्वजनिक धन की रक्षा करूगा, मैं अपनी पैतृक भूमि को जितना मैंने प्राप्त किया है उससे अधिक प्रदान करूगा। मैं राज्य के अधिकारियों की जो राज्य करेगें उनकी आज्ञा मानूगा, मैं प्रचलित निषमों का तथा जो भविष्य में सर्व सम्मति से बनेंगे उनका पालन करूगा यदि कोई इसके विरुद्ध कार्य करेगा तो मैं व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से इन नियमों की रक्षा करूगा। मैं अपने पैतृक धर्म का सम्मान करूगा जिसके लिए मैं देवताओं की शपथ लेता हूँ"

इसके पश्चात दो वर्ष का सैनिक प्रशिक्षण होता था। इस अवसर के पश्चात यदि कोई युद्ध नही होता तो वह किसीभी व्यवसाय को करने के लिए स्वतन्त्र कर दिया जाता था। एथेन्स की यह विशेषता थी कि चाहे व्यक्ति किसी भी व्यवसाय में व्यस्त हो वह एक जिमनास्ट सदैव ही रहता था क्योंकि उनके विचार में जिमनास्टि का अर्थ प्रसन्नता, स्पोर्ट, स्वस्थ्य,सुडौल शरीर, मनोरंजन सामाजिक मेल जोल, शिष्टाचार का प्रशिक्षण, व्यक्तित्व का पूर्ण विकास, प्रसिद्ध तथा सम्मान इत्यादि से था। इस प्रकार के प्रशिक्षण के लिए तीन बड़ी संस्थाएँ थीं। एकाडमी, लाइसियम, और साइनासारगस। ये संस्थाएँ बड़ी बड़ी इमारतों में थीं जहाँ स्नान

तथा खेल क्रीड़ा के लिए खुले हुए स्थान और मनोरंजन के साधन थे। जहाँ ये इमारते नदी के किनारे थीं वहाँ तैरने का प्रबन्ध भी था। ईसा की चौथी शताब्दी के पहले इन सस्थाओं में बहुत ही उन्नति हुई। एक मुख्य विशेषता जो कदाचित संसार के किसी और देश में नहीं थी, वह यह थी कि इन शारीरिक शिक्षण की सस्थाओं में उच्च कोटि की दार्शनिक, सांस्कृति, गायन इत्यादि की भी व्यवस्था जिसमें प्लेटो,अरस्तू ऐसे महान व्यक्तियों ने भाग लिया था। यहाँ तक कि ये मानसिक शिक्षा के केन्द्र के रूप में विख्यात हो गये थे।

एथेन्स की स्त्रियों का सामाजिक स्तर स्पार्टा की स्त्रियों से निम्न कोटि का था। घरेलू शिक्षा माँ के द्वारा ही दी जाती थी। एथेन्स केवल स्त्रियों की स्थिति को छोड़ कर अपने पड़ोसी स्पार्टा से सर्व श्रेष्ठ था।

**पेनहेलनिक खेल :—**

सम्पूर्ण युनान में समय समय पर देवताओं के सम्मान में उत्सव हुआ करते थे, जिसमें नृत्य खेल तथा गायन इत्यादि हुआ करते थे। चार मुख्य उत्सव ओलम्पियन,पायथियन,नीमियन तथा इस्थिमियन थे।

ओलम्पियन खेलों के आरम्भ के पूर्व, ऐलिस के ओलम्पिया शहर में, जो एक पवित्र स्थान माना जाता था, धार्मिक उत्सव तथा

ऐथेलेटिक्स खेल होते थे। सर्व प्रथम पूर्ण युनान के लिए ओलम्पिया में खेल का वर्णन ईसा के पूर्व ७७६ ई० में पाया जाता है। इसके पश्चात प्रत्येक चौथे वर्ष ग्रीष्म ऋतु के अन्त में खेल होते रहे जिसे ३९४ ईस्वी में ऐम्परर थीयोडीयस ने बन्द कर दिया। इन खेलों के कारण ओलम्पिया प्रसिद्ध हो गया और जेऊस देवता का मन्दिर, बड़ा स्टेडियम तथा पालेस्ट्र वहाँ बने।

उत्सव आरम्भ होने से पहले सारे युनान को शान्ति की सूचना दी जाती थी। इसका संगठन तथा संचालन ऐलिस के दस अध्यक्षों के हाथ में था। केवल वही यूनानी प्रतियोगिता में भाग ले सकते जिन्होंने कभी जुर्म न किया हो। प्रतियोगिता के पूर्व दस महीने का प्रशिक्षण होना अनिवार्य था और अन्तिम माह ओलम्पिया में व्यतीत करना पड़ता था। स्त्रियों की उपस्थिति निषेध थी।

खेलों में विभिन्न प्रकार की दौड़, जेवलिन तथा डिस्कस फेंकना, कूदना, मल्ल युद्ध इत्यादि थे। पेन्टाथलेन पाँच आइटम की प्रतियोगिता थी। उसमें दौड़, कूद, जावलिन तला डिस्कस फेंकना तथा मल्ल युद्ध था। यूनानी इन खेलों में पशु शक्ति की अपेक्षा तीव्र गति, कौशल तथा विज्ञान पर ज़ोर देते थे।

विजेताथ को पुरस्कार स्वरुप एक जैतून की पवित्र डाल का मुकुट तथा खजूर की डाल दी जाती थी। उसके सम्मान में भोज

तथा वह घर लौटते समय धूम धाम से जुलूस के साथ वापस जाता था। कवि तथा मूर्तिकार अपनी कला के द्वारा उसका स्मरण करते थे।

ईसा के पूर्व दूसरी शताब्दी से खेलों का पतन हुआ इसका एक कारण रोमन विजेताओं की अरुचि भी थी।

सुकरात, प्लेटो, प्लुटार्क, हिप्पोकेट्रस ऐसे महान व्यक्तियो ने शारीरिक शिक्षा की श्रेष्ठता के विषय में लिखा है।

यूनान की वास्तविक जिमनास्टिक, जैसी कि एथेन्स में विशेष रूप से देखने को मिलती थी, व्यवसायिकता को प्रश्रय नही देते थे तथा पाशविकता और उत्तेजना की अपेक्षा पूर्ण व्यक्तित्व विकास इमानदारी से खेलने की तथा समस्त राष्ट्र की उपयोगिता के लिये शारीरिक शिक्षा में भाग लेने को प्रोत्साहित करते थे।

यूनानी मुद्राओं में तथा मूर्तियों में देवताओं आदि के चित्रों की अपेक्षा यूनानी जिमनास्ट के चित्र अंकित किये जाते थे। इससे यूनानी जिमनास्ट का उसके देश में कितना आदर तथा सम्मान होता था उसका अन्दाज़ा लगाया जा सकता है।

उच्च विचार तथा भले उद्देश्यों से यूनान की जिमनास्टिक आभूषित हुई। यह समय जिमनास्टिक का स्वर्ण युग कहलाता है।

---

[११]

# रोम में शारीरिक शिक्षा

युनान के होमर काल के अन्त में टाइबर नदी के किनारे कुछ गरड़िये तथा चालाक व्यापारी बसे। यह परिश्रमी इमानदार, अल्पव्ययी, देवताओं के आदर करने वाले तथा दूसरे के साथ कटु व्यवहार करने वाले थे जो इन बातों को परम्परागत रुप में स्थायी देखना चाहते थे।

परिवार में पिता मुखिया होता था। बच्चों पर माँ का नियन्त्रण रहता था। परिवार का सर्वश्रेष्ठ ध्येय अपने देश की सेवा थी। बहुत पहले ही इनकी भावना बन चुकी थी कि एक समय ऐसा आयगा जब रोम सारे संसार पर राज्य करेगा। अतएव परिवार का कर्तव्य रोम के लिये बलिष्ठ बच्चों के लालन पालन में था। स्कूल न होने के कारण सारी शिक्षा परिवार ही में होती थी जो बड़ी दक्षता से दी जाती थी। बच्चों के पास वर्त्तमान समय के बच्चों की तरह खेलने की सामग्री होती थी।

रोम निवासी युद्ध पसन्द थे और इस कारण शारीरिक शिक्षा को अनिवार्य समझा जाता था। क्योंकि पिता एक योद्धा होता था यह उसका कर्तव्य था कि इस विद्या में पुत्र को शिक्षित करे। सैनिक भावनाओं के कारण उनके लिए शारीरिक शिक्षा का अर्थ

शक्ति, लचीलापन, सहने की शक्ति, ठोस शरीर, घुड़सवारी, भाला तथा तलवार के कौशल से ही था। यूनानियों की शारीरिक शिक्षा का उच्च ध्येय सुन्दर एवं सुडौल शरीर तथा मनुष्य का पूर्ण विकास था जिसको रोम निवासिथों ने नहीं समझा। रोम के लोग स्पार्टा की तरह थे। बालकों में तैरने, मल्ल युद्ध, बाक्सिग, दौड़, कूद इत्यादि में प्रतियोगिता होती थी।

रोम के बारह टेबल्स जो ईसवी सन् ४५० में लिखे गए थे उनके जीवन, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, विचार और संस्कृति का वर्णन प्रस्तुत करता है।

चौदह से सत्तरह वर्ष के बीच में बालक बालिग समझा जाता था। इस अवसर पर उत्सव होता और उसका नाम रोमन नागरिकों में लिखा जाता इसके पश्चात वह सेना की सेवाओं के लिए बुलाया जा सकता था। सत्तरह से पैंतालीस साल के पुरूष सेना में भरती किए जाते थे।

युद्ध देवता मोर्स के नाम पर एक मैदान समर्पित था जिसे केम्पस मारीशश कहा जाता था। यह एक सैनिक परेड ग्राउन्ड था जहाँ सैनिक प्रशिक्षण दिया जाता था। वह कठिन प्रशिक्षण होता था। दौड़, कूद, मल्ल युद्ध, घुड़सवारी, तैरना, सशस्त्र तथा अशस्त्र झूठी लड़ाई सिखाई जाती थी। भारी हथियारों के साथ पैदल लम्बी यात्रा करनी पड़ती थी।

ये परेड ग्राउन्ड, उन युवकों के द्वारा भी तैरने या खेलने के प्रयोग में लाया जाता था जो सेना में नहीं थे।

रोम को युद्धों में सफलता उसके युवकों के सैनिक तथा शिष्टाचारिक प्रशिक्षण के कारण हुयी। मेडिट्रेनियन महाद्वीप, एशिया माइनर तथा आस पास के देशों पर इनका साम्राज्य स्थापित हुआ। इस विजय का रोम की सभ्यता पर अत्यन्त महत्व पूर्ण प्रभाव पड़ा। अन्य देशों के सम्पर्क से जो उससे कही अधिक विकसित थे रोम निवासियों का दृष्टि कोण विस्तृत हुआ। धन ने दरिद्रता दूर की, विलासमय जीवन ने साधारण जीवन का स्थान लिया, दूसरे देशों से लाये हुए दासों ने निशुल्क सेवा की, अन्य देशों से सस्ते अनाज के कारण कृषि की आवश्यकता नहीं रही। अधिक समय तक युद्ध की आवश्यकता ने एक व्यवसायिक सेना स्थापित कर दी। संसार की एक प्रमुख शक्ति होने के कारण स्कूलों की आवश्यकता हुयी जहाँ से नेता तथा प्रबन्ध कर्त्ता निकले।

प्रारम्भिक स्कूलों में लिखना पढ़ना तथा गणित सिखाया जाता था। व्याकरण स्कूलों में रोम तथा युनान के साहित्य सिखाए जाते थे। शिक्षा सम्वन्धी प्रबन्धों में यूनानियों का हाथ बहुतायत से होते हुए भी रोम ने यूनान के ध्येय को नहीं अपनाया।

वैभव का पल्लवित होना, मानसिक प्रशिक्षण की आवश्यकता

तथा व्यवसायिक सेना के कारण रोम की जनता के शारीरिक शिक्षा की रुचि में पतन हुआ। इसी समय कुछ राष्ट्रीय खेल उत्पन्न हो रहे थे जिससे शारीरिक शिक्षा को कोई विशेष लाभ न था और जो भाग लेने वालों के लिए बहुत खतरनाक होते थे जनता के ऊपर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। ये खेल सरकस तथा एम्पिर्थी-येटर के थे।

सरकस एक २००० फुट लम्बा तथा ६०० फुट चौड़ा क्षेत्र था जहाँ २००,००० दर्शक बैठ सकते थे। इसके अन्दर नीची दीवार जिसे सपीना कहते थे, जिसकी गोलाई में रथ की दौड़ होती थी। भाग लेने वाले सपीना के ४०० फुट की दूरी पर खड़े होते और दिए निशान के ऊपर दौड़ आरम्भ होती थी। इस दौड़ के रथों में चार घोड़े होते थे और दौड़ में आठ रथ होते थे। यह दौड़ तेज़ी से नहीं होती थी किन्तु अत्यन्त ख़तरनाक तथा उत्तेजित अवस्था में होती थी। इसके सम्बन्ध में किसी प्रकार का नियम नहीं था।

**ग्लाडिटोरियल कॉम्बाट्स:—**

यह आम्पिथीयटर में हुआ करते थे। इसमें दास या कुकर्मी व्यक्ति किसी व्यक्ति या जानवर के साथ लड़ते थे। इसका अन्त प्रतिद्वन्दियों में से किसी एक की मृत्यु के पश्चात ही होता था।

लड़ने वालों को प्रशिक्षित किया जाता था। इनके प्रशिक्षण स्कूल भी कदाचित पाए जाते थे।

रथ चालक तथा योद्धा रोम की जनता के प्रत्येक वर्ग द्वारा सम्मानित थे। दास स्वतन्त्रता प्राप्त करते और आर्थिक लाभ प्राप्त करते थे। डायओसिलेस एक स्पेन के रहने वाले ४,२५७ बार भाग लिया, १,४६२ बार विजयी हुआ और करीब ९,०००,००० रूपया २४ वर्ष में प्राप्त किया।

**थरमें**----सरकार ने उच्च कोटि के नहाने और तैरने के स्थान वनवाए। किसी-किसी थरमें में १६०० या ३२०० व्यक्ति एक साथ स्नान कर सकते थे। यह वहुत कुछ यूनान के जिम-नेजियम के समान होते थे। स्त्रियों तथा पुरुषों के लिए पृथक स्थान थे। खुले हुए मैदान के साथ पैलस्ट्रा भी होता था। गर्म तथा ठंढे जल का प्रबन्ध होता था भिन्न कार्यों के लिए थपृक स्थान जिसमें तेल लगाना मनोरंजन इत्यादि भी थे। पास में बग़ीचा भी होता था जहाँ लोग टहलते थे या दार्शनिक व्यक्तियों संगीतज्ञ या राजनैतिक व्यक्तियों की संगत करते थे।

रोम के आक्रमण से सारे यूनान के खेलों पर बुरा प्रभाव पड़ा। ये जिमनास्टिक को सुन्दर, सुडौल शरीर तथा शारीरिक, धार्मिक

तथा मानसिक सन्तुलन का कारण कभी भी नहीं समझ सकते थे। अतएव इनका पतन होना निश्चित ही था।

रोम ने खेलों में व्यवसायिकता उत्साहित की। भयानक तथा उत्तेजना पूर्ण खेल प्रसिद्ध हुए। विजेता को आर्थिक लाभ के कारण घूस की प्रथा स्थापित हो गयी। खेल में मैत्री पूर्ण प्रतियोगिता का अन्त हो गया।

इस्वी सन १ में मेरों ने एक जिमनेजियम बनवाया और निरोनियन खेल आयोजित हुआ रोम निवासीं दर्शकों के रूप में खेलों में आते थे।

प्राचीन समय में सभ्य परिवार के युवक धार्मिक तथा सैनिक नृत्यों में सार्वजनिक स्थानो में भाग लिया करते थे। बाद में इसको असभ्यता समझा जाने लगा। रोम निवासी जेवनारों के समय व्यवसायिक नर्तकियाँ तथा दासियों के द्वारा अतिथियों का मनोरंजन किया करते थे। देवताओं की प्रेम कहानियाँ भी नृत्य के रूप में चित्रित की जाती थीं।

यूनान के समान रोम में भी हाकी और साकर खेल प्रचलित था।

## अन्धकार युग में शारीरिक शिक्षा तथा जागृति:—

रोम साम्राज्य के पतन के अनेक कारण थे जैसे स्त्रियों के त्याग तथा कम विवाह के कारण जनसंख्या में कमी, ग्लाडिटोरियल

खेल तथा लम्बे युद्ध के कारण पुरुष शक्ति का नाश के साथ ही साथ आर्थिक पतन भी पतन का कारण सिद्ध हुआ। साथ ही साथ दास प्रथा के कारण लोग आलसी भी हो गये। शिष्टाचार का भी ह्रास हुआ ऐसी अवस्था में उत्तरी योरप से टियुटेनिक बारबेरियन्स ने आक्रमण किया। इनके आने से अन्धकार युग का आरम्भ हुआ। इतिहास का कहना है कि इनका आक्रमण संसार के लिए लाभदायक सिद्ध हुआ क्योंकि इन्होने अपना शक्तिशाली शरीर और स्वास्थ्य परम्परा को दिया। इनके साधारण तथा परिश्रमी जीवन ने बलिष्ठ सन्तानें प्रदान कीं। इनका व्यवसाय जानवरों को पालना तथा कृषि करना था। यह अतिथि सत्कार करने वाले, शत्रुओं के साथ क्रूर व्यवहार करने वाले तथा मित्र एवं साथियों के भक्त, युद्ध में मस्त तथा स्वतन्त्र प्रकृति के थे। इनके कारण शताब्दियों तक अन्धकार युग रहा, फिर जागृति हुई और यह कहा जा सकता है कि संसार के अधिक सभ्य राष्ट्र इनकी ही सन्तान हैं।

रोम साम्राज्य के पतन के साथ एक नए धर्म की, जो मसीही धर्म था, स्थापना हुई। इनके लिए सभी वस्तुओं का त्याग अनिवार्य था। समय पड़ने पर अपने मुक्ति दाता के लिए प्राण देना भी आवश्यक था। ये शरीर को बुरा कहते थे। आत्मा के निर्वाण के लिए शरीर का दमन आवश्यक समझा जाता था। ऐसी अवस्था में

शारीरिक शिक्षा की कोई आवश्यकता नहीं रही। इस ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया गया।

मध्य कालीन मसीही धर्म का भी विशेष ध्येय वैराग्य था। इस समय मठों का जीवन सर्व श्रेष्ठ समझा जाता था। साधुओं के लिए परिश्रम एक उद्धार का साधन था। सांस्कृतिक सभ्यता के पतन के पश्चात यही मठ सभ्यता के केन्द्र हुए।

टियुटोनिक बारबेरियउन्स के आक्रमण के कारण युरोप में केन्द्रित राज्य असंम्भव हो गया इसके स्थान पर जागीरदारी प्रथा का आरम्भ हुआ। बलहीन शक्तिशाली की शरण में आए जिसके कारण दास प्रथा का प्रचलन फिर से आरंभ हुआ।

मध्यकाल में कुलीन युवक के सम्मुख दो मार्ग रहते थे, एक धर्म दूसरा वीरता। धर्म के लिए शिक्षा की आवश्यकता थी वीरता के लिए सैनिक तथा शारीरिक शिक्षा। अधिकतर युवक वीरता का मार्ग,जिसे 'नाइट हुड' कहते थे, चुनते थे।

नाइट हुड के प्रशिक्षण में सातवें वर्ष में बालक अपने पिता के स्वामी के पास चला जाता था। इस समय कोई महिला उसे शिक्षा देती थी। चौदह वर्ष की आयु में वह स्क्वायर की पदवी पाता था और किसी नाइट के साथ रहता था और उसी के साथ युद्ध में जाता था। इक्कीसवें वर्ष में वह सैनिक शिक्षा में निपुण

हो जाता और नाइट बना दिया जाता था। उसको नाइट की उपाधि देने के लिए एक विशेष उत्सव होता था।

वीर काल में शारीरिक शिक्षा का ध्येय स्वयं की रक्षा के हेतु प्रशिक्षण था, जो मानसिक शिक्षा से किसी प्रकार सम्वधित नहीं था।

यूरोप में मध्य काल का अन्त तथा आधुनिक काल के आरम्भ को जागृति का समय कहा जाता है। यह समय एक बड़े परिवर्तन का समय था। जीवन को सार्थक समझने के साथ शारीरिक शिक्षा का महत्व प्रकाश में आया। अतएव इस समय के महान व्यक्तियों ने शारीरिक शिक्षा पर जोर दिया और अध्ययन काल, शरीर की शिक्षा, व्यायाम तथा मनोरजंन की आवश्यकता वताई।

---

[१२]

# आधुनिक शारीरिक शिक्षा

आधुनिक शारीरिक शिक्षा का आरम्भ अठारहवीं शताब्दी से हुआ। युरोप में महत्वपूर्ण धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा शैक्षिक सुधार हुए। इस शताब्दी के अन्त होते होते वोलटेयर ने चर्च तथा राज्य की कड़ी आलोचना की तथा रूसो ने समाज तथा शिक्षा की समालोचना की। इस आलोचना के द्वारा जो सुधार हुये वही १९ वीं शताब्दी की सफलता थी ।

रूसो ने बनावटी जीवन का विरोध किया। उसने कहा कि सभ्य मनुष्य दासत्व में जन्म लेता है, जीवित रहता तथा मरता है,। उसने प्राकृतिक जीवन की सराहना की। रूसो का कहना था कि शिक्षा प्राकृतिक ढंग से होनी चाहिए। एमिल नामक पुस्तक में काल्पनिक बच्चे के पूर्व जीवन का वर्णन शिक्षात्मक ध्येय से वर्णित किया है। इसके ही आधार पर उसने शिक्षा सम्बन्धी विचारों को सामने रखा है। उसका कहना है कि बच्चों को बड़े की तरह नहीं समझना चाहिए। बच्चा प्राकृतिक वातावरण में पलता है इसी में पाँच से बारह वर्ष तक शारीरिक विकास होता है। बारह वर्ष बाद यह इस योग्य होता है कि शिक्षा प्राप्त करे क्योंकि जिज्ञासा प्रवृत्ति तीव्र होती है। इस बात पर ज़ोर दिया गया है

कि शारीरिक, मांसिक तथा नैतिक शिक्षा एक ही कार्य से एक साथ प्राप्त की जा सकती है। लड़कियों के लिए, जो भावी माँऍ है, शारीरिक शिक्षा अनिवार्य बताई गयी।

रूसों के विचारों से प्रभावित होकर देसाऊ नामक स्थान पर १७७४ में जान बेसडो न एक प्राकृतिक स्कूल खोला जिसका नाम फिलेन्थ्रोपिनम था।

जौन साइमन पहला शारीरिक शिक्षक हुआ। इनके समय में प्रातः काल एक घंटा तथा मध्यान में दो घंटा, शारीरिक शिक्षा में व्यतीत किया जाता था।

बेसडो प्रथम आधुनिक शिक्षक था जिसने शारीरिक शिक्षा को स्कूल में प्रमुख स्थान दिया। क्रिश्चियन सलज़मन ने १७८५ में फिलान्थोपिनम के आधार पर शिक्षण संस्था आरम्भ की। एन्ड्री शारीरिक शिक्षक के एक वर्ष व्यार्थ करने के पश्चात जौन फ्रेडरिक गटसमथ् (१७५९-१८३९) रखे गये। यहाँ यह ५० वर्ष तक थे। अपनी लम्बी सेवा अवधि तथा लेखों के कारण यह आधुनिक शारीरिक शिक्षण के संस्थापक तथा जर्मन जिमनास्टिक के पिता मह कहे जाते है यहाँ पर तैरना, खेल,एथेलेटिक्स, जिमनास्टिक इत्यादि क्री शिक्षा दी जाती। इस समय विद्यर्थी की व्यक्तिगत रूप से

प्रगति का लेखा रखना आरम्भ किया गया। लम्वी हारक तथा बागबानी भी की जाती थी।

गटस्मथ ने दो पुस्तकें लिखी 'जिमनास्टिक फार दी यंग' उनके विचारानुसार, शारीरिक शिक्षा, शरीर रचना शास्त्र के आधार पर होना चाहिए। खेल तथा तैरने को कार्य क्रम में मुख्य स्थान देना चाहिए। उसका कहना है कि शारीरिक शिक्षा, शरीर तथा आत्मा की संयुक्तता तथा शक्ति के हेतु होना चाहिए। इससे आत्म निर्भता की प्राप्ति होती है जो हर एक नागरिक को प्राप्त करना चाहिए। उसने व्यायाम का वर्गीकरण किया।

युनानियों के समय से अब तक गटसमक्ष के समान किसी ने शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त को ज्ञान पूर्वक विकसित नहीं किया।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में स्विटजर लैंड के शिक्षा विशेषज्ञ पैस्टालौजी ने आधुनिक शिक्षा प्रणाली की नीव डाली पैस्टालौजी ने रूसो के विचारों को आधार वनाकर कार्य आरम्भ किया और रूसों की प्रणाली को नया रूप दिया। पैस्टालौजी ने शिक्षा में मनोविज्ञान की सहायता ली। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने के कारण उन्होने कहा कि बालक से निकट सम्पर्क तथा उसके मन का अध्ययन आवश्यक है। पैस्टालौजी ने बालक की तुलना पौधे से की, जो बढ़ता जाता है और कहा, कि

शिक्षा का अन्तिम ध्येय बालक के नैतिक, शारीरिक तथा मानसिक निकास को प्राकृतिक, सुसंगठित तथा सुव्यवस्थित ढग से विकसित होने के लिए सहायता देने में है। शिक्षा में बच्चे का भाग, अवलोकन, ज्ञान, प्रत्यक्षीकरण तथा कार्य शीलता है तथा शिक्षक का भाग, ज्ञान पूर्ण और सहानुभूति से मार्ग दर्शन करना है।

पेस्टालौजी के सिद्धान्त के अनुसार एक शिक्षक की देख रेख में खेल तथा शारीरिक व्यायाम का होना आवश्यक था। एक दिन उसने यह देखा कि खुली हवा में कुछ देर खेलने के बाद उसके बच्चे ने काफी समय तक एकाग्रचित होकर अध्ययन किया। उसको यह विश्वास था कि मनोरंजन के साथ खेल तथा प्रतियोगिता की प्रवृत्ति को मार्ग देने से मन, शरीर तथा आत्मा का सुचारु रूप से विकास होता है। शारीरिक शिक्षा से शक्ति, कौशल, सहने की शक्ति, तथा शारीरिक नियन्त्रण प्राप्त होता है। अतएव सामान्य शिक्षा में इसको उपयुक्त स्थान प्राप्त होना अनिवार्य है। सामान्य शिक्षा से शारीरिक शिक्षा अलग नहीं है क्योंकि बालक एक इकाई है। प्रकृतिक, मानसिक तथा शारीरिक शक्ति दोनो का प्रयोग एक दूसरे के विकास के लिए प्रयोग करती हैं।

प्रवृत्तियों के द्वारा गति होती है, किन्तु कौशल, बुद्धि, प्रवीणता तथा खेलने की इच्छा अभ्यास से उत्पन्न-हौती है।

युर्वेडुन में पेस्टालौजी के स्कूल में प्रत्येक दिन एक घंटा शारीरिक खेल तथा व्यायाम के लिये नियत था। अनऔपचारिक खेलों के अतिरिक्त उसने शारीरिक कार्यों की प्रणाली बनायी जिसको कठिनाई तथा शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों के अनुसार वर्गीकृत किया गया था। इनका अभ्यास शिक्षक के नियन्त्रण में होंता था।

अमेरिका तथा युरोप का ध्यान पेस्टालौजी के स्कूल की ओर आर्कषित हुआं। फलेनवर्ग ने पेस्टलौजी की शिक्षा अधार पर की औद्यौगिक शिक्षा का विकास किया।

फ्रेडरिक फ्रोबल भी पेस्टालौजी के समान आधुनिक शिक्षा के सस्थापक के रूप में माने जाते हैं। उनका सिद्धान्त था कि शिक्षा कार्य, आत्मभिव्यक्ति तथा सामाजिक रूप से कार्यों में भाग लेने के द्वारा प्राप्त की जा सकती है। खेल के द्वारा शिक्षा प्रणाली पहली बार प्रयोग में आई। इस शिक्षा सिद्धान्त को संसार द्वारा मान्यता प्राप्त है।

---

(१३)

# जर्मनी में शारीरिक शिक्षा

जर्मन जिमनास्टिक संस्था का दूसरा नाम टर्नविरायन था। इसकी स्थापना जर्मनी के संकट काल में येशभक्त फ्रेडरिक लुंडविग जहान (१७७८-१८५२) के द्वारा हुई। प्रुसिया में जन्स लेने पर भी वह जर्मनी को अपनी पितृ भूमि मानते थे। जीवन पर्यन्त उन्होने जर्मनी के स्वतन्त्र प्रदेशों के राजनैतिक संगठन के लिए चेष्टा थी। नेपोलियन के द्वारा पराजित किए जाने पर जहान ने विचार किया कि पितृभूमि की स्वतंत्रता के लिए मौलिक सुधार की आवश्यकता थी। जहान का कोई विशेष सामाजिक या राजनैतिक प्रभाव नहीं था किन्तु एक ठोस शरीर,एक दर्शन, लड़ने की प्रवृत्ति और अपने देशवासियों को दासत्व से स्वतन्त्रता दिलाने के विचार का दान अवश्य दिया था। उनकी पुस्तक 'जर्मन नेशनेलिटी' ने जर्मनी का श्रेष्ठता की ओर ध्यान आकर्षित कराया।

१८१० ई० में वे शिक्षक का कार्य कर रहे थे। शिक्षकों तथा विद्यार्थियों के साथ देश भ्रमण के कार्य क्रम को उन्होने और बढ़ाया। जहान का उत्साह व्यक्तित्व और कहानियों ने इस भ्रमण को सर्व प्रिय कर दिया।

जहान ने कुछ आपरेटस बनाये और दौड़ने के लिए ट्रैक भी

बनाया। खेल तथा व्यायाम सप्ताह में चार बार होते थे। जिमनास्टिक के लिए एक खास यूनिफार्म भी बनवायी।

दैनिक कार्य के लिए कोई विशेष कार्यक्रम नहीं था। कार्य में स्वतन्त्रता तथा व्यक्तिगत चेष्टा ही नियम था।

१८१२ ई० में कुछ खेल के मैदान तथा आपरेट्स बढ़ाए गए। जहान ने व्यायामों को नाम दिए और उनके करने की रीति बतायी। अपनी सहायता के लिए एक सहायक भी नियुक्त किया।

मार्च १७,१८१३ को प्रुस्सिया में स्वतन्त्रता की लड़ाई छिड़ी। जहान ने अपनी सहायता सर्वप्रथम दी। लाइपज़िग के युद्ध के पश्चात प्रुस्सिया स्वतन्त्र हुआ। इसके बाद ही जहान ने एक पुस्तक लिखी जो सम्पूर्ण जर्मनी में टर्नर्स की गाइड हो गयी।

टर्नर एक प्रकार का क्लब होता था। इसमें युवा तथा प्रौढ़ दोनो भाग ले सकते थे। यहाँ जहान स्कूल के लड़कों को जिमनास्टिक के व्यायाम तथा एथेलेटिक्स के बारे में बताकर उनका उत्साह जागृत करते थे। उन्होने इस बात पर ज़ोर दिया कि स्कूलों के समीप टर्नप्लाज़ का होना आवश्यक था, जहाँ अवकाश के समय खेल जिमनास्टिक स्पोर्ट्स होना चाहिये। उनका विश्वास था कि खेल तथा स्पोर्ट्स आदि की शक्ति से वर्ग भेद को हटाने तथा सामाजिक प्रजातन्त्र को स्थापित करने में सफल हुआ जा सकता है। उनकी

शिक्षा का आधार शारीरिक शिक्षा के द्वारा राष्ट्रीय जागृति की भावना पर आधारित था न कि शारीरिक शिक्षा के वैज्ञानिक आधार पर। शारीरिक शिक्षा को शारीरिक शिक्षा के लिए ही नही प्रचलित किया वरन् मूल, राष्ट्रीय जागरण का ध्येय था जिसके लिए शारीरिक शिक्षा एक साधन था।

उनके विचार से शिक्षक का चरित्र श्रेष्ठ होना चाहिए जो दूसरों के सामने उदाहरण बन सके, तथा शिक्षक में शिष्टाचार, नम्रता, आज्ञापालन, समय पर काम करने, अपने व्यवसाय के प्रति उत्साहित रहने का और विषयों को अच्छी तरह समझने का गुण होना चाहिए।

जहान के समकालीन शिक्षा विशेषज्ञ जैसे गट्समथ ने उनकी आलोचना की। उनके अनुसार, जहान के विचार संकीर्ण थे तथा वह मनोविज्ञान और शरीर रचना शास्त्र के आधार पर आधारित नहीं थे। उन्होंने जहान की प्रणाली को बच्चों के लिए कठिन बताया। जहान की प्रणाली में एक कमी यह भी बताई कि उसमें स्त्रियों के लिए शारीरिक शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं था।

जहान की जिमनास्टिक सम्पूर्ण जर्मनी में लोकप्रिय हुई। दूसरी संस्थाओं ने, जो जर्मनी के संगठन के लिए कार्य कर रही थीं, इसमें अपना सहयोग दिया।

टरविरायन की स्थापना संकट काल में हुयी थी। अतएव जब शान्ति हुई तो कुछ लोगों को इसकी उपयोगिता पर सन्देह होने लगा। इनको क्रान्तिकारी संस्था की संज्ञा दी गयी। १८१९ में एक विख्यात लेखक कोटजेबू की हत्या कर दी गयी। इस सम्बन्ध में जहान पर भी आरोप लगाया गया। टर्नर की पुरूस्सिया में मनाही कर दी गयी। जहान १८२५ में छोड़े गए; किन्तु उन्हें बर्लिन में निवास करने की मनाही करदी गयी। १८५२ में उनकी मृत्यु हुई। दूसरे जर्मनी के प्रदेशों में भी टर्नन बन्द करवा दिए गए।

१८४२ में फ्रेडरिक विलिम चतुर्थ के द्वारा यह प्रतिबन्ध हटाया गया। उन्होने यह घोषित किया की पुरुष शिक्षा के लिए जिमनास्टिक अनिवार्य है। स्कूलों में स्थापना होने के साथ टरविरायन ने प्रौढ व्यक्तियों के लिए जिमनास्टिक के रूप में प्रगति की।

जहान के ध्येय की पूर्ती उसकी मृत्यु के २० वर्ष बाद हुयी। आधुनिक टर्नर्स ने जहान की तरह इस बात पर विश्वास किया कि जर्मन जिमनास्टिक के द्वारा नैतिक तथा शारीरिक शक्ति की उन्नति करके एक मज़बूत नीव की स्थापना किया सकता है जिसके आधार पर एक बढ़े राष्ट्र तथा श्रेष्ठ सभ्यता का विकास संभव हो सकेगा। अधिकांश टर्नन ने उन खेलों को अपना लिया जिनसे

शारीरिक लाभ हो सकता था, या जो लोकप्रिय थे। साकर,हॉकी, बास्केटबाल ,बालीबाल -फुटबाल उन्ही खेलों में से थे। इसके साथ तैरना,मल्लयुद्ध,बॉक्सिंग,हाइकिंग,ट्रैक और फील्ड ऐथलेटिक्स का भी प्रचलन हुआ। स्त्रियों की शारीरिक शिक्षा की ओर भी प्रयाप्त ध्यान दिया गया।

बहुत से युरोपिय देशों में तथा स्विटज़रलैंड,बोहेमिया,उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरीका में भी जर्मन टरविरायन की स्थापना हुई।

## जर्मनी के स्कूलों में शारीरिक शिक्षा:—

जर्मनी के स्कूलों में जिमनास्टिक तथा शारीरिक शिक्षा को उचित स्थान दिलाने का श्रेय एडोल्फ स्पाइस को है। बाल्यकाल में ही पैस्टालौजी सम्बन्धित स्कूल में गटस्मथ की जिमनास्टिक से इनका परिचय हुआ। महाविद्यालय के विद्यार्थी के रूप में स्पाइस जिमनास्टिक में अत्यन्त प्रवीण थे। उस समय के नेताओं से भी यह परिचित थे। १८३३-१८४८ तक स्वीडेन में रहे जहाँ उन्होने 'सिस्टम आफ जिमनास्टिक' पुस्तक लिखी और 'मानूयेल आफ जिमनास्टिक फार स्कूल्स' पुस्तक को आरम्भ किया।

स्पाइस शारीरिक शिक्षा को बालकों की शिक्षा का एक मुख्य अंग बनाना चाहता था। इस,हेतु उसने व्यायाम शाला तथा टर्नप्लाज की आवश्यकता,एक घंटा प्रतिदिन जिमनास्टिक शिक्षा के

लिए, कार्य की प्रवीणता के अनुसार बालकों को अंक देना, आयु तथा लिंग के आधार पर व्यायामों का वर्गीकरण, लड़कियों के लिए विशेष जिमनास्टिक प्रणाली, दूसरे स्कूल के विषयों के समान शारीरिक शिक्षा की महत्ता आदि को आवश्यक समझा तथा प्रचार किया ।

इनका विचार एथेन्स के युनानियों की तरह था । उनके विचार से शारीरिक शिक्षा शारीरिक निपुणता, सुन्दरता तथा सुडौलता प्राप्त करने का साधन है । शरीर तथा आत्मा का पूर्ण मेल भी शारीरिक शिक्षा द्वारा सभंव है । स्पाइस ने बालक के एकत्व पर अत्यन्त बल दिया । वे शारीरिक व्यायाम के तथा विश्राम और मनोंरजंन के लिए उसका प्रयोग तथा इसके नैतिक और सामाजिक शिक्षाओं से भली भाँति परिचित थे ।

स्पाइस ने जर्मन जिमनास्टिक में मार्चिग का प्रयोग किया, यह अनुशासन तथा शरीर को सीधे रखने में सहायक होता है । वे स्वतन्त्र व्यायाम सस्थापक माने जाते हैं । स्वतन्त्र व्यायाम इस कारण से था क्योंकि इस व्यायाम से प्रत्येक अंग का व्यायाम थोड़े समय में सम्पूर्ण कक्षा द्वारा संभव था । संगीत के लाभ की ओर भी उन्होंने संकेत किया था । जनता को प्रभावित करने के लिए तथा बालकों में रुचि जागृत करने के लिए, प्रदर्शन उपयुक्त बताया । स्पाइस ने जहान

के वोर्टर्नेंस या कक्षा के नेताओं के द्वारा कक्षा कार्य चलाने की प्रथा का विरोध किया। दूसरे विषयों के समान प्रशिक्षित तथा अनुभवी शिक्षकों की प्रयाप्त मात्रा में शारीरिक शिक्षा के लिए प्रस्ताव किया।

पैस्टालौजी, गटस्मथ तथा बैसडौ ने भी स्कूल जिमनास्टिक के विषय के सम्बन्ध में श्रेष्ठ विचार प्रकट किए थे किन्तु स्पाइस जर्मन स्कूल जिमनास्टिक तथा लड़कियों की जिमनास्टिक के संस्थापक माने जाते हैं।

स्कूल जिमनास्टिक के प्रचार के लिए जो नियम १२४२ में बना था उसे यासमन ने प्रचलित करने की चेष्टा की किन्तु वह असफल रहे। इसी समय पेन हेनरिक लिंग की स्वीडिश प्रणाली का प्रचार भी हुआ किन्तु इसका कठोर विरोध हुआ।

१८६० में जर्मनी, स्कूल जिमनास्टिक में अग्रणी रहा। कुछ दिनो के पश्चात इसमें कुछ शिक्षकों के द्वारा लापरवाही दिखाई गयी।

१९०४ से फिर र्जमनी में जागृति हुई और 'प्लेग्राउन्ड मूभमेन्ट' के द्वारा शिथिलता दूर करने की चेष्टा की गयी। प्रत्येक स्कूल में तीन घंटे प्रति सप्ताह तथा दोपहर में एक खेल कार्यक्रम में लाया गया। किसी किसीस्कूल में सुधार का व्यायाम हर दूसरे दिन होता था।

लड़के लड़कियों का एथलेटिक क्लब आयोजित हुआ। राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा संगठन के कारण सम्पूर्ण जर्मनी इस विषय पर एक मत रहा।

स्पाइस के सिद्धान्तो के स्वीकार करने के द्वारा जर्मन शिक्षक ने इस बात का प्रमाण दिया कि सामान्य शिक्षा तथा शारीरिक शिक्षा पृथक नही हो सकती किन्तु यह प्राथमिक तथा सेकेन्ड्री स्कूल तक ही सीमित थी।

प्रथम बड़ी लड़ाई के समय जर्मन बालकों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। उसके सुधार के लिए खेल तथा एथलेटिक स्पोर्ट्स और स्वास्थ्य शिक्षा पर जोर दिया गया।

जर्मनी में टर्नर की लोकप्रियता, स्कूल जिमनास्टिक की सफलता खेल का शिक्षा में महत्व, शारीरिक शिक्षा पर शास्त्रों ने, जर्मनी को शारीरिक शिक्षा में प्रमुख स्थान दिया।

---

[१४]

# डेनमार्क में शारीरिक शिक्षा

डेनमार्क के लोगों की जिमनास्टिक में रुचि तथा जिमानास्टिक की प्रगति नेपोलियन के समय हुई जब कि डेनमार्क को बड़ी शक्तियों के सामने नीचा देखना पड़ा। स्वाभाविक खेल तथा प्रतियोगिता की इच्छा के साथ ही साथ शक्ति शाली राष्ट्रीय रक्षकों की आवश्यकता ने मिलकर डेनमार्क को शारीरिक शिक्षा की उन्नति के लिए एक महत्वपूर्ण स्थान बना दिया। डेनमार्क के शारीरिक शिक्षा के इतिहास में फ्रांज नाचेगाल मुख्य व्यक्ति हैं।

नाचेगाल अपने विश्वविद्यालय.जीवन में एक प्रमुख जिमनास्ट थे। अपने इस गुण तथा गटस्मथ की पुस्तकों को पढ़ने के कारण वे शारीरिक शिक्षा की ओर आकर्षित हुए। सन् १७९९ में कोपेनहेगन में उन्होंने अपनी एक ज़िमनेज़ियम चलायी जो काफी लोकप्रिय हुई।

मानहानि के कारण डेनमार्क एक बलिष्ठ राष्ट्र बनना चाह रहा था। इस हेतु १८०४ ई० में एक बड़ी तथा प्रशिक्षित थल सेना तथा जल सेना के निर्माण की ओर ध्यान दिया गया। इस बात को मान्यता दी गयी कि इन प्रशिक्षणों में जिमनास्टिक का एक बहुत बड़ा हाथ है। अतएव मिलिट्री जिमनास्टिक इन्सटीट्यूट जो

वर्तमान समय का प्रथम जिमनास्टिक नार्मल स्कूल था, स्थापित किया गया और नाचेगाल इसके प्रथम निर्देशक हुए। इनके प्रस्ताव पर सरकार ने शारीरिक शिक्षा की सुविधायें स्कूलों को दी तथा जो स्कूलों में नहीं था उनको भी शारीरिक शिक्षा की सुविधाएँ प्राप्त हुई।

कुछ ही दिनों के अन्दर सेकेन्ड्री संस्थाओं से आग्रह किया गया कि वे शारीरिक शिक्षा दें। १८१४ में एक राजकीय नियम के द्वारा युरोपिय देशों में शारीरिक शिक्षा को सामान्य शिक्षा का एक भाग मान लिया गया। इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण प्रारम्भिक शिक्षा संस्थाओं को आज्ञा दी गयी कि वे खेल के मैदान, शारीरिक शिक्षा के साधन तथा उसके लिए शिक्षक प्रदान करें। जिमनास्टिक इन्सटिट्यूट के अलावा दूसरे प्रशिक्षण विद्यालयों में भी जिमनास्टिक का एक पाठ्यक्रम रखा गया जिससे अधिकाधिक शिक्षक प्रशिक्षित किए जाएँ। नाचेगाल सम्पूर्ण डेनमार्क के जिमनास्टिक निर्देशक नियुक्त हुए। इस बीच शारीरिक शिक्षा की उन्नति के लिए कुछ अन्य कार्य भी हुए। मिलिट्री जिमनास्टिक इन्टीट्यूट को स्कूल में बच्चों के साथ शिक्षण अभ्यास की आज्ञा मिली। राष्ट्रीय कोष से 'ए मैनुयल आफ जिमनास्टिक' छपवाया गया। मिलिट्री स्कूल में महिला शिक्षिकाओं के शारीरिक शिक्षा के प्रशिक्षण के लिए प्रबन्ध किया गया।

नाचेगाल की मृत्यु के पश्चात शारीरिक शिक्षा का कुछ पतन हुआ किन्तु १८६४ के युद्ध ने एक बार फिर से जिमनास्टिक में रुचि जागृत की क्योंकि राष्ट्र को रक्षार्थ सहायता देना था। इसी समय भिन्न भिन्न क्लबों की स्थापना हुई जहां शारीरिक शिक्षा के कार्यो में भाग लेने तथा रुचि जागृत करने के लिए उत्साहित किया जाता था।

नाचेगाल के द्वारा गटस्मथ परिवर्तित प्रणाली तथा जहान आइसलिन की जर्मन टरनर की प्रणाली मिलकर डेनमार्क में चलती रही। इस शताब्दी के अन्त में लिंग (Ling) प्रणाली ने भी डेनमार्क को प्रभावित किया। लिंग प्रणाली की उन्नति हुई। जिमनास्टिक की लोकप्रियता बढ़ गयी तथा स्कूल जिमनास्टिक की उन्नति के लिए भी प्रयत्न हुए। कुछ समयोपरान्त एक कमेटी के द्वारा एक प्रणाली वनाई गयी जो सम्पूर्ण डेनमार्क के लिए उत्तम समझी गयी तथा व्यायाम का एक मैनुयेल प्रकाशित किया गया इस मैनुयेल में डेनमार्क की बहुत सी प्रचलित बातें रखी गयी तथा बहुत सी स्वीडन की नवीन बातों का भी समावेश किया गया।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में अनेक विशेषताएँ दिखायी दी जैसे शिक्षण जिमनास्टिक से मिलिट्री जिमनास्टिक को पृथक कर दिया गया। शिक्षक प्रशिक्षण की सुविधाएँ बढ़ती गयी।

शारीरिक शिक्षा की प्रगति के लिए राष्ट्रीय कोष से धन व्यय किया गया। स्पोर्ट्स की महत्ता को स्वीकार किया गया। नील्स बक्स महाशय ने भी इस समय की शारीरिक शिक्षा को कुछ नवीनताएँ प्रदान की।

महाशय नील्स बक्स जो पिपुल्स स्कूल ओलेरप में जिमनास्टिक निर्देशक थे। उन्होंने लिंग प्रणाली की एक नई परिभाषा दी। इन्होने देखा कि अप्रशिक्षित शरीर में अनेक दोष होते हैं। इसके सुधार के लिए आसन की बुरी आदतें, व्यवसायिक दोष तथा अन्य दोषों के निवारण की ओर तथा शरीर की शक्ति, उसमें लचीलापन लाना तथा सम्पूर्ण शरीर के सन्तुलन की आवश्यकता की ओर इन्होंने ध्यान दिया। इस हेतु जो व्यायाम प्रचलित किए उन्हें प्रिमिटिव जिमनास्टिक कहते हैं।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में जैसा लिखा जा चुका है सामान्य शारीरिक शिक्षा को सैनिक शारीरिक शिक्षा से पृथक कर दिया गया था। इस कारण से शिक्षकों का अभाव हुआ, अतएव उस समय सिविलियन शिक्षक के प्रशिक्षण के लिए कोपेनहेगन में सेन्ट्रेल इस्टीट्यूट आफ जिमनास्टिक खोला गया।

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में खेल तथा खेल के मैदान की

आवश्यकता को सारे संसार ने अनुभव किया। इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए डेनमार्क विशेष रूप से प्रयत्नशील हुआ। डेनमार्क की ख्याति केवल इसलिए नहीं है कि वहाँ शारीरिक शिक्षा के सम्बन्ध में नये-नये अविष्कार हुए परन्तु इसका कारण उनका शारीरिक शिक्षा में दृढ़ विश्वास तथा लोकप्रियता भी है।

---

[१५]

# स्वीडेन में शारीरिक शिक्षा

स्वीडेन के शारीरिक शिक्षा के इतिहास में पेर हेनरिक लिग (१७७६-१८३९) सर्व प्रमुख हैं। शारीरिक शिक्षा के द्वारा शारीरिक दोषों का सुधार तथा चिकित्सा जिसे रिमिडियल जिमनास्टिक के नाम से पुकारते हैं, इन्ही के कार्य का परिणाम था। इसकी ख्याति सम्पूर्ण संसार में हैं। ये ही इस प्रणाली के संस्थापक हैं।

स्वीडेन तथा डेनमार्क में शारीरिक शिक्षा के विकास की गति लगभग एक सी ही रही है। यद्यपि ये एक दूसरे को परस्पर प्रभावित करते रहे हैं तथापि स्वीडेन अपनी नई प्रणाली तथा नए उद्देश्यों के कारण उच्च ही ठहरता है। यह कहा जा सकता है कि इसको उच्च स्थान दिलाने में पेर हेनरिक लिंग का विशेष हाथ रहा है।

लिंग महाशय की विदेशी भाषा तथा साहित्य में विशेष रुचि थी। स्वीडेन के विश्वविद्यालय में विद्याउपार्जन के पश्चात वह कोपेनहेगन गए। वहां नाचेगाल के जिमनेजियम को देखा और कदाचित गटमथ की पुस्तकें भी पढ़ी जो उस समय डेनमार्क में प्रचलित थी। बहुत सम्भव है कि इन्हीं कारणों से वे शारीरिक शिक्षा की ओर

आकर्षित हुए। उनके हाथ का एक दोष व्यायाम से ठीक हो गया था इसी से उनके मन में शारीरिक शिक्षा द्वारा शारीरिक विकार दूर करने का विचार उत्पन्न हुआ।

इनकी यह निश्चित धारणा थी कि शरीर रचना शास्त्र तथा शरीर क्रियाशास्त्र का अध्ययन एक शारीरिक शिक्षक के लिए अति आवश्यक है क्योंकि इसके ज्ञान के बिना शारीरिक कार्यों की प्रकृति तथा कार्य समझना कठिन है। उनका विचार था कि व्यायाम सामूहिक न होकर व्यक्तिगत होना चाहिए तथा प्रत्येक व्यायाम से शरीर पर पड़ने वाले सही प्रभाव का ज्ञान होना चाहिए।

स्वीडेन भी अपने पड़ोसी के तरह दूसरी शक्तियों द्वारा पराजित किया गया था। अतएव लिंग की भी यही धारणा थी कि राष्ट्रीय सम्मान की रचना, वीर तथा बलिष्ठ नागरिकों के द्वारा ही हो सकती है और वीर तथा बलिष्ठ नागरिकों को बनाने में शारीरिक शिक्षा सफलता दे सकती है। इस विषय से सम्बन्धित इनकी कविताएं तथा लेख भी है जिनको स्वीडेन साहित्य में सम्मानित स्थान प्रदान किया गया है।

१८१४ ई० में रोयल सेन्ट्रल इन्सटिट्यूट आफ जिमनास्टिक स्टोकहाँम में स्थापित किया गया जिससे अधिकतर शिक्षक शारीरिक शिक्षा में प्रशिक्षित किये जा सकें। यहां पर सैनिक आधार पर शिक्षा

आरम्भ हुई क्योंकि रक्षा की भावना सर्व प्रमुख थी। लिंग यहाँ के निर्देशक हुए। लिंग स्वीडिश प्रणाली के सिद्धान्त तथा अभ्यास के संस्थापक थे। उनकी मृत्यु के पश्चात गेबरियल ब्रान्टिन्ग सेन्ट्रल इन्सटिट्यूट के निर्देशक हुए।

चिकित्सा जिमनास्टिक की कड़ी आलोचना चिकत्सकों द्वारा हुई, तो भी इस से स्वीडेन तथा सारा संसार प्रभावित रहा।

स्कूलों में शारीरिक शिक्षा धीरे धीरे आई किन्तु यह किसी नियम के दबाव के कारण नहीं बल्कि, इस दृढ़ विश्वास से कि शारीरिक शिक्षा साधारण शिक्षा का आवश्यक भाग है।

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में रोयल सेन्ट्रल इन्सटिट्यूट के तीन विभाग, शिक्षा विभाग सैनिक विभाग तथा चिकित्सा विभाग कर दिये गये। लिंग के पुत्र, एच लिंग, शिक्षा विभाग के प्राधानाचार्य नियुक्त हुए। स्कूलों में शारीरिक शिक्षा की प्रथा इन्हीं के कार्यों का फल है जिसके द्वारा स्कूल के दैनिक पाठ्यक्रम में शारीरिक शिक्षा का एक घंटा आवश्यक हो गया।

---

[१६]

# ग्रेट ब्रिटेन में शारीरिक शिक्षा

जिस समय महाद्वीप के अन्य देश शारीरिक शिक्षा की प्रणाली सिद्धान्त तथा विज्ञान का विकास कर रहे थे, ब्रिटेन के लोगों के मध्य, मैदान में होने वाले खेलों का ही अत्यधिक प्रचलन था अन्य देशों में देश की सुरक्षा की दृष्टि से शारीरिक शिक्षा का प्रचार हुआ किन्तु स्वतन्त्रता प्रिय अंग्रेज़ों ने केवल मनोरंजन के कारण ही शारीरिक शिक्षा को अपनाया। ब्रिटेन की स्वतन्त्र संस्थाओं ने तथा व्यक्तिगत स्वतन्त्रता ने खेल की प्रकृति में भी स्वतन्त्रता प्रदान की।

अंग्रेजों का स्पोर्ट्स उनके इतिहास के समकालीन है। खेलों के प्रति राष्ट्रीय उत्साह ने अनेक खेलों का अविष्कार किया तथा बहुत से दूसरे देशों के खेलों में परिवर्तन तथा परिमार्जन करके उन्हें अपनाया।

इगलैंड के जागीरदारी प्रथा के काल में जो उस्ट प्रतियोगिता तथा नाइट लोगों के खेल प्रचलित थे। इसके बाद धनुर्विद्या आयी जिसे अधिकारी वर्ग भी पसन्द करते थे। वन्दूकों के अविष्कार के पश्चात इसका पतन हुआ।

गोल्फ कदाचित हॉलैन्ड से आया था किन्तु इसका यहाँ इतना अधिक प्रचलन हुआ कि यह यहीं का मालूम होने लगा।

हाकी युनान तथा रोम निवासियों के द्वारा खेला जाता था। १८७५ में इंगलिश हाकी एसोसियेशन की स्थापना हुई जिसके पश्चात सारे ब्रिटेन में हाकी क्लबों की स्थापना हो गयी।

तेरहवीं शताब्दी में क्रिकेट की उत्पत्ति हुई। और चौदहवीं शताब्दी में परिवर्तित होकर वर्तमान स्वरूप में आयी। इसका पहले उच्च वर्ग के लोगों ने विरोध किया किन्तु क्रमशः यह लोकप्रिय हो गया और वर्तमान काल में तो इसे राष्ट्रीय खेल का पद प्राप्त है।

टेनिस की उत्पत्ति फ्रांस में ३०० ई० में हुई जो राजाओं और नोवलस के द्वारा खेली जाती थी। नीचे वर्ग के लोगों को खेलना मना था किन्तु राजनैतिक स्वतन्त्रता के साथ इसकी भी स्वतन्त्रता मिली और सर्व साधारण के द्वारा भी खेली जाने लगी।

फुटवाल की तरह खेल ग्रीक और रोम में खेले जाते थे। बारहवीं शताब्दी में युवकों द्वारा यह खेली जाने लगी। इगलैंड के अधिकारियों के द्वारा फुटबाल खेलना राज्य कानून के विरुद्ध ठहराया गया। अठ्हरवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दी में यह स्कूलों के लिए लाभदायक समझा गया और इससे सम्बन्धित कुछ नियम भी बनाए गए। वर्तमान फुटबाल के रूप में आने से पहले यह रगबी की तरह खेला जाता था जिसमें गेंद हाथ में लेकर दौड़ना पड़ता है।

हैमर, पोल वाल्टिग जो नालों को पार करने के लिए ब्यवहार में लिया जाता था स्पोर्ट्स के रूप में आ गया साथ ही मल्ल युद्ध बाक्सिंग, फन्सिंग, प्रिजनर्स बेस, स्लिगिंग, स्केटिंग, इत्यादि में लोग रूचि लेते थे। जहाँ-जहाँ अंग्रेज गए अपने खेल अपने साथ लेते गए। जैसे आस्ट्रेलिया, भारतवर्ष तथा अमेरिका में। इन खेलों के लिए ब्रिटेन केन्द्र के रूप में हो गया जहाँ से विचार विदेशों को मिलने लगे।

महाद्वीप के जिमनास्टिक का प्रभाव इंगलैन्ड पर पड़ा। एक ऐसी शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता महसूस की जाने लगी जो औप चारिक ड्रिल तथा प्रतियोगिता के स्पोर्ट्स को एक साथ मिला दे सरकार में १८२२ ई० स्विटजर्लैंड के फोकियोन क्र्यास को निर्देशक नियुक्त किया। इनके सिद्धान्त गटस्यमथ तथा अन्य जर्मनों के सिद्धान्तों के ऊपर निर्धारित थे।

आर्चीवाल्ड मैकलारेन (१८२०-१८८४) इसी समय शारीरिक शिक्षा पर विचार कर रहे थे। उन्होंने आक्सफोड में एक निजि जिमनेज़ियम खोला। कुछ दिनों पश्चात सरकार ने मिलिट्री जिम-नास्टिक में कुछ परिवर्तन करना चाहा। यह कार्य भार मैकलारेन के हाथ में दिया गया। उन्होंने अपने विचार, 'ए मिलिट्री सिस्टम आफ जिमनास्टिक एक्सरसाइज़' नामक पुस्तक में स्पष्ट किए। माकलेरन का विचार था कि ब्रिटेन की शारीरिक शिक्षा का स्तर

ऊँचा करने के लिए शैक्षगिक जिमनास्टिक की आवश्यकता है। इसी विपय के ऊपर उन्होंने 'ए सिस्टम आफ फिज़िकल एजुकेशन' पुस्तक लिखी जिसमें यह वताया गया है कि बालक के विकास काल में शारीरिक प्रशिक्षण आवश्यक है। कुछ अन्य महत्वपूर्ण विचार प्रकट किए है जो संक्षेप में इस प्रकार है, मानसिक तथा शारीरिक शिक्षा साथ-साथ होनी चाहिए, केवल परिक्षित शिक्षक की ही नियुक्त होनी चाहिये, शारीरिक शिक्षा का परम ध्येय शक्ति और कुशलता प्राप्ति ना होकर अच्छा स्वास्थ्य होना चाहिये। स्कूल के खेल, स्पोर्ट्स आदि मनोरंजन के साधन है। क्रमिक व्यायाम शैक्षणिक है और प्रत्येक व्यक्ति के लिये उपयोगी है। खेल में जिमनास्टिक वाधा बनकर नहीं आनी चाहिये बल्कि कार्य क्रम एक ऐसा विषय होना चाहिये जिसके द्वारा शरीर की गुप्त शक्तियां प्रकाश में आये।

मैकलारेन ने स्वीडिश प्रणाली के कुछ दोषों की ओर भी संकेत किया। एक प्रमुख दोष वताया कि यह अत्याधिक चिकित्सा लिप्त है। जर्मन प्रणाली में संगीत और ताल के आधिक्य के कारण उसका विरोध किया।

मैकलारन ने कोई अपनी निजी प्रणाली का अविष्कार नहीं किया था बल्कि हर प्रणाली में से उनकी अच्छी बातों को एक स्थान पर मिला दिया।

मैकलारेन की प्रणाली सफल ना हो सकी। १९०० के आस पास शारीरिक शिक्षा में कुछ परिवर्तनों की चेष्टा की गयी। १८७८ में महिलाओं के लिये स्त्रीडिश प्रणाली का आयोजन किया गया जो इंगलैड में प्रचलित हो चुकी थी। १९०३ में स्काटलैंड के शिक्षा विभाग ने एक नए पाठयक्रम की आयोजना स्कूलों के लिए की जो कि स्वीडिश प्रणाली पर आधारित थी। १९०४ में इंगलिश बोर्ड आफ एज्युकेशन ने शारीरिक शिक्षा का एक पाठ्यक्रम तैयार किया। यह भी स्वीडिश प्रणाली पर आधारित था। इस पाठ्यक्रम में १९०९ तथा १९१९ में संशोधन हुआ। इस बीच में कितने राजकीय नियम बने तथा प्रशिक्षण संस्थायें खोली गयीं।

इंगलैंन्ड तथा स्काटलैन्ड में स्वास्थ्य हाइजीन की सँस्थाओं की भी वृद्धि हुई। स्कूलों में बालकों के शारीरिक परिक्षा तथा चिकित्सा सम्बन्धी देख रेख को अनिवार्य किया गया।

(१७)

# अमेरिका में शारीरिक शिक्षा

एकाडमि, अमेरिका के सेकन्डरी स्कूल थे जो वहुत लोकप्रिय थे। इन स्कूलों का ध्येय विद्यार्थियों को जीवन के लिए तैयार करने का था। स्वास्थ्य तथा शारीरिक सुधार पर उचित ध्यान दिया जाता था। बेन्जमीन फ्रान्कलिन इस ओर विशेष रूप से सहायक थे। १७४३ इ० में उनकी एक पुस्तक प्रकाशित हुई,'पेन्सलवेनिया के युवकों की शिक्षा के लिए प्रस्ताव' उनका कहना था कि स्कूलों का कर्तव्य है कि वे बालकों को समाज के लिए तैयार करें तथा स्कूलों में स्वस्थकर वातावरण हो तथा खेल के साधन हों।

१७५५ में पेन्सलवेनिया के नाजरथ हाल में जो मोरेवियन लोग थे उन्होने इसी आधार पर एक स्कूल खोला। जो समय को देखते हुए बहुत उच्च कोटि का था।

१८३० तक यह विचार बहुत प्रचलित हुआ। इस समय अमेरिका के लगभग आठ सौ स्कूलों में इसी आधार पर कार्य होने लगा।

यद्यपि स्कूल के कार्यक्रम में शारीरिक शिक्षा के लिए कोई विशेष समय नियत नहीं था तथापि स्कूल के बाद सम्पूर्ण स्कूल को भिन्न भिन्न खेलों में भाग लेने के लिए उत्साहित किया जाता था। गिडियन

एफ थायर एक प्रसिद्ध नेता थे जिन्होने इस एकेडमी संस्था को बढ़ावा दिया और विद्यार्थियों के शारीरिक भलाई तथा सुधार के लिए बहुत कार्य किया ।

इनका मुख्य विचार था कि खेल तथा शारीरिक शिक्षा का स्थान स्कूल के बाद है और शिक्षकों की कोई खास आवश्यकता नहीं है ।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में मिलिट्री ऐकाडिमी में भी शारीरिक शिक्षा पर जो़र दिया गया । केपटेन ए० पार्टरीज इस के एक मुख्य कार्यकर्त्ता थे ।

डाक्टर चार्लस बेक तथा चार्लस फॉलेन जो जहान के मित्र तथा शिष्य थे जर्मनी छोड़कर अमेरिका में निवास के लिए आये । राउन्ड हिल स्कूल में इन्हें शिक्षक का स्थान मिला और इसी समय से जर्मन जिमनास्टिक अमेरिका में आरम्भ हो गयी । चार्लस फौलेन हार्वड विश्वविद्यालय में जर्मन भाषा के शिक्षक नियुक्त हुए । यहाँ भी इन्होने जर्मन जिमनास्टिक आरम्भ किया और पहले कॉलेज जिमनेजियम की स्थापना अमेरिका में हुई जिसमें विद्यार्थियों ने वहुत रुचि दिखाई ।

बौस्टन शहर के प्रमुख नागरिकों ने एक सार्वजनिक जिमनेजियम की माँग की । इसमें विशेष रूप से भाग लेने वाले डा० वारन थे ।

१८२६ में पहला सार्वजनिक जिमनेजियम तैयार हुआ। प्रत्येक बालक तथा प्रौढ़ यहाँ अत्यन्त रुचि से आते थे और अभ्यास करते थे।

फॉलेन के पश्चात फ्रोन्सीस लइवर इस जिमनेजियम के निर्देशक हुए। यहाँ इन्होने एक तैरने के लिए स्वीमिंग पुल भी बनवाया।

यहाँ जर्मन जिमनास्टिक पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं कर सकी क्योंकि अमेरिका के लोगों ने अपनी प्रकृति के कारण इसे पूरी तरह से नहीं अपनाया। इसकी सफलता के लिए स्थानीय रूप से परिवर्तनों की आवश्यकता थी।

१८२८ में केथुरिन इ० बीयर ने महिलाओं के लिए हार्टफोर्ड फिमेल सेमीनरी कनकटिकट में खोला जो बहुत प्रसिद्ध स्कूल हुआ। उनका विचार था कि नैतिक तथा शारीरिक शिक्षा दोनो आवश्यक हैं। यहाँ इन्होने गृह विज्ञान की शिक्षा आरम्भ की। लड़कियों के लिए कुछ व्यायाम की प्रणाली भी वनाई। व्यायाम साधारण गति के थे और संगीत के साथ किए जाते थे। कुमारी बीचर ने शारीरिक शिक्षा में कोई उन्नति नही की किन्तु उनकी मुख्य तथा महत्वपूर्ण देन यह विचार था कि महिलाओं की शिक्षा विना शारीरिक शिक्षा के पूर्ण नही हो सकती।

१७९० में फिलाडेलफिया के डा० वेन्जमीन रश ने साधारण

शिक्षा के साथ अधौगिक शिक्षा के योग की प्रस्तावना दी। पेस्टालौजी के प्रणाली, फैलेनबर्ग तथा जर्मन जिमनास्टिक के प्रभाव के कारण इस विचार को प्रश्रय मिल गया। विद्यार्थीयों को दिन में कुछ समय के लिए शिल्पकारी में शारीरिक परिश्रम के लिए कुछ समय दिया जाने लगा। जो संस्थाँए धार्मिक भावनाओं से प्रेरित थी उन्होंने बड़ी प्रसन्नता से इस विचार को अपनाया। वर्तमान समय में व्यवसायिक आधार पर संस्था में शिक्षा दी जाती है किन्तु यह विचार किसी का नही था कि बगीचे या दूकान में काम करने से शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता पूरी हो जाती है।

सभी शौक्षणिक विशेषज्ञों ने शारीरिक तथा मानसिक पहलुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता का वर्णन किया है।

उन्नीसवी शताब्दी के अन्त में शारीरिक शिक्षा की बहुत उन्नति हुई। शारीरिक शिक्षा के विषय को लेकर वहुत साहित्य रचा गया क्लब इत्यादि बड़ी संख्यों में स्थापित हुए। निजी जिमनेजियम खुले। इसी समय से अमेरिकन स्पोर्ट्स का संगठन हुआ। १८३९ में एवनर उबलेड ने एक नए खेल बेस बॉल का अविष्कार किया।

सिविल वार के पश्चात के शरीरिक शिक्षा में विशेष प्रगति हूई। लड़ाई के समय टर्नविरायन के सदस्यों ने यूनियन की बड़ी सहायता की। लड़ाई के बाद शारीरिक शिक्षा का कार्य जब पुन:

आरम्भ हुआ तब यह विचार प्रगट किया गया कि टर्नर तथा स्पाइस के शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्तों के आधार पर पुरुष स्त्रियों तथा बच्चों की शारीरिक उन्नति की जा सके। अपने उच्च विचार, वैज्ञानिक प्रशिक्षण तथा सदस्यों के उत्साह के कारण जो शारीरिक शिक्षा में सिविल वार के पश्चात ३० वर्ष तक दिखाया गया, टर्नर सस्था ने अमेरिका में सब संस्थाओं में प्रमुख स्थान प्राप्त कर लिया टर्नर सस्था का प्रभाव शिक्षण संस्थाओं पर बहुत ही रहा है। मासिक पत्रिका 'माइन्ड एण्ड बॉडी' इनके द्वारा १८९४ ई० में प्रकाशित की गयी। हान्स बालीन इसके संस्थापक थे। इसका मुख्य उद्देश्य शैक्षणिक नेताओं को शारीरिक शिक्षा की महत्ता में शिक्षित करने का था।

टर्नर सस्था में स्पोर्ट्स में व्यवसायिकतों का विरोध किया। उनका विचार था कि खेल मूल प्रवृत्तियों के सतोष के लिए, शारीरिक उन्नति, नैतिक, तथा सामाजिक प्रशिक्षण के लिए हैं।

स्कूलों में शारीरिक शिक्षा के स्थान पर मिलिट्री शिक्षा का सदैव टर्नर संस्था ने विरोध किया। प्लेग्राउन्ड मूवमेन्ट को उन्होने सदा सहारा दिया। गटस्मथ से लेकर वर्तमान समय तक उनका यही विचार रहा कि खेल सदा किसी के निर्देश तथा नियन्त्रण में होना आवश्यक है। अमेरिकन टर्नवन्ड सबसे पुरानी राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा की संस्था युनाइटेड स्ट्टेस में है और अपने लम्बे

इतिहास में शारीरिक शिक्षा की प्रगति के लिए बहुत सहयोग दिया ।

सिविल वार ने शारीरिक शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता प्रकट की तथा लोकप्रिय एथेलेटिक्स तथा जिमनास्टिक में जो शताब्दी के मध्य में आरम्भ हुए थे, एक नई उत्तेजना उत्पन्न कर दी ।

युद्ध में मनुष्यों की निर्बलता प्रगट हुई । अनेकों नियन्त्रण कंर्त्ताओं ने यह निर्णय किया कि अधिकतर युवकों का शारीरिक स्वास्थ्य निम्न स्तर का हैं । इस विचार ने शारीरिक शिक्षा को प्रगति दी तथा स्कूल और कालेजों में स्पोर्ट्स की उन्नति को बढावा दिया ।

वेसबाल लड़ाई के दौरान में खेला जाता था । इसको व्यवसायिक टीम भी खेलने लगी थी । हुलवर्ट तथा स्पालडिंग के परिश्रम से इसे उच्च स्तर पर लाया गया , टेनिश १८७४ में आया । इस खेल की आलोचन हुई किन्तु धीरे-धीरे लोकप्रिय होता गया । बास्केट बाल की उन्नति भी यहाँ हुई । छोटे स्पोर्ट्स की भी प्रथा थी ।

१८७९ में राष्ट्रीय अमेच्योर एथेलिटिक आफ अमेरिका की स्थापना हुई । इसका उद्देश्य एथेलेटिक को सम्मान के स्थान पर रखना, स्पोर्ट्स की प्रगति, उसके लिए नियम बनाना, प्रतियोगिता संगठन तथा संचालन करना था ।

———

[१८]

# यू० एस० एस० आर० में शारीरिक शिक्षा

रूस में शारीरिक शिक्षा केवल शारीरिक शिक्षा से प्राप्त लाभ के लिए ही नही बल्कि इसके अतिरिक्त दूसरे ध्येय की प्राप्ति के के लिए भी दी जाती है। सभी प्रकार की शिक्षा की प्रगति के लिए अथवा कम्युनिस्ट सामाजिक सिद्धान्त के बढ़ाने के लिए यह विशेष रूप से व्यवहार में आता है।

गहरी गम्भीर भावनाओं को उत्पत्ति करना रूस के शारीरिक शिक्षा का एक विशेष गुण हैं। कारण यह है कि रूस के एथलीट अपने को वर्ग के संघर्ष के लिए तैयार कर रहे थे जिसके लिए एक शक्तिशाली तथा स्वथ्य शरीर का होना आवश्यक था। कुछ समय पहले रूसियों को यह पता नहीं था कि दूसरों की अपेक्षा वह शक्तिशाली हैं अथवा नहीं तथा दूसरों की अपेक्षा सहनशक्ति कितनी हैं।

क्रान्ति से पहले दिनों में एक विशेष सभा शारीरिक शिक्षा की बनाई गई जिनमें बड़े बड़े विद्वान थे जिन्हें इस विषय में दक्षता प्राप्त थी।

उन खतरों के कारण जिसमें रूस के लोग घिरे हुए थे उन्हें

स्वास्थ्य, शक्ति, होशयारी, अनुशासन मस्तिष्क की तीव्रता तथा किसी भी परिस्थिति के लिए अपने को तैयार रखने आदि गुणों का प्रभाव और मूल्य मालूम था। अपनी कार्यशीलता के कारण उन्हे यह मालूम था कि यह गुण अपनाने योग्य तथा आवश्यक है और यह केवल कम्युनिस्ट सेना के लिए ही नहीं बल्कि सर्वसाधारण के लिए भी अनिवार्य है।

रूस में फिजिकल कल्चर प्रत्येक विद्यार्थी के लिए अनिवार्य तथा बालिकों के लिए उत्तम रक्षा में आयोजित है। स्कूल का कार्यक्रम तीन वर्गो में होता है ओक्टोबरिस्ट जिनमें ७-१० वर्ष के बच्चे आते हैं ,पायोनियर १०-१७ वर्ष तक के लिए तथा कोमसोमोलस १८-२५ वर्ष तक के लिए। यह कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन है। पायोनियर से गर्ल्स गाइड तथा स्काउटिंग का भी अधिकांश कार्य करते हैं। कोमसोभोल कम्युनिस्ट युवकों का संगठन है। यह अधिकांश रूप में राजनीति से सम्बन्धित है तथापि शारीरिक शिक्षा के कार्यभार अपने ऊपर लिये हुये हैं। इनके साथ दूसरी संस्थाएँ जैसे भिन्न भिन्न ऐथलेटिक क्लब, स्पोर्ट्‌स संस्थाएँ लेबर यूनियन का शारीरिक शिक्षा वर्ग भी इस कार्य में हाथ बटाती हैं।

इस संगठन ने राष्ट्रीय स्वास्थ के सम्बन्ध में बहुत रुचि दिखाई

है । शराब तथा तम्बाकू छोड़ो आन्दोलन में इन्होंने बहुत सहायता पहुंचाई थी । सामाजिक हाइजीन तथा लैंगिक शिक्षा के द्वारा उच्च विचार तथा अभ्यास का प्रचार इनका एक परम उद्देश्य है ।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि दूसरे देशों के समान रूस में भी वर्तमान शारीरिक शिक्षा समाज तथा संस्कृति का परिणाम है ।

---

[१६]

# वाई० एम० सी० ए०

योरप में मध्यकाल में मसीही धर्म के द्वारा शारीरिक शक्ति तथा विकास के प्रति घोर विरोध था। शरीर को शक्तिशाली करना तथा विकसित करना अनुचित समझा जाता था किन्तु इस विश्वास का समय के साथ परिवर्तन होता गया यहाँ तक कि १९वीं शताब्दी में मसीही समाज ने शारीरिक शिक्षा को चरित्र निर्माण के लिए एक उचित तथा अनिवार्य माध्यम मान लिया। यंग मैन क्रिश्चियन ऐसोसियेशन ने शारीरिकशिक्षा के द्वारा मनोरंजन, शारीरिक सुधार आदि करने का भार अपने ऊपर ले लिया। वाई०एम०सी०ए० का प्रारम्भ लन्दन के एक क्लर्क जार्ज विलियम ने किया। १८४१ ई० में इन्होंने अपने कार्य को आरम्भ किया। आरम्भ में युवकों को उचित मार्ग पर लाने के लिए प्रार्थना तथा बाइबल पढ़ने के उपायों से इन्होंने सहायता ली। युवकों द्वारा एक धार्मिक क्लब बनाया गया। इसका नाम वाई०एम०सी०ए० रखा गया। क्लब का उद्देश्य उन युवकों का धार्मिक दृष्टि से सुधार करना था जो व्यापार तथा व्यवसाय आदि में लगे हुए थे।

१८५१ ई० में अमेरिका के बोस्टन शहर में प्रथम ऐसोसियेशन स्थापित किया। इसाई धर्मावलम्बियों ने इस आवश्यकता का

हैं उनके आत्मिक उत्साह के लिए यह एसोसियेशन अनिवार्य है। इसके कारण बड़े बड़े नगरों में इसकी शाखा खुली। १० साल के अन्दर २०० से अधिक एसोसियेशन तथा राष्ट्रीय संस्थों की स्थापना हुई।

आरम्भ में वाई०ऐम०सी०ए० के क्वाटर में पढ़ने का स्थान, धार्मिक पुस्तकालय और सभाहाल होता था। १८५६ ई० में एक राष्ट्रीय समारोह हुआ। वे नेतागण जो इस उस समय की एथेलेटिक तथा जिमनास्टिक से प्रभावित हुए थे उन्होंने वहाँ यह प्रस्तावित किया कि वाई०एम०सी०ए० में तैरने का स्थान तथा जिमनेजियम भी होना चाहिए। परन्तु यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं हुआ।

१८६० ई० में इस विचार ने ऐसा जोर पकड़ा कि एसोसियेशन को स्वीकार कर इसका प्रबन्ध करना ही पड़ा। यह इस ध्येय से भी आरम्भ किया गया कि वाई०एम०सी०ए० दूसरे मनोरंजन के स्थानों से जो समाज की दृष्टि में उचित नहीं थे, युवकों को आकर्षित करें।

लड़ाई के समय में इस संस्था ने सैनिकों की बड़ी सेवा की।

१८६६ ई० में न्यूयार्क नगर एसोसियेशन ने अपने संविधान में यह लिखा कि एसोसियेशन का ध्येय युवकों का अत्मिक मानसिक सामाजिक, नैतिक तथा शारीरिक उन्नति होगा। यह उद्देश्य समस्त सभाओं द्वारा मान लिया गया।

वाई० ऐम० सी० ए० का अपना पहला निवास १८६९ ई० में सानफ्रान्सिसको, न्यूयार्क तथा वाशिंगटन में बना। सबसे पहले शारीरिक निर्देशक जे० राबर्ट नियुक्त हुए। वे एक प्रसिद्ध जिमनास्ट, वेट लिफ्टर तथा ट्राक एण्ड फील्ड एथलीट थे। राबर्ट के परिश्रम से वाई० एम० सी० ए० एस स्थान बन गया जहाँ युवक सस्ते मनोरंजन के स्थानों पर न जाकर यहां आते थे। इस स्थान में मसीही मनुष्यत्व, चरित्र निर्माण की शिक्षा दूसरे धार्मिक स्थान से कम न थी।

१८८५ में वाई० एम० सी० ए० के अर्न्तराष्ट्रीय प्रशिक्षण स्कूल खोला गया। दो वर्ष के अन्दर उसमें शारीरिक शिक्षा का विभाग खोला गया। शारीरिक शिक्षा के विभाग ने, जो उस समय सामाजिक सुधारों के लिए कार्य कर रहा था, एक अर्न्तराष्ट्रीय विभाग खोला। कुछ और प्रशिक्षण स्कूल खोले गए।

वाई० एम० सी० ए० का वर्तमान ध्येय व्यायाम मनोरंजन तथा शिक्षा के द्वारा सर्वोत्तम शारीरिक आत्मिक विकास युवा तथा प्रौढ पुरुषों में जो उच्ज कोटि के मसीही मनुष्यत्व के विभाग में अति आवश्यक है, था। उनका उद्देश्य स्वस्थ्य, नाड़ी पेशियों का विकास, स्वयं संयम, दूसरों के अधिकारों की मान्यता, पवित्र जीवन तथा आदर्शों की प्राप्ति है।

लड़ाई के समय वाई० एम० सी० ए० ने संसार के विभिन्न देशों में बड़े महत्व का कार्य किया। संसार का कोई ऐसा देश नहीं जहाँ उनके मुख्य नगरों में वाई० एम० सी० ए० की एक शाखा नहीं हैं। यह देशीय तथा अन्तर देशीय स्यर पर कार्य करती है इन संस्था में ऊंच नीच, गरीब अमीर एवं रंग का भेद भाव नहीं हैं।

भारतवर्ष में शारीरिक शिक्षा वैज्ञानिक ढ़ग से इसी संस्था के द्वारा संचालित की गयी। सैदपेट मद्रास में प्रथम वाई० एम० सी० ए० कालेज आफ फिजीकल एज्युकेशन खोला गया। जहाँ पर सम्पूर्ण भारत वर्ष तथा लंका से व्यक्तियों व शिक्षक बनने का प्रशिक्षण प्राप्त किया। प्रत्येक वाई० एम० सी० ए० में शारीरिक शिक्षक के पर्याप्त साधन हैं तथा साथ ही साथ छात्रावास भी है। यहाँ सर्वदा वाई० एम० सी० ए० के ध्येय के अनुसार उच्च शारीरिक तथा आत्मिक विकास का ध्यान रखा जाता है। युवकों के आदर्श चरित्र निर्माण के लिये इस संस्था ने श्लाधनीय प्रयास किये है। देश के हित के लिये इस संस्था ने बहुत कार्य किया। युवकों के सर्वोत्तम विकास का प्रयास देश सेवा का ही एक रूप है परन्तु साथ ही संकट कालीन अवस्था में इस संस्था ने बहुत सहायता पहुंचाई। वाई० एम० सी० ए० ने बार्डर एरिया में चीनी आक्रमण के समय सैनिक मनोरंजन के लिये बहुत कार्य किया।

पाकिस्तान के द्वारा अल्प संख्यकों पर जो अत्याचार हुआ जिसके कारण बहुत से शरणार्थी गारो हिल्स में वहाँ से पीड़ित होकर आये। ये लाखों की संख्या में थे। इनकी हर तरह से देख भाल तथा सहायता का अधिक कार्य दूसरो संस्थाओं के सहयोग में वाई०एम०सी०ए० के द्वारा हुआ जिसमें प्रमुख रूप से भाग लेने वाले श्री बेसिल टी० मसीह हैं जो इस संस्था के एरिया सेक्रेटरी तथा स्थानीय सेक्रेटरी हैं।

वाई० एम० सी० ए० की देन सामाजिक, शारीरिक तथा नैतिक हर दृष्टि से अपूर्व है। भारतवर्ष को इस संस्था से बहुत लाभ पहुंचा है।

---

# (२०)

# भारत में शारीरिक शिक्षा

शारीरिक शिक्षा का उल्लेख विशेष रूप से प्राचीन भारतीय साहित्य में कहीं नहीं पाया जाता है। धार्मिक पुस्तकों, इमारतो तथा चित्रों से उस समय के शारीरिक शिक्षा का अनुमान लगाया जाता हैं।

दूसरे स्थानों के समान शारीरिक शिक्षण दैनिक कार्य के परिणाम स्वरूप हो जाता था। इसके प्रति कोई विशेष नही ध्यान दिया गया।

अति प्राचीन काल में शारीरिक उन्नति की ओर ध्यान देने का प्रमाण मिलता है। विशेष दो प्रकार की रीति का ज्ञान होता है। आसन, जिसका अभिप्राय आत्मिक उन्नति था तथा मल्ल युद्ध विद्या या निशाना बाजी जिसका उद्देश्य वीरोंतथा योद्धाओं की तैयारी का था। प्रत्येक मनुष्य प्रायः इनमें से एक चुन लेता था। अखाड़ों की प्रथा भी भारतवर्ष में प्राचीन है। यह स्वस्थ्य तथा शक्तिशाली रहने के लिए किया जाता था इतना होते हुए भी भारत वर्ष में उस समय के प्रचलित धार्मिक विचार के कारण तथा यह विचार के कारण कि आत्मा को मुक्त करने के लिए शरीर को कष्ट देना आवश्यक है, शारीरिक शिक्षा की प्रगति में बाधक होते रहें।

वैदिक काल की शारीरिक शिक्षा का अनुमान वेदों में पाए जाने वाले अश्वारोहण शास्त्र विद्या,आखेट,मल्ल युद्ध तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी वार्तालाप से लगाया जाता है।

रामायण में भी शारीरिक शिक्षा सम्बन्धी बहुत से वर्णन पाए जाते है। राम रावण युद्ध, आखेट, बनवास के समय भ्रमण या हाइक निवास या कैम्पिगं,स्काउटिंग के नियमों का पालन यहाँ तक कि जीव जन्तुओं का प्रेम भी मनुष्य की ओर दिखाया गया है।

स्वंयम्बर प्रथा में प्रतियोगिता होती थी। रामचन्द्र के धनुष चढ़ाने में शक्ति का विस्तार दिखाया गया है।

महाभारत में घन धोर युद्ध जिसमें शक्ति का विशेष वर्णन है। मित्र कौशल तथा ज्ञान का वर्णन है, मल्ल युद्ध,गदा युद्ध, धर्नुविद्या भीम की शक्ति का वर्णन सब शारीरिक शिक्षा से सम्वन्धित है।

भारतवर्ष में समाज चार वर्गों में विभाजित था। यह विभाजन सुविधा की दृष्टि से था। प्रत्येक वर्ण के व्यक्तियों का दैनिक शारीरिक कार्यों का भी विभाजन एक प्रकार से हो गया था।

ब्राह्मण जो धार्मिक गुरू होते थे प्राणायाम सन्धया आसन आदि धार्मिक कारणों से करते थे।

क्षत्रियों का कार्य युद्ध सम्बन्धी होता था। धर्नुविद्या,अश्वारोहण तलवार चलाना, रक्षा ढंग, इस प्रकार भिन्न भिन्न अस्त्र शस्त्रों आदि

का प्रयोग। उत्साह,साहस, वीरता प्रमुख गुण माने जाते थे। वैश्य सेवा के लिए थे जिन्हे हाथ से कार्य करना पड़ता था और भिन्न भिन्न परिश्रम के कार्य करते थे।

शूद्र भी सेवा करते थे। उनके भी अनेको सेवा क्रियायें की।

महात्मा बुद्ध की शिक्षा से धार्मिक विचारों में परिवर्तन हुआ उनका आदेश था कि शरीर को कष्ट देने से नही बल्कि सुकर्म करने से आत्मिक उन्नति तथा निर्वान प्राप्त होता है। उन्होने इसके लिए मनुष्य के आठ कर्तव्य बताए थे।

राजपूत तथा क्षत्रियों तथा भारतीय अखाड़ों की परम्परा के कारण भारतीय व्यायाम भी परम्परा से चले आए हैं जिनमें मुख्य दण्ड बैठक, मुगदर, कुश्ती, दौड़ना, भागना, कूदना, धर्नुविद्या, कबड्डी, चिका, तैरना अश्वारोहन इत्यादि है।

मुसलमानों ने जब भारत पर आक्रमण किया तो उस समय वहाँ भी शक्तिशाली सेना थी। मुसलमान सेना भी भारतीय सेना के तुल्य थी। जब मुसलमानो का राज्य था तब बड़ी-बड़ी सेना रखी जाती थी। ऐसी अवस्था में युद्ध विद्या में अत्यन्त प्रगति हुई। साथ ही साथ शारीरिक शक्ति की उन्नति करना आवश्यक था। योद्धाओं, पहलवानों, शिकार, मनोरंजन आदि का वर्णन इस काल में पाया जाता है।

महाराष्ट्र में शिवाजी के कारण शारीरिक शिक्षा की बहुत कुछ उन्नति हुई। क्योंकि महाराष्ट्र मैं मरहट्ठों की लड़ाई के लिए कड़ा जीवन, घोड़ों पर चढ़ना, अस्त्र शस्त्र का व्यवहार, परिश्रम तथा साहसी जीवन, व्यतीत करना पड़ता था। इसी समय मुग़ल साम्राज्यों का विरोध जाटों, राजपूतों पंजाबियों तथा मराठों के द्वारा हुआ। ये वीर जातियाँ हैं और इनका शरीर स्वस्थ्य तथा शक्तिशाली हुआ करता था।

इसी समय व्यायामशालाओं का निर्माण हुआ। यहाँ युवक युद्ध के लिए मल्ल युद्ध, दंड बैठक सूर्य नमस्कार, तलवार, अश्वारोंहण, शस्त्रों का व्यवहार, लाठी, भाला, मल्ल खम्भ, गत्का, बनेठी, गदा, आसन इत्यदि की शिक्षा प्राप्त करते थे। युद्ध कला के साथ ही वर्ष में क्रीड़ा उत्सव मनोरंजन के लिए मनाया जाता था। साहित्य के द्वारा पता चलता है कि स्त्रियों के लिए भी इस विद्या को ग्रहण करने की सुविधाँए उपलब्ध थी। भारतीय इतिहास में कितनी ही वीर नारियों का उल्लेख मिलता है।

अंग्रेज़ों ने मुग़ल साम्राज्य पर विजय प्राप्त कर ईस्ट इन्डिया कम्पनी के रूप में भारत पर राज्य किया। अंग्रेज जहाँ भी गए अपने देश में प्रचलित खेल भी अपने साथ लेते गए। उनके आने के बाद भारत में भी अंग्रेजी खेलों का प्रचलन हुआ।

मैकलेरन के पद्धति के अनुसार शारीरिक शिक्षा व्यवस्थित हुई। क्रिकेट, फुटबाल, हाकी, जर्मन जिमनास्टिक, स्वीडिश व्यायाम फौजी ड्रिल शिक्षण संस्थाओं में आरम्भ किया गया।

स्वास्थ्य शिक्षा भी दी जाने लगी। यद्यपि भारतीय व्यायामों की ओर अंग्रेजों ने ध्यान नहीं दिया तो भी यह अखाड़ों तथा व्यायाम शालाओं में अस्तित्व बनाए रहें।

भारतवर्ष में सुसंगठित रूप से शारीरिक शिक्षा का प्रचार तथा प्रशिक्षण वाई० एम० सी० ए० द्वारा आरम्भ हुआ। तथा प्रथम शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण विद्यालय सैदपेट, मद्रास में इसी संस्था द्वारा खोला गया। इस संस्था के द्वारा इस अंग में अत्यन्त बहुमूल्य कार्य हुए हैं।

राज्य सरकार ने भी शारीरिक शिक्षा की ओर ध्यान दिया है। शारीरिक शिक्षा नियमानुसार स्कूलों में अनिवार्य है किन्तु कितने ही प्राधानाचार्य हैं जो इसके महत्व को नहीं समझते अतएव कार्य में शिथिलता रहती है। किन्तु इतना होने पर भी यह प्रगति कर रहा है प्रत्येक प्रदेश में शारीरिक प्रशिक्षण विद्यालय खोले गए है जहाँ शिक्षकों का प्रशिक्षण होता है। प्राय: प्रत्येक स्कूल में एक शारीरिक शिक्षा के शिक्षक आवश्यक हैं। विद्यार्थियों को देखते हुए यह ठीक नहीं है क्योंकि ५०० विद्यार्थियों के लिए एक शिक्षक होता है। इसलिए

विद्यार्थियों को देखते हुए एक से अधिक शिक्षक आवश्यकतानुसार होने चाहिए।

प्रदेशों में काउंसिल आफ स्पोर्ट्स के द्वारा सर्व साधारध के लिए शारीरिक शिक्षा का आयोजन किया जाता है। यहाँ से छोटे क्लबों तथा संस्थाओं को अर्थिक सहायता मिलती है। स्पोर्ट्स आफीसर स्थान स्थान पर प्रशिक्षण कैम्प करते हैं। ग्रामीण लोगों के लिए प्रतियोगिता भी आयोजित की जाती हैं।

मुख्य-मुख्य नगरों में सुन्दर स्टेडियम बने हुए हैं जहाँ शारीरिक शिक्षक का कार्य चलता रहता है।

केन्द्रीय सरकार के द्वारा समस्त भारतवर्ष के लिय शारीरिक क्षमता अभियान अयोजित किया जाता है। सेन्ट्रल एडवाइसरी कमेटी आफ फिजिकल एज्युकेशन के द्वारा शारीरिक शिक्षक विद्यालयों का निरीक्षण हुआ इन विद्यालयों का स्तर उचाँ करने तथा सहायता देने की योजना बनाई।

इस कमेटी ने एक शारीरिक शिक्षा की राष्ट्रीय योजना तथा एक स्कूलों के लिए पाठ्य क्रम तैयार किया है।

साथ ही साथ दूसरी प्राईवेट संस्थाँए भी इस कार्य में सहायता दे रही है। स्वदेशीय व्यायाम के विद्यालय भी प्रगति कर रहें हैं।

स्वास्थ्य के ध्यान से स्कूल हेल्थ डिसपेन्सरी आयोजित किया

गया है। प्रत्येक स्कूल में मेडिकल तथा हेल्थ परीक्षण वर्ष में एक या दो बार हुआ करते हैं।

ओलेम्पिक खेलों तथा दूसरे एसोसियेशनों के द्वारा एथेलटिक्स तथा दूसरे खेलों में उन्नति हो रही है। कितने ही विदेशीय टीम भारत से प्रतियोगिता के लिए प्रतिवर्ष आती है। इसके द्वारा जनता तथा विशेष रुप में विद्यार्थियों में खेल तथा स्पोर्ट्स के ओर रुचि तथा उत्साह होता है।

बच्चों के लिए भी कोरपोरेशन तथा म्युनिसिपलिटी के द्वारा पार्क खोले गए हैं जहाँ वातावरण स्वस्थकर होता तथा बच्चों के साधन होते हैं।

वाई० एम० सी० ए० के द्वारा और म्युनिसिपल बोर्ड के द्वारा सार्वजनिक खेलने के मैदान तथा शारीरिक शिक्षण साधन भी उपलब्ध है।

पिछले बीस वर्ष के अन्दर शारीरिक शिक्षा में पर्याप्त उन्नति हुई है।

एन० डी० एस० सकंटकालीन अवस्था में आरम्भ किया गया था जिसके द्वारा काफी शिक्षक प्रशिक्षित हुए। कुछ दिनों तक इसका बहुत प्रचार रहा किन्तु एन०डी०एस० तथा शारीरिक शिक्षण जो पहले की प्रथा थी संयुक्त कर दी गयी है और Integratecl Physical

Education एक संयुक्त शारीरिक शिक्षण के नाम से अब प्रचलित होगी ।

भारतवर्ष में अब शारीरिक शिक्षण बि० पी० ई० तथा एम० पी० ई० की भी शिक्षा दी जाने लगी है तथा केन्द्रीय सरकार ने एक श्रेष्ठ विद्यालय तथा स्पोर्ट्स के बढ़ाने के लिए Natioanl Sports Institute पटियाला में खोला है । कुछ दिनों तक राजकुमारी कोचिंग स्कीम ने स्पोर्ट्स के बढ़ाने में अत्यन्त लाभदायक कार्य किया अब यह नेशनल स्पोर्ट्स इन्सीटिट्यूट के अन्तरगत कार्य करता है ।

**खो खो—**

यह एक दौड़ा कर छूने का खेल है । इसका आरम्भ महाराष्ट्र में हुआ । पहले यह ठीक रीति से संगठित नहीं था और एक थकाने वाला खेल था जिसमें कोई विशेष नियम नहीं था । १९१४ में पूना के डेकान जिमखाना के द्वारा एक कमिटी नियुक्त हुयी जिसमें खो खो के विशेषज्ञ उपस्थित थे । उनके द्वारा प्रथम नियम सूत्र निर्धारित किए गए । इससे खेल में अत्यन्त परिवर्तन हो गया । मुख्य स्थानों से इसके प्रति जो प्रस्ताव आये थे उसे भी सम्मलित कर लिया गया इसके कारण खेल अनुशासित रूप से होने पर आकर्षक हो गया ।

१९२४ में एक बार पुनः बड़ौदा के एम० वी० जिमखाना के द्वारा यह परिवर्तित किया गया। खेल का सही उल्लेख किया गया। अखिल महाराष्ट्र शारीरिक शिक्षा मण्डल द्वारा नियम बनाये गये तथा छपवाये गये।

भारतीय मुख्य मैदान के खेलों में खो खो एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह एक उत्तम व्यायाम देने वाला खेल है तथा इसमें व्यय कुछ नहीं है। नियम साधारण तथा सरल है। दर्शकों का भी अच्छा मनोरंजन होता है। खेल में उत्साह, साहस, कौशल, फुर्तीलापन, ध्यान तथा सावधानी आदि गुण विकसित होते हैं।

**कबड्डी—**

यह अनुमान लगाया जाता है कि कबड्डी हु, टू टू या डू-डू-डू अत्यन्त प्राचीन काल से प्रचलित होगा किन्तु कोई विशेष प्रमाण नही मिलते। हु-टु-टु मराठी भाषा में एक असंगठित सम्मेलन को कहते हैं। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि प्राचीन काल में बगैर किसी नियम के खेला जाता होगा तथा बड़े बड़े झगड़े तथा झंझटों का कारण सिद्ध होता होगा।

१९१८ ई० में तथा १९२१ ई० में सतारा के खिलाड़ियों ने इसको एक विशेष रूप दिया और उसमें प्रतियोगिता आयोजित की गयी। १९२३ ई० में एम० बी० जिमखाना बड़ौदा ने एक

पाम्फलेट प्रकाशित कराया जिसमें हु-टू-टू के नियमो का उल्लेख किया गया था। ये नियम एक विशेषज्ञों की विशेष कमेटी के द्वारा बनाई गई थी। गुजरात में यह खेल अत्यन्त लोकप्रिय हुआ। महाराष्ट्र फिजिकल कान्फ्रेन्स के द्वारा बनाये गये नियम वर्तमान खेल के आधार हैं।

**लाठी—**

प्रत्येक शारीरिक शिक्षण विद्यालय में इसका प्रचार है। लाठी व्यायाम, आक्रमण तथा रक्षा दोनों के लिए प्रयोग में आता है। जितनी तेजी, स्वतन्त्रता तथा सरलता से लाठी घुमाई जाय उतना ही श्रेष्ठ माना जाता है।

नाप तथा लम्बाई में भिन्न भिन्न होता है। नाप का स्तर कार्य करने वाले की कान की ऊँचाई का है। नाप हलका होना चाहिये। लाठी के कुछ उदाहरण रामायण तथा महाभारत में भी पाये जाते हैं। कुछ विदेशी पुस्तकों मेंभी इसका वर्णन है। इनसे यह अनुमान लगाया गया है कि लाठी की प्रथा प्राचीन काल से चली आ रही है और सर्व प्रथम रक्षा का केवल यही अस्त्र था।

लाठी बचाव तथा आक्रमण के अलावा मनोरंजन भी देता है। इसके द्वारा व्यायाम से हाथों में शक्ति आती है तथा शरीर गठित होता है।

लाठी के सामूहिक प्रदर्शन से कार्य करने वालों तथा दर्शकों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

## लेज़ियम

लेज़ियम एक फारसी शब्द है। जिसका अर्थ लोहे के तार का धनुप है। यह एक दूसरे रुप में प्रचीन काल में प्रचलित था। लेज़ियम धनुर्विद्या को सिखाने का एक सरल माध्यम है। इससे ज्ञान तथा मनोरंजन दोनों प्राप्त किए जाते थे।

लेज़ियम से शरीर के लिए उत्तम व्यायाम होता है। इसे बालक बहुत प्रसन्द करते हैं। ये व्यायाम साज़ के साथ भी किया जाता है। इसकी झनझनाहट की ध्वनि भी प्रिय लगती हैं और बच्चे इसका अभ्यास करना चाहते हैं। प्रत्येक शारीरिक शिक्षण कार्य क्रम का यह एक अंग हैं।

महाराष्ट्र में लेज़ियम ड्रिल तथा नृत्य की बहुत प्रथा है। सामूहिक प्रदर्शन अत्यन्त मनोरंजन तथा आकर्षक होता है। इसके द्वारा सहयोग, शक्ति, सावधानी, कौशल फुर्ती ऐसे गुण आसानी से सिखाए जा सकये हैं।

## मल्ल खम्भ

दक्षिण में मल्ल युद्ध में भाग लेने वालों के लिए यह एक प्रकार का व्यायाम था। यह कला पिछड़ी हुई थी। १९ वीं शताब्दी के पहले भाग में बलम्भभठ दादा देवधर के द्वारा यह पुर्नजीवित किया

गया। बलम्बभठ दादा द्वितीय पेशवा बाजीराव के शारीरिक शिक्षा अध्यापक थे। इन्होने इसको एक विशेष रुप दिया और बताया कि कुश्ती के लिए यह अनिवार्य है। इन्होने दो प्रकार के मल्ल खम्भ बनाए। स्थायी तथा दूसरी किसी चीज़ से लटका हुआ। इन्होने अनेक गतियों का निर्माण किया। राजनैतिक कारणों से पेशवा बाजीराव द्वितीय को वाराणसी जाना पड़ा। दादा भी यहाँ उनके साथ आए। यहाँ उन्होने अनेकों शिष्यों को प्रशिक्षित किया। उनके विशेष प्रिय शिष्य कराडभठ नाना गाडबोले थे।

कराडभठ नाना गाडबोले ने एक प्रसिद्ध जिमनास्टिक संस्था का आरम्भ किया और मल्लखम्भ तथा कुश्ती में शिक्षा प्रदान करने लगे।

नरायण गुरु देवधर दादा के सब से छोटे पुत्र तथा दामोदर गुरु जो कराडभठ के माने हुये शिष्य ये आपस में एक साथ मिले। दामोदर गुरु ने भारत के भिन्न-भिन्न स्थानों में जाकर शिक्षा प्रदान की। इन्होंने बेंत के मल्लखम्भ का एक नया अविष्कार किया।

बाँरहवीं शताब्दी से मल्लखम्भ का कुछ वर्णन मिलता है किन्तु बालम्बभठ दादा इसके प्रमुख प्रचारक थे। श्री सपरे ने भिन्न भिन्न प्रकार के मल्लखम्भ बनाये। नारायण गुरु देवधर बड़ौदा में एक संस्था स्थापित की जहाँ इस कला की शिक्षा दी जाती थी श्री सपरे इसी संस्था के सदस्य थे। उन्होंने भिन्न भिन्न प्रकार के मल्लखम्भ

वनाये। भारतीय शारीरिक शिक्षा के कार्य क्रम में यह एक कठिन तथा अत्ययन्त लाभकर है। विदेशी इस की ओर अत्यन्त प्रशंसात्मक दृष्टि से देखते है।

**योग तथा आसन :--**

भारतीय दर्शन के अनुसार आसन अत्यन्त प्राचीन शारीरिक शिक्षा है। आसन वह व्यायाम माना जाता है जिसके द्वारा शारीरिक स्वास्थ्य उत्तम होने के साथ ही साथ ईश्वर का भी ध्यान किया जा सके। इस व्यायाम का तत्कालिक ध्येय स्वास्थ्य तथा प्रसन्नता प्राप्त करने था है तथा इसका दूर का ध्येय मानसिक स्थिरता प्राप्त करने का हैं जिससे ईश्वर से मिलकर मोक्ष प्राप्त किया जा सके।

आसन के दो भाग हैं। सांस्कृतिक तथा एकाग्रचित होना। सांसकृतिक दृष्ट से शारीरिक अगों के कार्य का ध्यान रखा जाता है। एकाग्रचित होने की दृष्टि से आत्मिक लाभ का ध्यान रखा जाता है।

ये दोनो दृष्टि कोण के अनुगामी आसन के अभ्यास में इस बात पर एक मत हैं कि इस के द्वारा नाड़ी मणडल तथा Endocrine System उत्तम स्वास्थ्य में रहते हैं जिनके द्वारा शारीरिक भी उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त करता है।

योग आसन का अर्थ है योग के लिये आसन अर्थात ध्यान के लिए शरीर का विशेष आसन।

भारतीय दर्शन में योग अनेकों व्ययाम बतलाता जो शरीर तथा मतिष्क के लिये आवश्यक है। ये बहुत कुछ वर्त्तमान शारीरिक शिक्षा में संतुलन के विचार के सदृश्य हैं।

आसन तथा योग की प्रथा भारतवर्ष में अत्यन्त प्रचीन है।

## डंड

डंड भारनीय शारीरिक व्यायाम में सबसे मुख्य, लोकप्रिय तथा गुणपूर्ण व्यायाम है। इसमें किसी प्रकार के आपरेट्स की आवश्यकता नहीं पड़ती है। बहुत ही कम समय में पूरे शरीर का व्यायाम हो जाता है। पश्चिमी शारीरिक शिक्षा में भी डंड के रूप की अवस्था व्यायाम में ली जाती है।

भारतीय पहलवानों ने संसार में अपना नाम पैदा कर लिया है। ये पहलवान अपनी शक्ति तथा सास क लिए साधारणतः डड व्यायाम करते हैं। इसे डंड इसलिए कहते ह क्योंकि यह हाथ के उपरी हिस्से को बढ़ाता है।

## बैठक

वैठक डंड का सहायक है। इससे जाँघ तथा पैरों की कसरत होती है। इसके भी कई प्रकार है। भारतीय पहलवानों ने अपनी

टाँगों को शक्तिशाली करने के लिए इसी का प्रयोग किया हैं। देखा गया है कि भारतीय पहलवान पश्चिमी पहलवानों की तुलना में टागों की शक्ति में बढ़े हुए होते हैं।

डंड तथा बैठक भारतीय व्यायाम की एक प्राचीन प्रथा है। क्योंकि साधारणतः इन व्यायामों में किसी विशेष शिक्षक की आवश्यकता नहीं होती यह स्वतन्त्र तथा व्यक्तिगत रूप से भारतवर्ष में अनेकों वर्षों से चलती आई है।

## सूर्य नमस्कार

सूर्य नमस्कार एक सरल रीति का व्यायाम है जो प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है। यह शरीर के पूर्ण व्यायाम के लिए अति उत्तम विधि हैं।

सामार्थ रामदास जो शिवाजी के गुरू थे उन्हीं के द्वारा यह व्यायाम प्रकाश में आया। सत्ररहवी शताब्दी के अन्त में शिवाजी ने मराठा राज्य स्थापित किया। शिवाजी के द्वारा राज्य के कोने कोने में यह प्रथा प्रचलित की गयी। वह स्वयं १२०० नमस्कार प्रतिदिन करते थे। उन्नीसवी शताब्दी में इस प्रथा में शिथिलता आ गई।

भवनरावों पारीत प्रतिनिधि अवध के नरेश ने इस विद्या का

विश्लेषण किया और सूर्य नमस्कार व्यायाम पर एक पुस्तक लिखी जिसमें चित्र भी दिएहुए थे। अपने राज्य में उन्होने इसे अनिवार्य कर दिया। यह स्त्री,पुरुष,बालक, बालिकाओं सभी के लिये अनिवार्य कर दिया गया था।

## सेन्ट्रल एडवायसरी बोर्डः---

शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन के उद्देश्य से तथा शिक्षा पद्धति में प्रर्याप्त स्थान देने के लिए केन्द्रीय सरकार ने सेन्ट्रल एडवायजरी बोर्ड आफ फिज़िकल एज्युकेशन एन्ड रिक्रियेशन शिक्षा विभाग के अन्तर्गत स्थापित किया। यह १९५० में स्थापित हुआ था कुछ कार्य होने के पश्चात इस कमेटी का कार्य रुक गया। १९५२ में इसकी पुनः स्थापना हुई। तब से यह सतत कार्य शील है।

## सेन्ट्रल एडवायसरी बोर्ड के सदस्यः---

इसका एक सभापति भारत सरकार द्वारा नियुक्त होता है। अन्य सदस्यों में से चार सरकार की ओर से मनोनीत किए जाते हैं। इसके तीन सदस्य उन शारीरिक शिक्षा विद्यालयों के प्रधानाचार्य होते हैं जिन्हें भारत सरकार मान्यता देती है। एक सदस्य इन्टर युनीवरसिटी वोर्ड का प्रतिनिधि होता है। शारीरिक शिक्षा के किसी भारतीय संस्था या राष्ट्रीय संस्था से एक सदस्य जिसे बोर्ड मान्यता देती हैं। आल इन्डिया काउंसिल आफ स्पोर्ट्स का एक

प्रतिनिधि भी होता है । एक महिला विशेषज्ञ जिसका चुनाव बोर्ड करेगी । दो अन्य सदस्य जिन्हें बोर्ड लेना चाहे ।

सभापति तीन वर्ष के लिए होगा । प्रत्येक सदस्य तीन वर्ष के लिए रहेंगे जिनका चुनाव फिर से हो सकता है, कार्यविधि समाप्त होने के बाद ।

**बोर्ड का कार्य:----**

सरकार को शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन सम्बन्धि उन्नति के हेतु सलाह देना ।

विभिन्न संस्थाओं के प्रशिक्षण का संतुलन करना । उद्देश्यों की सफलता के लिए प्रस्ताव, केन्द्रीय सरकार को अर्थिक तथा दूसरी सहायताओं के लिए परामर्श देना, पुस्तकों तथा पत्रिकाओं के लिए सलाह देना, भारतीय सरकार तथा अन्य संस्थाओं तथा संगठनों के बीच समन्वय स्थापित करना, शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण कालेज के स्तर को ऊँचा उठाना आदि बोर्ड के कार्य क्षेत्र के अन्तर्गत आता है । किसी समय आवश्कतानुसार एड हाक कमिटी बनाना तथा नवीन नियम बनाने का अधिकार भी इस वोर्ड को प्राप्त है ।

वर्तमान कमेटी एक सलाहकार कमिटि के स्तर की है । इसके हाथ में किसी प्रकार के शासकार्य कार्य एंव आर्थिक अधिकार

नहीं हैं। वर्तमान कमिटि में सब राज्य कर्मचारी सदस्य हैं। यह कमिटि केवल सिफारिश करती है।

**कमिटि के कार्यः----**

कमिटि के द्वारा नेशनल प्लान आफ फिजिकल एज्युकेशन, शारीरिक क्षमता अभियान का प्रारम्भ, नेशनल सिलिबस आफ फिजिकल एज्यूकेशन का प्रकाशन, राजकीय लक्ष्मीबाई कालेज आफ फिजिकल एज्यूकेशन की स्थापना आदि हुई। इसके कार्यों के अन्तरगत भिन्न २ प्रशिक्षण कालेज को मान्यता देना तथा उनके लिए सिफारिश, सम्पूर्ण भारत वर्ष के प्रशिक्षण कालेज के प्रधानाचार्यों का सेमीनार, इस विषय पर शोध कार्य कराना, एक्सटेंशन सर्विस, इस विषय से सम्बन्धित साहित्य का प्रकाशन कराना इसके कार्यों के अन्तरगत आता है।

## यू० पी० काउन्सिल आफ स्पोर्ट्स

१९४३-४४ के आस पास यू० पी० में श्री डी० डी० माथुर ने शारीरिक शिक्षा में एक आन्दोलन पैदा कर दिया। यू० पी० में एजिलिटि एक्सरसाइस के नाम से शारीरिक शिक्षा का प्रचार विद्यालयों में हुआ। देश के हित के लिए सर्वसाधारण के शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता समझी गयी। इस हेतु राज्य सरकार ने काउन्सिल ऑफ फिजिकल कलचर की स्थापना की जिसके सचिव

डी० डी० माथुर हुए। सचिव के साथ एक टेकनिकल सलाहकार नियुक्त हुआ। ज़िलों में सुपरिन्टेन्डेन्ट आफ फिज़िकल कल्चर नियुक्त हुए जिनकी कमेटी काम करने के लिए डी० एम० की अध्य-क्षता में बनती थी। इस रीति से सर्वसाधारण के लिये शारीरिक शिक्षण का कार्य चलाया गया। उस समय के अखाड़े, क्रीड़ास्थल, व्यायामशालायें आदि ज़िले के सुपरिन्टेन्डेन्ट के सिफारिश से काउँसिल आफ फिज़कल कल्चर के द्वारा आर्थिक सहायता प्राप्त करते थे। शारीरिक शिक्षा में उस समय काफी उन्नति हुई।

कुछ समयोपरान्त काउन्सिल आफ फिज़िकल कल्चर यू० पी० काउन्सिल आफ स्पोर्ट्स में परिर्वातित कर दिया गया और योजना विभाग के अन्तरगत लाया गया।

इस संस्था का मुख्य उद्देश्य सर्व साधारण में स्पोर्ट्स तथा खेल कूद को अधिक से अधिक प्रचलित करना है। लखनऊ में स्टेडियम की भी देख रेख इसी के हाथ में है। यह संस्था प्रति-योगिता प्रशिक्षण आदि के द्वारा शारीरिक शिक्षा की उन्नति एवं विकास की चेष्टा करता है। इसके सचिव एस० एन० दास हैं जिनके नीचे शारीरिक शिक्षा विषय के भिन्न २ कोच हैं जो पूरे प्रदेश में जाकर प्रशिक्षण कैम्प करते हैं। इन प्रशिक्षण कैम्प में प्रमुख विषय हाकी फुटबॉल, बास्केट वाल, तैरना, बेडमिन्टन, कुश्ती, बालीवाल तथा एथेलेटिक्स का है। स्टेडियम में एक हाकी का

स्कूल आरम्भ हुआ ।

काउन्सिल के पास अपना बजट है । इनके पास शासन तथा आर्थिक अधिकार हैं । किसी प्रकार की शारीरिक प्रतियोगिता के लिये आर्थिक सहायता की पूरी सम्भावना रहती है । यू० पी० काउन्सिल आफ स्पोर्ट्स के अध्यक्ष चन्द्रभानु गुप्त एवं उपाध्यक्ष मंगला प्रसाद हैं ।

## राजकुमारी अमृतकौर कोचिंग स्कीम

राजकुमारी जी जिस समय केन्द्रिय सरकार में स्वास्थ्य मंत्री थीं उस समय उनके नाम से यह योजना बनाई गई । इसकी देख रेख स्वास्थ्य विभाग के द्वारा ही होती रही । कुछ दिनों बाद यह केन्द्रिय शिक्षा विभाग कों सौंप दिया गया ।

इस योजना में उच्च कोटि के शारीरिक शिक्षा के व्यवसाययिक व्यक्ति सम्पूर्ण भारतवर्ष एवं विदेश से एकत्रित किए जाते थे जो भारतवर्ष के बड़े बड़े शहरों में जाकर प्रशिक्षण कैम्प करते थे । प्रशिक्षण कैम्प चार से छः हफ्ते तक होता था । इस योजना से शारीरिक शिक्षा की काफी प्रगति भारतवर्ष में हुई ।

यह योजना अब अपनी स्वतन्त्र स्थिति नहीं रखती और यह नेशनल इन्स्टीट्यूट आफ स्पोर्ट्स पटियाला में संयुक्त कर दिया गया है और अब यह कोचिंग विंग के नाम से जाना जाता है ।

---

(२१)

# ओलम्पिक खेलों का इतिहास तथा भारत में ओलम्पिक खेल

ओलम्पिक खेलों का आरम्भ युनान में हुआ था। युनान के छोटे छोटे सिटी स्टेट्स में देवताओं के सम्मान में नृत्य, संगीत तथा खेल के उत्सव हुआ करते थे। इस में चार मुख्य थे। ओलम्पियन, पाइथियन नीमियन तथा इस्थमियन।

एलिस शहर में ओलम्पिया एक पवित्र स्थान अलफियस नदी के तट पर बसा हुआ था। यहाँ पर ओलम्पिया खेल के आरम्भ होने के बहुत पहले धार्मिक उत्सव तथा एथेलेटिक प्रतियोगिता का चलन था।

प्रथम पान हेलेनिक उत्सव के लिखित वर्णन से पता चलता है कि यह ७७६ ईसा से पहले आरम्भ हुआ था और प्रत्येक चौथे साल होता रहा जब तक कि एमपरर थियोडोसियस ने ३९४ ईस्वी में इसे बन्द करा दिया।

आधुनिक ओलम्पिक खेल का श्री गणेश अर्थात पुराने ओल-म्पिक खेल का पुनरुत्थान का श्रेय फ्रान्स के बैरन पाइरे दि कूबर-टिन को हैं।

१८८४ ईस्वी में बैरन पाइरे दी कूबर्टिन ने अंग्रेजी शिक्षा का अध्ययन किया। यह अध्ययन फ्रान्स की शिक्षा प्रणाली की उन्नति करने के हेतु किया गया था। इस अध्ययन से वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अंग्रेज युवकों के उत्तम प्रशिक्षण का कारण उनके खेलों में सर्वव्यापि रीति से भाग लेने में था। इसी विश्वास से प्रेरित हो कर उन्होंने प्राचीन ओलम्पिक खेलों के पुनरुत्थान के लिए विशेष चेष्टा की। इस कारण उन्होंने संसार के विख्यात जिमनास्टिक संस्थाओं तथा एसोसियेशन्स को आमन्त्रित किया जिससे इस विषय में वाद विवाद किया जा सके। जर्मनी ने इसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। बेलजियम इसके विरुद्ध था। ब्रिटेन दुविधे में था फ्रान्स का विचार विभाजित था। स्पेन इटली, युनान तथा स्वीडेन ने सहयोग दिया। १८९४ में पेरिस में एक सभा हुई जिसमें। १७५ प्रतिनिध उपस्थित थे और एक मत होकर ओलम्पिक खेल के पुन-रुत्थान का प्रस्ताव किया। इस समय यह निश्चित हुआ कि प्रथम ओलम्पिक खेल यूनान के एथेन्स में १८९६ ई० में होगा। यूनान के राजकीय परिवार ने अपनी देखरेख में खेल को लिया। किसी धनी सौदागर ने पुराने स्टेडियम को स्वतन्त्र करा दिया तथा दूसरे व्यक्तिगत दान के द्वारा खेल के आर्थिक दायित्व का निर्वाह हुआ।

१९०० ई० में खेल पेरिस में हुआ

१९०४ ई० में सेन्ट लूइस में खेल हुआ

१९०८ ई० में लंडन में खेल हुआ

१९१९ ई० में स्टाँकहोम में खेल हुआ

१९१६ ई० में बर्लिन में खेल हुआ

१९२० ई० में आन्ट वर्प में खेल हुआ

१९२४ ई० में पेरिस में खेल हुआ

प्रत्येक खेल में उन्नति तथा रुचि का विकास देखा गया।

एमस्टरडम में १९२८ ई० में प्रथम बार स्त्रियों को प्रवेश दिया गया तथा प्रथम बार भारत वर्ष हाकी में विजयी हुआ।

१९३२ में लास एन्जलस में ओलम्पिक खेल हुआ।

१९३६ बर्लिन

१९४२ लन्दन

१९५२ हेलसिंकी

१९५६ मेलबौर्न

१९६० रोम

१९६४ टोकियो (एशिया में प्रथम बार होगा)

## भारत में ओलम्पिक खेल

ओलम्पिक खेलों में भारतवर्ष का प्रवेश दुराव जी जमशेद जी टाटा की चेष्टा तथा प्रयत्नों से हुआ। इसी भावना से भारतवर्ष में ओलम्पिक खेल का प्रचार हुआ। प्रदेशों तथा जिलों में भी ओलम्पिक

संस्थायें स्थापित की गयी ।

ज़िला ओलम्पिक होने के पश्चात प्रदेशीय ओलम्पिक हुआ तथा प्रदेशीय ओलम्पिक के बाद राष्ट्रीय ओलम्पिक हुआ ।

प्रथम राष्ट्रीय ओलम्पिक खेल १९२४ ई० में दिल्ली में हुअ ।

| | | | |
|---|---|---|---|
| १९२६ | कलकत्ता | १९५० | बम्बई |
| १९२८ | लाहौर | १९५१ | लुधियाना |
| १९३० | इलाहाबाद | १९५२ | मद्रास |
| १९३२ | मद्रास | १९५३ | जबलपुर |
| १९३४ | दिल्ली | १९५४ | देहली |
| १९३६ | लाहौर | १९५५ | कलकत्ता |
| १९३८ | कलकत्ता | १९५६ | पटियाला |
| १९४० | बम्बई | १९५७ | बंगलौर |
| | | १९५८ | कटक |
| १९४४ | पटियाला | १९५९ | त्रिवेन्द्रम |
| १९४६ | बगलौंर | १९६० | दिल्ली |
| १९४२ | लखनऊ | १९६१ | जालन्धर |
| १९४८ | देहली | १९६२ | जबलपुर |

अन्तरराष्ट्रीय ओलम्पिक चित्र में भारतवर्ष का स्थान नहीं के

बराबर हैं। विशेष कर प्रतियोंगिता में भाग लेने वाले सेना से आते हैं। यदि वास्तव में देखा जाए तो कुछ ऊँचे स्तर पर शारीरिक शिक्षा में यदि कुछ हो रहा है तो वह भारतीय सेना में ही है। इस अवनति के कई कारण हैं।

ग्रामों तथा साधारण स्थानों में शारीरिक शिक्षा का विशेष प्रभाव नहीं है। शैक्षणिक संस्थाओं का भी अभाव है।

भारतीय खिलाड़ी वैज्ञानिक रीति से सीखने में रुचि नहीं रखते। इस कला को अपनाने के लिए जो वलिदान दिए जाने चाहिए उसके लिए भारतीय खिलाड़ी प्रस्तुत नहीं।

ओफिशयल्स तथा एसोसियेशन्स में आपस में गुटबन्दी के कारण उचित कार्य नहीं हो पाता। सरकार उदासीन रही।

प्रशिक्षण विशेषज्ञों का अभाव भी है, खिलाड़ियों के सम्मुख आर्थिक संकट है जिसके कारण वह खेल में अधिक समय नहीं दे सकते।

स्कूल, कालेज मुहल्ला तथा ग्रामों के स्तर पर प्रतियोगिता होनी आवश्यक है तभी इसका स्तर ऊँचा होगा।

भारतीय खिलाड़ियों का साधारण स्वास्थ्य स्तर से नीचा है।

---

# (२२)

# शारीरिक शिक्षण का संगठन, संचालन, क्षेत्र, महत्ता, सिद्धान्त, उद्देश्य तथा विधि

संगठन शब्द का अर्थ है तत्वों को एकत्रित करना। भिन्न-२ चीजों को एक स्थान पर केन्द्रित करना संगठन करना है। इसी संगठन को केन्द्रित करके उस केन्द्र से सुगमता के साथ कार्य्य करना संचालन करना है।

किसी भी अधिकारी को, अपने अधीन भिन्न-भिन्न विभागों को साथ रखना तथा साथ ही साथ उनके कार्यों को ऐसा रूप देना पड़ता है कि प्रत्येक विभाग अपने वर्ग का कार्य करते हुये दूसरे वर्गों को सहयोग दें तथा सब मिल कर सुगमता के साथ एक ही ध्येय को पहुंचे।

शारीरिक शिक्षण में कई एक विभाग हैं जैसे, एथलेटिक स्पोर्ट्स चिकित्सा तथा स्वाथ्य, स्काउटिंग तथा सैन्ट जोन्स आमबुलेन्स इन्ट्राम्युरल इत्यादि तथा इन में से प्रत्येक का कार्य पृथक है। किन्तु सब मिलकर एक ही ध्येय रखते हैं अर्थात बालक का समुचित विकास।

इन विभागों के संगठन में बहुत से प्रश्न तथा कठिनाइयां उपस्थित होती हैं जिन्हें सुलझाना आवश्यक है कितने ही प्रश्न संगठन के प्रथम, कुछ संगठन में मध्य तथा संगठन के पश्चात उपस्थित होते हैं। संगठन का क्षेत्र तीन हैं। कार्यक्रम सुविधायें के तथा कार्यक्रम का कार्यरूप।

सर्वप्रथम संगठन के ध्येय का निश्चित करना है। ये ध्येय साधारण शिक्षा, शारीरिक शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा तथा मनोरंजन से घनिष्ठ सम्बधित हैं। ध्येय के निर्धारित करने के पश्चात उसी के आधार पर आर्थिक प्रवन्ध, शासन नियम, कार्यक्रम का विस्तार, सुविधायें इत्यादि का ध्यान करना पड़ता है।

संगठन के विचार से यह मानना पड़ेगा कि कुछ कार्यकत्ताओं का पद दूसरों से अधिक दायित्व तथा महत्ता रखता है। कार्य के सुगमता से संचालन के लिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक पद के अधिकारी पद के अधिकार तथा दायित्व को भलि भांति समझ लें। इसे समझाने के पश्चात ही पदाधिकारियों की नियुक्ति होनी चाहिये।

किसी विद्यालय में संगठन के लिए प्रत्येक कार्यपूर्ण माध्यम को अपनाना चाहिये जिस से शिक्षक और विद्यार्थी दोनों को लाभ हो।

संगठन की परिभाषा देने में यह कहा जा सकता है कि

संगठन कार्य के यत्न का मार्ग है। यह सुगमता तथा उन्नति पूर्ण कार्यों में सहायक है जिन के द्वारा कठिनाईयों का अनुभव शून्य के बराबर रहता है।

संगठन तथा संचालन के विषय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि संगठन केवल एक माध्यम है अन्त नहीं जो कि किसी ध्येय के पूर्ण करने के हेतु अपनाया जाता है।

इन बातों को ध्यान में रखते हुये किसी भी शिक्षक या विद्यार्थी के कार्य आरम्भ करने की रुचि पर बाधा नहीं डालना चाहिये यदि वह कार्य सही और लाभदायक हो।

किसी संगठन में कड़ापन आ जाने से नियम में अस्वभाविकता, कठोरताा कार्य में विलम्ब तथा अयोग्यता आ जाने की सम्भावना हो जाती है।

संगठन का उद्देश्य सर्वदा यही है कि सही विद्यार्थी, सही शिक्षा उपार्जन, सही शिक्षक के द्वारा उसी मूल्य पर वह राज्य या शासन व्यय कर सके, तथा उन परिस्थितियों के आधीन जिस से सीखने वाला अपनी शिक्षा से लाभ उठा सके, सहयोग प्राप्त करे।

संगठन के निम्नलिखित उद्गम हो सकते हैं :-

परिस्थितियों का अध्ययन

सर्वश्रेष्ठ प्रोग्राम

कार्य करने की रीति तत्कालिक तथा भविष्य में।

शारीरिक शिक्षण में संगठन का आधार निम्नलिखित पर होना चाहिये।

उस प्रवीणता तथा कौशल को सिखाना जो सामान्य प्रयोग के हों।

वह प्रवीणता जो किसी ग्रुप संग कक्षा या टोली में हो।
वह प्रवीणता जो व्यक्तिगत हों।

किसी संस्था की संगठन-योजना में शिक्षा संचार का विशेष ध्यान देना चाहिये। इसकी कसौटी यह है की शारीरिक शिक्षण प्रत्येक के लिये हो, इसका संम्बध मनुष्य के पूर्ण विकास से हो तथा शिक्षा सम्वंधित प्रत्येक कार्य इस में संयुक्त हो।

एच० सी० बक के द्वारा दिये गये संगठन तथा संचालन के कुछ सिद्धान्त :—

शारीरिक शिक्षा जीव विज्ञान आधारित आवश्यकता है अतएव ऐसे संगठन की आवश्यकता है कि प्रत्येक के लिये यह उपलब्ध हो।

यह एक दैनिक आवश्यकता है अतएव प्रत्येक के लिये प्रायः एक घंटा होना चाहिये।

व्यक्तिगत विभिन्नता का विचार करते हुये प्रत्येक की आवश्यकताओं तथा योग्यता के अनुसार शारीरिक शिक्षा का कार्य होना चाहिये।

मनुष्य रुचि में भिन्न है अतएव रुचि का ध्यान रखना अनिवार्य है।

प्रत्येक बालक की भिन्न २ आयु में भिन्न विशेषतायें होती हैं। ग्रुप संगठन में इन पर ध्यान होना चाहिये। प्रत्येक संस्था के एक ही समान सुविधा, साधन, खेल के मैदान इत्यादि नहीं हो सकते।

प्राकृतिक क्रियाओं के प्रति प्रतिकार शीघ्रता से होता है। शारीरिक शिक्षा में सम्पूर्ण मनुष्य शिक्षित होता है। संगठन इसी हेतु होना चाहिये।

छोटे ग्रुप में शिक्षा उत्तम रीति से होती है।

संगठन में शैक्षणिक तथा अवरोध के उपाय व्यवहार करना उचित है जिस से शारीरिक स्वास्थ्य, नैतिकता, तथा व्यक्तित्व का बचाव तथा उन्नति हो।

स्कूल के बाद विद्यार्थी मनोरंजन चाहते है। अतएव संगठन के द्वारा ऐसी योजना होनी चाहिये जिसमें इनका प्राप्त गुण दूसरे कार्यों में व्यवहार हो सके।

शारीरिक शिक्षा से आनन्द प्राप्त करने के लिये अनकूल समय की आवश्यकता है।

भिन्न भिन्न प्रकार के कार्यों का होना आवश्यक है।

प्रत्येक व्यक्ति की ओर उचित ध्यान देना है।

उचिन परिणाम के लिये शिक्षा तथा कोचिंग की आवश्यकता है।

संगठन के साथ उचित स्वस्थकर उपाय तथा मल मूत्र त्याग करने तथा स्नान के लिये उचित स्थान होना आवश्यक है।

शारीरिक शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा तथा मनोरंजन का संगठन एक ही प्रधान संगठन कर्त्ता के अर्न्तगत होना आवश्यक है।

प्रबन्ध कर्ता जो संगठन का प्रमुख है, संगठन के कार्यों का कार्य कारिणी की देख भाल तथा शिक्षा की भावनायें समान करता है। उसे समस्याओं का नवीन सुलझाव तथा समस्यानुकूल प्रगति के साथ कार्य करने में निपुणता दिखाना चाहिये।

संगठन चार्ट बनाने में निम्नलिखित पर ध्यान देना आवश्यक है:—

विद्यार्थी, शिक्षक, सुगमता, समय तथा संस्था का प्रकार। संगठन में इन का उचित स्थान होना चाहिए जिससे सब मिल कर उत्तम परिणाम दे सके।

**इसके अलावा**

(१) प्रत्येक को उसके कर्त्तव्य तथा दयित्व का उत्तर दयित्व का पालन करना चाहिए।

(२) योग्यता तथा दक्षता से दायित्व पालन

(३) संतुलन तथा सहयोग विभिन्न विभागों में जिस से कोई विभाग पृथक कार्य न करे।

## संगठन तथा संचालन के सिद्धान्त

एक साधारण आधार पर शिक्षा कार्य क्रम नियोजित करना जिसमें प्रत्येक विद्यार्थी भाग ले सके। वर्त्तमान संसार में जीवित रहने के लिये यह परम आवश्यक है।

शारीरिक शिक्षा प्रत्येक के लिये अनिवार्य हो। यह इस उद्देश्य से कि प्रत्येक विद्यार्थी एक ऐसी रुचि अर्जित करले जिस के द्वारा उन कौशलों को जिसे वह सीखता है साधारण जीवन में प्रयोग कर सके तथा अपने खाली समय में उनका उपयोग कर सके। इसके लिये रुचिकर कार्यक्रम तथा प्रशिक्षित शिक्षक आवश्यक हैं।

जहां तक सम्भव हो, कार्यक्रम ऐसा हो कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार कार्य चुन ले। कदाचित रुचि संकीर्ण हो। ऐसी अवस्था में रुचि विस्तार के लिये कुछ कार्यक्रम अनिवार्य भी होंगे।

विद्यार्थियों का वर्गीकरण, उनमें की रुचि, आवश्यकता, एक स्तर की प्रतियोगता, शिक्षा में उन्नति, योग्यताओं का ध्यान तथा कार्य क्रम चलता रहे इस कारण आवश्यक है।

एक वर्ग में कितने विद्यार्थी रहेंगे, साधन, सुविधा तथा शिक्षकों पर निर्भर हैं। किन्तु यह जानना आवश्यक है कि इतने व्यक्ति न हो जिससे व्यक्तिगत ध्यान न दिया जा सके।

शारीरिक शिक्षा से छूट विद्याथियों को उचित कारण और सही रीति से मिलना। चाहिये ऐसा सम्भव है कि कोई ऐसा कार्य किया जा रहा है जिस से व्यक्ति को वही लाभ है जो स्कूल के कार्यक्रम से हो। ऐसी अवस्था में छूट दी जा सकती है ।

यदि कार्यक्रम में भाग लेने के लिये अंक दिये जाते है तो प्रत्येक विद्यार्थी को नियम से परिचित कराना चाहिये। इस योजना का विशेष उद्देश्य होना चाहिये।

यह अति आवश्यक है कि प्रत्येक बालक की प्रतिक्रिया प्रोग्राम के सम्बंध में अध्ययन किया जाये जिससे कार्यक्रम में उचित परिवर्त्तन किये जा सके।

संरक्षिता जहाँ तक सम्भव है वह देना आवश्यक है। इस का अर्थ यह नहीं कि विद्यार्थी वह कार्य न करे जिस में चोट खतरे इत्यादि की सम्भावना हो। इसका अर्थ यह है कि प्रशिक्षित शिक्षक अपने अनुभव तथा योग्यता से भावी जोखिम को समझ कर ऐसा कार्य कराये जिस से ऐक्सिडेंट शून्य के बराबर हो। सही शिक्षा के

द्वारा भी विद्यार्थी चिताये जा सकते हैं जिस से वे कार्य करते समय सही नियमों का पालन करें तथा सतर्क रहें।

शारीरिक शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा तथा मनोरंजन का संयुक्त कार्य क्रम होना अति आवश्यक हैं।

यह सम्भव है क्योंकि इन की भावनायें, रुचि, तथा प्रेरणा एक सी हैं। इन्हें शिक्षा के अन्तर्गत होना चाहिये क्योंकि ये शिक्षा के अंग है और इन्हीं के योग से शिक्षा प्राप्त होगी। स्कूल का अर्थ इन सब का योग है।

बहुत सी चीजें जो विद्यार्थी शारीरिक शिक्षा में सीखते हैं वे अपने मनोरंजन के लिये प्रयोग करेंगे। अतएव स्कूल के कार्य क्रम का उद्देश्य मनोरंजन सम्बन्धित होना अनिवार्य है।

सही मनोरंजन से समाज में खाली समय के सदउपयोग की समस्या हट जायेगी। व्यक्तित्व के विकास में यह अति आवश्यक है।

भारतवर्ष में तीन मुख्य मौसम हैं। गर्मी,वरसात तथा जाड़ा। शारीरिक शिक्षण के कार्य बहुत कुछ मौसम पर निर्भर है। जैसे ग्रीष्म ऋतु में तथा बरसात में अधिकतर फूटबाल, शीत काल में हाकी,क्रिकेट ऐथेलेटिक्स इत्यादि खेले जाते हैं। ऋतु के ध्यान से

शारीरिक शिक्षा का कार्य क्रम भी निर्धारित करना आवश्यक है। गीष्म ऋतु में लम्बी छुट्टियां होती हैं तथा सूर्य की तेजी से यह सम्भव नहीं कि कठिन शारीरिक परिश्रम किया जाये। जो कुछ सम्भव है वह सन्धया समय, शीतकाल में सूर्य की तेजी न होने से वहुत से कार्य दोपहर में भी हो सकते हैं। कठिन परिश्रम भी किया जा सकता है।

अतएव सिद्धान्त उद्देश्य तथा संगठन प्रणाली में शारीरिक कार्य-क्रम के निर्माण करने में मौसम पर ध्यान देना आवश्यक है।

**स्थानीय दशाः——**

किसी भी प्रोग्राम में स्थानीय स्थिति का मालूम करना अति आवश्यक है। इस में स्थानीय रुचि, आवश्यकता,सुविधायें तथा सामान जो उपलब्ध है उनका जानना आवश्यक है क्योंकि शारीरिक कार्य क्रम उन्ही आधार पर निर्मित होगा। जो सुविधायें संभव नहीं उन्हे प्रोग्राम में रखने से कोई लाभ नहीं।

प्रत्येक स्थान की स्थानीय दशा भिन्न भिन्न होती हैं इस लिये प्रप्येक स्थान के कार्य क्रम में भी विभिन्नता होगी।

**समय तथा कार्यः——**

प्रारम्भिक संस्थाओं में हप्ते में, ५, तीस मिनट के घंटे होने चाहिये

जूनियर तथा सीनीयर हाई स्कूल में हफ्ते में ५ एक घंटा का समय। ये घंटे इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम, दूसरे बाहर के कार्यक्रम तथा स्कूल के बीच की छुट्टी के समय के कार्यों से पृथक है।

इन्ट्राम्युरल कार्य क्रम हफ्ते में दो दिन होना चाहिये। प्रत्येक बालक को कम से कम ६ माह तीन में हाईक, पिकनिक, कैम्प तथा दूसरे बाहर के मनोरंजन में भाग लेना चाहिये।

शारीरिक शिक्षा के एक व्यापक कार्यक्रम में शिक्षण,अभ्यास, सुधार के व्यायाम तथा विश्राम के लिये निश्चित सयय रहता है।

शिक्षण का समय स्कूल के दैनिक कार्यक्रम में दिया जाता है। यह समय उन कौशल के उन्नति के लिए प्रयोग करना चाहिये जो सीखाये जा रहे हैं। अभ्यास के घंटे में वास्तविक खेल के स्थितियों में उन कौशल का प्रयोग करना जो शिक्षण घंटे में सीख चुके हैं। ये इन्ट्राम्यूरल प्रोग्राम या प्रतियोगिता के रूप में हो सकती है। यह घटा प्रायः स्कूल समाप्त होने के वाद होता है।

सुधार व्यायाम या चिकित्सा जिमनास्टिक का घंटा उनके लिये होता है जिन्हे व्यक्तिगत आदेश की आवश्यकता है जो इन व्यायामों से लाभ पा सकते हैं।

विश्राम के लिए अनौपचारिक रूप से कुछ मिनटों के लिये खेल इत्यादि होना चाहिए। जहाँ यह प्रथा है वहां बालक तीन चार

मिनट की स्वतंत्रता प्राप्त करते हैं जिस से बैठने के कारण जो दोष या थकावट मालूम हो वह दूर हो जाये ।

**शारीरिक शिक्षण के लिये दिन में समय:—**

हाई स्कूल तथा कालेज में स्कूल के प्रति घंटे में शारीरिक शिक्षण का कार्यक्रम हो सकता है । अनुभव से पता चलता है कि शारीरिक शिक्षण के घंटे दैनिक कार्यक्रम के मध्य में हो तो उत्तम है । इस से विशेष लाभ बालकों को दूसरे विषयों से विश्राम देना है । कुछ लोगों का विचार है कि मध्य के घंटों में बालक ध्यान लगा नहीं पाते अतएव यह समय शारीरिक शिक्षा के लिये उत्तम प्रतीत होता है ।

कक्षा के कार्य में तेज शक्ति वर्धक कार्य तथा कौशल पूर्वक शिक्षा होनी चाहिये । वैसे कार्यक्रम भी होना चाहिये जो बालक अपने खाली समय में प्रयोग कर सके ।

**दैनिक, विशेष तथा वार्षिक कार्य क्रम:—**

प्रत्येक स्कूल के लिए शिक्षा विभाग के द्वारा पाठ्यक्रम निर्धारित है । इस के साथ कुछ ऐसे कार्य हैं जो आवश्यक समझे जाते हैं । शारीरिक शिक्षा अध्यापक सम्पूर्ण कार्यक्रम को जो एक वर्ष के अन्तर्गत एक कक्षा में समाप्त होना चाहिये, समय के अनुसार जो स्कूल के दैनिक कार्यक्रम के अनुसार सम्पूर्ण वर्ष में मिलेगा,

बिभाजित करलें। इस से यह पता चल जायेगा कि एक कार्य के लिये कितना उचित समय दिया जा सकता है। इसी समय के अनुसार कार्यों का ग्रुप सेक्शन बना लिया जाना चाहिए।

प्रत्येय ग्रुप या सेक्शन को फिर उनके आधार भूत तत्वों में ऐसा विश्लेषण करना चाहिये जिस से जितना समय उस के लिए निर्धारित है उनने ही में यह कार्य पूर्ण रूप से समाप्त हो जाय। यह विभाजन यूनिट या इकाई के रूप में हो। प्रत्येक यूनिट दैनिक पाठ्यक्रम में सिखाया जायेगा। ग्रुप का विश्लेशण प्रत्येक दैनिक पाठ्यक्रम के द्वारा निर्धारित समय में समाप्त कर दिया जायेगा।

कुछ विशेप कार्य समय तगा विशेष अवसर के अनुसार किये जायेगें। सभी स्कूलों तथा कालेज में ऐसे अवसर नियुक्त होते है तथा उनके विशेष कार्य होते है, जैसे स्कूल स्पोर्ट्स, शिक्षा सप्ताह, पारितोषिक वितरण समारोह,गणतन्त्र दिवस, स्कूल डे, इत्यादि। इन अवसरों पर भिन्न भिन्न प्रकार के शारीरिक शिक्षा के कार्य होते हैं।

शारीरिक शिक्षा, स्वास्थय शिक्षा तथा मनोरंजन का संगठन तथा संचालन; सिद्धान्त, उद्देश्य तथा विधि का ध्यान रखते हुये सामयिक अवस्था, स्थानीय स्थिति, समय तथा कार्यक्रम के आधार पर होना चाहिए।

---

[२३]

# संगठन

**सार्वजनिक प्लेग्राउण्ड, बड़े छोटे खेल, स्पोर्ट्स शारीरिक क्षमता, युवक समारोह, नगर, ग्राम तथा औद्योगिक क्षेत्रों में मेला उत्सव ।**

## आधारित संगठन

किसी बड़े उत्सव या संस्था के संगठन तथा संचालन के सम्बन्ध में जो प्रवन्ध कर्त्ता अनुभवी नहीं होते वे सब कुछ अपने ही आप करना चाहते हैं । इस हालत में प्रायः असफलता प्राप्त होगी और आवश्यकता से अधिक समस्याओं का सामना करना पड़ता तथा उलझने होती हैं । ऐसे संगठन के प्रत्येक भाग से अपये को सम्बन्धित रखने की भावना है कार्य सुचारु रूप से कभी भी नहीं चल सकता है । एक, दो या तीन विभाग तक एक पुरुष के नियन्त्रण में आपत्ति नहीं हो सकती किन्तु जहाँ इस से अधिक विभागों का प्रबन्ध करना है वहां सहायता लेना अनिवार्य है ।

प्रत्येक स्थान में ऐसे लोग मिल जाते हैं जिन के ऊपर दायित्व का विश्वास किया जा सकता है और जो कार्य करने की रुचि रखते है ऐसे लोगों से अवश्य सहायता लेना चाहिये । जो केवल पद का

वैभव चाहते हैं वे कार्य करने वाले लोग नहीं होते और उनसे सर्त्तक रहना चाहिये।

जिन्हें सहायता देने की इच्छा है उन्हे उन विभागों के कार्य को सौंप देना चाहिये जिस में वे रुचि रखते हों और कुछ बहुत जानकारी भी उस विषय से हो। ये लोग बालकों के संस्था में नायक तथा प्रौढ़ों के संस्था में सेक्रेट्री के नाम से पुकारे जायेंगे। ये सेक्रेट्री, नायक या वह सदस्य जिसे मीटिंग बुलाने का हक है (Convener) अपने कार्य में दक्ष नहीं हो सकते हैं इस लिए उन के लिए नियन्त्रण तथा आदेश की आवश्यकता होगी। जो मुख्य संगठन कर्त्ता है वह केन्द्रींय नियन्त्रण रखता है और भिन्न भिन्न मुख्य सहायक जिन्हे सहायता की आवश्यकता है उन्हे सहायता देता है। यह कहा जा सकता है कि मुख्य संगठन कर्ता जेनरल सेक्रेट्री हो जाता है और दूसरे सेक्रेट्री विभिन्न विभागों के हो जाते हैं। जेनरल सेक्रेट्री प्रत्येक मीटिन्ग, जो सेक्रेट्री अपने अपने विभाग के कार्य के लिये बुलाते हैं, अपने पद के कारण उपस्थित रहता है जहां वह अपने अनुभव, आदेश तथा ज्ञान के द्वारा सुझाव में सहायता देता है।

एक मुख्य कार्य कारणी कमेटी जेनरल सेक्रेट्री और दूसरे सेक्रेट्री की होती हैं जहां विशेष उद्देश्य, नियम तथा मुख्य बातों का निर्णय होता है जिसके द्वारा छोटी कमेटियों को आदेश दिया जाता है।

## सार्वजानिक क्रीड़ा स्थलः—

ये विभिन्न प्रकार के हो सकते हैं। जैसे म्युनिस्पिल प्लेग्राऊन्ड या वाई,एम,सी ऐ प्लेग्राउन्ड या कोई सरकारी मैदान जहां लोग जा कर मन वहलाव की चीजों में भाग ले सकते हैं।

सार्वजनिक प्लेग्राऊन्ड में यह आवश्यक है कि बालकों, युवकों तथा प्रौढ़ों के लिए पृथक् व्यवस्था हो तथा महिलाओं के लिये भी। उपाय ऐसा होना चाहिये कि प्रत्येक विभाग के सदस्य अपने ही स्थान में रहें और एक दूसरे से मिश्रण न हो।

शारीरिक शिक्षण निर्देशक जो वहां के मुख्य हों उन्ही के देख रेख में कार्य होगा। इस के कार्य चलाने के लिए एक कमेटी होगी जहां प्लेग्राउन्ड सम्बन्धित बातों का निर्णय होंगा। जहां क्रीड़ा स्थल सरकारी या कोरपोरेशन का हो वहां मैदान के देख भाल के लिए गार्डन ओफिसर नियुक्त होना चाहिए। उन्हे भी कमेटी.का सदस्य बनाना चाहिये किन्तु उन का कार्य संचाचन उन के विभाग तथा उन की आज्ञाओं से होगा।

कमेटी का मुख्य कार्य निर्देशक की सहायया तथा धन उपार्जन करना होगा।

शारीरिक शिक्षण तथा मनोरंजन के प्रत्येक कार्य में मुख्य संगठन

प्रायः एक सा ही होगा संगठन का एक ढांचा नीचे दिया जा रहा है :—

कार्य कारिणी कमेटी

| | | |
|---|---|---|
| सेक्रेट्री- | सामान | सभापति |
| | मैदान | उप सभापति |
| | व्यय | जनरल सेक्रेट्री |
| | ओफिशियल्स | सहायक सेक्रेट्री |
| | यातायात | कोषाध्यक्ष |
| | प्रोग्राम | चुने हुये सदस्य |
| खेल क्रम | (फिक्सचर्स) | औडिटर्स |
| | अतिथि सत्कार | |
| | प्रचार | |
| | स्वागत,विश्राम तथा बैठने का इन्तजाम,डाक्टर तथा प्रारम्भिक सहायत: । | |

**सामूहिक कार्य के संगठन में पथ प्रदर्शन:—**

यह कठिन कार्य है तथा इसमें निर्देशक के सम्मान का भी प्रश्न है ।

सफलता के लिये यह आवश्यक है कि सामूहिक कार्य का सम्पूर्ण चित्र निर्देशक के समक्ष हो और उसकी छोटी सी छोटी बात पर

ध्यान पूर्वक विचार किया गया हो। यह केवल मष्तिस्क में ही नहीं किन्तु लिखा हुआ होना चाहिये। निर्धारित समय से बहुत पहिले यह पूरा हो जाना चाहिये।

कार्यों को देखते हुये उपयुक्त सहायक ले लिये जाये और उन्हे उनकी उत्तर दायित्व समझा दिया जाये जिस से वे अपनी कमेटी बना कर या कार्य कारणी के द्वारा बनायी हुयी कमेटी जिस के वConverner होंगे कार्य आरम्भ कर दिया जाय।

इस में मुख्य कार्य ये होंगे

(१) आने वाले या प्रतियोगिता में भाग लेने वालों को सूचना देना।

(२) निवास,तथा विश्राम स्थान—तम्बू,शामियाना कपड़ा बदलने का स्थान, कमरे,जलपान गृह, शौचालय,बैठने का स्थान तथा अन्य सुविधायें देना।

(३) भोजन–प्रतियोगिता में भाग लेने वालों के लिये तथा जनता के लिये भोजन देना। सफाई तथा स्वच्छता पर विशेष ध्यान रखना तथा चीजों का दर मुनासिब हो।

(४) यातायात,खिलाड़ियों के लिए,काम करने वालों के लिये, सामान को लाने ले जाने का प्रबन्ध करना।

(५) प्रेस,पत्रकार,खोना तथा पाना विभाग (lost & found) तथा जनता सम्बन्ध।

(६) सूचना तथा पोस्टर्स,प्रोग्राम, जलपान कूपन,बैठने के टिकट, खेल के टिकट इत्यादि का प्रबन्ध करना।

(७) धन—ऐस्टिमेट,पारितोषिक शुल्क भिन्न भिन्न भागों का व्यय, किराया, व्यय का जाच लरना।

(८) समाजिक—नियन्त्रण,स्वागत तथा परिचय,जलपान आदि का प्रबन्ध करना।

(९) सजावट—झण्ड़े,दरियाँ,रोशनी,का प्रबन्ध करना।

(१०) बिजली—लाउड स्पीकर,बत्ती,आदि का प्रबन्ध करना।

(११) पार्किंग—मोटर,साइकिल,दूसरी सवारियाँ।

(१२) आने जाने का रास्ता—पुलिस,

(१३) मनोरंजन

उपरोक्त साधारण बातों के साथ जो विशेष कार्य करना हो उसमें विशेष वस्तुओं को ध्यान में रखना चाहिए—

जैसे एथेलेटिक प्रतियोगिता में भिन्न-भिन्न सामान जो इसके लिये आवश्यक है, एकत्रित करना चाहिए। स्कोर शीट, घड़ी, पिस्तौल, स्कोर बोर्ड, पेन्सिल, कागज, पारितोषिक के लिये टेबुल, फीता, शौट, डिसकस, हैमर, जावलिन, समकोण, ज़मीन खोदने तथा बराबर

करने के लिये हथियार, अपराइट, बटान, हरडल, पोल्स, घंटी, उन, पेग, मार्कर, नम्बर, आदि रखना

ओफिशियलस—

**प्रदर्शन का संगठनः—**

उचित समय तथा लोगों को अवकाश का ध्यान समय निश्चित करने के लिये । दिया जाने वाला प्रदर्शन उचित है या नहीं । भाग लेने वालों की रुचि, उसको श्रेष्ठ स्तर पर लाने का परिश्रम तथा समय, प्रदर्शन के प्रकार पर निर्भर है ।

१-४ घंटे के प्रतिदिन अभ्यास में प्रायः तीन माह एक प्रदर्शन के लिये आवश्यक है । जिमनास्टिक, पिरामिड, भिन्न-भिन्न छोटे तथा बड़े खेल, स्वदेशीय व्यायाम, फ्री हैंड व्यायाम (Free hand exer cise) स्काउटिन्गं, आमब्युलेन्स, जल क्रीड़ा, इत्यादि में प्रदर्शन दिये जा सकते हैं ।

**प्रशिक्षण कार्यक्रमः---**

निश्चित समय पर अभ्यास आरम्भ करना । लम्बे प्रशिक्षण में अनिच्छा न हो उसके लिये मनोरंजन होना आवश्यक प्रदर्शन की रूप रेखा बना लेना चाहिए इसका अभ्यास तथा आवश्यक परिवर्तन कर लेना चाहिए जहाँ तक हो रूप रेखा वही हो ।

श्याम पट पर प्रत्येक स्थान तथा अवस्था दिया जाये ।

नायक तथा नियन्त्रण करने वाले ठीक स्थान पर नियुक्त कर दिये जायें।

जहाँ प्रदर्शन हो उस स्थान पर कुछ अभ्यास करना आवश्यक है।

प्रदर्शन क्रमानुसार जब अधिक आइटम हो प्रत्येक का आरम्भ अन्त स्थान तथा समय निश्चित हो। कार्य ऐसा हो कि लगातार मालूम हो और किसी प्रकार का खाली समय या रुकावट न हो। सामान लाना तथा ले जाना नियमानुसार तथा सुन्दर रूप से हो। जो आदेश के शब्द देने हो वे केवल कार्य करने वालों के लिये ही हो। जनता न सुने। प्रदर्शन सही, साफ, श्रेष्ट, साधारण हो, साधारण चीज सही की जायें। वह उस में अधिक शोभा देती है वनिस्बत कठिन चीजों को गड़बड़ी की हालत में करने के।

प्रदर्शन के दो घंटे पहले सब कार्यकर्ता उपस्थित हों।

भोजन, जलपान इत्यादि प्रदर्शन के पश्चात हो।

प्रदर्शन के लिये संगीत तथा वैन्ड का इन्तज़ाम उत्तम है।

लाउड स्पिकर साफ हो—बोलने वाला अनुभवी हो।

सब प्रकार की रोशनी का प्रबन्ध हो।

प्रदर्शन में भाग लेने वालों के लिये विशेष व्यस्त्र हों।

प्रत्येक के द्वारा उत्साह तथा नम्रता की झलक दी जाये।

किसी प्रकार की आकसस्मिक घटना के लिये सदैव तैयार रहें।

कुछ ऐसे कार्य कर्ता उपस्थित रहें जो वास्तविक कार्य कर्ताओं के उपस्थिति या चोट लग जाने के कारण भाग न ले सकने पर भाग ले सकें। इस कारण आवश्यक है कि साधारण अभ्यास में एक स्थान के लिए एक से अधिक व्यक्ति प्रशिक्षित किये जाये। किसी भी छोटी चीज को छोटा न समझा जाये। प्रत्येक चीज़ अपने-अपने स्थान पर महत्व रखते है।

## राष्ट्रीय शारीरिक क्षमता:----

केन्द्रीय सरकार ने शारीरिक शिक्षा का केन्द्रीय सलाह कार कमेटी द्वारा राष्ट्रीय शारीरिक क्षमता का आरम्भ १९५९ में किया। इस अभियान का उद्देश्य सर्व साधारण में शारीरिक क्षमता की भावना उत्पन्न करने का था। इस में कुछ परीक्षण रखे गये। ये तीन श्रेणी में थे। एक स्टार, दो स्टार तथा तीन स्टार।

सम्पूर्ण परिक्षण दो हिस्सों में विभाजित थे सीनियर तथा जुनियर। महिलाओं के लिये भी यही प्रबन्ध था।

इसके चलाने के लिये सम्पूर्ण भारतवर्ष में केन्द्र स्थापित किये गये। समयानुसार दो या तीन दिन प्रति केन्द्र में दिये गये जहाँ सर्व साधारण जनता अपने आयु के अनुसार आकर परीक्षण में भाग ले सकती थी।

कार्य परिचालन के लिये प्रत्येक केन्द्र पर कार्य कर्ता प्रशिक्षित किये गये थे।

यह कार्य क्रम प्रत्येक वर्ष होता है और पहिले से अधिक इसमें उन्नति हुयी है और जनता रुचि दिखा रही है।

सरकार के द्वारा इस पर अवलोकन करने के लिये कई एक गोष्ठीयाँ आयोजित की गई है तथा स्थान-स्थान पर राजकीय व्यय से प्रशिक्षण भी दिये गये हैं।

## स्काउटिंग, गलर्स गाईड, कैम्पीन्ग तथा हाईकिन्ग के मनोरंजन कार्यक्रम की समस्यायें तथा संगठन।

स्काउटिंग संस्था लोर्ड बेडन पावल के द्वारा इन्गलैन्ड में स्थापित की गई थी। यह बोय स्काउट के नाम से प्रचलित था। यही संस्था भारतवर्ष में थी। स्वतंत्रता के पश्चात इस के नाम में परिवर्तन हुआ अब यह भारत स्काउटस तथा गाइडस् के नाम से पुकारा जाता है। कुछ लोग हैं जो भारत स्काउटस् तथा गाइडस के विरोध में बोय स्काउटस् संस्था चला रहे हैं किन्तु ये नहीं के बराबर हैं। भारत स्काउटस् तथा गाइडस् को राजकीय मान्यता है तथा आर्थिक सहायता भी मिलती है।

**संगठन :–**

प्रत्येक नगर में स्थानिय संस्था। जिसमें स्कूल के स्काउट मास्टर

लाइफ मेम्बरस तथा जिला के अधिकारी गण होते हैं। जिला स्काउट कमिश्नर प्रधान होता है तथा जिला एसोसियेसन का सभापति मुख्य होता है ।

जिला तथा सहायक स्काऊट कमिश्नर प्रादेशीय हेड क्वार्टर से नियुक्त किये जाते हैं ।

जिला के प्रत्येक ग्रुप स्थानिय संस्था के द्वारा हेड क्वार्टर में रजिस्र्टड होते हैं ।

स्काउट मास्टरस के वारंट भी प्रदेशिय हेड क्वार्टर से मिलता है ।

प्रदेश में प्रदेशिय तथा उप प्रदेशिय कमिश्नर होता है ।

प्रदेशीय हेड क्वार्टर में हेड क्वार्टर कमिश्नर तथा चीफ कमिश्नर होता है ।

हेड क्वार्टर के कार्य संचालन के लिये स्टेट चिफ ओरगनाइ-जिंग कमिश्नर तथा रीजन में कार्य चलाने के लिये असिसटेन्ट औरगनाईजिंग कमिश्नर नियुक्त किये जाते हैं जो स्टेट चीफ़ औरगनाइजिग कमिश्नर से आदेशित होते हैं तथा प्रादेशिय तथा डिस्ट्रिकटर स्काउट कमिश्नर की सलाह तथा सहायता से अपने हलके में प्रशिक्षण कैम्प इत्यादि करते हैं ।

प्रादेशिय काउंसिल में जिला से सदस्य चुन कर भेजे जाते हैं।

राष्ट्रीय हेड क्वार्टर दिल्ली में है जहां राष्ट्रीय चीफ रहते है।

यही संगठन गर्लस गाइड के लिये भी है। भारत स्काउटस अर्न्तराष्ट्रीय संगठन से मिला हुआ है और वहां से इस संस्था को मान्यता प्राप्त है।

**समस्या :–**

चरित्र विकास के लिये स्काउटिंग से बढ़ कर और कोई संस्था नही किन्तु अभी तक भारतवर्ष में यह वह उन्नति नहीं कर सका है जो विदेशों में हुआ है इसके कई एक कारण हैं।

स्कूलों में कई एक एसोसियेसन हैं तथा अन्य कार्यक्रम होते हैं। मिलिट्री ट्रेनिंग अनिवार्य होने के कारण तथा उस में कुछ लाभ के कारण अधिकांश उसी में जाते हैं। स्काउटिंग के लिये समय नहीं रहता। संस्थाओं को स्काउटिंग में विशेष रुचि नहीं, अतएव नाम मातृ के लिये ट्रूप रहता और विशेष अवसर पर लड़कों को रैली में लाकर खड़ा कर दिया जाता। बालको को इस संस्था के महत्ता के विषय में प्रायःकुछ मालूम नहीं होता। किसी प्रकार की शिक्षा या प्रशिक्षण ढंग से नहीं दी जाती।

अध्यापक या स्काउट मास्टर भी बहुत कम हैं जिनको इस में विशेष रुचि हो। इसमें कोई प्राश्रमिक नहीं दिया जाता या किसी तरह की छूट नहीं। घरेलु कारण तथा समय की कमी से

कभी कभी चाहते हुये भी स्काउट मास्टर सही कार्य नहीं कर सकते है।

माता पिता भी इस संस्था के गुण से विशेष परीचित नहीं होते अतएव वे अपने बालकों को इस संस्था में यदि भाग लेने से मना नहीं करते तो उत्साह भी नहीं देते।

संस्थाओं में प्रथा यह भी है कि शारीरिक शिक्षण अध्यापक इस कार्य को भी संभाले। यह शारीरिक शिक्षण का एक अंग अवश्य है किन्तु शारीरिक शिक्षण अध्यापक को इस कार्य के लिये दूसरे अध्यापकों से सहायता मिलना चाहिये क्योंकि उसके पास काम बहुतायत से होता है। सहायता न मिलने के कारण इस कार्य की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता।

स्काउटिंग में प्रशिक्षित अध्यापकों की आवश्यकता है जो स्काउटिंग प्रशिक्षण लेकर कार्य कर सके। प्रशिक्षित स्काउट मास्टरस की बहुत कमी है।

स्काउटिंग में संकटकालीन प्रशिक्षण बहुतायत से दी गयी है और राज्य सरकार ने आर्थीक सहायता भी दी है।

लोर्ड बेडेन पावल ने यह संस्था अवैतनिक रुप में चलाया जो अब वैतनिक पद होने के कारण भी वह उत्साह जो पहिले था नहीं है तथा समाज कभी कभी सही भावना को भी गलत समझ लेता है

कैम्पिग तथा हाईकिंग स्काउटिंग के प्राण स्वरूप हैं। प्रशिक्षण तथा स्काउटिंग में सही भावना उत्पन्न करने के लिए ये अनिवार्य है।

स्कूलों में प्रधानाचार्य की आज्ञा से स्काउट मास्टर इन कार्यों को अपने हाथ में लेता है। स्काउट मास्टर ट्रूप काउनसिल के द्वारा कार्य करता है।

हाइक तथा कैम्प पेट्रोल तथा ट्रूप के लिये हो सकता है।

**संगठन**

स्काउट मास्टर प्रबन्ध कर्त्ता

निर्णय ट्रूप काउंसिल में होगा।

स्कूल के प्रधानाचार्य की आज्ञा।

बालक के माता पिता की आज्ञा।

जिस स्थान पर जाना हो वहां के मालिक की आज्ञा।

जाने से पहिले कार्यक्रम तथा समय निर्धारित होना चाहिये।

कैम्प स्थान पर पीने के पानी की सुविधा समय अनुकूल हो

हाईकिंग की दूरी विश्राम तथा आनन्द पूर्वक तय किया जाये जिस से यह कठिन नहीं किन्तु मनोरंजक मालूम हो। दूरी बालकों की क्षमता के अनुसार हो।

लौटने का मार्ग भिन्न हो।

हाइक अपनी टोली में हो।

प्रत्येक कार्य टोली में हो।

समस्या विशेष आर्थिक। माता पिता की अरुचि। बालकों में इस प्रकार की रुचि का अभाव। स्काउट मास्टर तथा संस्था के द्वारा प्रोत्साहन न मिलना।

**युवक समारोहः—**

यह समाज की उन्नति के लिये अति आवश्यक है। युवकों का आपस में मिलना, एक दूसरे के विचार जानना, आपस में सहयोग इत्यादि राष्ट्रीय एकता के लिये अति आवश्यक है।

यह कई प्रकार के हो सकते हैं।

प्रति बाद, कवि सम्मेलन, सांस्कृतिक कार्यक्रम, debate ऐथेलेटिक प्रतियोगिता, छोटे बड़े खेलों में प्रतियोगी जल क्रीड़ा। इत्यादि

ये कुछ घंटों से लेकर कई दिन के कार्यक्रम का हो सकता है और एक से लेकर अनेकों कार्य हो सकते हैं।

यदि युवक समारोह युवक तथा युवतियों के मिश्रण से है तो उसमें नियन्त्रण की अत्याधिक आवश्यकता है। दोनों के बीच स्वतंत्रता की आवश्यकता है किन्तु एक सीमा तक। इस आयु में सही मार्ग से भटकना आसान है। इस में अनुभवी अध्यापिकाओं का होना आवश्यक है जो आधुनिक विचार के हो, किन्तु बुद्धि, नियन्त्रण तथा नम्रता से काम ले।

साधरणता शिक्षक परामर्शक प्रधान प्रबन्धकर्त्ता होते हैं किन्तु युवक तथा महिलाओं को कमीटी में तथा कार्य करने के लिये दायित्व समर्पण करका चाहिये । युवकों के विचार को सदा सम्मान की दृष्टि से देखा जाये और जहाँ गलती होने की सम्भावना हो उन्हें परिणाम से आगाह कर देना चाहिये जिससे वे भविष्य में पग सम्भाल के रखें ।

युवक समारोह में भाग लेने के लिये प्रशिक्षण की आवश्यकता है ।

अपने कालेज या स्कूल के प्रतिनिधी के स्थिति में ये आवश्यक है कि स्कूल तथा कालेज के विशेष गुण उन सदस्यों में दिखाई पड़े । उन्हें ऐसा विवेक बनाना पड़ेगा जिससे उन्हें भय रहे कि किसी तरह अपनी संस्था या उन परिवार से जहाँ से वे आते हैं किसी प्रकार का धब्बा न लग जाये और लोगों के सम्मुख मान हानि हो। यही गुण राष्ट्र के तथा व्यक्ति के उन्नति में अत्यन्त लाभदायक प्रमाणित होगा ।

प्रतिनिधियों को अपने अपने झण्डे तथा विशेष वस्त्र प्रयोग करना चाहिये ।

कुछ समाजिक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रम ऐसे हो जिसमें विशेष प्रतियोगिता न हो किन्तु एक समूह होकर कार्य किया जाय

श्रमदान भिन्न रुप में भिन्न-भिन्न व्यक्तियों द्वारा किसी उत्तम कार्य के लिये सामूहिक रुप में दिया जा सकता है। इसके लिए प्रयाप्त नियोजन की आवश्यकता है और यह समारोह का एक उत्तम कार्य हो सकता हैं।

युवक समारोह मनोरंजन के लिये प्रतियोगिता के लिये तथा सां कृतिक बातों के अध्यन के लिये होना चाहिये। भारतवर्ष ऐसे देश में यह आवश्यक है कि युवकों तथा युवतियों को यह आदेश दिया जाय की यह प्रत्येक का सौभाग्य है कि उन्होंने शिक्षा तथा अनेको प्रकार के लाभ प्राप्त किए है और इसके बदले उनका कर्त्तव्य है कि कुछ मात्रा में वे अपने भाग्यहीन देशवासीयों की सहायता करें जिससे वे भी कुछ न कुछ इन का स्वाद ले सकें।

---

# [२४]

# स्कूल के अन्दर [इन्ट्राम्युरल] शारीरिक कार्यों का संगठन

यह दो लैटिन शब्दों से बना है Intra अन्दर तथा Mural दिवाल जिस का अर्थ है दिवाल के अन्दर या स्कूल में अन्दर खेल कूद के कार्य। जो कार्य स्कूल के अन्दर विद्यार्थियों में आपस में चलाया जाये उसे Intramural कहते हैं। इस का प्रमुख ध्येय है प्रत्येक के लिये खेल तथा खेल प्रत्येक के लिये।

विद्यालय के शारीरिक शिक्षण कार्यक्रम में आदत, प्रवीणता, भाव और ज्ञान इत्यादि की शिक्षा दी जाती है तो भी इन्ट्राम्युरल कार्यक्रम के द्वारा ये और उत्तम रूप से उत्पन्न किये तथा बढ़ाये जा सकते हैं। इस कार्यक्रम में प्रत्येक विद्यार्थी को इच्छापूर्वक भाग लेने का समय मिलता है और एक ही स्कूल के विद्यार्थी आपस में एक दूसरे से खेलते और बाजी लेते हैं।

शारीरिक शिक्षा का सबसे आनन्दमय कार्यक्रम यही होता है क्योंकि इसके द्वारा औसत दर्जे के लड़के को भी अवसर मिलता है जिससे स्पर्धा की तृप्ति की भावना और खेल के आनन्दमय बहुमूल्य अनुभव प्राप्त किया जा सके। इस कार्यक्रम के द्वारा प्रसन्नता तथा शिक्षा सम्बन्धी लाभ प्राप्त किये जाते हैं।

## इन्ट्राम्युरल के लक्ष्य

प्रत्येक विद्यार्थी के लिए योग्यता पर ध्यान न देते हुये प्रतियोगता में भाग लेने का अनुभव। प्रतियोगिता हर एक स्तर पर और भिन्न भिन्न कार्यों में होती है जिसके कारण कोई छूटता नहीं।

भिन्न भिन्न कौशल तथा चातुर्य के सीखने का उत्साह तथा अवसर देना।

नेतृत्व, अनुशासन तथा पीछे हो लेने की शिक्षा तथा अवकाश।

समाजिक सम्बन्धों तथा मित्रभाव का बढ़ाव जो कक्षा के अन्दर नहीं हो सकता है। यहाँ एक दूसरे से खुल कर मिलने का अनुभव, एक दूसरे को पहचानने में सहायक, अपनी आयु में मिलना इत्यादि अनुभव, जीवन के लिए अत्यन्त लाभदायक है। सामुदायिक भावना या किसी जत्थे में होने की भावना का प्रकाश का अवसर देना। उच्च कोटि के खिलाड़ी के गुणों के विकास का अवसर देना।

खुशी,आनन्द तथा आमोद प्रमोद देना। दिल बहलाने वाले या विश्राम देने वाले स्पोर्ट्स या खेल से मानसिक तथा शारीरिक स्वास्थ्य प्रदान करना। यह किशोरावस्था में अत्यन्त आवश्यक तथा उपयोगी है। स्कूल में प्रवेश के समय खेल ऐसे होने चाहिये जो आसानी से सीखे जा सकें तथा जिसमें खेलने से आनन्द आये।

वर्तमान जीवन के बोझ तथा स्कूल के परिश्रम से विश्राम तथा मनबहलाव देना।

ऐसे कौशल तथा योग्यता के लिये अभ्यास देना जो दूसरे स्कूलों तथा कालेज के साथ खेलों में व्यवहार में लाया जा सके।

खेल तथा शारीरिक कार्यों में एक ऐसी रुचि उत्पन्न करना जो आजीवन रहे न कि जब तक कार्य अनिवार्य हो तभी तक रहे।

प्रशिक्षण विद्यालयों में छात्र शिक्षको को अवसर प्रदान करना जिससे वे प्रतियोगिता का संगठन तथा संचालन में अभ्यास का अनुभव प्राप्त करें तथा ओफिशियल्स का कर्त्तव्य तथा रेफरी करना सीखें।

**इन्ट्राम्युरल का संगठनः**

इन्ट्राम्युरल का संगठन शारीरिक शिक्षा विभाग के द्वारा होना चाहिये। इससे शारीरिक शिक्षा के बढ़ाने में बहुत सहायता मिलती है क्योंकि इस में स्कूल के सम्पूर्ण विद्यार्थीगण अपने अपने ग्रुप में भाग ले सकते हैं। विद्यार्थियों की रुचि, सहायता तथा निर्देश इस की सफलता के लिए आवश्यक है। इस का यह अर्थ नहीं की शिक्षकों की अगुआई की आवश्यकता विद्यार्थियों को नहीं। उनकी निर्देश तथा सहानुभूति पग पग आवश्यक है। इस बात का ध्यान रखना

आवश्यक है कि इन्ट्राम्युरल में शिक्षक वा विद्यार्थी किसी एक का कोई खास ज़ोर इस पर न रहे।

## इन्ट्राम्युरल निर्देशक

संगठन तथा संचालन का प्रधान दायित्व नियम तथा उद्देश्य को निर्धारित करना है। इन्ट्राम्युरल की सफलता की कुंजी निर्देशक ही है। वह फुर्तीला उद्योगिक तथा दूरदर्शी होता है। विद्यार्थी तथा शिक्षक दोनों का ही प्रेम पात्र होता है। इन्ट्राम्युरल कमेटी का सभापति होता है। निर्देशक शारीरिक शिक्षा विभाग का प्रमुख या कोई अनुभवी शिक्षक हो सकता है चुनाव उसके तथा अनुभव के अधार पर होना चाहिये।

## शिक्षक निरीक्षक :-

प्रत्येक खेल किसी न किसी शिक्षक के अधिनता और नियन्त्रण में होता है। जिस में वह निपुण्त है तथा उस खेल के प्रति उसे अनुराग है और वह उसे बताना चाहता है। वह इन्ट्राम्यूयल कमीटी का अपने पद के कारण सदस्य होता है। सम्पूर्ण कार्य उसी की देख रेख में होता है। आवश्यकता अनुसार काट छाट, तैयारी, खेल का प्रकार, मैदान की तैयारी तथा ओफिशियलस नियुक्त करता है। उसका स्थान विद्याथियों तथा निर्देशक को सम्बन्धित करना है।

**हाऊस कैप्टन :-**

वह अपने यूनिट का प्रमुख होता और टीम के चुनाव में सहायता देता है। उस के हाउस के सभी खिलाड़ी उसकी निगरानी में रहते है। जिस स्थान पर जो खेलने योग्य हैं। उन्हें वह स्थान देता हैं। इन्ट्राम्युरल कमेटी में उसका स्थान महत्वपूर्ण है तथा उसके द्वारा विद्यर्थियों का विचार कमेटी के सन्मुख लाया जाता है।

**यूनिट कोच :--**

प्रत्येक हाउस का अपना कोच हो सकता है जो प्रशिक्षण दे। इनके द्वारा प्रशिक्षण तथा अभ्यास का समय नियुक्त किया जाता है और हाउस के नियम वनाये जाते जिस से उस हाऊस के सदस्य खेल में भाग ले सकें।

**टीम कैप्टन :--**

प्रत्येक टीम के लिये एक कैप्टन नियुक्त होता है। वह तालिका जिस में दिनांक स्थान, समय इत्यादि खेल के दिये होते हैं अपने पास रखता है। टीम का पूर्ण दायित्व उसी के ऊपर होता है। विशेता खेल के मैदान में।

**इन्ट्राम्युरल कमीटी :--**

यह एक प्रजातान्त्रिक संगठन है। अतएव आपस में एक दूसरे को समझने तथा सहायता की भावना होना चाहिये।

सभापति– इन्ट्राम्युरल निर्देशक प्रत्येक मीटिंग का सभापतित्व करना। उसके अनुपस्थिति में विद्यार्थी सभापति स्थान ग्रहण कर सकता है।

मंत्री—यूनिट के प्रतिनिधियों में से चुना हुआ। मीटिंग का विवरण रखता है। उसके दो सहायक मंत्री होना चाहिये। एक मैदान तथा साधनों का देख भाल करने के लिये तथा दूसरा रेकार्ड रखने के लिये।

कोषाध्यक्ष–सदस्यों में से चुना हुआ आर्थिक व्यय तथा लाभ का लेखा रखता है।

**विशेष पदः----**

प्रोजेक्ट अफसर, प्रसिद्धि तथा सूचना अफसर, पारितोषिक तथा जलपान इत्यादि।

**प्रतियोगिता के युनिटः----**

हाउस प्रणाली—विद्यार्थी वर्ष के प्रारम्भ में किसी हाउस में अपने शारीरिक योग्यता परीक्षा के अनुसार रखे जाते हैं। इस बात का ध्यान रखा जाता है कि सब हाउस बराबर रहें। प्रत्येक हाउस अपना कैप्टन चुनता है। प्रत्येक हाउस यूनिट के रूप में ए०, बी० सी०, इत्यादि वर्गों में प्रत्येक खेल में भाग लेता है। लड़के लड़कियों

के लिये खेल पृथक होते हैं। मनोरंजन के कार्यक्रम के अवसर पर दोनों साथ होते हैं। यह छात्रावास के विद्यार्थियों के लिये अति उत्तम प्रणाली है।

जहाँ छात्रावास न हो वहाँ Vertical System के आधार पर हाउस काम करता है।

इसमें विद्यार्थी आरंभ से अन्त तक उसी हाऊस में रहते हैं। प्रत्येक हाऊस में प्रत्येक आयु तथा कक्षा के विद्यार्थी होंगे।

हाउस के कोई भी नाम दिये जा सकते हैं। यदि Horizoutal Systm का व्यवहार करना हो तो इसमें कक्षा अनुसार जिसमें विद्यार्थी अपने ग्रुप में भाग लेते हैं होगा।

प्रत्येक ग्रुप के लिये प्रतियोगिता होगी।

| | | | |
|---|---|---|---|
| Class | V | 1st Group | V & VI |
| ,, | VI | 2nd Group | VII & VIII |
| ,, | VII | 3rd Group | IX & X |
| ,, | VIII | | |
| ,, | IX | | |
| ,, | X | | |

यह आसान है लेकिन इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम के दृष्टि से ठीक नहीं।

विशेष विषय के अनुसार भी ग्रुप वन सकते है। जैसे इतिहास

जीवविज्ञान, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान इत्यादि । रुचि के अनुसार भी ग्रुप बन सकते हैं । भूगौलिक तथा मुहल्ला के आधार पर ग्रुप बन सकता है ।

## इन्ट्राम्युरल के कार्यक्रम:---

विद्यार्थियों के रुचि का ध्यान रखते हुये जो सुविधा उपलब्ध हो उनके आधार पर अनेक खेलों में से कुछ ध्यान पूर्वक चुन लेना चाहिए ।

जैसे, एथेलेटिक्स, स्वदेशिय खेल, बड़े छोटे खेल, मनोरंजन कार्यक्रम, कमरे के अन्दर के खेल, पानी के खेल, स्काउटिंग कार्यक्रम उन मन बहलाव के खेलों पर ज़ोर देना चाहिए जिनके गुण भविष्य जीवन में उपयोगी हों ।

## इन्ट्राम्युरल का समय:----

इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम का समय स्कूल के शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम से पृथक है और पृथक समय पर होता है । बार-बार के खेल से ही रुचि जीवित रखी जा सकती है । समय के निश्चित करते समय इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि ज्यादा से ज्यादा विद्यार्थी कार्यक्रम में भाग ले सकें ।

संध्या समय:—

स्कूल के बाद, स्कूल कुछ पहिले बन्द किया जा सकता है। यह हफ्ते में दो दिन हो सकता है।

दोपहरः—

हफ्ते में एक दिन आधे दिन के लिए दिया जाय जैसे शनिवार जिसमें इन्ट्राम्युरल कार्यक्रम हो।

छुट्टी के दिन।

रात्रि के समयः—

अच्छे जिमनेजियम में यदि प्रकाश का प्रवन्ध है तो कुछ कार्यक्रम हो सकता है।

टिफीन की छुट्टी में—

स्कूल आरम्भ होने से पहले—

खाली घंटे में—

इन्ट्राम्युरल कार्यक्रम सम्पूर्ण वर्ष होना चाहिए।

इन्ट्राम्युरल में पारितोषिक—

रुचि तथा उत्साह के लिए यह आवयश्क है कि पारिश्रम तथा सफलता की मान्यता दी जाये। यह किसी न किसी पारितोषिक के रूप में हो सकता है। पारितोषिक की साधारणतः आर्थिक मूल्य शून्य के बराबर होनी चाहिए। ये मान पत्र, मेडल, पुस्तक कालेज कलर, कप, शील्ड, मानपट पर नाम, छोटे झंडे, दिन इत्यादि के रूप में हो सकता है।

इन्ट्राम्युरल प्रतियोगिता के कुछ विशेष नियम—

प्रत्येक विद्यार्थी एक ही टीम में खेले।

स्कूल के प्रथम टीम के लड़के इसमें न खेलें।

जो टीम उन लड़कों को खेलायें जो वर्जित हो तो उन्हें दन्ड देना आवश्यक है।

जो खिलाड़ी खेल के अच्छे गुणों के अनुसार भद्र कार्य नहीं करता वह निकाल दिया जाए।

जो स्वस्थ्य न हो वे न खेलें।

स्कूल में प्रत्येक बालक को खेलने का अवसर दिया जाय। किसी टीम में कोई भी बालक विना भाग लिए न रह जाए।

किसी खेल के लिए कोई आर्थिक लाभ न हो।

प्रोटेस्ट के नियम केवल नियम के सुझाव तथा वर्जित विद्यार्थी के खेलने के कारण—ऐसे नियम, स्थान के अनुसार परिवर्तित हो सकते हैं।

**इन्ट्राम्युरल सूचना तथा प्रचार—**

रुचि वढ़ाने के लिए विद्यार्थियों को तरह-तरह सूचित करते रहना चाहिए।

इसके द्वारा दूसरे विद्यार्थियों को जिन्हें रुचि नहीं है, होगी। जो खेल रहे हैं उनका उत्साह बढ़ेगा।

सूचना तथा प्रचार से विभाग का कार्य सुगम तथा उत्तम होगा क्योंकि इसकी सूचना सभी को होगी और प्रत्येक अपने को इसके लिए तैयार करेगा ।

**प्रचार का माध्यम----**

विद्यालय की पत्रिका, नोटिस पर पर्चे तथा इश्तिहार, दैनिक पत्रिकाओं द्वारा ।

**प्रचार की सामग्री--**

कार्यक्रम, दिनांक स्थान, ओफिशियलस के नाम, किसी विशेष चीज की जिसे लोग पसन्द करते हों । कार्यक्रम की विशेष बातें । टीम की सफलता तथा प्रगति । पिछला परिणाम ।

**अंक प्रणाली----**

यह पता लगाने के लिए कि पूरे वर्ष के अन्तर्गत किस व्यक्ति या टीम ने अच्छा किया ।

३ अंक प्रत्येक विजय के लिए, २ अंक बराबर के लिये, १ अंक पराजित होने पर, ० न खेलने पर ।

**संरक्षित--**

यह शारीरिक शिक्षकों का उत्तरदायित्व है कि खेल के ख़तरनाक चीज़ें उपस्थित न हों और यदि सम्भव हो तो उसका उचित उपाय करें । इसके निम्नलिखित उपाय हैं :—

डाक्टरी जांच---

खेलने के लिए यह जांच आवश्यक ।

सही शारीरिक तैयारी--

शरीर की तैयारी कार्य के लिये होना चाहिए ।

बीमारी या चोट के बाद डाक्टरी आज्ञा, शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में भाग लेने के लिये ।

अस्वस्थकर बातों की रोक,एक ही ग्लास से पानी पीना, फर्श पर थूकना,मल मूत्र का ध्यान, यह उचित स्थान पर हो। एक ही तौलिया व्यवहार करना एक दूसरे का युनिफार्म जो स्वच्छ न हो पहिनना ।

आवश्यकता से अधिक अभ्यास जीतने के ध्यान से अधिक अभ्यास नहीं होना चाहिये । शक्ति के बाहर कार्य कभी नहीं होना चाहिये ।

सदैव पराजित होना या सदैव सरलता से विजय प्राप्ति रोकना चाहिये इसके द्वारा व्यक्तित्व पर हानिकर भावनाओं तथा प्रभाव रोके जा सकते हैं ।

प्रत्येक चोट की सही चिकित्सा होनी चाहिये जो स्कूल के द्वारा होनी चाहिये ।

चोट से बचने के जितने उपाय या सामग्री हो सदैव उपलब्ध हों।

प्रतियोगिता सदैव अपने ग्रुप में हो जो एक शक्ति,योग्यता,उंचाई वजन के हों।

सामान तथा सुविधायें सही रखना चाहिये फिसलने वाले फर्श, मैदान जो समतल नहीं हैं। जो सामान सुरक्षित नहीं हैं अतएव कार्य के योग्य न हो उन्हे ठीक करें। अच्छे ओफिशियलस हों।

सही तथा प्रशिक्षित नेतृत्व होना आवश्यक है क्योंकि इसके अनुपस्थित में अनेकों हानि की सम्भावना है।

---

(२५)

# स्कूलों के आपस में शारीरिक कार्यों के कार्यक्रम का संगठन

स्कूलों के आपस में खेल इत्यादि से शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम की बढ़ती होती है। ये प्रतियोगितायें शिक्षा के उद्देश्य के पूर्ति के लिए ही होनी चाहिये जैसे स्वास्थ्य, खाली समय का सदुपयोग अच्छी नागरिकता तथा चरित्र निर्माण। ये प्रतियोगितायें एक अच्छे अनिवार्य शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम की शिरोमणि हैं और ऐसा समझा जा सकता है कि एक अच्छे इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम का उत्ताम परिणाम है।

कार्यक्रम में आपस के स्कूलों में जो एक बराबर के हैं, खेल इत्यादि होते हैं।

**स्कूल कालेज या जिला स्पोर्ट्स संस्था का उद्देश्यः—**

भिन्न भिन्न स्कूल में विद्यार्थियों में मेल उत्पन्न करना, इन सस्थाओं में उच्च कोटि के खेल का स्तर रखना, इन खेलों को आर्थिक लाभ के लिये नहीं खेलना, राष्ट्रीय संगठन की भावना उत्पन्न करना चाहिए। यह निम्नलिखित से प्राप्त किये जा सकते हैं। स्कूल के बाहर के खेलों को बढ़ावा देने से, वार्षिक प्रतियोगिता तथा

एथेलेटिक प्रतियोगिता तथा भिन्न भिन्न मौसम के खेल की प्रतियोगिताओं के करने से ।

नगर के स्कूलों के,एक नगर से दूसरे नगर के स्कूलों, जिला तथा प्रान्तीय प्रतियोगिता के द्वारा,खेल दिवस समारोह तथा प्रदर्शनी से खेलों तथा ऐथेलेटिक्स में क्लिनिक करने से हो सकते हैं ।

## स्कूलों की प्रतियोगिता के कुछ विशेष उद्देश्य:—

जितनी प्रतियोगिता हो वे शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम के फल स्वरूप होना चाहिये । खिलाड़ियों या खिलाड़ी को किसी स्कूल, शहर या सिखाने वाले के नाम के लिये नहीं खेलना चाहिए। खेल या स्पोर्टस ऐसे हों जो जीवन पर्यन्त खेले जायें । प्रतियोगितायें शारीरिक शिक्षण के कार्यक्रम के परिणाम स्वरूप होना चाहिये ।

प्रत्येक विद्यार्थी अतएव सम्पूर्ण विद्यालय के खेलने पर जोर देना चाहिये न कि केवल कुछ ही विद्यार्थियों पर जो स्कूल के टीम में हों ।स्कूलों के सभी कार्यक्रम का प्रबन्ध करने का दायित्व स्कूल के ही सदस्यों की कमेटी का होना चाहिये ।

विद्यार्थियों में आत्मविश्वास तथा कार्य करने की भावना की उत्पति के लिये टीम की देख रेख का भार उन्हीं को सौंप देना चाहिये । विजय की चेष्टा में सफाई से खेलना, नम्रता दया,

आत्मनियन्त्रण तथा जिस स्कूल से खेल हो रहा हो उस के प्रति मित्र भाव सदैव रहना चाहिये।

अच्छे खिलाड़ी के जो आदर्श हैं वे खेलने, देखने वाले, जीतने या हारने वाले सभी के लिए एक है। कोचिंग अभ्यास ज्यादा देर तक या आवश्यकता से अधिक नहीं होना चाहिये।

**प्रतियोगिता का प्रबन्धः—**

प्रबन्ध का सम्बन्ध उत्तारदायित्व से है। स्कूल के आपस के प्रतियोगिताओं में उचित प्रबन्ध के न होने से असन्तुष्टता होती है और जनता भी आलोचना करती है।

श्रेष्ठ प्रबन्ध का अर्थ है चतुरता के साथ नियोजन। इसमें कठिनाई छोटी छोटी चीजों पर ध्यान न देने में होती है। छोटी छोटी बातों को ध्यान में रखने के लिए चेक लिस्ट (check list) होना चाहिये जिसमें प्रत्येक आवश्यकता की वस्तु तथा कार्य लिखें हों और उसके पूरा हो जाने पर उसे काट देना चाहिये। साधारणतः इस लिस्ट में, ओफिशियलस के खेलाने के दिन, सामान का इकट्ठा करना, इश्तेहार तथा दूसरे इश्तेहार के सामान, डाक्टर, टिकट, साधनों का देख भाल तथा मरम्मत, दर्शकों के लिये बैठने का प्रबन्ध, मुख्य अतिथि, उनका स्वागत तथा स्कूल के कार्यक्रम से उनका परिचय, टिमों को अतिथि-सत्कार तथा दैनिक व्यय से उनका परिचय, आने जाने की सुविधाये,

समय इत्यादि,भिन्न भिन्न कमेटी,उनका उत्तारदायित्व,सूचना,पत्रकारों को निमन्त्रण,शौचालय तथा जलपान गृह् का आयोजन इत्यादि होते हैं।

**चेक लिस्ट का विस्तार––**

कार्यकर्त्ता–विद्यार्थियों से सहायता लेना चाहिये। स्कूल के अध्यापक गण, स्कूल के निम्नश्रेणी के परिश्रम कर्त्ता।

प्रचार–दैनिक पत्रिकाओं में, पोस्टर्स निमन्त्रण, प्रेस,बैन्ड,बीच की छुट्टी में मनोरंजन का कुछ प्रबन्ध।

सामान--युनिफार्म,गेन्द या खेल का सामान,ओफिशियलस की आवश्यकता की चीजें। पिस्तौल,कार्टरीज,झण्डी,स्कोरबुक,घड़ी,सीटी।

सुविधांयें--खेल का मैदान,खम्भें,गेटटिकट बेचने का स्थान,पीने का पानी,शौचालय,बैठने का इन्तजाम,सवारियों के खड़े होने का इन्तजाम।

संगठन--आनेवाले टीमों को लिखना, समय तथा तिथि पक्का, करना,फिक्सचर भेजना,सुविधायें बतलाना,उनकी आवश्यकताओं के विषय पूछना।'

# (२६)

# प्रतियोगिता के प्रकार

टुरनामेन्ट में प्रतियोगिता अत्यन्त आवश्यक है।

यह वार्षिक कार्य का एक लेखा तथा सिरताज है।

इसके द्वारा विद्यार्थियो को अपने चातुर्य तथा कौशल प्रदर्शन का अवसर मिलता है।

यह एक परिणाम के माप के सदृश्य है।

यह अभ्यास के लिए प्रेरक होता है तथा किसी कार्य की प्रगति में सहायक होता है।

कार्यक्रम में उत्साह, रुचि उत्पन्न करता है।

टुरनामेन्ट के लिये आवश्यक विचार :—

सभी टुरनामेन्ट में अच्छी तथा बुरीं बातें हैं। किन्तु बे अपने अपने स्थान में लाभ कर हैं। टुरनामेन्ट के नियोजन में निम्नलिखित पर ध्यान देता आवश्यक है।

कार्य का प्रकार

समय जो दिया जा सकता है।

खिलाड़ियों की रुचि

सुविधायें तथा साधन

कौन सा वर्ग हिस्सा ले रहा हैं (बड़े,बीच के या छोटे या खुला हुआ) कितनी टीम खेलेगीं,कितनी यात्रा है तथा उनका स्तर

कितने ओफिशियलस मिल सकते हैं

कितना व्यय होगा

संगठन–व्यक्ति, ओफिशियलस,कार्य क्रम सूचना, आरम्भ तथा अन्त समारोह, प्रोटेस्ट, पारितोषिक, अतिथि स्तकार,

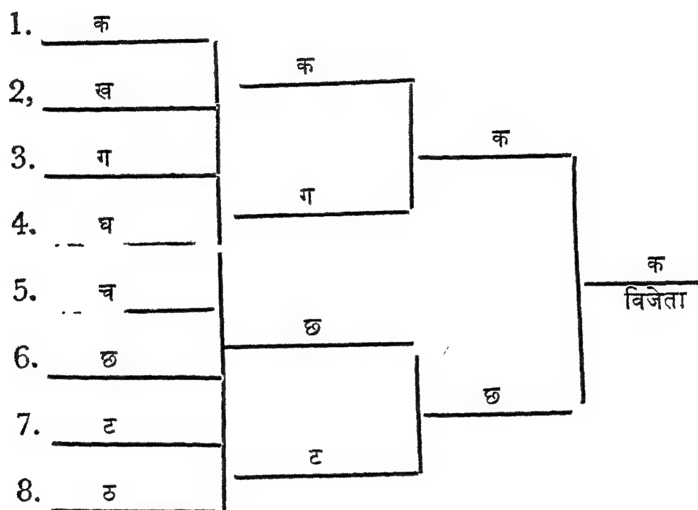
**प्रकार**

## नौक आऊट टुरनामेन्ट

साधारणता चिट्ठे डाल कर टीमों को आपस में खेलाया जाता है। जो हार जाते है वे फिर नहीं खेलते। जो विजेयता हैं वे खेलते जाते हैं। बहुत कम समय में खेल समाप्त हो जाता है और सर्व श्रेष्ठ विजेयता का पता चल जाता है।

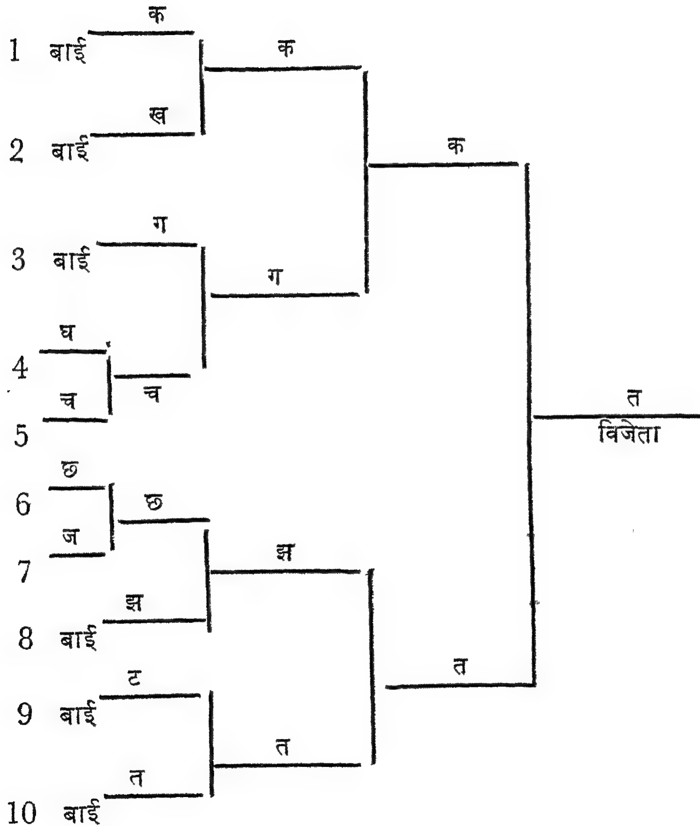
टीम को जोड़ा आरम्भ में यदि दो है या दो का गुण है जैसे ४, ८, १६, ३२, ६४ तो आसानी से जोड़ा बनाये जा सकते हैं।

जैसे ८ टीम के लिये :—




यदि टीम दो या दो का गुणा नहीं है तो बराबर जोड़ करने के लिये पहले खेल में Bye दिया जाता है। बाई निकालने की विधि है कि टीम के नम्बर को २ के उस नम्बर के अगले गुणा से घटा लें। जो उत्तर होगा उतने ही बाई दिये जायेगे।

जैसे यदि १० टीम हैं तो इससे अगला २ का गुणा १६ है १६-१० = ६ अतएव टीम ६ को बाई दिये जायेगें।

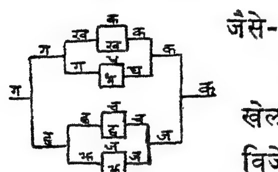



बाई यदि बराबर हैं तो पहिले खेल में आधे ऊपर तथा आधे नीचे होने चाहिये। यदि बराबर नहीं है तो थोडे ऊपर तथा ज्यादा नीचे होना चाहिये।

सीडींनिंग (Seeding) दर के अच्छे टीम जो प्रतियोगिता में है

उन्हें पृथक रखने की विधि है जिससे पहिले ही खेल में वे आपस में न खेल लें इससे जनता की रुचि प्रतियोगिता में कम हो जायेगी। जो टीम सीड किये जाते है उन्हें ऊपर तथा नीचे के हिस्से में रखा जाता हैं जिससे वे खेल के अन्त के हिस्से में आपस में मिले।

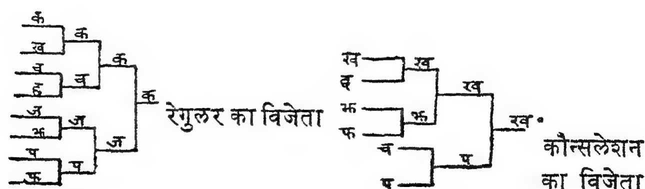
कौन्सलेशन टुरनामेन्ट (Consolation Tournament) इसमें प्रत्येक टीम को दों बार खेलने का अवसर मिलता है। कभी कभी पहिले अवसर में किसी कारण से अच्छी टीम हार सकती है। उसे अपनी शक्ति दिखाने का एक और अवसर मिलता है।



जैसे-

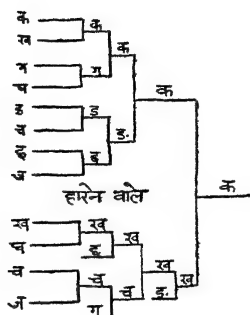
ख, ग, छ, झ जो हारे हुये हैं उन्हे फिर से खेलने का अवसर मिलता है। इस खेल का विजेता ग है, जो पहले ही खेल में हार चुका था।

डबल ऐलिमिनेशन
(Double Elimination)




इस उपाय में हारने वालों को खेलते रहने का अवसर मिलता है। जैसे-

ख, छ, झ, फ जो पहले राऊन्ड में हार गये फिर से खेलते हैं और च, प जो दूसरे राऊन्ड में हार गये फिर खेलने का अवसर पाते हैं।




लीग या राऊन्ड रोबिन

इसमें जीतने वाले एक ओर,और हारने वाले एक ओर खेलते हैं। जैसे ख,घ,च,ज हारने वाले नीचे खेलते हैं। उनके दूसरे राउन्ड में ऊपर के हारने वाले और नीचे के जीतने वाले साथ खेलते हैं। इस प्रकार जीतने वालों के विजेता तथा हारने वालों के विजेता फिर फाइनल में एक बार और खेलते हैं।

## पहला उपाय

इसमें प्रत्येक टीम हर एक के साथ खेलता है। इसमें विजेता टोटल पोइन्टस से मालूम किया जाता है। खेल कितने होगे उसका नियम है $\frac{\text{एन (एम-१)}}{२}$ एन = टीम का नम्बर

यदि एन = ७ $\therefore \frac{७(७-१)}{२} = \frac{७ \times ६}{२}$ = २१ खेल

| | क | ख | ग | घ | ङ | च | छ |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| क | | माचे १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ |
| ख | | | ७ | ८ | ९ | १० | ११ |
| ग | | | | १२ | १३ | १४ | १५ |
| घ | | | | | १६ | १७ | १८ |
| ङ | | | | | | १९ | २० |
| च | | | | | | | २१ |
| छ | | | | | | | |

सिंगल लीग में चतुर्भुज का एक हिस्सा होगा, डबल लीग में दोनों हिस्सा।

जीतने में २ पोइन्ट
बराबर १ ,,
हार ० ,,

## राऊन्ड रोबिन या लीग प्रणाली डालने का दूसरा उपाय।

यदि टीम बराबर हों तो नम्बर एक से आरम्भ करें जो स्थित रहेगा तथा बाकी नम्बर बायें से दायें चलेगे जब तक आरम्भ की अवस्था को पंहुचे। जैसे ८ टीम के लिये।

| राऊन्ड | (१) | (२) | (३) | (४) | (५) | (६) | (७) |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | १—२ | १—८ | १—७ | १—६ | १—५ | १—४ | १—३ |
| | ८—३ | ७—२ | ६—८ | ५—७ | ४—६ | ३—५ | २—४ |
| | ७—४ | ६—३ | ५—२ | ४—८ | ३—७ | २—६ | ८—५ |
| | ६—५ | ५—४ | ४—३ | ३—२ | २—८ | ८—७ | ७—३ |

यदि टीम बरावर न हों तो सब बम्बर बायें से दायें चलते हैं और उपर के नम्बर को बाई (bye) मिलता है जैसे ७ टीम के लिये

| राऊन्ड | (१) | (२) | (३) | (४) | (५) | (६) | (७) |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | ७ | ६ | ५ | ४ | ३ | २ | १ |
| | ६–१ | ५–७ | ४–६ | ३–५ | २–४ | १–३ | ७–२ |
| | ५–२ | ४–१ | ३–७ | २–६ | १–५ | ७–४ | ६–३ |
| | ४–३ | ३–२ | २–१ | १–७ | ७–६ | ६–५ | ५–४ |

सीढ़ी या लाडेर टुरनामेन्ट

| | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| क | ख | ग | घ | च | छ | ज | झ | प | फ |

ये व्यक्तिगत खेल के लिये उत्तम है। स्थान देने के लिए चिट्ठा निकालें या इलीमिनशेन टुरनामेन्ट जिसमें हारने वालों का जोड़ा करने चलें। इसके बाद यह अपने आप चलता है।

खिलाड़ी या टीम अपने टीक ऊपर वाले से वाजी लेता है। यदि जिसे वाजी दी गयी हो, अपने टीक ऊपर वाले से न खेल रहा हो तो उसे दो दिन के अन्दर खेलना होगा जो नही खेलेगा उसे नीचे आकर स्थान बदलना होगा। जैसे झ न से बाजी लेता है यदि ज छ से नहीं मिल रहा है तो उसे झ के साथ खेलना होगा।

यदि ज नहीं खेलता है तो उसे झ के स्थान पर आना होगा और झ ऊपर जायेगा। यदि वे खेलते हैं और झ जीत जाता है तो वह ऊपर जायेगा और ज नीचे आयेगा। ज फिर झ के साथ नहीं खेल सकता जब तक झ और छ न खेलें।

नियम है कि जब दो में खेल होता है तो वे फिर आपस में नहीं खेल सकते जब तक कि वे एक बार दूसरे से न खेल लें अपने नये स्थान में।

---

[२७]

# आय, व्यय तथा वार्षिक लेखा

ध्यान पूर्वक आने वाले आमदनी तथा व्यय की योजना को ही बजट कहते हैं। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि बजट आशा की हुयी आमदनी पर होने वाले खर्चे का सही अनुमान है।

किसी स्कूल के शारीरिक कार्यक्रम की योजना उस समय पूर्ण नहीं मानी जा सकती जब तक उसके व्यय का सही उपाय न निर्धारित किया जाये। शारीरिक शिक्षण में साधारणता इस समस्या पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता। स्कूल में शारीरिक शिक्षा के विभाग तथा उसके कार्य का हम ध्यान भी नहीं कर सकते यदि उसके व्यय के लिए उचित प्रबन्ध न हो। यह आय व्यय वार्षिक लेखा के बगैर हो ही नहीं सकता। अतएव यह आवश्यक है कि कार्यक्रम आरम्भ करने से पहले यह नियत कर लिया जाय कि आवश्यकता क्या है और उसके लिये आर्थिक धन कहाँ से आयेगा। इसी आर्थिक धन का उचित प्रवन्ध जिससे खर्चा पूरे वर्ष सुचारू रूप से चले, सही वार्षिक लेखा होगा।

शारीरिक शिक्षा के प्रति व्यय उसी प्रकार होगा जैसे स्कूल के दूसरे विषयों के लिये होता है।

सम्भव है कि नागरिकता, अच्छे खिलाड़ी के गुण, चरित,

निर्माण, स्वयं पर शासन, स्वास्थ, खाली समय का सदुउपयोग इत्यादि की शिक्षा दूसरे विषयों से कहीं ज्यादा शारीरिक शिक्षा के द्वारा दी जा सकती है किन्तु हमारे नेता अभी तक इस बात को नहीं समझ सके हैं। इस का अर्थ है कि जो आर्थिक स्थिति शारीरिक शिक्षा की होनी चाहिए, नहीं है।

शारीरिक शिक्षा के लिए धन उर्पाजन करने की विधि:—

१, विद्यार्थियों की मासिक तथा वार्षिक शुल्क।

२, धन जमा करने की दूसरी विधियाँ—

स्कूल के तमगे इत्यादि बेचना,ऐथेलेटिक कारनीवाल,स्कूल में ड्रामा, जिमनास्टिक का प्रदर्शन, कौनपट, विविध प्रोग्राम, दुकाने लगाना, पत्रिकाओं में सूचना, स्कूल कार्य दिवस, रद्दी कागज़ दिवस दान के लिए प्रार्थना, सरकारी सहायता, स्कूल श्रमदान इत्यादि।

व्यय:—

१, एक ऐसी विधि प्रयोग में लाना चाहिए जो आसानी से समझा जा सके और आसानी से काम में लाया जा सके। आर्थिक विषयों में किसी तरह की लापरवाही नहीं होनी चाहिए।

२, जो आमदनी होती है या जो व्यय होता है सही विधि से चढ़ाना चाहिए। यह साफ तथा संक्षिप्त होना चाहिए। पूरे आय

तथा व्यय का रेकार्ड सदैव तैयार रहना चाहिए जिससे यदि कोई किसी समय निरीक्षण करना चाहे तो कर सके।

३, जितनी आय है उतना ही व्यय होना चाहिये।

४, रूपये की बरबादी किसी तरह न हो। इसे हर एक तरह रोकना है।

ऐथेलेटिक बजटः—

किसी प्रोग्राम को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उसके व्यय का निर्णय पहिले ही कर लें।

बजट आय का वार्षिक लेखा है। इसके द्वारा शारीरिक शिक्षा का नियोजन भली प्रकार से किया जा सकता है। साधरणतः बजट संक्षिप्त होता है। प्रत्येक आइटम के अर्न्तगत पर्याप्त सुविधा होनी चाहिए जिससे जो परिवर्तन आवश्यक हो वह किया जा सके। ऐथेलेटिक बजट में भी आय व्यय बराबर करना है।

इसकी जानकारी पिछले अनुभव के आधार पर होगी। कहा जाता है कि पिछले तीन साल के अनुभव के आधार पर बजट बहुत ही अच्छा बन सकता है। सही बजट में प्रोग्राम के सभी आइटम लिये जायें तथा नियमानुसार आर्थिक वितरण किया जाय जिससे कार्य सुगमता तथा सुचारू रूप से हो और उसके व्यय के लिये पर्याप्त धन हो।

## बजट की तैयारी:----

बजट बनाने के लिये कोई निश्चित नियम नहीं दिया जा सकता हैं जो सभी अवस्था में प्रयोग किया जा सके। साधारण नियम ये हैं।

१, पिछले तीन साल में धन कैसे इकठ्ा किया गया तथा कैसे व्यय हुआ। इस बात पर ध्यान देना है कि किस आइटम के आय व्यय में अस्थिरता रही तथा इस परिणाम स्वरूप कार्यक्रम कैसा रहा।

२, वर्ष की आय क्या है। यही ढांचा का आधार होगा जिस पर व्यय नियत की जायेगी।

३, धन आने के कौन-कौन से साधन हैं। इनका विश्लेषण करना और देखना कि कहां तक ये स्त्रोत फल देते रहे।

## व्यय सम्बन्धि प्रश्न:---

१, क्या यही कार्यक्रम इस वर्ष भी चलेगा। इससे अलग अलग व्यय के शीर्षक का अन्दाजा हो जायेगा।

२, क्या इस वर्ष कोई नया नियोजन हैं। क्या यह आर्थिक स्थिति के अनुसार है। क्या इसके व्यय के लिये सही धन दिया जा सकेगा।

३, गत वर्ष किन-किन बातों की रोक थाम की जा सकती थी जिससे आर्थिक वचत व्यय होती। इनके लिये भाविष्य में कौन-कौन से उपाय किये जा रहे हैं।

व्यर्थ व्यय को रोकना तथा आय के सम्पूर्ण स्त्रोत को ढूढना तथा नियन्त्रण पूर्वक उन चीजों के लिये व्यय करना जिसे मान्यता दी गयी है, सही बजट के गुण है।

**बजट--**

बजट में आय तथा व्यय के साफ-साफ शीषर्क होना चाहिए। यह वास्तविक आवश्यकता बतलाती है। बजट तैयार कर के गेम्स कमेटि के सन्मुख लाना चाहिए। प्रत्येक आय व्यय के आइटम को एक-एक करके देखना चाहिए। आइटम के आय तथा व्यय का हिसाब रखते हुये भी किसी प्रकार के संकट कालीन अवस्था के लिये भी उपाय रखना चाहिए जिससे इसका भी व्यय दिया जा सके।

एक शीर्षक से दूसरे शीर्षक में धन का हेर फेर नही होना चाहिए जब तक कि कमेटि की आज्ञा न हो। बजट के देख भाल का दायित्व जिसका है उसे अपने सही विचार से कई एक व्यय अपने आप करना पड़ता है, किन्तु ऐसे सब व्यय कमेटी के सन्मुख आना चाहिए। वर्ष में प्रायः तीन बार बजट की जांच होनी चाहिए इस

से बजट की अवस्था मालूम होती रहती है। साधारण दैनिक व्यय का हिसाब प्रति दिन पूरा कर देना चाहिए और ध्यान रखना चाहिए कि आय व्यय बराबर रहें।

रसीद पर लगातार अंक हों और फाइल किये जायें। बीस रूपये से अधिक व्यय पर स्टाम्प हो। व्यय से पहिले देखिये कि इसके लिये आज्ञा है या नही। यदि है तो किस शीर्षक के अन्तर्गत। आवश्कता से अधिक रूपये पास में नहीं होना चाहिये। पैसा ऐडवान्स नहीं देना चाहिए।

सामान खरीदने के लिऐ टेन्डर बुलाया जाये। जो कमीशन मिलता है वह बिल में दिखाया जाय। दैनिक साधरण व्यय के लिये पृथक पुस्तक होनी चाहिए। टिकट, लिफाफे तथा स्टेशनरी इत्यादि के लिए अलग हिसाब होना चाहिए।

वर्ष के अन्त में किसी रजिस्टर्ड ऐकाउन्टेन्ट से जाँच करवाना चाहिए। यह जांच गेम्स कमेटी के सम्मुख आना चाहिए।

**बजट से लाभः—**

व्यय को आय के अन्तर्गत रखना तथा निश्चित धन प्रत्येक विभाग को देना जिससे कार्य भली भांति चल सके। बजट के द्वारा निम्नलिखित प्रश्न का उत्तर मिलता है। वेतन में कितना व्यय होता है यदि इस में अधिक व्यय हुआ तो कठिनाई होगी।

थोड़े समय Part time कोच का एलाउन्स क्या प्रत्येक वर्ष ऐक्युपमेन्ट खरीदना है ? खरीदने का कार्य कुछ वर्षो के लिये हो तो लाभ होगा । मरम्मत के लिये कुछ हिस्सा है या नहीं । धोबीं के लिए

इस स्कूल का खर्चा दूसरे स्कूलों की तुलना में कैसा है ।

क्या कुछ खास लड़कों पर पैसा खर्च होता है या पूर्ण स्कूल पर ।

प्रत्येक स्पोर्ट पर क्या खर्चा होता है । यदि सुधार हो तो कहाँ हो जिससे कार्य में कोई विशेष बाधा न पड़े ।

**गेम्स फराड का उचित व्ययः–**

खेल का सामान का व्यय । व्वक्तिगत विद्यार्थियों के खेलने का सामान इस पैसे से नहीं आना चाहिए । इनडोर खेल के सामान के लिये खर्च,खेल के मैदान का देख भाल, जिमनास्टिक आपरेटस,नाव, तैरने का स्थान,वार्षिक चन्दा तथा एफिलेयेशन शुल्क,खेल में भाग लेने का शुल्क,खेल में भाग लेने के लिये सवारी खर्च,१५ से अधिक लड़कों के साथ एक शिक्षक,खिलाड़ियों के लिये दैनिक भत्ता, साधारण खेलों में दूसरे स्कूलों के लिये जलपान,वार्षिक स्पोर्ट्स समारोह का व्यय, प्रोग्राम की छपायी, प्राश्रमिक वेतन, सजावट, 'शामयाना,खेलने वालों के लिये पानी, ओफिशियलस के लिये जल-

पान,सस्ते पारितोषिक,स्कूल से मीटिन्ग में जाने का खर्च, प्रारम्भिक चिकित्सा का सामान, लिखने इत्यादि का सामान, विशेष प्रशिक्षण के लिये, शारीरिक शिक्षा मासिक, युनिफार्म, स्काउटिन्ग तथा गाइडिन्ग, सेन्ट जौन आम्वुलेन्स किताब रजिस्टर इत्यादि ।

बजट का नमूना

| आय | रू० | पै० | व्यय | रू० | पै० |
| --- | --- | --- | --- | --- | --- |
| १, पिछला बालेन्स | | | १, सामान | | |
| २, चन्दा तथा डोनेशन | | | २, मरम्मत | | |
| ३, शुल्क | | | ३, दूसरे स्कूलों से स्पोर्टस प्रतियोगिता | | |
| ४, राजकीय सहायता | | | ४, इन्ट्राम्युरल | | |
| ५, दूसरे मद से आय | | | ५' विशेष कार्य | | |
| ६, | | | ६, स्काउटिन्ग | | |
| | | | ७, फर्स्ट ऐड | | |
| | | | ८, एफिलियेशन शुल्क | | |
| | | | ९, किताब | | |
| | | | १०, स्टेशनरी | | |
| | | | ११, वेतन | | |
| योग | | | योग | | |

[२८]

# शारीरिक शिक्षण तथा मनोरंजन में निरीक्षण, प्रवेश, प्रणालि तथा सहायता

शारीरिक शिक्षण तथा मनोरंजन में पहिले निरीक्षण का अर्थ इन्सपेकटर के द्वारा निरिक्षण का था जब वह आ कर शिक्षक के कार्य का लेखा लेता था। इसका परिणाम यह हुआ कि इन्सपेक्टर के आगमन को शिक्षक किसी भयानक संक्रामक रोग के सदृश्य समझने लगे। निरीक्षक सदा शिक्षक की गलतियों के ओर ध्यान देते थे। इस प्रणालि के द्वारा शिक्षक के शिक्षा सिद्धान्त के बनाने की योग्यता की कमी समझी जाती थी।

वर्तमान निरीक्षण उसके सही विधि का खोज करता है। इससे द्वारा विद्यार्थियों की प्रकृति, समाज की बदलती हुयी आवश्यकतायें, कक्षा में पढ़ाने के गुण, सही अनुशासन इत्यादि की जांच कर उन के परिणाम को शिक्षक के पास पहुंचाता है। दूसरे शब्दों में निरीक्षण का अर्थ है शिक्षा संबन्धी नेतृत्व जो एक पूर्ण समय के शिक्षक या संगठन कर्त्ता के द्वारा व्यवहार में समया भाव के कारण करना कठीन है।

**निरीक्षण क्या है?**

यह एक सेवा है जो शिक्षकों को ही प्राप्त है जिस से शिक्षक

तथा दूसरे अपने उत्तरदायित्व का भली भांति पालन कर सकें। संगठन कर्त्ता संगठन के सम्बन्ध में कितने ही निर्णय करता है। एक निरीक्षक का कार्य उस समय सर्वोत्तम होगा जब वह ऐसे परामर्श दे जिस से संगठन कर्त्ता के निर्णय में सहायता हो। निरीक्षण का मुख्य उद्देश्य शिक्षा की उन्नति करने में है। यह केवल शिक्षक तथा विद्यार्थी के संबंध से ही नहीं किन्तु प्रधानाचार्य तथा दूसरे लोगों के द्वारा जो इस से संबंधित हैं किया जा सकता है।

शारीरिक शिक्षण में हम यह कह सकते हैं कि निरीक्षण वे विशेष माध्यम हैं जो शिक्षक के शिक्षा कार्य के बढ़ाने तथा स्वास्थ शिक्षा तथा मनोरंजन के उन्नति करने में प्रयोग किया जाता है।

## विशेष निरीक्षण

यह उन्निसवीं शताब्दी के अन्त में आया जब नये विषय, कार्य क्रम में सम्मिलित किये गये थे और शिक्षक इन विषयों के पढ़ाने की योग्यता नहीं रखते थे। निरीक्षक भी उन विषयों से परिचत नहीं थे। शारीरिक शिक्षा भी इन विशेष विषयों में से एक था। शारीरिक शिक्षा में निरीक्षण १९१० ई० के पहिले नहीं था। शारीरिक शिक्षण निरीक्षण अब बहुत से देशों में मान्यता प्राप्त करता है

निरीक्षक का संबंध संगठन के सदस्यों तथा शिक्षकों से :-

शारीरिक शिक्षण निरीक्षक एक विशेषज्ञ है जो सलाह देता

है। वह न केवल शिक्षक तथा प्रधानाचार्य को सलाह देता है वरन शिक्षा निरीक्षक को भी सलाह देता है।

टेकनिकल निरीक्षक — संगठनकर्ता, स्कूल निरीक्षक, प्रधानाचार्य, शिक्षक

## निरीक्षका कर्तव्य :–

निरीक्षक का कर्त्तव्य शारीरिक शिक्षण में स्थानिय विभागों के नियम पर निर्भर है। नीचे कुछ कर्तव्य दिये गये हैं।

निरीक्षक प्रधानाचार्य का विशेष विद्या संबन्धी (Teehnical) सलाहकार है।

निरीक्षक सीधे शिक्षक के साथ कार्य करता है।

निरीक्षक का मुख्य कार्य शिक्षा को उन्नति देना है।

उत्तम निरीक्षक का गुण शिक्षकों में जोश पैदा करना है जिस से वे शिक्षा में प्रेम तथा उसके परिणाम का आनन्द ले सकें।

निरीक्षक कोई इन्सपेक्टर नहीं किन्तु शिक्षक का सहायक है। निरीक्षक का कर्त्तव्य है शिक्षा सम्बन्धी बातों को दिखाना तथा कानफ्रेन्स वुलाना।

निरीक्षक का कर्त्तव्य है कि प्रधानाचार्य तथा शिक्षक का प्रशिक्षण करे।

प्रधानाचार्य,संगठन कर्त्ता तथा निरीक्षक दोनों ही हैं।

निरीक्षक अपने क्षेत्र में विशेषज्ञ है।

निरीक्षक को अपने विचारों तथा व्यवहार में प्रजातांत्रिक होना चाहिये।

**निरीक्षण की विधि :–**

बाहर के विशेषज्ञों को बुलाना।

नये शिक्षकों के लिये विशेष सभा करना।

अच्छे शिक्षकों द्वारा प्रदर्शन दिलवाना।

संक्षिप्त पर्चों के द्वारा सुचनाये देना।

शिक्षकों के पास जाना जिससे उनकी आवश्यक सहायता उनकी कठिनाइयों में दी जा सके।

शिक्षकों के लिये शिक्षा सेवा का निर्माण करना जैसे स्पोर्टस किल्निक, वर्क शाप, एकटेस्न्शन कोर्स, स्ट्रडी ग्रुप, कानफ्रेन्स।

**निरीक्षक के गुण :–**

निरीक्षक को एक शिक्षित व्यक्ति होना आवश्यक है। अपने कार्य क्रम के दौरान में उसे अनेकों व्यक्तियों तथा ग्रुप से मिलना पड़ता है। अनेकों समस्याओं का सामना करना पड़ता है तथा उन्हें सुलझाना पड़ता है। नीचे उसके कुछ गुण दिये जाते हैं।

उन व्यैक्तिक गुणों को रखना जिससे,उसे,उस के नेतृत्व में सहायता मिल सके।

वह एक प्रभावशाली व्यक्ति हो जिसमें दूसरों पर प्रभाव डालने की शक्ति हो और स्वयं पौरुष तथा जीवन शक्ति से परिपूर्ण हो। उसे अपने कार्य के महानता पर अथात निरीक्षण कर्ता के कार्य पर तथा वर्त्तमान समाज में शिक्षा के महत्ता पर पूर्ण विश्वास होना चाहिये।

उसे नये विचारों को अपनाना चाहिये तथा दूसरों की योग्यता को सराहने वाला होना चाहिये।

उसे उत्तरदायित्व लेने के लिए सदैव तैयार होना चाहिये तथा उस के पालन में किसी तरह की हिचकिचाहट या टालने की भावना नहीं होनी चाहिये।

योजनाओं में सुचारु रुप से परिवर्तन करने की योग्यता होना चाहिये, साथ ही साथ सदा शिक्षको में तथा शिक्षण अवस्थाओं में उन्नति की खोज के उपाय करना चाहिये।

उसे एक समाजिक व्यक्ति होना चाहिये जो दूसरे लोगों से मिलने वाला हो और उनके गुणों कों सराहने वाला हो, जो दूसरों के साथ कार्य करने में आनन्द ले तथा उनके ग्रुपों तथा अधिकार को सम्मान की दृष्टि से देखे।

प्रत्येक काम में इमान्दार हो और निष्कपट हो। अपने विषय में निपुण हो जिससे अपने नेतृत्व के कार्य का उत्तम लेखा दे सके

निरीक्षक कम से कम ग्रेजूयटे हो कार्यक्रम, स्कूल संगठन,

शारीरिक सुविधाये तथा साधन, शारीरिक शिक्षा के प्रोग्राम के विभिन्न अंगों से परिचित, जनता से उत्तम सम्बन्ध,निरीक्षण के विधियों से परिचित, स्वास्थ शिक्षा, समाजिक मनोरंजन इत्यादि के कार्य परिचालन का ज्ञान रखता हो। उपरोक्त का अर्थ प्रत्येक योग्यता जो निरीक्षक में होना चाहिये उसका सम्पूर्ण व्याख्या करना नहीं,केवल तात्पर्य यह है कि निरीक्षक एक विशेषज्ञ तथा सम्मान करने योग्य पुरुष हो।

## विद्यार्थियों का निरीक्षण :-

कहा जा चुका है कि शारीरिक शिक्षण ही वह सरल तथा श्रेष्ठ प्राकृतिक माध्यम है जिस के द्वारा व्यक्तित्व का विकास पूर्ण रुप से हो सकता है। इस माध्यम में व्यक्ति की स्वतंत्रता से,जिस तरह कार्य होता है,उस तरह किसी और माध्यम से संभव नहीं। बालक स्वतंत्रता के वातावरण मे अपना विकास करता है। किन्तु इस वातावरण में बालक के अनजाने,शिक्षक का श्रेष्ठ हाथ है जो वातावरण को बालक के सही विकास के अनुकूल बनाता रहता है। अतएव यह आवश्यक है कि शारीरिक शिक्षण का प्रत्येक कार्य प्रशिक्षित शिक्षक के पूर्ण निरीक्षण तथा नियन्त्रण में हो। समयानुकूल शिक्षक का आदेश बड़े उंच्च परिणाम प्राप्त कर सकता है।

शिक्षक,जो बालकों के कार्यों का निरीक्षण करते हैं उनका ध्येय प्रत्यक्ष रुप में बालकों को मालूम नहीं रहता। वह अपना ध्येय जानते हैं किन्तु निरीक्षक जो कि शिक्षक है उस का ध्येय व्यापक होता है।

विशेषत: बालक की बढ़ती आयु में जिस समय वह अपने लाभ तथा हानि को भलि भांति नहीं समझ सकता, जब की वह छोटी सी भूल, बेइमानी, तक गलती इत्यादि को मामूली चीज समझता है,उस समय निरीक्षण की अत्यन्त आवश्यकता है ताकि यह छोटी चीज जो आगे चलकर भयंकर रूप धारण कर सकती है आरम्भ में ही नाश कर दी जाये।

अधिकतर खिलाड़ियों में अनुशासनहीनता प्राय: इस कारण आती है,कि स्कूलों और कालेज में खेलों का संगठन दोष पूर्ण होता हैं और खेलते समय वालकों के आचरण का सही निरीक्षण नहीं होता।

स्कूलों में यह भी प्रथा,कि प्रशिक्षित अध्यापक खेल का निरीक्षण करते हैं,इससे बढ़ कर दोष कदाचित और नहीं हो सकता। जिन अध्यापकों को शारीरिक गुणों के द्वारा चरित्र के विकास का ज्ञान नहीं हो वह बालक की प्रगति तथा अनुशा न इत्यादि में क्या सहायता कर सकते हैं।

इन्ट्राम्यूरल ऐसे कार्यक्रमों में जहाँ विद्यार्थियों को काफी स्वतंन्त्रत दी जाती है,जो कि उनके व्यक्तित्व विकास के लिये अनिवार्य है तोभी शिक्षक का निरीक्षग सदैव रहता है। स्कूल तथा कालेज में वगैर शिक्षक के निरीक्षण के शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम कभी भी नहीं होना चाहिये।

शिक्षक के निरीक्षण से संरक्षिता का सवाल हल हो जाता है। जिमनेजियम में जहां चोट लगना संभव है, पानी में जहां खतरा हो सकता है, हाइक में जहां अनुशासन हीनता हो सकती है, प्रतियोगिताओं में जहां विभिन्न प्रकार के प्रश्न तथा समस्यायें उपस्थित हो सकती है जिस से बालक को हानि हो, एक स्थान से दूसरे स्थान को जाने में इत्यादि, यह निश्चय है, कि शिक्षक के निरीक्षण के वगैर बालक कोंबिन पतवार पानी में छोड़ना हैं।

---

# [२९]
# प्रचार

प्रचार का अर्थ है जनता का ध्यान आर्कषित करना। यह कार्य बोलने या लिखने के द्वारा किया जा सकता है। (Advertise and Publicity) विज्ञापन देने और प्रचार में बहुत कुछ समानता है। विज्ञापन देने का अर्थ कुछ संकीर्ण है क्योंकि इस में कुछ विशेष अर्थ होता है तथा साधारणतः किसी प्रकार के लाभ की आशा की जाती है। प्रचार का अर्थ विस्तृत है। प्रचार जनता का ध्यान आर्कषित करने तथा उन्हे शिक्षित करने का एक प्रबल साधन है क्योंकि इस में तात्पर्य तथा उद्देश्य सतह पर साफ साफ नहीं मालूम देते अतएव उस विषय के प्रति जो प्रचार किया जा रहा है कुछ प्रतिकार की सम्भावना नहीं होती। बहुमत है कि जनता को शारीरिक शिक्षा के उद्देश्यों में प्रचार के द्वारा शिक्षित करना आवश्यक है।

प्रचार, प्रत्येक प्रकार के माध्यम का व्यवहार है जिससे जनता की भावनाओं को एक व्यक्तिगत जन समूह की तरह प्रभावित करें। प्रचार के द्वारा उन लोगों से जिन से साकक्षात्कार सम्भव नहीं, संबंध स्थापित किया जाता है।

### स्कूल प्रचार तथा सूचना का तात्पर्य

जनता को उन समाचारों से सूचित करना जो उन्हे जानना चाहिये।

स्कूल के प्रति किसी गलत धारणा से रोकने के लिये।

परिवार तथा घरों में मार्ग तैयार करना जिससे नये विचारों

संगठन,उन्नति तथा साधन के प्रति सहायता प्राप्त हो तथा सहानुभूति हो।

लोक विचार स्थापित करने के लिये,स्कूल के लिये आर्थिक सहायता संगठन के लिये,स्कूल में विद्यार्थियों की संख्या बढ़ाने के लिये,स्कूल के शिक्षकों तथा संगठन को गलत आलोचना से बचाना।

## शारीरिक शिक्षा में प्रचार की आवश्यकता

शारीरिक शिक्षा में पब्लिक रिलेशन- जनता से सम्बन्ध रखना अति आवश्यक है। यह एक श्रेष्ठ शिक्षा के ध्येय के प्रचार से किया जा सकता है। इस संबंध की परिभाषा यही कही जा सकती है कि जनता का संबंध उन उपायों का मेल है जिसके द्वारा कोई शैक्षिणक संस्था सार्वजनिक विचार को जागृत रखता तथा अपने उद्देश्य, नियोजन,तथा परिणाम जनता के संमुख प्रगट करता है। ग्रहण करने लायक सूचनायें वही होती हैं जिसमें ताज़गी तथा मनोरुचि संबधित हो। बालकों की दैनिक प्रगति सूचना नहीं किन्तु ऐथेलेटिक प्रतियोगिता और उसके परिणाम सूचना हो सकते हैं। शारीरिक शिक्षा के कितने ही अंग हैं जिनमें जनता को रुचि है। इस रुचि को सही रूप देने तथा जागृत रखने के लिये शिक्षा तथा प्रचार के द्वारा आवश्यक ही नहीं,अनिवार्य है। शारीरिक शिक्षण कार्य कर्त्ताओं के लिये यह आवश्यक है कि वह अपने खेल के मैदान को ऐसा रूप दें और ऐसी स्थिति उपस्थित करें जिस से वह जनता के संमुख रखा जा सके। अधिकतर लोगों का यह विचार है कि शारीरिक शिक्षा केवल कसरत या P.T. मात्र है। यदि आज की जनता को पता चले कि आधुनिक शारीरिक शिक्षा का वास्तविक अर्थ क्या है तथा इसकी अनिवार्य

आवश्यकता स्कूल में बालकों के विकास के लिये है तो जनता अपनी भावनाओं को बदल कर शारीरिक शिक्षा के पक्ष में आ जायेगी।

आधुनिक शारीरिक शिक्षा अत्याधिक प्रगति कर चुकी है तथा कर रही है। १५ साल पहले जो शारीरिक शिक्षा थी वह अब नहीं है। यह वैज्ञानिक आधार पर प्रगति करती जा रही है। अभाग्यवश वास्तविक शारीरिक शिक्षा इने गिने स्कूलों में है और उसे भी नागरिक देख नहीं पाते। अतएव यह आवश्यक है कि सही शारीरिक शिक्षा का प्रचार हो। प्रचार की कमी से जनता की सहानुभूति प्राप्त नहीं हुयी इसलिये सहयोग तथा आर्थिक सहायता का अभाव रहा। शारीरिक शिक्षा के विषय जनता को क्या बताना है।

जनता को शिक्षित करना है कि वे शारीरिक शिक्षा के दर्शन को समझ सकें। शारीरिक शिक्षा साधारण शिक्षा का मुख्य अंग तथा पूरक है। इस के अनुपस्थिति में बालक का सही विकास नहीं हो सकता। पूर्ण विकास शारीरिक शिक्षा के सहयोग से ही होगा। यह आवश्यक है कि सर्वसाधारण शारीरिक शिक्षा के महत्व को समझें और साथ ही साथ उस के प्रति अपने दायित्व को भी समझें।

विद्यालय, निम्नलिखित जनता के सम्मुख रख सकते हैं:—

विद्यालयों की उन्नति तथा योग्यता जो अर्जित की है।

पढ़ाने के तरीके या साधन।

विद्यार्थियों का स्वास्थ और शारीरिक योग्यता।

शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम।

शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता।

शारीरिक शिक्षा का उदेश्य तथा ध्येय।

इन्ट्राम्युरल्स ।

शारीरिक शिक्षा की सुविधायें ।

शारीरिक शिक्षा की आर्थिक स्थिति ।

समाज की उन्नति शारीरिक शिक्षा के द्वारा ।

वहुमुल्य समाजिक गुण जो शारीरिक शिक्षा के द्वारा सरलता से सिखाये जा सकते हैं ।

शारीरिक शिक्षा,राष्ट्रीय संगठन का सबसे श्रेष्ठ उपाय है ।

**प्रचार के माध्यमः---**

माता पिता तथा सर्वसाधारण के लिये शारीरिक शिक्षण।

प्रदर्शनी विशेष अवसर पर ।

दैनिक पत्रिका,मासिक,पोस्टर्स,इश्तेहार ।

जनता के सन्मुख भाषण।

कानफ्रेन्स ।

फिल्मों के द्वारा प्रचार ।

शारीरिक शिक्षा पत्रिकायें ।

रेडिओ।

शारीरिक शिक्षा के चित्र ।

उत्ताम इन्ट्राम्युरल कार्यक्रम ।

वार्षिक स्कूल रिपोर्ट ।

राष्ट्रीय,प्रदेशीय तथा स्थानीय शारीरिक संगठनों के साथ सहयोग तथा कार्य ।

स्कूल का सूचना विभाग ।

सर्वसाधारण के लिये शारीरिक शिक्षा सुविधायें उपलब्ध करना ।

भिन्न प्रकार की क्लिनिक करना ।

प्रचार के समय इन बातों का ध्यान रखना चाहिये जैसे,कौन, कब,क्या,कहाँ,क्यों तथा कैसे । याद रहे पत्रिकायें समाचार चाहती हैं । समाचार संक्षिप्त हो । मानव रुचि पर ज्यादा जोर,जो चीज़ आम नहीं उनकी सूचना समय पर हो । पत्रकारों से स्वयं मिलें । चित्र भेजे जायें । आँकड़े हों । एक से ज्यादा पत्रिकायें हों,तो,सभी को समाचार भेजना चाहिये ।

**सूचना कार्यक्रम का संगठनः--**

शारीरिक शिक्षा सूचना कालेज के कार्यक्रम से संबधित हो । एक शिक्षक इस कार्य का देख भाल करें तथा जो विद्यार्थी रुचि रखते हों उनसे सहायता लें । एक सूचना सेवा हो जिसके द्वारा सदैव शारीरिक शिक्षा के उद्देश्य, विद्यार्थी शिक्षक जनता के सम्मुख प्रकाशित किये जाये ।

[३०]

# शारीरिक शिक्षा में नेतृत्व

समाजिक दृष्टि से नेतृत्व की आवश्यक है तथा यह आवश्यकता बहुतायत से है क्योंकि व्यवहार का नाप एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक लोगों के द्वारा ही पहुचाया जाता है। अतएव इस बात की आवश्यकता है कि समाज के ऊँचे आर्दश नेताओं के द्वारा आने वाली पीढ़ी को दिये जायें। प्रौढ़ व्यक्तियों की नेतृत्व का नाप बालक है क्योंकि बालक वही करेगे जो वे अपने बड़ों को करते हुये देखते है।वर्त्तमान बालक भूत के नेतृत्व का प्रतिबिम्ब है।

शारीरिक शिक्षा की उन्नति के कारण इस में नेताओं की संख्या कुछ बढ़ी है।

नेतृत्व की परिभाषा भिन्न भिन्न व्यत्तियों के द्वारा भिन्न भिन्न रूप में दिये गये हैं। कितनों का कहना है कि यह एक प्रभाव है। कितने कहते हैं,ये परिवर्त्तन के कार्यकर्त्ता हैं। कितनों का मत हैं,कि वे नेता हैं जो दूसरों को निर्देश देते तथा नेतृत्व करते हैं। यदि कोई नेता अपने कार्यो तथा प्रभाव के कारण दूसरों में परिवर्त्तन लाये तो वह सफल नेता समझा जाता हैं।

शिक्षा कार्य भी नेतृत्व के परिभाषा के अन्तर्गत आता हैं। शिक्षक नेतृत्व करता हैं जिससे विद्यार्थी अपनी आवश्यकताओं का प्रर्दशन करें,कक्षा के कार्य में उचित भाग लें,तथा कक्षा में एक सदस्य के रूप में व्यवहार करें। वह उनके लिये शिक्षा सम्बंधि सामग्रीं तथा साधन लाता है। शिक्षा का ध्येय यही हैं कि प्रत्येक बालक जो शिक्षा ग्रहण करता और शिक्षक के सम्पर्क में आता है

उस के परिणाम स्वरूप ऐसा हो जाये कि जो भी उस के सम्पर्क में आये, नह उस से प्रभावित हो तथा उसके गुण दूसरे अपनाने की चेष्टा करें। सही नेतृत्व का अर्थ यही है तथा शिक्षक के नेतृत्व का अर्थ भी यही है।

**नेतृत्व के गुणः-**

साहस तथा उत्साह
निष्पक्ष
मित्रभाव
इमानदार
न्यायी
दयालु
विस्तृत विचार
निष्कपट

विद्यार्थी जो कुछ शिक्षक से सीखते हैं वे भूल जा सकते हैं किन्तु शिक्षक का प्रभाव बहुत दिनों तक रहता है। हो सकता है आजीवन रहे। किसी स्कूल की उन्नति तथा अवन्नति,शिक्षकों के ही हाथ में है। एक बुद्धिमान शिक्षक जो पूर्ण प्रशिक्षण तथा तैयारी में हो,जिस का व्यक्तित्व आनन्ददायक हो, जिसके जीवन का दर्शन दृढ़ आधार पर हों, उसके पास बच्चों को उत्तम नागरिक तथा समाज का आदर्श सदस्य बनाने का अधिक अवसर तथा साधन है।

इस स्थिति में शारीरिक शिक्षण का शिक्षक स्कूल में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। प्रत्येक अध्यापक यहाँ तक कि एक उत्तम अध्यापक भी सफल शारीरिक शिक्षण का शिक्षक

नहीं बन सकता । शिक्षक का शरीर सुडौल तथा विकसित होना चाहिये तथा अधिकतर खेलों और स्पोर्ट्स में तथा शारीरिक शिक्षण कार्यों में कौशल पूर्ण होना चाहिये । उसे केवल करने ही वाला नहीं किन्तु ऐसा होना चाहिये कि वह अपना ज्ञान दूसरों को सिखा सके । उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली तथा आनन्द दायक होना चाहिये । उसे एक चरित्रवान तथा ज्ञानी पुरुष होना चाहिये तथा मानव सहानुभूति से पूर्ण होना चाहिये । उसके व्यवसाय तथा कार्य में एकता होना चाहिये ।

एक सही शारीरिक शिक्षण का अध्यापक केवल अपने कार्य में दक्षता प्राप्त करने से ही नहीं होता । उस में निम्नलिखित गुण आवश्यक हैं जो कि अध्यापक के व्यक्तित्व गुणों के आधार पर होंगे ।

**व्यवसायिक योग्यता—**

जिस सतह पर कार्य करना है उसी के योग्य शिक्षा में योग्यता होना चाहिये जैसे सर्टिफिकेट,डिप्लोमा,बी० पी० एड०,एम०,पी०, एड । पी०,एच०,डी० इत्यादि । इस में व्यवसाय की खास प्रशिक्षण की आवश्यकता है जो एक दो या तीन वर्ष में जैसी आवश्कता हो किया जा सकता है । बिना प्रशिक्षण के किसी को इस व्यवसाय में रहने का कोई अधिकार नहीं ।

**साधारण शिक्षा की योग्यता—**

जिस स्तर पर व्यवसायिक प्रशिक्षण होगी उसी स्तर का साधारण शिक्षा योग्यता आवश्यक है । क्योंकि सर्टिफिकेट के लिए

अन्डर ग्राजुयेट तथा डिपलोमा इत्यादि के लिये पोस्ट ग्राजुयेट होना आवश्यक है, इस के बिना प्रशिक्षण विद्यालयों में प्रवेश प्राप्त न हो सकेगा।

**व्यक्तिक गुण :-**

ऊपर दिये जा चुके हैं।

भारतवर्ष में देखने में यह आता है कि उच्च माध्यमिक स्कूलों के लिये ही शारीरिक शिक्षा के अध्यापक अधिकता से प्रशिक्षित किये जा रहे हैं। बच्चों के तथा प्रारम्भिक पाठशालाओं के आवश्यकताओं के लिये कोई उचित ध्यान नहीं दिया जा रहा है। यह सभी मानते हैं कि बच्चों के शारीरिक विकास की आत्याधिक आवश्यकता है किन्तु इस हेतु कुछ किया नहीं जा रहा हैं। बच्चों का शारीरिक विकास उस के नैसर्गिक प्रगति के लिये आवश्यक है।

इस का दुखद परिणाम यह होता है कि ये वच्चे जब उच्च माध्यमिक स्तर पर पंहुचते हैं तो संगठित शारीरिक शिक्षण का पूर्ण लाभ नहीं उठा सकते हैं।

कालेजों में भी खेल के प्रोग्राम के सिवाय विशेष कुछ नहीं है। एसी अवस्था में भविष्य के नेताओं में बहुत कुछ त्रुटियां रह जायेंगी।

साधारणतः प्रशिक्षण कालेजों में साधारण शिक्षक तैयार किये जाते है जो प्राय सव विपयों से परिचित होते हैं किन्तु विशेष निपुणता विषयों में नही होतीं। समय आ गया हैं कि विशेषताओं की ओर ध्यान आकर्षित हो।

स्कूलों में शारीरिक शिक्षा के अध्यापक को केवल शारीरिक शिक्षा के लिये ही रखने की प्रथा है। विचार करने से पता चलता है कि शारीरिक शिक्षा का अध्यापक यदि विषय शिक्षक भी हो तो अधिक प्रभाव डाल सकता है और इस कार्य के लिये कुछ अधिक शिक्षक भी मिल सकेगें। इस में मत भेद है किन्तु यह विचार योग्य है।

वर्त्तमान शिक्षा दर्शन इस बात को मानता है कि हम करने के द्वारा ही सीखते हैं। सफल जीवन की नीव स्कूलों में ही डालना चाहिये। इस लिए बच्चों को उन गुणों में जो जीवन को सफल वनाने के लिये आवश्यक हैं शिक्षित करना चाहिए। उनमें से एक लीडरशिप या नेतृत्व है जिसके आधार पर सहयोग, भक्ति, समाजिकता इत्यादि गुण विकसित किये जा सकते हैं। शारीरिक शिक्षा से उत्तम माध्यम इस कार्य के लिये मिलना कठिन है।

यह मनोवैज्ञानिक सत्यता है कि वच्चे ग्रुप या समूह में रहना चाहते हैं और अपने लीडर या नेता की बात सुनते हैं। इस गुण का उपयोग करना चाहिये।

यह सत्य है कि प्रत्येक वालक लीडर नहीं बन सकता तथा उनसे बहुत अधिक आशा भी नहीं की जा सकती किन्तु अधिकतर बच्चों को लीडरशिप ट्रेनिंग का अवसर दिया जा सकता है यह भी स्मरण रखना चाहिये कि इसके लिये समय की आवश्यकता है अतएव जिस पद पर भी बालक को रखा जाये उस पर उचित समय तक रहे। जो बच्चे नेता बनने योग्य हैं वे उसके चिन्ह शीघ्र दिखलायेंगे।

इस बात पर ध्यान देना चाहिये कि आवश्कता से अधिक लीडर के उपर ध्यान न दिया जाये। सम्भव है कि छोटी-छोटी आज्ञायें लीडर दे,तो भी ट्रेनिंग ऐसी होनी चाहिए कि प्रत्येक बालक अपना दायित्व समझ सके।

**नेतृत्व के प्रशिक्षणके साधारण निर्देशः--**

१, बच्चों को दायित्व दी जाये जिससे वे अपने लीडर चुन लें। उनके टीम का नाम तथा रंग पृथक हो।

२, लीडर को साफ और ज़ोर से अच्छी तरह बोलने की ट्रेनिंग दी जाये। छोटी साधारण आज्ञा देने की अभ्यास दी जाये जैसे दौड़ो, जाओ, थम, बदलो,कूदो। यदि कुछ मिनटों तक पूरी कक्षा को आज्ञा बोलने की अभ्यास दी जाये तो यह अत्यन्त लाभदायक होगा। लीडर को अपनी रीति से आज्ञा देने का अवकाश देना चाहिए तथा अपने शब्द व्यवहार में लाने का अवसर देना चाहिए।

३, प्रत्येक टीम में एक उपनायक चुन लेना चाहिए। कभी कभी ग्रुप को दो हिस्सों में विभाजित करलें जिसमें एक हिस्सा उपनायक के साथ हो।

४, ध्यान रहे कि नायक तथा उपनायक दोनो टीम के सदस्य हैं इसलिये उनको अपनी बारी भी टीम के साथ लेना है।

नायक को केवल नाम मात्र के लिये पद नहीं देना चाहिए किन्तु उसे उत्तरदायित्व देना चाहिए। पहिले हलकी उसके बाद कठिन। लाइन ठीक करना तथा अभ्यास की अवस्था लेना इत्यादि। नायेक किसी भी बालक की अवस्था अपने आप न ठीक करे नायक

के ठीक काम करने पर उसकी प्रशंसा करनी चाहिए।

आपरेट्स लाने तथा ले जाने की ज़िम्मेवरी नायक की होनी चाहिए। इस का अर्थ यह नहीं कि वह अपने आप करे। जहाँ सहायता की आवश्यकता हो, वहाँ नायक आरम्भ करे किन्तु प्रत्येक बालक को सहायता देने का अवसर हो।

नायक का कर्त्तव्य अध्यापक के आदेशानुसार कार्य करना है।

**नेतृत्व करने का अवसरः—**

ग्रुप का नायक बनाना या टीम का कप्तान।
उप नायक।
कक्षा का कप्तान।
खेल का ओफिशियल।
कमेटी का सदस्य।
गर्म करने की कसरत का लीडर।

**नायक चुनने की विधिः—**

(१) अध्यापक के द्वारा निम्नलिखित आधार पर चुनाव।
(क) नैसर्गिक योग्यता।
(ख) नायक बनने के गुण की झलक।
(ग) रुचि।
(२) कक्षा के द्वारा चुनाव।
(३) कुछ टेस्ट (Test) पास करने पर नायक का चुनाव।
(४) अपनी इच्छा प्रगट करने पर।
(५) अपनी वारी से नायक बनना।

**नायक की कसौटीः—**

(१) क्या वह प्रजातान्त्रिक है ? क्या वह स्वतंत्रता से मिलता है और सब की सहायता करता है। क्या वह चतुर तथा दयालु है।

(२) क्या उत्तरदायित्व लेता है। क्या उसके ग्रुप का विश्वास उस पर है?

(३) क्या उसे अपने ग्रुप के प्रति चिन्तन रहती है। क्या वह ग्रुप के भविष्य के लिये चिंतित तथा प्रयन्तशील है।

(४) क्या वह नये कार्य आरम्भ करने तथा नयी चीजों के करने में रुचि रखता है?

(५) क्या वह इमानदार है और अपनी गलती मानता है? क्या वह अपक्षपाती है ?

(६) क्या उसे अपने साथियों के सफलता पर गर्व होता है?

(७) क्या वह आदर करने वाला, भक्तिपूर्ण तथा अधिकारियों व नियमों का आज्ञाकारी और पालन करने वाला है?

(८) क्या उसे सर्वदा आदेश देने की आवश्यकता होती हैं या वह अपने आप कार्य सम्भाल लेता है?

(९) क्या वह समय का पावन्द है? यदि है तो वह सफल नायक है ?

**नायक के पीछे चलना:----**

नेतृत्व उसी समय सम्भव है जब कोई नायक के पीछे चलने वाला हो। वास्तविक प्रजातन्त्र नेतृत्व के अपनाये जाने पर निर्भर है। बालकों को यह समझने में कठिनाई नहीं होती क्योंकि यह उनके लिये स्वभाविक ज्ञान पड़ता है। जब नायक का चुनाव अपने आप

उसके गुणों के श्रेष्ठता के कारण या सहपाठियों के वोट के कारण होता है तो उस के पीछे चलना स्वभाविक है ।

नेतृत्वता तथा पीछे चलने के योग से अनेको गुण विकसित किये जा सकते हैं ।

जैसे भक्ति,सामूहिक भावना,इत्यादि ।

शिक्षा कार्यक्रम में नेतृत्व,पीछे चलना तथा नागरिकता आपस में पृथक नहीं किये जा सकते हैं ।

**पीछे चलने की विकास की कसौटी:---**

(१) क्या बालक नायकता को मानता तथा सम्मान करता है और नायक के विचारों को महत्व देता है ?

(२) क्या वह नायक के द्वारा दिये हुये कार्य को प्रसन्नता से करते हुये समूह से सहयोग करता है ?

(३) क्या वह दूसरों के अधिकारों को मान्यता देता या आप-स्वार्थी है ।

(४) क्या वह अपने आप को कर्त्तव्य के कारण बलिदान करता है ?

---

# (३१)

# खेल स्पोर्ट्स तथा दूसरे कार्यों का कोचिंग और ओफिशियेटिंग

## कोचिंग के सिद्धान्त Principle of Coaching—

### कोच के व्यक्तिगत गुण Personal qualities:—

(१) चरित्र Character:—

एक शिक्षक या कोच को सर्वश्रेष्ट नैतिक तथा आत्मिक चरित्र का व्यक्ति होना चाहिये। उसे ईमानदार तथा कठिन परिश्रम करने वाला व्यक्ति होना चाहिये। उसे अपने कर्त्तव्य तथा समय से प्रेम होना चाहिये। उसे रसिक प्रवृत्ति तथा संवेगात्मक व्यक्ति नहीं होना चाहिए। चरित्र ही एक ऐसी वस्तु है जो दूसरों को प्रभावित कर सकती है।

(२) नेतृत्व Leadership:—

उसमें नेतृत्व के प्रत्येक गुण होना चाहिए। उसे अपने शिष्यों के बीच तथा जो उसके पीछे चलते हैं उनके लिए नायक होना चाहिए। उसे इस प्रकार नेतृत्व करना चाहिए जिससे दूसरे उसके द्वारा प्रभावित हों तथा ऐच्छिक रीति से वे उसको अपना नायक चुन लें।

(३) उत्साह Enthusiasm :—

उसे एक उत्साही पुरुष होना चाहिए। उसे अपने शिष्यों तथा

दूसरे जो उसके पीछे चलते हैं उत्साह तथा शक्ति देना चाहिये। अपने काम के लिए उनके हृदय में लगन तथा रुचि उत्पन्न करना चाहिए।

(४) विशेष विद्या सम्बन्धी ज्ञान Technical knowledge:—

किसी शिक्षक या कोच में नये से नये वर्तमान विशेष विद्या सम्बन्धी ज्ञान अपने विषय में अवश्य होना चाहिए। नियम तथा व्यवस्था उसके उंगलियों पर होना चाहिए। खेल तथा स्पोर्ट्स की बारीक से बारीक विशेष विद्या से पूर्ण परिचित होना चाहिए।

(५) सिखाने की योग्यता Teaching alility :—

यह सर्व प्रथम तथा अत्याधिक महत्वपूर्ण गुण किसी शिक्षक का है। शिक्षक तथा कोच को सिखाने की योग्यता होनी चाहिए। उसे अच्छी तरह से दूसरों के सामने विषय विस्तार तथा अपने भावों को प्रगट करने की योग्यता होना चाहिए जिससे प्रथम बार ही सबके समझ में आ जाए।

(६) निरीक्षण तथा विश्लेषण की योग्यता Ability to observe and analyse:—

शिक्षक तथा कोच में ऐसे गुण होना चाहिए जिसके द्वारा वह अपने शिष्यों की कठिनाइयां तथा निर्वलताओं को भली भांति देख सके तथा अपने शिक्षा के अनुसार उनका सही विश्लेषण करे। कोच करने में यह आवश्यक है कि वह प्रत्येक त्रुटियों और गलतियों का निरीक्षण करे तथा उसका निवारण करे।

(७) सर्वश्रेष्ट मानसिक तथा शारीरिक अवस्था लाने की योग्यता Ability to bring a top condition mentally and physically:—

एक कोच या शिक्षक में यह योग्यता होना चाहिए कि वह अपने शिष्यों को मानसिक तथा शारीरिक रीति से सर्वश्रेष्ठ अवस्था में ले आए। यह उनकी अपनी योग्यता पर निर्धारित होगा। यदि कोई विद्यार्थी मानसिक रीति से ठीक नहीं है तो वह अच्छा खिलाड़ी या स्पोर्ट्समैन नहीं हो सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में विजय प्रायः मानसिक तैयारी के कारण होती है। प्रत्येक प्रतियोगिता में भाग लेने वाले के लिए मानसिक फुर्तीलेपन की परम आवश्यकता है।

(२) प्रदर्शन Demonstration :—

प्रदर्शन का अर्थ एक सही चित्र चित्रण करना है। यह एक नमूना है जो फोटो के सफाई के अनुसार होना चाहिए।

(१) प्रदर्शन का विशेष उद्देश्य निर्धारित करना आवश्यक है। Determin the specifice purpose of the demonstration.

(१) एक नयी क्रिया के चित्र या उदाहरण या नमूना के लिए।

(२) किसी कौशल का नमूना प्रदर्शन करने जिसके कारण कठिनाई हो रही हो।

(३) किसी कौशल की उपयोगिता दूसरे स्थिति में दिखाने के लिए।

(४) प्रेरणा देने के लिए।

(२) सही नमूना प्रस्तुत करना Set the right model.

(३) जो समूह में चतुर हैं उन्हे चेष्टा करने का अवसर प्रदान करना चाहिए। अनुमति उन्ही को मिलनी चाहिए जिन्हे विषय का कुछ ज्ञान हो तथा सम्भव हो कि वे उस कार्य को प्रदर्शित रूप

में कर सकें ।

(४) जहां शिक्षक से कौशल प्रदर्शन में कुछ अच्छे शिष्य हों उन्हे उपयोग करना चाहिए ।

(५) प्रदर्शन विद्यार्थियों के योग्यता के स्तर पर होना चाहिए।

(६) प्रदर्शन के पश्चात ही अभ्यास का आरम्भ होना चाहिए । क्योंकि ऐसा न करने से भूल जाने तथा कुछ छूट जाने की संभावना हो सकती है ।

(७) आवश्यकता से अधिक समय प्रदर्शन के लिए नहीं लेना चाहिए । आवश्यकतानुसार प्रदर्शन करने के पश्चात अभ्यास करना चाहिए । प्रदर्शन के लिए उतना समय आवश्यक है जिसमें छोटी से छोटी चीज भी भलीभांति दिखा दी जाए तथा समझा दी जाए । उसके बाद अभ्यास में लग जाना चाहिए ।

(८) बड़ी गलतियों को दिखाना चाहिए उसके पश्चात उसकी सही अवस्था बताना चाहिए ।

(९) साधारण खेल की गति से प्रदर्शन दिखलाना चाहिए जब कि कौशल बहुत अधिक गतिशील नहीं है या देखने या समझने में बहुत जटिल नहीं है । किन्तु त्रुटियों तथा गलतियों के निवारण या सुधार में बहुत मन्द गति प्रयोग करनी चाहिए ।

(१०) शिष्यों में यह बताना कि किसी विशेष चीज को करने की क्या आवश्यकता है बहुत महत्वपूर्ण है ।

(११) प्रदर्शन करने में छोटे शब्द तथा संकेत का प्रयोग करना चाहिए न कि बड़े बड़े व्याख्यानों का ।

(१२) विद्यार्थियों को प्रदर्शन के लिए तैयार करना चाहिए ।

उन्हे बताना चाहिऐ कि क्या प्रदर्शन किया जायेगा तथा उसकी उपयोगिता क्या होगी।

(१३) इस बात का निश्चय होना आवश्यक है कि सब भली भांति देख सकते हैं।

(१४) कभी कभी जब कक्षा प्रदर्शन देख रहा हो तो उनसे अनुकरण करने के लिए कहना चाहिए।

(१५) विश्लेषण का उत्तम पूर्णत्व प्रयोग में लाना चाहिए। जितने विश्लेषण के टुकड़ों का अभ्यास हो वह पूर्ण से सम्बन्धित होना चाहिए।

(१६) विषय सम्बन्धी प्रश्नों के लिऐ अनुमति होना चाहिए।

(१७) प्रर्दशन के लिए अति उत्तम नहीं किन्तु साधारण साधन होने चाहिये। प्रदर्शन साधारण साधन के द्वारा होना चाहिए।

(१८) प्रदर्शन का मूल्यांकन करना चाहिये।

## (३) विश्लेषण Analysis

विश्लेषण कोचिंग का आधार है।

(१) कोच को प्रत्येक स्पोर्टस का विश्लेषण कर लेना है। जिससे प्रत्येक कौशल के आधारित सिद्धान्त मालूम हो जायें चाहे वह व्यक्तिगत हो या टीम के।

(२) अनुभव से साधारण गलतियों, समस्याओं तथा हल का अध्ययन उसे हो जाता है।

(३) जो गलत गति हो उसको संकेतिक करना आवश्यक है।

(४) उसे इस बात को निर्णय करना है कि वह क्यों गलत है।

(५) सही या सुधार करने के पहिले कोच को निश्चय हो जाना चाहिये ।

(६) उसे आत्मविश्लेषण के लिये उत्साहित करना चाहिये किन्तु कार्य करने के ठीक समय पर नहीं ।

(७) कोच की योग्यता यह होनी चाहिये कि वह कार्य कर्त्ताओं में प्रकृति का विश्लेषण कर सके जिससे सिखाने की सही प्रणाली वह व्यवहार में ला सके ।

(८) कौशल में विश्लेषण के अलावा उसे उस क्रम का भी विश्लेषण करना है जिस क्रम के अनुसार कौशल सिखाया जायेगा अर्थात किस कौशल पर अधिक ध्यान देना है या किस कौशल को कितना समय दिया जायेगा ।

(९) व्यक्तिगत कठिनाइयों का विश्लेषण तथा आधारभूत तत्वों को व्यक्ति के अनुकूल करना उसकी योग्यता का एक विशेष गुण है तथा यह अत्यन्त आवश्यक है ।

## (४) खिलाड़ियों का चुनाव Selection of players

(१) प्रत्येक को चेष्टा करने के लिये उत्साहित करना चाहिये ।

(२) अन्तिम चुनाव को जितना स्थगित कर सकें करना चाहिए ।

(३) जितने अधिक लोग हो सकें टीम में रखे जायें ।

(४) खेल के गुणों को देखते हुए तथा कौशल के लिये भी चुनाव होना चाहिये ।

(५) सम्पूर्ण योग्यता के आधार पर यह चुनाव होना चाहिये तथा स्थान का ध्यान रखते हुए भी चुनाव होना चाहिए ।

(६) अपने खेल की प्रणाली का ध्यान तथा उसकी आवश्यकताओं का ध्यान रखना चाहिए किन्तु यदि सामग्री परिवर्तन की आवश्यकता दिखलाती है तो अपनी प्रणाली में परिवर्तन करना आवश्यक है।

(७) किसी प्रकार का पक्षपात या पक्षपात करने के लिये प्रभाव का असर कभी नहीं होने देना चाहिए।

(८) अपना चुनाव का अन्त नहीं कर देना चाहिये। विद्यार्थियों को अवसर देना चाहिये कि वे आगे बढ़ सकें।

(५) खिलाड़ियों को स्थान देना Placement of Players.

(१) टीम की भलाई के लिये उनको स्थान देना।

(२) व्यक्तिगत इच्छा जहां तक हो सके ध्यान में रखना।

(३) खेल में खेलों के अनुसार स्थान देना।

(४) इस अवस्था के अनुभव तथा प्रर्दशन।

(५) सब स्थान खुला रखें, कप्तान का भी।

(६) खिलाड़ियों की देख भाल तथा पर्याप्त तैयारी की दशा Care and conditioning :

(१) केवल खेल खेलने से पर्याप्त तैयारी की दशा नहीं हो सकती।

(२) प्रत्येक अभ्यास का समय तैयारी की दशा के लिए भी होना चाहिये।

(३) मौसम के आरम्भ का अभ्यास विशेषत: तैयारी की दशा के लिये प्रयोग करना चाहिए।

अभ्यास शीघ्र आरम्भ करना चाहिए और मौसम के आरम्भ

ही से। कौशल के सीखने के अलावा तैयारी की दशा के लिये और दूसरी चीजों में भाग लेना आवश्यक है जैसे वजन का प्रशिक्षण, दौड़ना, कूदना, जिमनास्टिक, सांस, शक्ति तथा मांस पेशियों के लिए जिससे व्यक्ति आइटम के लिये ठीक हो जायें। जब मौसम न भी हो तब भी ये अधिक काम करना आवश्यक है इसे रोकना नहीं चाहिए।

(४) स्पोर्ट का अध्ययन करना तथा उन गुणों पर अधिक ध्यान देना जिनकी आवश्यकता है।

(५) तैयारी की दशा को अधिक महत्व देना चाहिये। यहां तक कि इसका महत्व खेल तथा स्पोर्टस के समान होना चाहिये।

(६) शक्ति के विशेष मूल्य का ध्यान रखना चाहिये तथा वजन प्रशिक्षण को ध्यान में रखना चाहिये। शक्ति प्रत्येक कार्य के लिये आवश्यक है। अब यह प्रमाणित है कि बगैर वजन प्रशिक्षण के कोई व्यक्ति अपनी ऊंची श्रेणी नहीं प्राप्त कर सकता है।

(७) आवश्यकता से अधिक काम न कराया जाये।

(८) तैयारी की दशा का प्रशिक्षण क्रमशः उन्नति से होना चाहिये।

(९) अनेकों प्रकार के कार्य का प्रयोग करना चाहिए।

(१०) प्रशिक्षण में कुछ दिन ऐसे होने चाहिये जिस दिन हल्का कार्य हो और विश्राम मिले।

(११) पूरे साल तैयारी की दशा का प्रशिक्षण होना चाहिये।

(१२) प्रतियोगिता के पहले दिन तथा बाद में हल्का काम तथा विश्राम देना चाहिये।

(१३) कठिन परिश्रम के पहले सर्वदा शरीर गर्म कर लेना चाहिये।

(७) कोचिंग में मनोवैज्ञानिक प्रवेश Psychological approach in coaching:

कोचिंग में मनोविज्ञान का बहुत महत्व है। विजय प्राप्त करने के लिये मानसिक भावना की महत्वपूर्ण आवश्यकता है। कितने व्यक्ति ऐसे हैं जो अभ्यास के समय बहुत ही उत्तम दिखायी देते किन्तु वे कभी विजयी नहीं होते।

(१) सिखाने में सबसे उत्ताम प्रणाली का प्रयोग हो।

(२) सिखाने में अच्छे साधनों का प्रयोग हो।

(३) बिलकुल साफ अच्छे आर्कषक विशेप वस्त्र प्रयोग में लाये जायें।

(४) ऐसे रंगो को रखना चाहिये जो आसानी से देखे जा सकें।

(५) जहां उत्साह की आवश्यकता हो वहां उत्साहित करना चाहिए।

(६) प्रतियोगिता में विरोधी टीम के विषय, व्यक्तिगत तथा टीम के रूप में तर्क होना चाहिए।

(७) एक मुख्य खेल खिलाड़ियों के सन्मुख हो।

(८) गलतियों के ऊपर तर्क होना चाहिये और खेल के बीच के अवकाश में खिलाड़ियों को रचनात्मक प्रस्ताव देना चाहिए।

(९) जो लड़का घबड़ाने वाला हो उसे धीरज देकर शान्त रखना चाहिए।

(१०) खिलाड़ियों के साथ उनके हार जीन में एक होना चाहिए।

(११) यदि कोई संकट या दुर्घटना हो तो उसमें व्यक्तिगत रुचि दिखाना चाहिए।

(१२) खेल के समय हिम्मत तथा विश्वास दिलाना चाहिए।

(१३) विजय की ओर ध्यान हो ना कि रेफ्री की गलतियों की ओर।

## (२) ओफिशियेटिंग के सिद्धान्त Princiole of officiating.

(१) उद्देश्य The Purpose :—

(१) खेल ऐसा हो जिसमें खेलने वाले आज्ञा तथा नियम का पालन ऐसा करें जिससे यह मालूम हो कि कोई रेफ्री है ही नहीं।

(२) आरम्भ ही से खेल पर पूर्ण नियन्त्रण हो।

(३) खिलाड़ियों का 'रार्पोट' (Rapport) होना। (रार्पोट एक फ्रान्सीसी शब्द है जिसका अर्थ है एक प्रकार का सम्मान, सहयोग, आपसी समझ)

(४) दर्शकों के साथ अच्छा व्यवहार।

(२) गुण Qualifications :

(१) जो दंड दिये जायें वे तत्तकालिक तथा सही हों।

(२) विश्वास तथा निश्चयात्मकता-यह अपने व्यवहार, ध्वनि, संकेत तथा विसील के द्वारा दिखलाना।

(३) शान्तभाव—मित्र भाव तथा मनुष्यत्व लिये हुए होना चाहिए। जल्दीवाजी नहीं किन्तु निश्चय होना चाहिए।

(४) बरावर एक सा होना चाहिए—जो था वह होगा और वही है का आर्दश। दंड देने में समय पर तथा सही होना चाहिये। सम्पूर्ण खेल में दोनों के लिए यही मापदण्ड होना चाहिये।

(५) निर्णय—यह अनुभव से आता है ।

(६) सहयोग—दूसरे लोगों, कार्य कर्त्ताओं, खेल पंच तथा रेफ्रियों के साथ सहयोग हो ।

(७) खेल के नियमों तथा व्यवस्था का पूर्ण ज्ञान हो ।

(८) कर्त्तव्य का ज्ञान तथा कार्य के क्रियाओं का पूर्ण ज्ञान हो । जैसे कप्तानों को बुलाना, टास के लिए मुद्रा, स्कोरशिट देखना, टाइम आउट देखना, जब दूसरे सहायक खेल पंच हों, टाइम देखना इत्यादि ।

(९) सही दर्शन हो तथा अच्छे शारीरिक स्वास्थ्य की अवस्था हो ।

(३) साधारण सिद्धान्त General Principle :

(१) नियम उनको दण्ड देने के लिये है जो अनियमित रूप से किसी दूसरे पर कोई कार्य करके लाभ उठाये । इनका उल्था शाब्दिक तथा मशीन की तरह नहीं होना चाहिये ।

(२) अच्छे खेल का उत्तरदायित्व कोच के ऊपर है ।

(३) खेल पंचों को खेल के समीप होना चाहिये ।

(४) खेल पंचों को पूर्ण दृश्य के आधार पर देखना तथा कार्य करना न कि केवल परिणाम पर ।

(५) नियम का निर्णय कार्य के पूर्ण समाप्ति पर देना चाहिये न कि पहिले से सोचने पर ।

(६) जो वह खेलने वालों में देखे उस पर निर्णय करना चाहिए ।

(७) जहां गलती हो वहां मान लेना चाहिए और जहां

सम्भव हो वहाँ सुधार लेना चाहिए।

(४) दूसरे कोच, खिलाड़ियों तथा दर्शकों के साथ सम्बन्ध Relation with coaches, players and spectatores.

(१) मित्र-भाव हो किन्तु अलग रहना चाहिए।

(२) किसी प्रकार के पक्षपात के चिन्ह न दिखलायें।

(३) अपने आप को नियन्त्रण में रखना तथा शान्त रहना।

(४) जो कुछ भी आलोचना हो उस पर ध्यान न देना।

(५) अपने निर्णय के नियम को कभी आड़ न देना। यदि किसी प्रकार की गलती हो तो स्वीकार कर लेना चाहिये। गलत निर्णय को कभी आड़ नहीं देना चाहिए।

(६) नियम के, निर्णय नियम के लिये, नियमावली का प्रयोग करना चाहिये।

(५) साधारण कर्त्तव्य Routine duties

(१) जो व्यवस्थापक हैं उनको आने की सूचना देना तथा आ जाने पर अपनी उपस्थिति बताना।

(२) जितने साधन तथा सामग्री हों उनका निरीक्षण।

(३) दूसरे खेल पंचों से मिलना तथा कर्त्तव्यों के विषय में बातचीत।

(४) सब लाइन तथा निशान का निरीक्षण। स्कोर बुक आदि देखना।

(५) कप्तानों से मिलना तथा टॉस करना।

(६) खेल खिलाना तथा संकेतों तथा सही खेल स्थितियों का प्रयोग।

(७) सामग्री जैसे बौल आदि का लेना फिर लौटाना ।

(८) आधे समय के स्कोर का निरीक्षण करना ।

(९) पूर्ण अन्तिम स्कोर का निरीक्षण तथा हस्ताक्षर करना ।

(१०) यदि कोई रिपोर्ट की आवश्यकता हो तो उसे लिखना ।

**कोचिंग के वैज्ञानिक सिद्धान्त The scientific Principle of coaching**

(१) समतुलन–यह फिजीक्स से प्राप्त होता है (Physics)

(२) जितना बड़ा आधार होगा उतना ही वह स्थिर होगा ।

(३) आधार के किनारे जितना सेन्टर आफ ग्रावेटी (Center of gravity) के समीप हों उतना अस्थिरता होगी ।

(४) वस्तु या शरीर जितना भी भारी हो उतना ही आधार स्थिर होगा ।

(५) जितना सेन्टर आफ ग्रावेटी नीची हो उतना ही स्थिर समतुलन होगा ।

(६) किनारा समतुलन के लिए आधार के अन्दर गिरना चाहिये ।

(७) शरीर का सेन्टर आफ ग्रावेटी ( जो उसका समतुलन स्थान है) वह पुट्ठों की ऊचाई पर है । यह अवस्था सीधे खड़े होने पर होगी ।

(८) शरीर का सेन्टर आफ ग्रावेटी प्राय: ५ इन्च तक इधर उधर हो जाती है जैसे की शरीर के अंग घूमने के योग्य हों

**इनका प्रयोग :—**

(१) शीघ्रता से आरम्भ करने के लिए सेन्टर आफ ग्रावेटी

को उतना ऊँचा और आधार के किनारे लाना चाहिये जितना सम्भव हो ( जितना ऊँचा पुट्ठे होंगे उतना ही तेजी से आरम्भ होगा ) अधिक से अधिक स्थिर होना चाहिये ।

(२) शीघ्रता से रुकने के लिये सेन्टर आफ ग्रावेटी को नीचा कर देना चाहिये ओर आधार को फैला देना चाहिए ।

(३) स्थिरता के लिए आधार को फैलाना तथा नीचा होना चाहिए ।

(४) जितने कार्य है जिनमें सहारा लेना पड़ता है उनमें सेन्टर आफ ग्रेवटी को सहारा के ऊपर लाना चाहिए ।

(५) जब हवा में हों तो सेन्टर आफ ग्रेवटी ऊँची या नीची की जा सकती है, शरीर के अंग सेन्टर आफ ग्रेवटी के मार्ग में पुनः विधिवत किये जा सकते हैं ।

---

# [३२]

# हाकी

## आधारित सिद्धान्त

### हिट करना

अन्तिम क्षण में नीचे की गति के समय, हिट की तेजी और शक्ति, पैरों के कार्य समय निर्धारित करना और कलाई के जोर पर निर्भर करता है। गेंद को जोर से मारने के लिये स्टिक को पीछे ऊँचा ले जाने की आवश्यकता नहीं है, एक छोटा पीछे का सुझाव प्रायः उत्तम होता है।

पीछे बहुत कम उठाना चाहिए। यह कलाई की गति से हो सकता है। हाथ और कलाई से स्टिक पीछे उठती है और पीछे घूमती नहीं। स्टिक पीछे घुमाने से सीधा उठाना अधिक उत्तम है क्योंकि इसमें कार्य शीघ्रता से होगा।

मारने की तेजी स्टिक में वेग से मिलता है जिस समय गेंद और स्टिक में सम्पर्क हो अर्थात झुलाव में नीचे वजन को बायें पैर पर डालने के साथ। हिट मार चुकने पर बाँया पैर पंजे पर होगा।

पैरों की स्थिति गेद के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण है। यहाँ गेंद सीधा मार रहे हैं। गेंद खेलाड़ी के आगे रहेगा, दायें से बायें के समीप और खेलाड़ी गेंद के सामने उस दिशा से जिस ओर गेंद जायगा समकोंण से होगा। गेंद पैरों से अच्छी दूरी पर होना चाहिए क्यों कि मारने के समय हाथ पूरे फैले हुये होना चाहिए। आँख गेंद पर स्थित होना चाहिये गेंद बायीं ओर मारने में कोई विशेष कठिनाई

नहीं होगी।

## दाहिनी ओर मारना :-

दाहिनी ओर मारने में पैर शीघ्रता से बचाना पड़ता है जिस से मारने के समय बायाँ पैर गेंद से कुछ आगे उस दिशा की ओर हो जिधर गेंद जायगा।

इस अवस्था में वजन हिट मारने के साथ सामने आता है और समाप्त होने के समय वजन बायें पैर पर होता है।

## ढकेलना या झटका देना :-

जब शरीर में वजन कंधों तथा कलाई के संतुलन के द्वारा गेंद बिना स्टिक के पीछे झुलाये हुये आगे बढ़ाया जाता है तो वह ढकेलने या झटका देने में कारण होता है।

ढकेलने के आरम्भ में गेंद प्रायः बायें पैर के अंगूठे के सम्मुख उसके दायीं ओर रहता है। स्टिक गेंद के बिल्कुल पीछे लगाया जाता है और दोनों हाथ पृथक हो सकते हैं। गेंद के आगे जाने से पहिले हाथों को आगे ढकेलते हैं। झटका देने के समय वजन बायें पैर पर जाता है दाहिना कंधा गोल घूमता है जिससे सीना उस ओर हो जिधर गेंद जायगा और कलाई विशेष कर दाहिनी एक आगे झटका देता है।

झटका के समाप्त होने पर वजन बाँयें पैर के बिल्कुल आगे होता है जो जमीन पर बिल्कुल चपटा होता है और दाहिना पैर पंजों पर उठा रहता है। स्टिक पूरी रीति से सामने वढ़ाया जाता है और जमीन के समानान्तर होता है। स्टिक का ऊपरी हिस्सा

दाहिने कलाई के मुड़ने से बायीं ओर लाया जाता है।

सभी खिलाड़ियों को झटका देने की योग्यता होनी चाहिये। हिट की तुलना में इसके निम्नलिखित लाभ है :—

(१) पीछे स्टिक घुमाने की आवश्यकता नहीं होती है, कार्य शीघ्रता से होता है। खिलाड़ी का गेंद पर नियत्रण होता है और यहाँ से गेंद फेकने में समय नष्ट नहीं होता।

(२) आकस्मिक झटके से आक्रमण की दिशा में परिवर्तन किया जा सकता है और उसका ज्ञान बचाने वालों को नहीं मालूम होगा।

(३) दाहिनी ओर झटका देने में बहुत पैर के कार्य का संतुलन करना पड़ता जैसे दाहिनी ओर मारने में। अतएव यह शीघ्रता से होता है।

## पास

वास्तव में प्रत्येक हिट या झटके में पास हो ही जाता है अतएव इसे एक पृथक आधारित कला समझने में कोई विशेष कारण नहीं मालूम पड़ता। यह हो सकता है कि इसके महत्व के कारण इसे एक विशेष स्थान दिया गया है।

(१) सीधा पास—यह उस समय किया जाता है जब खिलाड़ी के पास कोई प्रतिद्वन्दी न हो। ऐसे पास लेने वाले के पास सीधे जाते हैं। ये तेज होना चाहिए। रोकने वाले की योग्यता समझते हुए जितना तेज हो सके होना चाहिए।

(२) थ्रू पास—यह बचाने वालों के बीच से पास किया जाता है। साधारणतः यह एक झटका से पास होगा। ये पास खतरनाक

होते हैं। इनके व्यर्थ होने की अधिक सम्भावना है किन्तु जब ये सफल होते हैं तो निश्चय बचाने वालों का घेरा टूट जाता है और गोल होने की अधिक सम्भावना हो जाती है।

**स्नाप पास :-**

(३) यह गेंद रोकना तथा उसी क्षण पास करने की रीति है। इस से गेंद बहुत शीघ्रता से पास होता है और गेंद की दिशा में आकस्मिक परिवर्तन किया जा सकता है।

**शूटींग**

शूटींग हिटिंग या झटके पर निर्भर है।

(१) शूट करने के समय गेंद पर ध्यान होना चाहिए।

(२) रिंग में जैसा भी अवसर प्राप्त हो उससे लाभ उठाने के लिए शूट करना आवश्यक है।

(३) शूट करने के लिये शरीर की स्थिति सही होनी चाहिए।

(४) शूट करने का कोण यदि कम है तो पास करना चाहिए।

**गेंद लेना :-**

गेंद लेने में कई एक क्रियायें हैं। स्टिक से गेंद को बिल्कुल स्थिर करना, बिना रोके हुये पास लेकर आगे दे देना।

पहिले गेंद नियन्त्रण में करना आवश्यक है। गेंद रोकने के लिये शरीर की स्थिति सही होनी चाहिये अर्थात् गेंद से बिलकुल बाँये जिससे रोकने के समय गेंद दाहिनी ओर हो। स्टिक प्राय: सीधा होगा। स्टिक को मजबूती से पकड़े हुये होने पर भी स्टिक पर गेद लगने के समय कलाई को कुछ ढीला होना चाहिये।

कभी कभी बिल्कुल समीप से सीधा रोकना । स्टिक के पीछे पैर और आँख गेंद पर लगे रहने से यह सम्भव हो सकता है ।

कभी कभी खिलाड़ी हाथ से गेंद रोकते हैं । अच्छी जमीन पर इस की आवश्यकता नहीं होती । यदि स्टिक का सही प्रयोग हो हो तो इस की आंवश्यकता नहीं होती ।

**हवा में गेंद रोकना :-**

हवा में गेंद रोकने के लिये उस की उड़ान की दिशा में पीछे खिलाड़ी को खड़ा होना होता है । इससे सिर गेंद के ऊपर होता है और देखने के लिये अच्छा दृश्य मिलता है ।

**पास लेना :-**

गेंद बिलकुल रोकना है या बिना रोके नियन्त्रण में लाना है खेल की स्थिति पर निर्भर है। जितना पास तेज होगा उतना ही शीघ्र पहुँचेगा । पास कितना तेज होगा वह रोकने वाले की योग्यता के ऊपर निर्भर है। इस आधारित कला में प्रत्येक खिलाड़ी को अभ्यास करना है और अपने विशेष स्थान के ध्यान से इस कौशल को प्राप्त करना है । बैक खेलने वाले एक ही समय में रोकना और मारने के अभ्यास कर सकते हैं। इन्हें कम से कम आधी फील्ड की दूरी पर होना चाहिये ।

जो हाफ बैक है उन्हें थोड़ी दूरी पर एक दूसरे के पास मारना और पास लेना चाहिये । इन के हिट दोनों प्रकार के हों जमीन पर और हवा में ।

फौरवर्ड को अभ्यास करना चाहिये उन प्रकार के गेंदों से जो

उनके पास आएगा अर्थात् कठिन पास रुक कर लेना। कठिन पास दौड़ कर लेना। झटके के पास की दिशा बदलना जिन कला का अभ्यास करना है वह अनेकों हैं। जो कुछ अभ्यास में किया जायेगा उससे लाभ ही होगा।

**ड्रिबल करना :–**

प्रत्येक खिलाड़ी को ड्रिबल करने की योण्यता होनी चाहिये। कुछ खिलाड़ियों को दूसरों से अधिक ड्रिबलिंग करना पड़ता है। खेल में किसी न किसी समय एक खिलाड़ी को पार करके गेंद पर नियन्त्रण करके रखना पड़ता है यही ड्रिबलिंग है। यदि इसकी परिभाषा की जाय तो कहा जा सकता है कि ड्रिबलिंग को इस प्रकार नियन्त्रित करना है कि प्रतिद्वन्दी जो उसे लेना चाहता है न ले पाये।

**स्थान :–**

गेंद सामने ड्रिबल करना चाहिये। कभी कभी खिलाड़ी गेंद अपनी दाहिनी ओर लेकर चलते हैं किन्तु इसमें अधिक सफलता प्राप्त नहीं होती क्योंकि इस अवस्था में स्टिक का काम सुगम नहीं हो सकता और दूसरी चीज यह है कि दाहिनी ओर गेंद के देखते रहने में उन्हें पता नहीं चल पाता कि बायीं ओर क्या हो रहा है। यदि गेंद आगे सामने है और स्टिक सुगमता से चल रहा है तब शरीर का झुकाव सिर आगे रहते हुये होगा। शरीर सीधा रखके अच्छा ड्रिबल करना कठिन है। अभ्यासः गेंद फील्ड के ऊपर नीचे ले जाना और केवल शरीर को गेंद के सम्बन्ध में ठीक अवस्था में

रखना, गेंद आगे छोटे छोटे थपथपाहट या स्टिक को गेंद के साथ बराबर लगे रहने के द्वारा ले जाया जाता है। आँख सदा गेंद पर रहे।

**दिशा बदलना :—**

केवल फील्ड में सीधे ड्रिबल करने से कोई विशेष लाभ नहीं। बहुत कम खिलाड़ी हैं जिन्हें सीधे ड्रिबल करने का अवसर मिलता है। गेंद को कोई नयी दिशा में ले जाने में केवल अधिक स्टिक के चातुर्य ही नहीं किन्तु पैरों के चातुर्य की भी आवश्यकता है। वास्तव में पैरों के कार्य के कारण ही इधर उधर जाना सम्भव हो सकता है। अतएव पैरों के कार्य को सदा आगे रहना है।

दाहिनी ओर जाने के लिये भी अच्छे पैरों के कार्य की आवश्य कता है। ड्रिबल करते समय खिलाड़ी को सीधे ड्रिबल करने के लिए अवस्था ग्रहण करना चाहिये। अर्थात् गेंद सदैव सामने आगे रहे। इस लिये यदि उसे गेंद दाहिनी ओर ड्रिबल करना है तो उसे दूसरे मार्ग पर चलना होगा और अपने शरीर की अवस्था ठीक रखने के लिये पैरों को तेज चलाना होगा क्योंकि नये मार्ग पर आने पर ड्रिबल करने की सही अवस्था ले ली जाय।

**एक हाथ से ड्रिबल करना :—**

सैद्धान्तिक रीति से इसे हतोत्साह करना है। बहुत कम खिलाड़ी हैं जो अकेले आक्रमण करते हैं और उसमें एक हाथ से ड्रिबल करना अच्छी रीति से प्रयोग करते हैं। यह स्पष्ठ है कि यदि स्टिक एक हाथ से पकड़ा जाय और शरीर के सामने पूरा फैला हो तो वह दो हाथ के पकड़ से अधिक दूर तक जा सकता है। कभी कभी एक

हाथ के ड्रिबल से बहुत लाभ होता है किन्तु यह कभी कभी ही होना चाहिए बराबर नहीं।

**ठीक समय से ड्रिबल करना :--**

सब ड्रिबल के कौशल व्यर्थ होंगे यदि यह ठीक समय से न किये जायें। कोई भी जटिल घुमाव फेर नहीं करना चाहता यदि कोई सामने हटाने के लिए नहीं है, किन्तु गोल करने के क्षेत्र में उसे तेजी के साथ चलना पड़ता है।

खिलाड़ी अपने बायीं ओर जाकर प्रतिद्वन्दी को हटाना चाहता है। यदि वह जल्दी से हट जाता है तो प्रतिद्वन्दी को सही स्थान पर आ जाने का समय मिल जायगा। इस लिए उसे अपनी गति ठीक समय से करना होगा और जब नह हटता है तो शींघ्रता के साथ हटाना चाहिए। इसी प्रकार यदि दाहिने तरफ हटने की इच्छा हो तब तेजी उस क्षण पर होगी जब ड्रिबल करने वाले को अपने प्रति द्वन्दी के बगल से घूमना हो।

**अभ्यास :--**

फील्ड के ऊपर नीचे ड्रिबल करने के बाद इधर उधर चलने का अभ्यास होना चाहिए। यह एक सीधी काम करने की लकीर पर हो सकता है। लकीर पर आरम्भ करके गेंद बांयी ओर सही पैरों की गति से ले जाना तब गेंद दाहिनी ओर ढकेलने के पहले कुछ दूर लकीर के समानान्तर चले। इस में भी सही गति होना आवश्यक है। ऐसे अभ्यास से अत्यन्त लाभ होगा। ठीक समय से अभ्यास करने के लिए एक

झण्डा प्रयोग किया जा सकता है। झण्डा को प्रतिद्वन्दी समझ कर झण्डा तक गेंद ला कर फिर इधर उधर दिशा बदला जा सकता है। इस से नियन्त्रण में सहायता मिलेगा। फिर साथियों के साथ प्रतियोगिता। एक वृत्त में छिनना तथा ड्रिबल एक ही साथ। जिसके पास गेंद हो वह बढ़े और दूसरों को ड्रिबल करके हराये यदि गेंद उससे छिन जाती है तो दूसरा वही काम करेगा। गोलकीपर के साथ अभ्यास करने में गोल में गेंद मारने से पहिले ड्रिबल करना चाहिए तब गेंद गोल में मारे।

ऐसे ही अनेकों अभ्यास हो सकते हैं। ड्रिबल करते समय यह ध्यान रहे कि पास किया हुआ गेंद ड्रिबल किये हुये गेंद से शीघ्रता से पहुंचता है। इस लिये यदि कोई साथी हो जो घिरा नहीं है तो ड्रिबल करने से उत्तम उसे पास करना है।

गेन्द लेने के लिए यत्न करना या छीनना :

छीनने में अनेकों विधियाँ है छिससे प्रतिद्वन्दी से गेंद ले ली जाय। छीनने में बायें या दायें दोनों ओर से चेष्टा हो सकती है।

दाहिने से गेन्द लेने के लिये यत्न :

यह सरल है। जिसके पास गेंद है वह उसे दाहिनी ओर लेकर चलता है और छीनने में दो स्टिक गेंद लेने की चेष्टा करती हैं। और दोनों में स्टिक उनके दाहिने है। दाहिने ओर से गेंद लेने के अंत में कोई कठिनाई नहीं है यह केवल ठीक समय पर यत्न और वगल से काम करने पर निर्भर है।

छीनने के यत्न में स्टिक जमीन पर होना चाहिये। हवा में

स्टिक हिलाने से कोई लाभ नहीं। स्टिक ऊपर रहने से गेंद नीचे से जा सकता है किन्तु यदि स्टिक ज़मीन पर है तो गेंद के पार होने में कठिनता होगी।

बहुत बार गेंद लेने के यत्न के समय गेंद ड्रिबलर के स्टिक से मिला रहता है। यह स्पष्ट है कि यत्न के समय गेंद दोनों स्टिक के वीच रहेगा। किधर गेंद जायेगा यह स्टिक के दबाव के मजबूती पर है। जो स्टिक दौड़ते हुए लगाया जाता है वह प्रायः खड़े हुए स्टिक के लगाने से कमजोर होगा। यदि खड़े हुए स्टिक के खिलाड़ी की कलाई मजबूत है और स्थिरता से स्टिक-गेंद स्टिक का समर्पक होता है तो अनुमान यह है कि उसी की जीत होगी।

गेंद के लिये यत्न करने वाले के समय पर काम करने में बहुत महत्व है। यदि यत्न शीघ्र हुआ तो असफलता हो सकती है क्योंकि प्रतिद्वन्दी को उसका ज्ञान हो जायेगा। सही समय गेंद लेने का वह होगा जब खिलाड़ी गेंद मारने के लिए या पास करने के लिए स्टिक उठाये।

बायीं ओर से गेंद लेने का यत्न करना :

यहां खिलाड़ी गेंद दाहिनी ओर रख कर दौड़ रहा है। और गेंद लेने के लिए प्रतिद्वन्दी उसके बायें ओर से आ रहा है। बांयी ओर से यत्न करने वाले को बाधक नहीं होना है। यह एक कठिन यत्न है। यत्न करने वाला बायें हाथ में स्टिक लेकर हाथ बढ़ाता है और स्टिक की पूरी लम्बान से स्टिक का सिरा गेंद के आगे बढ़ाता है और उसे जकड़ने की चेष्टा करता है जब गेंद रखने वाले का स्टिक उसे छूता है। इसके लिए एक मजबूत कलाई की आव-

श्यकता है। यदि यत्न सफल रहा तो गेंद रखने वाला खिलाड़ी गेंद के पार चला जाएगा और गेंद यत्न करने वाले के पास रहेगा।

गेंद लेने के यत्न भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं। बांये हाफ के लिए एक प्रकार की समस्या होगीं। उसे प्रतिद्वन्दी से दाहिने वींग से भिड़ना होगा और यह अधिकतर बांयी ओर से होगा। दाहिने हाफ के लिये आसानी है क्योंकि वह दाहिनी ओर से काम कर सकता है।

सेन्टर हाफ के लिए दोनो प्रकार की यत्न की आवश्यकता है क्योंकि उसे किसी भी इन साईड फारवर्ड तथा सेन्टर फारवर्ड से भिड़ना हो सकता है।

बैक्स को अधिक वाँयी ओर के यत्न की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि उन्हे दाहिनीं ओर आ जाने के लिए काफी समय मिल जाता है।

अभ्यास :

गेंद लेने का यत्न ड्रिबल के साथ किया जा सकता है। ध्यान देने की आवश्यकता इस बात पर है कि यत्न लापरवाही से न हो और बायी ओर का यत्न केवल यत्न के लिए नहीं किन्तु दृढ़ पूर्ण यत्न होना चाहिए।

## कोचिंग का अभ्यास

हाकी दूसरे खेलों से कुछ भिन्न है। आधारित कला के सीखने के पश्चात इसके सही विकास खेल के द्वारा ही हो सकते हैं। कुछ अभ्यास की आवश्यकता अवश्य है। प्रत्येक खिलाड़ी को अपने

स्थान की तकनीक में निपुणता प्राप्त करना चाहिए।

गोल कीपर :

वृत्त से सीधी हिट रोकना तथा वापस करना, पैर तथा स्टिक या हाथ से चेष्टा करना। पैर से गेंद के वेग को कम करना फिर वापस करना।

हवा में गेंद हाथ से रोकना, एक पैर को ज़मीन पर फैला के गेंद रोकना, तीक्ष्ण कोण से आते हुए गेंद रोकना, दोनो पैर से किक करने का अभ्यास, यही आक्रमण के साथ, गोल से निकलकर फारवर्ड के गेंद को रोकना, पेनालटी बुल्ली का अभ्यास।

वैक :

हिट करने का अभ्यास। ५० गज की दूरी से रोकना, फिर शीघ्रता से मारना, यही काम आक्रमण के साथ। गेंद का उद्देश्य पूर्ण वापस करना, दोंनो ओर से गेंद लेने का प्रयत्न, गोल कीपर के साथ गोल के कर्त्तव्य का साझा।

हाफ :

सेन्टर हाफ—सीधी तथा थ्रू पास का अभ्यास। वृत में ड्रिबल करके जाना, अच्छा स्थान लेने के लिए ड्रिबल। गेंद मारने का अभ्यास। प्रायः उसे सब कुछ करना होता है और अच्छी तरह से करना होता है।

विंग हाफ :

गेंद रोकना, पास करना, विंग से गेंद लेने का प्रयत्न, दौड़ते हुए साथी से बायीं ओर से गेंद लेना, मुड़ना और गेंद लेना, गेंद

लुढ़काना ।

फारवर्ड :–

बायां विंग :—पास लेना, ड्रिबलिंग, किसी को हराना बायीं ओर जाकर, गेंद सेन्टर करना, कोरनर मारना ।

दाहिना विंग :

जैसे ऊपर दिया है, गेंद लेने की रीति भिन्न होगी, ड्रिबलिंग की रीति भी भिन्न होगीं ।

सेन्टर फारवर्ड :

दौड़ते हुये गेंद लेना, ड्रिबल करना इसमें पैरों की क्रिया पर ध्यान । यदि ड्रिबल के बाद पैर ठीक स्थान पर न रहे और वह ड्रिबल में फिर न चल सका तो सब व्यर्थ होया । गोल कीपर को धोखा देने की विधियां । गेंद वृत में लाना और मारना, शूट करने का अभ्यास, पास करना, खाली स्थान प्राप्त करना ।

इनसाइड राइट :

गेंद रोकना, ड्रिबल करना, पास करना, शूट करना ।

इनसाइड लेफ्ट :

रोकना, वृत्त के अन्दर जाना, शूट, पास, ड्रिबल ।

वुल्ली का अभ्यास तथा स्थान ज्ञान, भिन्न भिन्न प्रकार के गेंद लुढ़काना ।

फ्री हिट—खाली स्थान भरने का चातुर्य ।

कोरनर—प्रत्येक खिलाड़ी का स्थान नियुक्त करना और उनको अपना कर्त्तव्य जानना जो पहिले निकलते हैं उनका कर्त्तव्य प्रत्येक

आक्रमण के लिए एक बचाव का उपाय जैसे दाहिने विंग से आक्रमण के समय, लेफ्ट बैक को ऐसा स्थान लेना चाहिये कि वह सेन्टर को रोके। इनसाईड राईट को सेन्टर हाफ देखेगा, सेन्टर फारवर्ड को राईट वैक और इनसाइड लेफ्ट को राईट हाफ।

## खेल की विद्या

यह एक टीम का खेल है और प्रत्येक का सहयोग अति महत्व पूर्ण है। अतएव प्रत्येक को अपना तथा दूसरे से सम्बन्धित कर्त्तव्यों का ज्ञान होना चाहिए।

खेल विद्या वास्तविक खेल में मैदान, मौसम, खिलाड़ियों के फौर्म और उनके विशेष निर्वलताओं के ऊपर निर्धारित होगा।

कुछ साधारण खेल विद्या नीचे दिये जाते हैं।

आक्रमण में खेल विद्या :

दो प्रकार के आक्रमण होते हैं (१) बीच में आक्रमण (२) विंग का आक्रमण, बुद्धिमानी से छोटे तथा लम्बे पास के मिश्रण के द्वारा यह आरम्भ किया जा सकता है।

प्रतिद्वन्दी टीम के भिन्न भिन्न खिलाड़ियों के योग्यता अनुसार खेल का आक्रमण नियुक्त होगा।

एक आक्रमण की प्रणाली है जिसमें दोनों लम्बे तथा छोटे पास टेढ़ी मेढ़ी प्रकार से कर्ण रेखा पर होती है।

फारवर्ड व्यक्तिगत रूप में नहीं किन्तु एक समपूर्ण रूप में खेलते हैं।

बचाव में खेल विद्या :

सिद्धान्त में तीन हाफ बैक और दो बैक प्रत्येक, एक प्रतिद्वन्दी फारवर्ड को मार्क करते हैं। गोलकीपर को मिलाकर ६ बचाने वाले होते हैं।

अभ्यास में विंग के हाफ दोनो विंग को देखते हैं और बैक इनसाइडस को देखते हैं। सेन्टर हाफ सेन्टर फारवर्ड को देखता है तो भी उसे चारों तरफ जाने की स्वतन्त्रता है। इस स्वतन्त्रता के कारण एक फुल बैक को कुछ दूरी पर उसके पीछे रहना पड़ता है जिससे कोई पार न आ जाये और इस कारण इस "गहराई का बचाव" बनाया जाता है। ये पांच बचाने वाले एक लकीर में नहीं खेलते। इस खेल में फारवर्डस् को केवल एक व्यक्ति से भिड़ना होगा और फिर सामने गोल होगा।

दूसरा महत्वपूर्ण बचाव की प्रणाली है 'कर्ण रेखा प्रणाली'। यह आफसाईड के नियम को अपने लाभ के लिये प्रयोग करता है। इस प्रणाली का सिद्धान्त यह है कि जब भी एक हाफ बैक आक्रमण के सहायता के लिये आगे जाता है तब बाकी दो हाफ बिलकुल बचाव का काम करेंगे। यह एक तरह का सेन्टर हाफ पर पिवट या घूमने का केन्द्र हो जायेगा।

प्रत्येक बचाव के खेल में गोलकीपर का प्रयोग महत्वपूर्ण है। कितनी टीम उसे एक तीसरे बैक की तरह खिलाती हैं जिसमें वह बहुत आगे बाहर निकल जाता है जिससे लम्बे पास रोके। सिद्धान्त यह है कि यदि वह अपने वृत में खेलता है तो गोलकीपर अपने प्रतिद्वन्दियों को गेंद मारने से रोकता है और यदि गेंद मारा

न जाये तो गोल भी नहीं होगा ।

यह सिद्धान्त कुछ हद तक तो सही है किन्तु यह विचार योग्य है कि गोलकीपर के ऊपर भारी पैड होते हैं और इससे उसे गति में कठिनाई होती है और इसलिए उसे अपने पूरे वृत को सम्भालना कठिन होगा ।

जब कभी प्रतिद्वन्दी फारवर्ड, गेंद बिलकुल साफ रीति से बीच फील्ड से निकाल लेता है तो इस दशा में गोलकीपर को अपने वृत के किनारे आ जाना चाहिये ।

बचाव में आफ साइड नियम का प्रयोग :

नियम है कि गोल करने के समय गोल तथा गोल करने वालों के बीच में तीन बचाने वाले खिलाड़ी होंगे । ये तीन खिलाड़ी प्रायः दो बैक और एक गोलकीपर होते हैं । इनमें से यदि एक फुल बैक आगे बढ़ता है तो आक्रमण करने वाले फारवर्डस् को उसके पीछे अपनी गोल की ओर जाना पड़ेगा । यह एक अच्छी रीति है ।

यदि बैक और हाफ अपने फौरवर्डस के आक्रमण का सहयोग दे और आगे बढ़े तो प्रतिद्वन्दी फौरवर्डस को पीछे जाना ही पड़ेगा नही तो वे आफ साइड होगे ।

## व्यक्तिगत स्थान आक्रमण :-

१. दाहिना विंग

फील्ड में सबसे आसान स्थान है । दाहिना विंग के गुण हैं तेजी, ताकत तथा दृढ़ संकल्प, दौड़ते हुये गेंद लेना और ड्रिबल करने

का कौशल ।

गेंद लेने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए क्योंकि प्रत्येक को रोकने की आवश्यकता नहीं। गेंद स्टिक से आगे बढ़ा कर उसके पीछे जाना चाहिये ।

उसे गेंद आगे ड्रिबल करना चाहिये। यदि वह अन्दर नहीं आता है तो ड्रिबल भी अधिक नहीं करना होगा। जब बाँया हाफ बायें बैक की सहायता के लिये आता है तो दाहिने विंग को सेन्टर की ओर आना चाहिये ।

इन अवस्थाओं के सिवा उसे अपने टच् लाइन पर रहना है।

उसे यह अवश्य जानना है कि कहाँ और कैसे गेंद सेन्टर करना है। सब से उत्तम समय २५ गज लाइन पार करने पर है।

यदि गोल लाइन के पास से सेन्टर करना है तो गोलकीपर के आगे जो फारवर्ड्स आ चुके होंगे, उन्हें पास किया जाय ।

साइड विंग बैक को आगे खीचता है। और उससे पार जाने की चेष्टा करता है।

२. बायां विंग

यह एक कठिन स्थान है, क्योंकि राइट हाफ को छीनने में आसानी होती है। बायाँ विंग वही करता है जो दाँया विंग। गेंद हाफ के बायीं ओर फेंककर उसके दाहिने हो कर फिर लेना। दूसरा तरीका यह दिखाने का है कि वह हाफ के बाँयें जा रहा है और फिर जल्दी से गेंद लेना और हाफ के दाहिनी ओर पास करना स्टिक के ऊपर से गेंद उछाल देना ।

बांयाँ विंग तीन प्रकार से गेंद सेन्टर कर सकता है। दाहिना

विंग तो सीधे गेंद मार सकता है किन्तु बांयें विंग को गेंद अपने लाइन में या आगे लाना होता है।

(१) 'कवर पोइन्ट' शाट यह एक कठिन शाट है। यह उस समय किया जाता है जब विंग राइट हाफ से प्रायः एक गज दूर रहता है और वहाँ से गेंद सेन्टर किया जाता है।

(२) यदि वह हाफ वैक से तेज नहीं है तो वह अकस्मात रुक जाये और फिर रिवर्स स्टिक से गेंद खींच ले और फिर गेंद सेन्टर कर दे।

(३) झटका देना—यह भी उसी समय किया जाता है जब हाफ साथ दौड़ रहा हो या रिवर्स स्टिक से जोर से गेंद मार कर सेन्टर किया जाय।

वायें विंग को गेंद राइट विंग से जल्दी सेन्टर करना चाहिए। उसे सदा एक लाइन पर होना चाहिये केवल दो अवस्था को छोड़।

जब वह थ्रू पास में अन्दर आना चाहता है और गोल करना चाहता है।

दूसरा जब राइट विंग सेन्टर करता है।

३. इनसाइड लेफ्ट

यह सब से चतुर खिलाड़ी होता है उसे गेंद दोनों हाफ से मिलता है। उसे गेंद रोक कर आगे बढना चाहिए।

इनसाइड लेफ्ट को खेल बनाना पड़ता है। विंग के साथ या राइट इन के साथ, या सेन्टर को पास देकर जो वह बायीं ओर जाकर फिर करता है या सेन्टर से स्थान वदल लेता है। यदि वह स्वयं गोल में जाना चाहता है तो गेंद बायीं ओर लाकर जा सकता

है जिससे प्रतिद्वन्दी उसके दाहिनी ओर छूट जाते हैं। उसे बैक से भिड़ना पड़ता है।

४. इतसाइड राइट

किसी अर्थ में यह बायें से भी कठिन स्थान है। यह गेंद लेने और पास देने के कारण कहा जाता है। गेंद मिलने पर इनसाइड राइट को काफी घूमना पड़ता है। पास, इन साइड लेफ्ट के समान है। वींग में या सेन्टर फौरवर्ड को, इन साइड या आउट साइड लेफ्ट को।

इन साइड राइट आसानी से लेफ्ट बैक को हरा सकता है।

इनसाइड राइट को गेंद गोल में मारने को अनेकों अवसर प्राप्त होगा और उससे अवश्य लाभ उठाना चाहिये। वृत के अन्दर आते ही शूट करें।

५. सेन्टर फौरवर्ड

उस के गुण हैं दृढ़ सकल्प, शीघ्रता से गेंद मारना और खेल वनाने की योग्यता।

पास को लेकर आगे बढ़ने की योग्यता। शीघ्रता से मारने की योग्यता, दौड़ते हुए मारने की योग्यता विशेष रूप से, चलते हुये गेंद को कुछ क्षणों के लिये रोकना, पीछे उठाना, फिर उपयुक्त दिशा में जोर से मारना।

सेन्टर फौरवर्ड, फौरवर्ड लाइन का केन्द्र है, इस लिये उसे दूसरे फौरवर्ड के साथ मिल कर भिन्न भिन्न खेल बनाना होता है। बीच फील्ड में उसे पास देना और लेना होता है। छोटे तथा लम्बे पास बुद्धिमानी से प्रयोग करने की योग्यता

उसे इस बात का ध्यान करना है कि बैक कर्ण रेखा या वर्ग से बचाव के प्रणाली से खेल रहे हैं। जब भी विंग ड्रिबल करें सेन्टर फौरवर्ड को गोल के समीप होना चाहिये, विशेष रूप से गोल के मुँह पर।

व्यक्तिगत स्थान बचाव

मजबूत बचाव की टीम में बड़ी आवश्यकता है। इसके बिना फौरवर्ड को गेंद मिलना कठिन हो जायेगा।

१. सेन्टर हाफ

टीम में प्रायः सबसे उत्तम खिलाड़ी होता है। गेंद फौरवर्ड को पास करना तथा बचाव के घेरे को मजबूत करना इसका मुख्य काम है। उसे गेंद बहुत ड्रिबल नहीं करना चाहिए।

विपरीत सेन्टर फौरवर्ड को मार्क करना उसका काम है। इनसाइडस के पास जो पास आयेंगे उसे भी छेड़ना है।

उसका स्टिक का काम बहुत अच्छा होना चाहिए। उसका उद्देश्य गेंद फौरवर्ड के पास जल्दी पहुंचाने का होना चाहिये। उसकी हिट तेज और शक्ति पूर्ण होना चाहिये।

उसके पास काफी साँस होना चाहिए क्योंकि उसे बहुत अधिक परिश्रम करना पड़ता है।

२. बायाँ हाफ

यह भी एक कठिन स्थान है क्योंकि गेंद उसके उलटी ओर आता है।

उसे राइट आउट को गार्ड करना पड़ता है। यह भी कठिन है क्योंकि बायीं ओर से करना पड़ता है।

उसे इनसाइड लेफ्ट की सहायता करनी पड़ती है अपने इन-

साइड राइट को वह अच्छा पास दे सकता है ।

राइट आउट को गार्ड करने में ऐसी अवस्था ग्रहण करना चाहिये जिस से आता हुआ पास बीच ही में रोक लिया जाय किन्तु उसे समीप से गार्ड भी करना चाहिये ।

लेफ्ट ब्रैक के साथ उसकी पूरी समझ होनी चाहिये ।

३. दायाँ हाफ

यह आसान स्थान है । उसका मुख्य कार्य फौरवर्ड को सहायता देना है ।

बचाव में, राइट हाफ, लेफ्ट विंग को गार्ड करता है । यहां उसे एक कठिनाई होती है कि जो पास विंग को आते हैं वह उस से बायीं ओर आता है । उसे इनसाइड लेफ्ट से कभी भी नहीं खींचना चाहिये ।

४. फुल बैक

इनकी विशेष योग्यता छीनने में, तेजी से बाधा डालने में और खतरे के स्थान से गेंद निकालने में होता है । दोनों वैक में अच्छी समझ होनी चाहिये ।

लेफ्ट बैक लेफ्ट हाफ तथा राइट बैक राइट हाफ के साथ सहयोग देता है ।

राइट बैक इनसाइड लेफ्ट को तथा लेफ्ट वैक इनसाइड राइट को गार्ड करता है ।

इन का हिट कठिन और तेज होना चाहिये । रोकना और शीघ्र मारना इनका उद्देश्य है ।

गेंद छीनने की चेष्टा उसी समय करना चाहिये जब वह

निश्चित हो।

दोनों ओर से छीनने की योग्यता होनी चाहिये। स्टिक का काम अच्छा होना चाहिये।

५. गोलकीपर

यह बहुत बड़ी जिम्मेवारी का स्थान है। साधारणत: गोल के बीच और गोल लाइन के सामने खड़ा होता है। गेंद के सम्बन्ध में वह घूमता है।

उसमें निर्णय करने की शक्ति अच्छी होनी चाहिये। जैसे गोल में रहना या बाहर निकलने में। गोल के सामने आने वाले पास को रोकना या नहीं। गोलकीपर को पैड या हाथ से गेद रोकना चाहिये, स्टिक से बहुत कम।

गोलकीपर को किक करने की कला सीखना चाहिये। दोनों पैर से किक करने की योग्यता होनी चाहिए।

कोरनर के समय गेंद साफ दिखायीदेना चाहिये कभी कभी बैक गोल में हो जाते हैं और वह गोल के आगे हो जाता है।

पेनालटी बुल्ली में भाग लेना पड़ता है। इसके लिये अत्यन्त अधिक अभ्यास की आवश्यकता है,

---

[३३]

# फुटबौल

फुटबौल एक जटिल प्रकार का खेल है। यह भारतवर्ष में सर्व प्रिय है। यह एक अत्यन्त ही वैज्ञानिक खेल है जिसकी निपुणता बहुत परिश्रम के बाद आती है। देखने में यह अत्यन्त ही सरल मालूम होता है। अच्छे खिलाड़ियों में भी आक्रमण निष्फल, जिन स्थानों से गेंद ले जाया जा सकता है वे घिर जाते हैं, खाली गोल में गोल नही हो पाता, गेन्द फेकने में प्रतिद्वन्दी के पैरों पर जाता है इत्यादि बातें हुआ करती हैं। अर्थात् जिस तरह खेल होना चाहिए नहीं होता है। खेल के सरल कार्य किक करने में भी अनदेखी समय का सामतुल्य, निर्णय तथा प्रचलित करना होता है, जिसमें अच्छे खिलाड़ी भी पूर्णता से निपुणता का दावा नहीं कर सकते। उदाहरण के रूप में यदि एक उत्तम श्रेणी के भी खिलाड़ी से पेनालटी ऐरिया के बाहर से गोल में गेद मारने को कहा जाय तो वह कितनी ही बार गलती करेगा। और जब सामने प्रतिद्वन्दी हो, मैदान ठीक न हो, गेंद भारी या हलका हो, सूरज चमक रहा हो तो ऐसी अवस्था में सही कार्य करना बहुत ही कठिन हो जाता है।

किन्तु वैज्ञानिक प्रशिक्षण से सही निपुणता आ सकती है। अच्छे कोचिंग का तात्पर्य तकनीक को परिश्रम के साथ अपनाने में है। इस में अनुभव के आधार पर कार्य में प्रगति की जाती है तथा सब प्रकार के अनुमान हटाये जाते हैं। कोचिंग के द्वारा निपुणता में उन्नति की चेष्टा की जाती है।

फुटबौल में प्राकृतिक गति का व्यवहार जिसमें अच्छे प्रकार के मांस पेशियों का संतुलन होता है और ये प्रतिद्वन्दी के रुकावट के सन्मुख किये जाते है।

किसी चीज में निपुणता आने के बाद वह स्वचालक हो जाता है। स्वचालक गतियों के होने में भी कभी कभी ऐसा अवसर आ जाता है जब कि खिलाड़ी को एक क्षण के लिये निर्णय करना ही पड़ता है और इसी क्षण में प्रशिक्षण के गुण दिखाई देते हैं।

सीखने की पहली अवस्था में सिद्धान्त तथा अभ्यास में समानता होना चाहिए।

अनुभवी खिलाड़ियों के द्वारा सैद्धान्तिक तकनीक आसानी से अपनाये जा सकते हैं।

फुटबौल का प्रशिक्षण तीन हिस्सों में विभाजित किया जा सकता है। (१) शरीर के कार्य के लिये तैयारी (२) खेल के अनेकों कौशल का अभ्यास (३) पूर्ण खेल का अभ्यास।

## फुटबौल के आधार भूत कौशल तथा तकनीक

## Skills and Fundamentals of Football

गेंद मारना या किकिंग Kicking

गेन्द मारने के अनेकों प्रकार हैं। यह आवश्यकता अनुसार प्रयोग में आते हैं। अभ्यास ऐसा होना चाहिये कि कठिन स्थिति में भी गेन्द आसानी से दोनों में से किसी एक पैर से किक किया जाये।

कोचिंग में किकिंग के अभ्यास के लिये उसे उद्देश्य से सम्बन्धित करना चाहिये जैसे नीची पास करने के लिये किक जिसमें

पैर के अन्दर का हिस्सा प्रयोग हो, लो-ड्राइब जिसमें पैर का पंजा प्रयोग होता है । ये दोनो मुख्य किकिंग कौशल में आते हैं । नीची गे.द से पास करने में आसानी होती है तथा गेन्द एक स्थान से दूसरे स्थान तक शीघ्रता से जाता है ।

प्रतिद्वन्दी के ऊपर से गेन्द भेजने के लिये या गेन्द दूर भेजने के लिये जिससे बीच में रोका न जा सके, गेन्द हवा में ऊपर भेजना पड़ता है । पैर के किसी ऊपरी हिस्से से यह किक लगाया जा सकता है ।

पैर का तलवा उछालते हुये गेन्द को किसी समीप के खिलाड़ी के पास भेजने में प्रयोग होता है । ऐड़ी से गेन्द पीछे की ओर भेजा जाता है । पैर के अन्दर तथा बाहर का हिस्सा पास करने के प्रयोग में आता है और पंजा ड्राइब, ऊपर गेन्द मारने, टप्पा खाते हुये गेन्द को मारने या आधी वौली (Half volley) के प्रयोग में आता है । बूट के सामने के हिस्से से भी जब गेन्द पहुंच के बाहर हो तो उसे आगे भेजने के प्रयोग में लाया जाता है ।

धक्के से पास के लिये (Push pass) पैर के अन्दर का हिस्सा अंगूठे के नीचे से ऐड़ी की हड्डी तक प्रयोग में आता है अंगूठे को नीचे करने से गेन्द को पूरे पंजे से छाप लिया जा सकता है । इस प्रकार एक बड़े दायरे से सम्पर्क होता है और क्योंकि पैर मुड़कर तना ही हुआ है, एक शक्ति शाली किक किया जा सकता है । जव बगल से किक करना होता है तो पैर से मारने का हिस्सा अंगूठे के ऊपरी हिस्से और पंजे के बगल से होता है, । सीधे मारने के लिये पैर का अगला हिस्सा नीचे अन्दर

की ओर मुड़ा हुआ होता और कुछ पैर के बाहरी हिस्से से किक होता है।

जब गेन्द खड़े होने वाले पैर के सामने होता है तब शरीर का झुकाव कुछ पीछे की ओर होता है जिससे मारने वाले पैर से सम्पर्क हो इस लिये गेन्द ऊपर उठाया जा सकता है। गेन्द नीचे रखने के लिये यह आवश्यक है, कि खड़ा होने वाला पैर, गेन्द के समीप हो और यह ध्यान रखना चाहिये की मारने वाला पैर का घुटना सम्पर्क के समय गेन्द के ऊपर रहे। पुट्ठे को मोड़ कर कोंण के रूप का प्रवेश हो तो मारने वाले पैर की तेजी बढ़ सकती है।

नीची किक :—

पंजे से गेन्द किक किया जाता है और गेन्द जमीन पर मारा जाता है। मारने वाला पैर का घुटना गेन्द के ऊपर होगा पुट्ठे भी मारने वाले पैर के ऊपर रहेंगे। इस लिये खड़े होना वाला पैर गेन्द से आधा या एक फुट की दूरी पर रहेगा।

यदि खिलाड़ी गेन्द के पास गेद जाने की दिशा के सीध में आता है तो उसे अपने किक के समय का अनुमान करना होगा। गेन्द के समीप आते ही शीघ्रता करनी पड़ेगी जिससे खड़ा होने वाला पैर नीचे आ जाये जिसमें ऐड़ी पहिले हो और यह गेन्द के बगल में हो। घुटना कुछ मुड़ा हुआ हो, शरीर गेन्द के ऊपर सीधा होगा। कंन्धे आगे कुछ झुके हुये और सिर नीचे देखते हुये हो। मारने वाला पैर पुट्ठे के पास सीधा और घुटने के पास मुड़ा हुआ हो। जैसे ही मारने वाला पैर गेंद के ऊपर आता है कधे और

हाथ मारने के विपरीत दिशा में मुड़ते हैं। मारने वाला पैर का घुटना गेंद के ऊपर से जाता है और पैर में तनाव, अंगूठा नीचे की ओर होता है, घुटना अपने को शक्ति के साथ फैलाता है और इस प्रकार गेंद दूर मारी जातीं है। मारने वाला पैर कार्य के बाद भी आगे ऊपर की ओर झूलता है और शरीर खड़े होने वाले पैर के अंगूठे के ऊपर उठ जाता है। मारने वाले पैर का विपरीत हाथ शरीर के पार उल्टा झूलना पूर्ण करता है। इस सम्पूर्ण गति में सन्तुलन होता है जिसमें किक में ताकत और तेजी हो। जब तक किक समाप्त न हो जाये तब तक सिर नीचा होना चाहिए। खिलाड़ी निशाने को मारने के पहिले दौड़ते समय देख लेता है। मारने के समय ध्यान गेंद पर होना चाहिए।

जब सामने की दौड़ तेज तथा किक शक्ति शाली होती है तो ऐसी अवस्था में खड़े होने वाले पैर पर हौप hop करना आवश्यक हो जा सकता है। अधिक अभ्यास के बाद अच्छा खिलाड़ी कुछ टेढ़ी दौड़ से गेंद के समीप आता है।

**अभ्यास :-**

(१) खिलाड़ी आमने-सामने खड़े होकर गेंद के पास सीधे आयें और नीची किक लगायें। मारने के पहिले गेंद स्थिर हो पहिले उस पैर से मारे जो आसानी से चलता हो फिर दूसरा पैर।

(२) नं० १ की तरह किन्तु दूरी ३० गज और तेजी से दौड़ कर गेंद के पास आना।

(३) नं० १ और २ कुछ टेढ़ी प्रवेश से।

(४) नं० १, २, ३ किन्तु मारने के पहिले गेंद को दूसरे पैर

से सरका दो और गेंद के चलते हुए में किक देना।

(५) १, २, ३ पुनरावृत्ति किन्तु गेंद तेजी नीची किक के द्वारा साथी के पास मारना। जो भी पैर गेंद के सीध में हो उसी से मारना। कार्य सही होना चाहिए किन्तु जितनी शक्ति से मार सकें मारें।

(६) पेनालटी ऐरिया से केन्द्रीय वृत तक नीची किक करना ६ व्यक्ति पेनालटी एरिया में हों और १२ केन्द्रीय वृत्त में।

(७) तीन मे-अ, ब को गेंद देता है जो घूम कर गेंद के साथ-साथ दौड़ता है और उसी दिशा में स को पास करता है। स फिर ब के पास गेंद भेजता है ब फिर पहिले की तरह गेंद स के पास भेजने के लिए करता है। यदि गेंद ब के पास बायें पैर की ओर आयी तो वह दाहिनी तरफ मुड़ कर वांए पैर से मारता है।

पैर के अन्दर से पास करना :—

बहुत ही सरल और निश्चय पास होता है। पैर ऐसा घुमाया जाता है जिससे गेंद से पूर्ण सम्पर्क हो। दोनों घुटने कुछ कड़े रखे जाते हैं और शरीर का वजन खड़े होने वाले पैर के ऐड़ी पर होता है। इसमें खिलाड़ी झुक कर निशाना देख लेता है। इस किक में शक्ति अधिक नहीं होती क्योंकि पैर की गति सीमित है। किन्तु यदि पैर तेजी और झटके से लगाया जाय तो गेंद काफी दूर जा सकता है।

अभ्यास—(१) दो खिलाड़ियों में आपस में पास दूरी १०-१५ गज, पैर के झुलाव पर अधिक ध्यान देना।

(२) तीन में—तीनों एक सीध में खड़े होते हैं अ, ब को पास

करता है जो गेंद फिर वापस भेजता हैं। अ फिर स को पास करता है और चेष्टा करता है कि ब के पास से गेंद निकल जाये। स फिर ब को पास करता है और फिर पास पाता है और फिर अ को पास करता है यह चेष्टा करते हुए कि गेंद पास से चली जाय। कुछ देर के बाद ब दोनों ओर के पास को रोकने की चेष्टा करेगा।

(३) दो खिलाड़ी—जैसे नं० १ में किन्तु दूरी १२-२२ गज किन्तु खिलाड़ी एक पैर से गेंद का नियन्त्रण करते हैं कुछ आगे या बगल में लुढ़का कर फिर साथी को पास करते हैं।

(४) जैसे नं० ३ में किन्तु पहली बार ही में किसी पैर से पास करे।

(५) खिलाड़ी एक दूसरे के सामने १०-१५ गज की दूरी से खड़े होते हैं अ, ब को पास करता है ब गेंद रोक कर फिर उसी दिशा में ४-५ गज तक गेंद लुढ़काता है वह फिर गेंद के पीछे दौड़ कर एक पैर पर पीछे घूम जाता है और पास वापस देता है।

(६) तीन में—खिलाड़ी त्रिकोणी रूप में खड़े हो जाते हैं गेन्द एक से दूसरे को दी जाती है। कोई सा पैर प्रयोग करें। गेन्द पास करने से पहिले रोकें।

(७) जैसे न० ६ में किन्तु प्रथम बार ही में पास करना।

(८) जैसे न० ६ किन्तु इस में खिलाड़ी घुमने के पहिले गेन्द अपने पास से जाने देता है फिर घुमता है और प्रथम वार में पास करता है।

(९) दो में-खिलाड़ी आसानी से आगे दौड़ते हैं और एक

दूसरे को आगे तिरछा पास करते हैं। पास करने में पैर का बाहरी हिस्सा प्रयोग करें। इस प्रकार का पास प्रतिद्वन्दी को धोखा देने के लिये कभी कभी बहुत ही उत्तम होता है। इसमें पंजे का बाहरी हिस्सा पैर के जरा घुमाने से पास करने की दिशा में अच्छी तरह गेन्द पर लगेगा। खड़ा होने वाला पैर जरा पीछे और गेन्द के बगल में रहता है।

हवा में किक :

रखे हुये गेंद को हवा में किक करने के लिये गेंद के केन्द्र में खूब नीचे सम्पर्क करना आवश्क है। अंगूठा गेंद के नीचे जाता है। पंजे सम्पर्क के बाद गेंद ऊपर उठाते हैं।

पुट्ठे जो पैर के झुकाव के लिये टेक का काम करते हैं गेंद अच्छी तरह उठाने के लिये उसके पीछे होना चाहिये। खड़े होने वाला पैर कुछ बगल में और गेंद के पीछे होना चाहिये। कमर पीछे झुकना चाहिये जिससे गेंद तक पहुंचे। यदि प्रवेश बगल से हो तो मारने वाला पैर गोलाई में झुकता है जिससे गेंद के नीचे उछालने की क्रिया हो। इस अवस्था में खड़े होने वाला पैर एक या डेढ़ फुट गेंद के बगल में होगा। वजन खड़े होने वाले पैर पर होता है जो घुटने पर मुड़ा होता है। हवा में किक हुये गेंद पर नियन्त्रण करना सीखना होगा।

अभ्यास :

(१) गेंद ऊपर हवा में मारना कि साथी के पैर के पास टप्पा खाये जो ४०-४५ गज पर है। पहले पूरी कम हो फिर हल्के हल्के बढ़ाया जाय।

(१) पंजे से सीधे मारना जब गेंद स्थित हो ।

(२) वगल से पंजे में अन्दर के हिस्से से ।

(३) वगल से प्रवेश जब गेंद खिलाड़ी की ओर लुढ़क रही हो ।

(४) वगल से प्रवेश जब गेंद जो आगे या बगल में लुढ़क रही हो ।

(२) उपर के गेन्द में नियन्त्रण

(१) किसी दी हुई उंचाई या क्रौस बार के उपर गेंद उछाल कर साथी को देना ।

(२) बीच में खड़े हुए साथी के ऊपर से उछाल कर दूसरे को देना ।

(३) गेंद ऊपर उछालना कि एक दी हुई लकीर पर गिरे ।

(४) गेद ऊपर उछालना कि दिये हुए वृत के अन्दर गिरे

(५) गोल कीपर गेंद उछाल कर किसी फारवर्ड को देता है ।

(६) दो इन साईड फौरवर्ड और दो वींग में खिलाड़ी W बनालें । आउटसाइड राइट जमीन पर गेंद इनसाइड राइट को पास करता है वह घूम कर हवा में किक कर के आउटसाइड लेफ्ट को देता है वह गेंद रोक कर इन-साइड लेफ्ट को जमीन पर पास देता है । इनसाइड लेफ्ट गेंद हवा में आउटसाइड राइट को देता है ।

(७) आउटसाइड लेफ्ट, लेफ्ट आफ को पास करता है वह प्रथम बार इनसाइड लेफ्ट को पास करता, वह फिर लेफ्ट हाफ को देता है जिससे गेंद हवा में आउटसाइड राइट को जा सके । फिर यही काम दाहिने तरफ होता है ।

(८) इनसाइड राइट कोने के झण्डे पास जाता है। आउट-साइड राइट अपनी सीध में दौड़ता है, गेंद लेता है और वहां से किसी एक फारवर्ड को पास करता है। वींग के खिलाड़ी में कौशल की परीक्षा के लिये इनसाइड राइट पुकारता है कि गेंद किसको दिया जाये, इनसाइड लेफ्ट, सेन्टर फारवर्ड, आउट साइड लेफ्ट या उसी को।

ऐसा ही अभ्यास पास करने तथा गेंद हवा में किक करने का खिलाड़ियों को गोल की ओर जाते हुए करना चाहिये।

चिप शाट Chip Shot

जैसे लकड़ी की चैली निकाली जाती है उस तरह की हरकत के द्वारा गेंद मारना। पैर बाहर की ओर घुमाया जाता है जिससे पैर के अन्दर के हिस्से से गेंद के नीचे उछाला जा सके। जितना नीचे हो सके गेंद के नीचे मारना चाहिये। गेंद उपरी तिरछी ढलान से उठना चाहिए क्योंकि इसका प्रयोग आते हुए प्रतिद्वन्दी के सिर के ऊपर मारने का है। गेंद पर एक तेज पीछे के घुमाव के कारण उस की गति टप्पा खाने पर आगे नहीं होती।

ऐसे पास हाफ बैक के द्वारा फारवर्ड को होते हैं जब जमीन पर गेंद रुक जाने का भय होता है। इस में ऊँचाई का ध्यान रखना है क्योंकि अधिक ऊंचा होने पर प्रद्विन्दी घूम कर गेंद के पीछे आ जा सकता है।

अभ्यास

( तीन में ) व जमीन पर गेंद मार कर अ को देता और उसी की ओर प्रतिद्वन्दी के रूप में दौड़ता है। अ चिप शाट से

गेंद उसके ऊपर उछलता है और स को देता है ब, अ से स्थानान्तर करता है और अ, स की ओर दौड़ता है स, अ के सिर के ऊपर गेंदे चीप करता है और ब को देता है। यह अभ्मास लगातार चलता रहता है और दोनों पैर प्रयोग किये जाते हैं।

वौली तथा हाफ वौली:

वौली उस समय प्रयोग होता है जब गेंद जमीन से ऊपर रहता है। यह ऊँची गेंद निकलने के लिये तथा नीची ड्राइव के लिए प्रयोग होता है। गेंद की ऊंचाई पर वौली की प्रकार होगी। सिर के ऊपर भी वौली होती है।

कभी कभी बगल के प्रवेश से भी वौली लगाई जाती हैं। क्रिया दोनों में समान ही होती है केवल इसमें पैर शरीर के सामने दूसरी ओर झूलता है। मारने के समय खड़े हुए पैर पर शरीर घूमता है।

लो वौली कठिन अभ्यास है। सम्पर्क के समय मारने वाले पैर का घुटना गेंद के ऊपर होगा यदि गेंद समानान्तर भेजना है।

वगल में हटकर मारने वाले पैर को बगल में उठाने से ऊँची गेंद से सम्पर्क किया जा सकता है।

हाफ वौली उस समय लगायी जाती है जव गेंद टप्पा खाने वाला होता है। टप्पा तथा पैर के पंजे का सम्पर्क समकालीन होना चाहिए।

अभ्यास:

प्रारम्भिक अवस्था में गेंद हाथ से टप्पा खिलाया जाता है।

(१) दो में- हाथ से टप्पा खिला कर साथी को गेंद देना साथी यह पकड़ कर फिर साथी को देता है। दूरी क्रमशः बढ़ते

रहना चाहिये।

(२) गेंद ह्वा में फेंक कर फिर साथी के पास वौली करना।

(३) दो में-निश्चयता तथा दूरी के लिए गेंद वौली से किसी वृत्त में गिराना चाहिये।

(४) दो में—पहली बार किक करके वौली भेजना। पाने वाले गेंद को वापस करने के लिए टप्पा खाने दे सकता है उसके बाद गेन्द टप्पा खाने से पहिले वापस भेजना है।

(५) तीन में अ—ब को गेन्द फेंक देता है ब, स की ओर वौली किक करता है अ, स के पास जाता है जो उसे गेन्द फेंक कर देता है जिससे वह ब के पास बौली कर सके। अभ्यास दोनों पैरों से स्थान तथा दिशा बदल कर किया जा सकता है।

(६) दो में—एक साथी ऊँची वौली करता है दूसरा साथी लो ड्राइव वौली करता है। स्थान बदलते रहने से दोनों में अभ्यास मिलेगा।

सम्बन्धित अभ्यास

(१) गोलकीपर सेन्टर फारवर्ड को वौली देता है। वह राइट इन को जमीन पर पास देता है वह फिर गेन्द वौली से गोल में गिराता है।

(२) सेन्टर हाफ, गेन्द हवा में बैक को देता है वह वौली से दाहिने या वायें विंग मैन को देता है।

(३) गेन्द फारवर्ड के पास फेंका जाता है जो दाहिने या बायें वौली से विंग में गेन्द फेंकते हैं।

(४) गेन्द विंग मैन के पास फेंका जाता है, जो, गेन्द वौली

या हाफ. वौली से बीच में मारते हैं। निश्चित स्थान पर गेन्द गिराने की व्यवस्था होनी चाहिये।

ऐड़ी के पीछे :-

समय रहने पर कोई खिलाड़ी घूम कर पीछे पास करेगा। किन्तु शीघ्र खेल करने के लिये या प्रतिद्वन्दी को धोखा देने के लिये ऐड़ी के पीछे का प्रयोग किया जा सकता है।

इसके प्रयोग की रीति है कि मारने वाले पैर को गेन्द के ऊपर जाने दे, फिर घुटना को झटका दे, पीछे उछालने की क्रिया हो। खड़ा होने वाला पैर गेन्द के समीप होगा। यदि खिलाड़ी दौड़ रहा हो तो खड़े होने वाले पैर से एक कदम आगे जाना चाहिये कि जब ऐड़ी पीछे करे तो गेन्द सही स्थान पर होगा।

अभ्यास :-

(१) दो में–ऐड़ी के पीछे से स्थित गेन्द मारना।

(२) दो में–एक साथी गेन्द ढकेलता है फिर ऐड़ी के पीछे से मारता है साथी के पास।

(३) तीन में—अ, ब के पास गेन्द फेंकता है जो रोक कर ऐड़ी के पीछे से स को देता है प्रत्येक खिलाड़ी बारी लेते हैं।

(४) अ, व को गेन्द पास करता है जो दौड़ कर ऐड़ी के पीछे से अ को देता है स फिर गेन्द ब को देता है जो दौड़कर ऐड़ी के पीछे से अ को देता है खिलाड़ी अपना स्थान बदलते रहते हैं।

गेंद की दिशा बदलने का किक :-

किसी खिलाड़ी के पास जब गेन्द तेजी से आ रहा हो तो केवल

पैर के छूने से उसे अपने मार्ग से हटा सकते हैं।

जाब The Jab.

जाब के फुर्तीलेपन से होने के कारण आकर्षक दिखायी देता है। जब कोई खिलाड़ी तेजी से जा रहा हो तो बिना रुके हुये गेन्द में शीघ्र घुसेड़ने के क्रिया से मारने के द्वारा जाब किक होता है। इस में साधारण लो ड्राइव किक कि प्रारम्भिक क्रियायें होती हैं किन्तु सम्पर्क के साथ ही पैर के आगे जाने की गति रोक ली जाती है। जाब का प्रभाव पैर गेन्द मारने के साथ ही पीछे खींच लेने में होता है। जब खिलाड़ी किसी प्रतिद्वन्दी के सम्मुख होता है तो यह किक प्रयोग होता है।

गोल में शूट करना :-

इसमें शक्ति और ठीक होने की निश्चयता की आवश्यकता होती है। कोई किक प्रयोग में आ सकता है किन्तु लो ड्राइव, सब से उत्तम है।

अभ्यास के लिये गेन्द ४ फुट से नीचे मारना चाहिए। निशाना दोनो गोल पोस्ट से कुछ अन्दर होना चाहिये क्योंकि यह स्थान गोलकीपर से दूर रहता है। दूर से गेंद गोल में मारते समय दूर के पोस्ट के समीप निशाना करना चाहिये क्योंकि साधारणतः गोलकीपर समीप के पोस्ट के पास आ कर गेन्द की बाट जोहता है।

अभ्यास :-

निश्चय के लिये किक करना। निशाने पर शूट करना दो

डंडे प्राय: तीन फीट ऊंचा और चार फीट की दूरी पर उन पर क्रौस बार हो।

(१) दो खिलाड़ी आमने सामने १५-२० गज की दूरी पर हों। पहिला खिलाड़ी गेन्द क्रौस बार के नीचे से मारता है उस के सामने वाला खिलाड़ी रोक कर अपने साथी को देता है जो कि गेन्द क्रौस बार के नीचे मारता है।

(२) जैसे न० १ में किन्तु गेन्द बिना रोके हुये वापस करना

(३) गोल में शूट करना। गोल के नाप का अन्दाज करना, कोण तथा ऊंचाई का अन्दाज करना।

(४) दो समूह में खिलाड़ी विभाजित हो जायें, कुछ गोल के पीछे कुछ पेनालटी एरिया के बाहर। गोल में गेन्द मारना बारी बारी दोनों पैरों से।

(५) जैसे न० ४ में किन्तु गेद लुढ़का कर गोल में मारें।

(६) जैसे न० ४ में किन्तु गेन्द उछाल कर वौली या हाफ वौली गोल में मारें।

(७) जैसे नं० ४ में किन्तु पीठ गोल की ओर, सिर के ऊपर गेन्द फेंक कर घूमना तब वौली या हाफ बौली गोल में मारना। दोनों पैरों से बारी बारी।

(८) तीन समूहों में अ और द गेन्द शूट करें। व, ग गेन्द दे, स, फ गोल के पीछे गेन्द रोकें। ब, अ के सामने गेन्द देता है जो दौड़ कर मारता है। ग, द को उसी तरह गेन्द देता है।

(९) जैसे न० ८ में किन्तु ब वाले अ वालों को विभिन्न स्थान से गेन्द दें जब अ वाले अभ्यास कर चुकें तो वे फ वालों

के स्थान पर जाते हैं जो ब वालों के स्थान लेते हैं और ब वाले शूटिंग का अभ्यास करते हैं। प्रत्येक गति क्रमशः विधिवत किया जाता है समपूर्ण ब वाले सीधी लकीर पर रहते हैं, अपनी बारी से पास देते हैं और हट जाते हैं, अ वाले अपनी बारी से गेन्द लेते और शूट करते है।

सम्बन्धित अभ्यास :

(१) जोड़े में—आपस में पास देना तथा गोल की ओर आना। जैसे वे गोल के समीप आते हैं वैसे तेज होते जाते हैं और एक गोल में गेंद मारता है।

(२) जैसे न० १ में किन्तु जैसे वे पेनालटी ऐरिया के पास पहुंचे एक खिलाड़ी उन्हे बाधा दे। वे आपस में एक दूसरे को पास कर सकते हैं। आगे बढ़ने के लिये औफ साइड पोजिशन का ध्यान रहे।

(३) विंग, इनसाइड फारवर्ड और हाफ बैक आपस में पास करे, गोल तक आने में सभी को गोल में गेंद मारने का अवसर मिले।

(४) खिलाड़ियों को तीन समूह में बाट देना, गेंद रोकने वाले और आक्रमण करने वाले। रोकने वाले गेंद देने वालों को पास करें, जो आक्रमण करने वालों को पास करें और वे गोल में शूट करें। अवस्था बदलती रहे।

(५) हाफ, फारवर्ड को गेंद दें और वे गोल में शूट करें।

किकिंग अभ्यास के लिये छ'टे श्रेणी के खेल:

(१) खेल के मैदान के एक हिस्से में दो बृत बाहरी तथा

भीतरी वृत बाहरी वृत । में दो बैक, दो विंग मैन तथा सेन्टर फारवर्ड, अन्दर के वृत में तीन हाफ और इनसाइड फारवर्ड । गोलकीपर दोनों वृत को एक एक गेंद देता है । खिलाड़ी एक दूसरे को क्रमश: गेंद पास करते हैं और अन्तिम खिलाड़ी गोलकीपर को गेंद देता है । दोनों वृत्तों में प्रतियोगिता होगी ।

(२) चार खेलने वाले केन्द्रीय वृत में हों और चार गेंद वौली से अपने साथियों को बाहर दें । साथी वौली के द्वारा गेंद वृत्त में वापस भेजते हैं । वृत के समीप के लोग हेड या किक कर सकते हैं । वृत के चारो खिलाड़ी, गेंद वृत्त के अन्दर टप्पा खाने से वचाते हैं । यह वौली किक या हेड के द्वारा होती है ।

(३) कुछ खिलाड़ी वृत में होते हैं । जो बाहर होते हैं वे पैर के बगल से पास करके अन्दर वालो को घुटना के नीचे मारते हैं । तीन चार गेंद प्रयोग किया जा सकता है । जिन्हें गेंद छू जाता है वे बाहर आ जाते हैं और जो छूता है वह अन्दर चला जाता है ।

(४) पेनालटी ऐरिया में दो टीम आपस में आमने सामने खड़ी हों । प्रत्येक टीम के पास चार गेंद हो । दो और गेंद निशान लगे हुये दोनों टीम के मध्य में हों । आरम्भ होने पर खिलाड़ी अपने गेंद से निशान वाले गेंद, प्रतिद्वन्दी के लकीर के पीछे मारना चाहते हैं ।

(५) पेनालटी ऐरिया में निशान हो, दो टीम प्रतियोगिता करें गेंद से निशान मारने में ।

(६) गोल तथा गोल ऐरिया को तीन खिलाड़ी छ: खिलाड़ियों के विरुद्ध रक्षा करते हैं । तीन खिलाड़ी गोल के पीछे गेंद रोकने

के लिये रहते हैं। तीन गेंद प्रयोग होता है। आक्रमण करने वाले खिलाड़ी गेंद, गोल में या गोल ऐरिया में उछालते हैं। बचाने वाले गेंद को जमीन पर टप्पा खाने से हेड या वौली के द्वारा बचाते हैं। यदि ऐरिया में गेंद गिर जाये तो एक पोइन्ट मिलता है यदि गोल हो तो दो।

गेंद पकड़ना Trapping:

ट्रापिंग या गेंद पकड़ने का अर्थ केवल रोकना ही नहीं किन्तु गेंद पर नियन्त्रण से अर्थ रखता है। भटकते हुये गेंद का नियन्त्रग, टप्पा खाते हुये गेंद को काबू में करना, उसे जमीन पर लाना आदि गेंद पकड़ने में आते हैं।

साधारण नियम इसके लिये यह है कि सम्पर्क के समय जो शरीर का अंग गेंद रोकता है उसे कुछ पीछे हटना चाहिये।

पैर के तलवे से गेंद रोकना या पकड़ना।

गेंद की दिशा में खिलाड़ी अपना पैर कुछ ऊपर उठाता है। अंगूठा ऊपर रहता है, ऐड़ी जमीन से ३'',४'' ऊपर रहती है, घुटना मुड़ा रहता है और शरीर लचीला तथा आगे झुकाव लिये रहता है। गेंद तलवे तथा जमीन के बीच के पकड़ में आता है। यदि गेंद तेजी से आ रहा हो तो सम्पर्क पर पैर कुछ पीछे लाया जाता है। गेंद रुकने पर पैर से जरा छूने पर गेंद आगे लुढ़केगा।

चलते हुये गेंद को पैर के बगल से रोकना:

जैसे गेंद समीप आता है पैर शीघ्र सम्पर्क करता है। जैसे सम्पर्क समाप्त हो, वैसे पैर कुछ पीछे खींच लिया जाय जिससे गेंद की चाल रुक जाये।

ठप्पा खाते हुए गेंद को रोकना :

गेंद के गति का निर्णय कर उस स्थान पर होना जहाँ टप्पा होगा। इसका समय नियत करना सरल नही। टप्पा खाते हुये गेंद के समीप आना, खड़ा होने वाला पैर का अंगूठा कुछ बगल में और गेंद पीछे होगा, रोकने वाला पैर घुटना मुड़े हुये ऊपर उठेगा और अंगूठा ऊपर की ओर होगा। टप्पा के समय ही पैर का सम्पर्क गेंद से होगा और घुटना कुछ सीधा होगा। शरीर में कुछ झुकाव होगा इससे गेंद आगे बढ़ेगा। जैसे गेंद आगे बढ़ेगा सन्तुलन आगे बढ़ेगा। खेलने वाला पैर जमीन पर आयेगा और पहला कदम उठायेगा। इसका अभ्यास प्रत्येक कोण से गेंद के टप्पा खिलाने के द्वारा होगा। गेंद की तीव्रता भी बढ़ती जायेगी।

यदि गेंद के टप्पा का स्थान सही न मिले तो टप्पा के साथ उसे उठे पैर से ढकेल देने में नियन्त्रण में आ जायेगा। इसके लिए खड़े होने वाले पैर पर उछल कर सरकने की आवश्यकता हो सकती है।

कभी कभी जमीन पर गिरने से पहले गेंद पकड़ना पड़ता है। ऐसी अवस्था में दौड़ कर खेलने वाले पैर को बढ़ाकर अंगूठे को पीछे जहाँ तक हो सके मोड़ लें जिससे गेंद का सम्पर्क तलवे से हो। पीछे झुकने से सहायता मिलेगी और खेलने वाले घुटने को सीधी करें। सम्पर्क के साथ अंगूठा नीचे किया जा सकता है गेंद को नीचे करने के लिये।

यदि गेंद पैर के बगल से पकड़ी जाये जैसे बायें पैर के बगल से रोकना दायें ओर जाने से पहिले। पैर कुछ पीछे दाहिनी ओर

रखा जायेगा जहाँ गेंद गिरेगा। दाहिनी ओर कुछ झुकाव भी होगा जैसे बायां पैर कुछ बगल और आगे उठेगा। जैसे ही गेंद जमीन पर गिरे पैर गेंद के बगल में आयेगा और खींचा जायगा और दाहिनी ओर मुड़ना होगा। यदि गेंद बिल्कुल रोकना हो तो पैर के बगल को अधिक गेंद पर रखने से हो सकता है।

यदि उसी ओर जाना हो जिस ओर गेंद जा रहा हो और गेंद पैर के अन्दर पकड़ना है तो खड़े होने वाले पैर पर मुड़ना होगा और उस दिशा में शरीर का झुकाव होगा जिस दिशा से गेंद आ रहा हो। जैसे ही गेंद जमीन पर गिरे दायां पैर उठा और मुड़ा हुआ अहिस्ते से गेंद के बाहरी हिस्से पर आता है। घुमना समाप्त होता है और दांया पैर वगल में झुलाया जाता है और गेंद उसके साथ आ जाता है।

यदि गेद पैर के बाहर के हिस्से से पकड़ना हो और बगल से चलना हो तो पहिले की तरह कार्य होगा। खड़ा होने वाला पैर गेंद गिरने के स्थान से दूर होगा जिससे खेलने वाले पैर से समेटने का कार्य हो सके।

यदि पकड़ वायें पैर से हो बायीं तरफ जाने के लिए तो दायां पैर कुछ पीछे और कुछ गेंद की बांयी ओर होगा। शरीर बायी ओर झुकेगा और बायां पैर दाहिने के आगे क्रौस किया जायेगा, घुटना कुछ मुड़ा हुआ होगा। बायां पैर आसानी से दाहिने के सामने से खींचा जायेगा और अपने कदम में चलता जायेगा।

शरीर कुछ झुका हुआ होगा। यदि पैर से पकड़ सही नहीं होगी तब भी टांगों से गेंद जमीन पर आ जायेगा।

पकड़ने तथा रोकने में नियन्त्रण से खिलाड़ी अपने आप इन तकनीक में परिवर्तन कर लेंगे। इसके नियन्त्रण से एक पैर पर गेंद के साथ घूमना हो सकता है। पैर के अन्दर के हिस्से से पकड़ने से गेंद तो पीछे खींचा जा सकता है। पैर के अन्दर से पकड़ दिखाते हुए धोखा देकर खेलने वाला पैर जल्दी गेंद के पीछे लाया जा सकता है और पैर के बाहरी हिस्से से दूसरी ओर ले जाया जा सकता है।

यही धोखा उस समय दिया जा सकता है जब गेंद पैर के बाहरी हिस्से से रोक कर पीछे चले। खेलने वाले पैर के झुकाव के साथ शरीर न मोड़ते हुये अन्दर की ओर घूम जाते हैं।

ऊंचे गेंद को जमीन पर खींचना

गेंद खिलाड़ी के पास से तेजी से जा रहा होगा। वह पैर को बगल में बढ़ा कर नीचे ला सकता है। गेंद को पैर के अन्दर के के हिस्से में बैठा कर नीचे लाया जाता है। अनुभवी खिलाड़ी पैर का कटोरा बना कर गेंद नीचे लाते हैं।

प्राय: गेंद पैर से पकड़ में नहीं आता और शरीर का प्रयोग करना पड़ता है।

छाती का निचला हिस्सा टप्पा खाये गेंद को पकड़ने में प्रयोग होता है। वहां से पैर पर खेलने के लिये सामने लाया जा सकता है। खिलाड़ी गेंद की ओर बढ़ता है। पसलियों के नीचे सम्पर्क के समय शरीर धनुषाकार करके पेट की पेशियों को खींच कर और कंधों को आगे झुका कर गेंद लेता है।

कभी कभी गेंद के गिरने के समय पीछे हटना कठिन होता है

तो वह छाती के उपरी हिस्से से गेंद का नियन्त्रण करता है। गेंद ठुड्डी के नीचे लिया जाता है और छाती नीचे पीछे खींची जाती है जिससे गेंद न उछले। यदि उछलने की आवश्यकता हो तो कुछ पीछे उछल कर गेंद पकड़े और ऐसा समय निर्धारित करे कि गेंद छाती पर नीचे आते समय लगे।

जांघ से गेंद पकड़ना।

बुरी तरह टप्पा खाने वाले गेंद जांघ से ढकेल कर ऊपर किये जाते और दूसरे पैर से वौली किक किये जाते हैं। कभी इस प्रकार दूसरे के ऊपर से गेंद उछाले भी जा सकते हैं।

अभ्यास :

(१) साथी के साथ पकड़ सीखना। पैर के अन्दर के हिस्से से लुढ़काये हुये गेंद को मारना।

(२) तलवे से रोकना।

(३) साथी गेंद ऊपर फेंकता है, दोनों पैरों के सामने की हड्डी गेंद पर लाना।

(४) फेके हुये गेंद को तलवे से रोकना, आगे बढ़ना।

(५) दिवाल पर गेंद मार कर रोकना।

(६) साथी गेंद फेंकता है, दौड़ कर गेंद को पैर पर लेना जैसे वह टप्पा खाता है।

(७) ऊंची गेंद को तलवे पर रोकना।

(८) गेंद को पैर के किसी ओर से रोकना जिससे बगल में जा सके।

(९) बौल रोक कर घूमना जिससे गेंद पीछे ले जायें, पहिले

पैर के अन्दर के हिस्से से तब बाहर के हिस्से से ।

(१०) टप्पे से वापस आने वाले गेंद को सीने से रोकना । तब एक ऊंची गेंद को सीने के उपरी हिस्से पर लेना ।

(११) साथी गेंद फेंकता है और बतलाता है कि किस पैर से रोकना है और किस दिशा में जाना है ।

सम्बन्धित अभ्यास :

(१) गेंद फेंकने के बाद फेंकने वाला उसे लेने के लिए दौड़ता है । पाने वाला गेंद पकड़ता है और दायीं या बायीं ओर जाता है जिससे आने वाले खिलाड़ी से न मिले ।

(२) तीन में–एक खिलाड़ी गेंद भिन्न भिन्न दिशाओं में फेंकता है जिससे दूसरा खिलाड़ी रोके । तीसरा खिलाड़ी पहिले आक्रमण दिखाता है फिर सही आक्रमण करता है ।

(३) एक खिलाड़ी गेंद फेंकता है । गेंद साथी के पैर के पास जाता है । तीसरा खिलाड़ी उस पर आक्रमण करता है । पाने वाला गेंद रोकता है और प्रथम बार में अपने साथी को पास करता है ।

(४) एक खिलाड़ी दूसरे को पास करता तीसरा खिलाड़ी आक्रमण करता है । पाने वाला गेंद पर नियन्त्रण करता है और तल्वे से पीछे खींचता है और उसी समय घूम जाता है बौल आक्रमणकर्ता से छिपाने के लिये । गेंद छिपाते हुये वह दायें बायें जाने का धोखा देता है फिर पीछे घूम के गेंद जिससे मिला था उसे वापस देता है ।

## गेंद के साथ दौड़ना तथा छकाना–ड्रिबलिंग

### Dribbling & Running with the ball.

गेद के साथ दौड़ने और ड्रिबलिंग में अन्तर है । दौड़ने का

प्रशिक्षण देना आवश्यक है। प्रत्येक अभ्यास के घंटे में दौड़ने का व्यायाम होना आवश्यक है।

(१) गेन्द आगे मार कर उस के पीछे दौड़ना और वहां से किसी दिये हुये लकीर तक लाना।

(२) गेन्द मार कर कुछ रुक कर दौड़ना और न० १ की तरह।

(३) एक साथी,गेन्द अपने साथी के आधी दूरी पर मारता है। दोनों गेन्द लेने के लिये दौड़ते हैं और ड्रिबल करके गेन्द लाते हैं।

(४) खिलाड़ी साथ खड़े होते हैं,एक दौड़ता है और दूसरा उसके सिर के ऊपर से गेंद मारता है जो उसे दौड़ कर लाना पड़ता है।

(५) गेन्द के साथ दौड़ना–गेन्द एक गज की दूरी पर रखना

(६) गोलाई में एक पैर से गेन्द लेकर दौड़ना

(७) जैसे न० ६,किन्तु भिन्न भिन्न गति से।

(८) दौड़ते हुये सिगनल पर परिस्थिति से मुड़ जाना।

(९) दौड़ते हुये गेन्द का नियन्त्रण पैर के दोनों बगल से करना,दोनों पैरों का प्रयोग करना।

(१०) वस्तुओं के अन्दर बाहर से होकर गेन्द ले जाना

(११) गेन्द के साथ दौड़ते हुये शरीर के झुकाव से धोखा देना।

(१२) दो टीम विपरीत दिशा में दौड़ती हैं,एक टीम के प्रत्येक खिलाड़ी के पास एक गेन्द होता है जो दूसरे टीम के मिलने

के समय उन्हें दे दिया जाता है। खेल ऐसा ही चलता रहता है।

डिब्लिंग :-

छकाना या धोखे का आक्रमण ड्रिब्लिंग का तत्व है। खिलाड़ी जिस के पास गेन्द होता है अपने प्रतिद्वन्दी को दिखावट में कुछ करता,और वास्तविक रूप से कुछ और करके धोखा देता है। चाल में परिवर्तन एक धोखा देने का तरीका है।

एक अच्छा बचाने वाला अपने को शीघ्र ही सम्भाल लेगा। ड्रिबलर को धोखा अच्छे समय से देना सीखना होगा और ऐसा करे जिस से कार्य वास्तविक मालूम हो।

ड्रिवलर को अपने ऊपर पूर्ण विश्वास होना चाहिये। उसका काम इतनी तीव्रता से होता है कि प्रायः वह स्वचालक हो जाता है।

आक्रमण के समय एक पर एक का समीप निरिक्षण तोड़ देना चाहिये। एक अच्छा ड्रिबलर यह कर सकता है।

जितनी भी अच्छी तरह से एक खिलाड़ी ड्रिवल करे उसमें यह योग्यता होनी चाहिए कि सही पास कर सके और अपने को स्वतन्त्र करके पास लेने के लिए अच्छा स्थान ले। अच्छा ड्रिबलर सदैव प्रतिद्वन्दी को अनुमान की अवस्था में रखता और वह पता नहीं चला पाता कि ड्रिबल होगा या पास।

ड्रिबलर में तेजी तथा गेन्द के साथ दौड़ने में तेज प्रतिक्रिया, तेजी तथा गेन्द के सरलता और सुगमता से लेने की योग्यता, झुकना तथा इच्छा अनुसार मुड़ने की योग्यता, होना चाहिये। उसे प्रतिद्वन्दी के प्रतिक्रिया का अनुभव होना चाहिये, थोडे स्थान

में काम करने की योग्यता तथा कठित आक्रमण के सामना करने का विश्वास होना चाहिये ।

ड्रिबलिंग सिखाने का तरीका केवल प्रतिद्वन्दियों के साथ ड्रिबल करने से आता है । बनावटी रीति से सीखने से पूर्णतः प्राप्त नहीं हो सकता । साथियों के साथ अभ्यास करने के समय शीघ्र परिवर्तन होना चाहिए जिससे भिन्न भिन्न अनुभव प्राप्त हो सके । सीखने के समय गति धीरे धीरे करना चाहिए और जब पूरी रीति से आ जाये तो शीघ्रता से किया जा सकता है ।

शरीर को गेन्द और प्रतिद्वन्दी के बीच में रखना ।

(१) गेन्द के साथ दौड़ना—जैसे प्रतिद्वन्दी पीछे से बायी ओर आक्रमण करने आता है वैसे दायें पैर के बाहरी हिस्से से गेन्द का नियन्त्रण किया जाय फिर इस का उलटा ।

(२) प्रतिद्वन्दी के सामने आना तब दायीं या बायीं ओर जाना । गेन्द पैर के बाहरी हिस्से पर रहे ।

(३) प्रतिद्वन्दी की ओर पीठ करने के लिये मुड़ना तथा घुमना जो आक्रमण के लिये वास्तविक चेष्टा करता है ।

(४) कोई भी प्रणाली धोखा देने के लिये किया जाय फिर प्रतिद्वन्दी के पास से लौट आया जाय । आते समय गेन्द और प्रतिद्वन्दी के वीच में शरीर होगा ।

गति में परिवर्तन करना :-

(१) साधारण गति से प्रतिद्वन्दी के पास आना फिर कुछ मार्ग बदल कर तेज गति से जाना ।

(२) न० १ के समान किन्तु उलटे दिशा में जाने के पहिले

एक शरीर का झोंका देना।

(३) प्रतिद्वन्दी ड्रिबलर के साथ दौड़ते हैं। वे गति तेज तथा धीमी करते हैं

(४) जैसे न० ३ में किन्तु ड्रिबलर पैर से गेन्द रोकने का धोखा देता है। और जिधर जाता है उसी ओर गेन्द घसीट लेता है।

झुकना :-

यदि गेन्द प्रतिद्वन्दी तक ले जाया जाये और फिर झुकने की क्रिया की जाय तो झुकना बहुत थोड़ा होगा। किन्तु प्रतिद्वन्दी के पास पहुंचने से पहिले की जाय तो यह मालूम होगा कि वास्तविक रूप में उस दिशा की ओर जाना है। जैसे ही प्रतिद्वन्दी असंतुलित होता है,ड्रिबलर निकल जाता है। पूरी गति तेजी से होना चाहिये जिस से आक्रमणकर्त्ता को लौटने का समय न मिले।

(१) ड्रिबलर प्रतिद्वन्दी तक तेजी से पहुंचता है,वह धोखे का झुकाव करता है। आक्रमणकर्त्ता झुकाव की ओर बढ़ता है।

(२) जैसे न० १ में किन्तु दो बार झुकाव करता है पहिले बायें तब दायें और फिर बायें चला जाता है।

(३) जैसे न० १, २। आक्रमण सही मिलता है। यदि वह आक्रमणकर्ता को हरा देता है तो जीत जाता है।

गेन्द पर धोखे का खेल :-

पैर की कितनी ही करतूतें हैं जिस से खिलाड़ी दिखाता है खेल एक दिशा में और फिर दूसरी दिशा में जाता है।

(१) खिलाड़ी गेन्द मारने की क्रिया करता है और अन्तिम

क्षण में किक रोक कर उसी पैर से गेन्द किसी दूसरी दिशा में खींच लेता या ढकेल देता है।

(२) खिलाडी पैर के अन्दर के हिस्से से गेन्द बगल में खीचने की क्रिया दिखाता है किन्तु वह पैर केवल गेन्द के ऊपर ले जाता है और दूसरी दिशा में पैर के बाहरी हिस्से से खीच लेता है।

(३) खिलाड़ी दिखलाता है कि गेंद जोर से मारेगा किन्तु अन्तिम क्षण में खड़े होने वाले पैर पर घूम जाता है और खेलने वाले पैर के अन्दर के हिस्से से खड़े होने वाले पैर के पीछे ले जाता है।

(४) खिलाड़ी एक पैर के अन्दर के हिस्से से गेन्द मारता है और दूसरे पैर के अन्दर के हिस्से से रोक लेता है और दूसरी दिशा में चल देता है। गेन्द पर पहिला खेल अच्छे शरीर के धोखे के साथ होगा।

(५) जैसे न० ४ में किन्तु पहली गति और अच्छा धोखा होगा। गेन्द दूसरे पैर के अन्दर के हिस्से से रोकने के बाद वह इसी पैर के बाहरी हिस्से से धोखे के पहली दिशा की ओर गेन्द ढकेल देता है।

(६) खेलाड़ी गेन्द के साथ दौड़ता है और ऐसा दिखाता है कि पैर के बाहरी हिस्सा से ढकेल देगा किन्तु वह पैर ऊपर से केवल ले जाता है और दूसरे पैर के अन्दर के हिस्से से गेन्द आगे खींच लेता है। पहिले कुछ गति में शिथिलता होती है और तब तेजी जैसे खेल पैर के अन्दर के हिस्से से किया जाता है।

खेल की अवस्था में अभ्यास :

(१) पाचों फारवर्ड पेनालटी एरिया के बाहर १५-२० गज़

पर खड़े होते हैं। प्रत्येक आक्रमणकर्त्ता के समीप एक बचाने वाला है। प्रत्येक आक्रमणकर्त्ता गेन्द के साथ बचाने वाले की ओर दौड़ते हैं, पेनालटी ऐरिया में ड्रिबल करने की चेष्टा करते और गेन्द गोल में मारते हैं। थोड़ी देर में व्यक्ति परिवर्तन आवश्यक है।

(२) खिलाड़ी और प्रतिद्वन्दी १०-१५ गज की दूरी पर खड़े होते हैं। आक्रमणकर्त्ता को गेंद दी जाती है जिससे बचाने वाला तेजी से बचाये। आक्रमणकर्त्ता बचाने वाले के आक्रमण को हटा देता है, और उसके पास से ड्रिबल करके गोल में गेन्द शूट करता है।

(३) जैसे न० २ में किन्तु गेन्द विंग में दी जाती है जो अपने ही गोल की ओर मुंह करके खड़ा है। एक फुल बैक उसके पीछे छीनने के लिये आता है विंग मैन बैक से ड्रिबल कर के लाइन के समानान्तर दौड़ता है या पेनालटी ऐरिया के अन्दर मुड़ जाता है।

(४) गेन्द सेन्टर फारवर्ड के पास फेंकी जाती है जिससे वह गेन्द पकड़ ले और बचाने वाले के पास से ड्रिबल करके उसे देखता रहे।

(५) सेन्टर फारवर्ड को पास मिलता है। गोलकीपर दौड़ कर बौल लेना चाहता है। फारवर्ड ड्रिबल करता या गेन्द उसके सिर के ऊपर उछालता है।

(६) दो आक्रमणकर्त्ता एक बचाने वाले के सामने आते हैं। उसके पास से वे ड्रिबल कर ले जाते हैं।

(७) जैसे न० ६ में किन्तु थोड़े स्थान में काम किया जायेगा

जैसे गोल एरिया ।

(८) जैसे न० ७ में किन्तु तीन आक्रमण करने वाले, दो बचाने वाले के विरुद्ध काम पेनालटी एरिया में करते हैं । आक्रमणकर्त्ता आफ साइड से बचें ।

(९) तीन चार जोड़े ड्रिबलिंग, शूटिंग आक्रमण करना, अभ्यास करते हैं । एक जोड़ा गोल में जाते हैं और गेंद खेल से पहले पेनालटी ऐरिया के बाहर लुढ़का दिया जाता है । दूसरा जोड़ा ड्रिबल करता और गोल में शूट करने की चेष्टा करता ( गोल ऐरिया में शूट करना मना ) यदि कोई जोड़ा गोल करता तो गोलकीपर से स्थान बदल जाता है । यह फुल बैक के लिये अच्छा अभ्यास है यदि गोलकीपर हाथ से गेन्द न छुये ।

(१०) पेनालटी ऐरिया में पांच-पांच व्यक्तियों का फुटबौल। एक टीम गेन्द मारता है उसके बाद आगे पास नहीं हो सकता । खिलाड़ियों को ड्रिबल या पास पीछे करना पड़ता है जिससे पीछे का खिलाड़ी आगे गेन्द के साथ आये । गोल उस समय होता है जब खिलाड़ी गेन्द के साथ लाइन पार कर जाता है । गोल के बाद स्थान बदल जाता है । खेल किक से आरम्भ होता है । थ्रो इन साधारण रीति से होता है ।

## पास देना Passing :

एक दूसरे से सहयोग तथा मेल स्थापित करने के लिये उत्तम पास करना और पास लेना आवश्यक है । यह सिर से या पैर से हो सकता है । थोड़ी दूरी या अधिक दूरी तक जमीन पर या हवा में हो सकता है । किन्तु जब तक यह सही नहीं होगा तब तक कोई

लाभ नहीं। खिलाड़ियों में मिल कर खेलने के लिये सर्व प्रथम पासिंग पर ध्यान देना होगा। यदि एक ऐसे खिलाड़ी को जो प्रतिद्वन्दी से पृथक है और अच्छे स्थान पर है, तो उसे पास देने से, उसे उस पर नियन्त्रण का समय मिलेगा और उसका उत्तम प्रयोग करेगा।

बुद्धिमानी के साथ सहयोग के लिये सबसे बड़ी कठिनता होती है ध्यान के बट जाने में। खिलाड़ी जो खेलने वाला है उसे पहिले ही सम्भावित खेलों का विचार कर लेना चाहिए। जब वह गेंद लिये हुये है तो उसका पूरा ध्यान गेंद पर होना चाहिये किन्तु उसे यह योग्यता होनी चाहिये कि वह गेंद से फिल्ड में और फिल्ड से गेंद पर ध्यान शीघ्रता से लगा सके। यह क्षणिक दृष्टि अपने आप में ही एक बड़ी कला है और जभ्यास से प्राप्त किया जा सकता है।

पास अनेकों अभ्यास के खेलों से ही सही हो सकता है।

अभ्यास:

दो खिलाड़ियों के बीच आपस में पास। यह अधिक नहीं होना चाहिये। यह उत्तम है कि गेंद किसी और से मिले और पास किसी और को दिया जाय। टेढ़ा पास-दो व्यक्तियों के बीच टेढ़ा पास। पास पाने वाले के कुछ आगे देना चाहिये जिससे वह अपने चलने में खेल सके।

(१) पाने वाला गेंद पर अपने दूर के पैर के अन्दर से नियन्त्रण करता है और दूसरी कदम पर गेंद पास कर देता है।

(२) पाने वाला समीप वाले पैर से गेंद पर नियन्त्रण करता है और फिर घूम कर अपने दूर वाले पैर के अन्दर के स्थान से गेंद साथी के पास समेट कर फेक देता है।

(३) पाने वाला पास करने के पहिले अपने समीप के पैर के बाहरी हिस्से से गेंद पर नियन्त्रण करना है ।

(४) पहिली बार में आपस में पास करें, इसमें पैर के अन्दर तथा बाहर के हिस्सों का प्रयोग करें । जाब किक तथा लो ड्राइव का प्रयोग करें ।

(५) आपस में समीप से एक दूसरे को पास करें ३-५ गज की दूरी पर धीरे धीरे दूरी बढ़ा कर २५-३० गज कर लें और फिर समीप आ जायें ।

(६) पाने वाले गेंद पर नियन्त्रण करके उसे आहिस्ता से आगे ढकेलता है और फिर एक 'चिप' पास गेंद को ८-१० फीट उछाल कर साथी को देता है।

(७) पहली वार में आपस में पास-पैर के अन्दर से वौली करना ।

(८) हाफ वौली या वौली साथी के पास भेजना जो उसको हेड करता है ।

(९) विचार करें कि प्रतिद्वन्दी छीनने की चेष्टा कर रहा है । गेंद मिलने पर पास करने से पहिले झुके घूमें या मुड़ें ।

(१०) खिलाड़ी एक दूसरे के पीछे आगे बढ़ते हैं ब, अ को गेंद वापस देता है अ फिर आगे पास करता है । पहिले गति धीरे हो फिर तेज होता जाये । ब को अपने आगे बढ़ने की गति अधिक न रोकने के साथ काम करने का अभ्यास करना होगा । अ को काफी तेजी से गेंद भेजना होगा जिससे ब के आगे जाये और ब के गति में शिथिलता न आये ।

इसके पश्चात् खिलाड़ी आगे की गति बढ़ाने की चेष्टा करें। अ लौब, वौली तथा चिप पास का अभ्यास ब को करा सकता है। ब ऐड़ी के पीछे, हेड तथा पैर के बगल से वौली कर सकता है।

(११) अ, ब को गेंद पास करता है और उसके पीछे उसी दिशा में जाता है ब कट कर तिरछा चला जाता है और अ उससे २०-३० गज की दूरी पर उसी सीध में रहता है और ब से गेंद प्राप्त करता है।

(१२) जैसे न० ११ में पास करना और विपरीत दिशा में पास देना।

(१३) न० ११ और १२ को बदल बदल कर करें।

(१४) अ, ब को गेंद देता है और उसके पास से आगे दौड़ता है और फिर आगे पास करता है। ब आगे बढ़ता है और उसी तरह अभ्यास चलता है।

(१५) अ गेंद के साथ दौड़ता है और मालूम होता है कि ब को पास करेगा किन्तु वह ऐड़ी के पीछे से या गेंद मुड़ कर दे देता है। ब गेंद के साथ अ के पीछे दौड़ता है और कुछ दूरी पर रहता है और वापस गेंद प्राप्त करता है।

ऐसे अभ्यास स्वतंत्रता से प्रत्येक दिशा में घूम घूम कर करना चाहिये। जिसके पास गेंद हो उसे यह जानना आवश्यक है कि उस का साथी कैसे दौड़ रहा है।

दो से अधिक में पास :

(१) अ के सामने तिरछे ब, स से खड़े होते हैं। अ बारी बारी दोनों को पास देता है और वापस लेता है। अ के सामने दो निशानों

का अभ्यास है।

(२) अ एक वृत्त के केन्द्र पर रहता है और ब, स कुछ दूरी लिये हुये वृत पर रहते हैं। ब,स,अ के चारों ओर दौड़ते हैं ब, अ को गेंद देता है और स को देता है फिर स, ब को देता है। पहिले गेंद रोक कर पास करना फिर पहली बार में पास करना। अभ्यास हो जाने पर अ भी आगे बढ़ता है।

(३) अ, ब, स त्रिकोण में चलते हैं। अ,ब को और ब,स को पास करता है। पास करने से पहिले वे एक दूसरे का स्थान देख लेते हैं।

(४) जैसे न० ३ में किन्तु स के पास मिलने के समय वह अपना स्थान बदल देता है और पास करने वाला उसके नये स्थान को देख कर पास करता है। पास मिलने के पहले जिसे पास मिलना हो अपना स्थान बदल दे।

(५) जैसे न० ४ में किन्तु पास पहिली बार में।

(६) आपस में एक दूसरे को पास किन्तु जब गेंद ब के पास आता है तो अ और स दोनो अपना स्थान बदल ले।

(७) जैसे न० ६ मे किन्तु गोल की ओर चलना।

(८) जैसे न० ६ में किन्तु तेजी के साथ और किसी प्रकार का पास प्रयोग करे।

(९) आमने सामने एक दूसरे को पास तथा आगे पीछे बढ़ना।

(१०) अ, ब की ओर तिरछा पास करता है जो खेलने का धोखा देकर छोड़ देता है जिससे गेंद की ओर जाये।

(११) दो खिलाड़ी आपस में पास करते हैं, तीसरा उनसे छिनने

के लिये आता है ।

ऐसे ही अनेकों प्रकार के पास का अभ्यास कराया जा सकता है । इसमें अच्छा नियन्त्रण, निश्चयता, उचित स्थान का लेना तथा पास देने वाले को स्थान का सही ज्ञान होना चाहिये । पास देकर पास की आशा से सुरक्षित स्थान लेना चाहिये यह पास की विधि का एक मुख्य नियम है ।

## गेंद लेने की चेष्टा Tackling

आक्रमण भी वास्तविक खेल के द्वारा ही आता है । शारीरिक सम्पर्क तथा आधारित तकनिक साधारण अभ्यास से सीखा जा सकता है किन्तु बचाने या आक्रमण की वास्तविक शक्ति अपने प्रतिद्वन्दी से गेन्द लेने में हैं जो स्वय बचाना चाहता है । यह स्थिति तो वास्तविक खेल में ही प्राप्त हो सकता है । आक्रमण का वास्तविक खेल की अवस्था में होना आवश्यक हैं । साधारण अभ्यास से आक्रमण तथा बचाव का वास्तविक अभ्यास नहीं हो सकता । छोटे क्षेत्र में पाँच पाँच का फुटबौल या दबाव प्रशिक्षण जिसमें अधिक फार्वड एक बचाने वाले के सामने काम करते हैं, लाभदायक हो सकता है ।

तीन प्रकार से गेंद लिया जा सकता हैं ।

कंधे से चार्ज करना, गेन्द पहुचने से पहिले रोक लेना तथा प्रतिद्वन्दी के पास से आक्रमण कर के गेद लेना ।

१. कंधे से चार्ज करना :-

चार्ज केवल कंधे से सटे हुये हाथ के द्वारा हो सकता जो न अधिक जोर से या भयानक हो । प्रतिद्वन्दीं के उसी स्थान पर चार्ज

होता है जिस स्थान से चार्ज करने की चेष्टा की जाती है। दो खिलाड़ी साथ दौड़ते हो या विपरीत दिशा से आ रहे हों। ऐसी अवस्था में हल्के धक्के से दूसरे को असन्तुलित किया जा सकता है। अनुभवी खिलाड़ी इसको समझ जाता है और इस लिये अपने को चार्ज करने वाले की ओर झुका देता है जिस से चार्ज का प्रतिरोध हो। अतएव एक शक्ति पूर्ण क्रिया की आवश्यकता होगी। आक्रमण उस समय होना चाहिये जब प्रतिद्वन्दी का वजन बाहरी पैर पर हो जिससे वह सम्भल न सके।

२. गेंद को प्रतिद्वन्दी के पास पहुंचने से पहिले रोकना :-

बचाने वाले के शीघ्र प्रतिक्रिया से अनेकों गेंद रोके जा सकते हैं। तेज बढ़ने की योग्यता, फैलना तथा कूदने की योग्यता से गेंद आसानी से रोका जा सकता है।

अभ्यास

(१) एक खिलाड़ी गेंद मारता है और दो उसे लेने की चेष्टा करते हैं।

(२) दो में पास हो तीसरा बीच में रोकने की चेष्टा करता है।

(३) जब आक्रमण करने वाला आ रहा हो तो बचाने वाला जैसे वह खेलना चाहता है गेंद लेने या उसे रोकने की चेष्टा करता है। यदि वह रोकना चाहे तो उसे शरीर का वजन पूरी रीति से उस पर डालना है जिस से जिस पैर से रोका जाये वह शक्ति से लाया जाये। यदि सम्भव हो तो वह झुक कर प्रतिद्वन्दी से कंधा मिलाता है। खेल पैर के अन्दर के हिस्से से होता है और घुटना बाहर की ओर मुड़ा होता है। वजन खड़े होने वाले पैर पर रहता

है जिससे मारने वाले पैर से दूसरी बार भी खेल हो सके। खिलाड़ी कुछ झुका हुआ होता है जिस से धक्के से असन्तुलित न हो जाये। यदि खिलाड़ी पैर बढ़ा कर रोकता है तो, या तो वह रोकने के स्थान से पीछे झुकेगा या शरीर का वजन रोकने वाले पैर पर होगा। पहिली अवस्था में पैर की रोकने की शक्ति कम होती है और दूसरे में पैर भयानक अवस्था में पड़ जाता है।

जब गेंद पैरों के बीच में रोक लिया जाता है तो दूसरे रोकने वाले पैर में तेज क्रिया से गेंद छुड़ाया जा सकता है। एक उठाने की क्रिया से गेंद ऊपर उठ जायेगा या एक घूमने की गति से गेंद खड़े होने के पैर के पीछे खींचा जायेगा। इस घूमने के क्रिया में रोकने वाले को एक पैर पर शीघ्र घूमना है और गेन्द तथा आक्रमण करने वाले के बीच में आ जाना है।

रोकने की क्रिया पैर के घुसेड़ने के क्रिया से भी हो सकता है। इस में तलवे से गेंद का सम्पर्क किया जाय, बगल से धक्का देने की क्रिया इस से उत्तम है।

यदि बगल से रोकना है, तो बचाने वाले को रोकने की क्रिया में शरीर का वजन देना है। अन्तिम पग में खड़ा होने वाला पैर, गेंद के समीप होना चाहिए और खिलाड़ी को रोकने की दिशा में घुमना और झुकना चाहिए। एक हलके बाहरी झुकाव से रोकने में सहायता हो सकती है।

पीछे से आकर रोकने में, एक रोकने वाला, एक पैर पर घूम कर खेलने वाले पैर से गेंद पर झुकाव देता है। वह कुछ बाहर की ओर झुकता है जब तक कि अन्तिम पग में अपने खड़े होने वाले पैर को वह गेंद में कुछ आगे लाता है। वह इस पैर

पर घूमता है जब कि रोकने वाला पैर गेंद खेलने की चेष्टा करता है। इस में बगल से पंजा प्रयोग में लाना सरल होगा। शरीर झुका हुआ रहेगा।

एड़ी के पीछे से रोकने में साथ साथ दौड़ते हुये अन्दर का पैर उठा कर गेंद पर रखा जायगा ओर एड़ी से गेंद रोका जायेगा। इसमें पैर पीछे की ओर नहीं झुलता है। गेंद के साथ सम्पर्क कर के पैर रुक जाता है और उसी पैर पर शरीर का वजन आ जाता है। खिलाड़ी को शीघ्र ही घूम कर गेंद अपने कब्जे में रोकने के बाद कर लेना है।

कभी कभी केवल सरकने के द्वारा ही प्रतिद्वन्दी को रोका जा सकता है। खिलाड़ी अपने समीप वाले पैर तथा पुट्ठे पर जमीन पर सरकता है। मुड़ा हुआ हाथ इस अवस्था में शरीर का टेक होगा। बाहर का पैर पन्जे से गेंद खेलने की चेष्टा करेगा।

अभ्यास :-

(१) गेद से एक कदम हट कर खिलाड़ी खड़े हों। दोनो बायाँ पैर कुछ पीछे और गेंद के बगल में रखें और इस अवस्था में दाहिने पैर से रोकने की चेष्टा करें। बायें पैर से भी यही अभ्यास।

(२) जैसे न० १ में दाहिने कंधे के चार्ज से मिला दे जैसे रोक से रोकना होता है।

(३) एक खिलाड़ी गेद आगे ड्रिबल करता हैं और दूसरा रोक से रोकने की चेष्टा करता है।

(८) जैसे न० १ में किन्तु प्रारम्भिक रोक के बाद खिलाड़ी एक दूसरे के पैर के ऊपर गेंद उछालते हैं।

(५) जैसे नं० १ किन्तु प्रारम्भिक रोक के बाद खिलाड़ी पैरों को अन्दर पीछे घुमा कर गेंद को पैरों के बीच में कर लेते हैं

(६) पीछे से आकर साथी को रोको इस के लिए एक पूर्ण एक पैर पर घूमना, साथ साथ दौड़ना और गेंद के ऊपर समीप वाला पैर रख कर रोकना और पैर के बाहर के हिस्से से गेंद को साथी के सामने से हुक करना।

(७) एक पैर से बगल और पुट्ठे पर गिरना। खड़ा होने वाला पैर का घुटना मुड़ता है जिससे शरीर क्रमशः गिरे। खेलने वाले पैर को एक बड़े वृत्त में जमीन पर झुलाते हैं।

(४) जैसे न० ७ में किन्तु चलते हुये गेंद पर लुढ़कना।

(५) साथी, साथ साथ, धीरे धीरे गेंद के लिए जाते है उसके पास पीछे से तिरछे आना जिस से लुढक के रोक कर सकें।

(१०) ५ गज की गली में खड़े हुए साथी के पास से ड्रिबल करके चला जाना।

(११) दो खिलाड़ी ५ गज की गली में एक बचाने वाले के पास आते हैं और आपस में पास और ड्रिबल करते हैं।

(१२) दो छड़ियां ५ गज की दूरी पर रखी जाती हैं। अ दोनों के बीच में खड़ा होता है और ब, स दोनों के बगल में १० गज पर खड़े होते हैं और आपस में गेंद पास करते हैं और अ उसे रोकता है।

## हेड करना Heading

सिर से गेंद मारना कोई प्राकृतिक कार्य नहीं है। यदि कोई वस्तु आखों की ओर आये तो आंखे बन्द होती हैं और हेड करने में

गेंद को देखने की आवश्कता होती है।

सिर से हेड करने का सबसे उत्तम स्थान माथा है। सिर के सामने की गति और जब यह धड़ के सामने की गति से मिलाया जाता है तो बहुत ही शक्ति शाली गति बन जाता है।

सामने हेड करना :

जब गेंद सामने आता है तो सिर को ऊपर करके उसे देखना है। गेंद उछल कर ऊपर वापस न जाये इस लिये पीछे झुकना है इसके लिये धड़ मोड़ना, सिर ऊंचा करना चाहिये। इस अवस्था में गेंद अच्छी तरह दीख सकेगा और फिर कमर के शक्ति पूर्ण गति से सामने झूलेगा। सिर आगे आता है और एक जोर का धक्का देता है। गर्दन की मांस पेशियां खिच जाती हैं जिससे धक्का का प्रभाव सह ले। आंखे गेंद की गति को देखती रहती हैं। हाथ जो आगे की ओर रहते हैं जब कमर पीछे झुकती है तो कोहनी पर मुड़ कर पीछे आ जाते हैं जिससे मारने की क्रिया में सहायता हो।

यदि कूदना सीधे हो तो खिलाड़ी को कमर और सिर के क्रिया से गेंद के सामने ड्राइब दिया जाता है। सिर हिलाने की क्रिया और भी आवश्यक है यदि सही रीति से समर्पक के समय ऊपर की गति शक्ति न हो सका होगा। कूदने का ठीक समय निर्धारित करने के लिए बहुत अभ्यास की आवश्यकता है।

कुछ दौड़ और एक पैर से टेक आफ से और ऊंचाई प्राप्त की जा सकती है। ऊपर सीधे उछलने के लिये अन्तिम पग में थोड़ा पीछे झुकना होगा जिससे जैसे खड़ा होने वाला पैर सीधा किया जाय शरीर सीधी अवस्था में हो जाए। ऐड़ी जमीन पर रख कर

आगे पैर के गोले पर पेंग लेने के द्वारा टेक आफ लिया जाता है।

गेंद के लिए आगे कूदने में कुछ पहिले टेक आफ लेना होता है। यह उत्तम है, कि जिस स्थान पर हेड करना है वहां से कुछ पीछे रहें, न कि बिलकुल उसके नीचे जिससे कम से कम, हेड करने के लिए कूदने में एक कदम ले सके।

हाथों की प्राकृतिक गति जो आगे होती है उस पर नियन्त्रण रखना आवश्यक है जिससे किसी प्रतिद्वन्दी को हाथों से धक्का न लगे।

गेंद को शक्ति के साथ नीचे हेड करने में सिर को गेंद के बिलकुल पीछे से आरम्भ करना होगा। गेंद शरीर के सामने गिरने दिया जाता है जिससे माथा का चपटा हिस्सा नीचे की ओर हो जिस समय सिर से गेंद मारा जाता है इसमें सही समय निर्धारित करना कठिन होना होता है। यदि जल्दी मारा जाये तो गेंद सिर के ऊपर से फिसल जायेगा। यदि देर होगी तो गेंद नाक पर लगेगी। जब खिलाड़ी को गेंद के लिये कूदना पड़ता है तो गति में शक्ति लाना कठिन हो जाता है क्योंकि शक्ति कमर के झूलने और सिर के छोटे झटके मे आती हैं।

शक्तिशाली हेड के लिए सिर के बगल से हेड करना उचित नहीं क्यों कि चोट लग जाने की सम्भावना होती है। बगल से हेड करना सरल है क्योंकि गति वही होती है जैसे पहिले। इसमें पुट्ठे तथा कमर घुमाये जाते है।

पीछे हेड करने के लिए शरीर को मजबूती तथा तेजी से घुमाने से सिर उस स्थान पर होगा जहां से पीछे हेड किया जा सकता है।

एक गिरते हुये गेन्द को पीछे हेड किया जा सकता है। सिर को पीछे मोड़ देने और गेन्द को उस पर से टप्पा खाने देने से गेन्द पीछे जायगा।

सिर से गेन्द की दिशा बदली जा सकती है। सिर केवल फिसलने का स्थान होता है। इसमें शक्ति की आवश्यकता नहीं।

अभ्यास :-

(१) खिलाड़ी गेंद फेंक कर दो बार ऊपर हेड करने की चेष्टा करता है।

(२) एक खिलाड़ी ५ गज से गेंद फेकता है और दूसरा सिर के झटके से वापस करता है।

(३) १० गज की दूरी पर खड़े होते हैं जैसे न० २ में किन्तु कमर और सिर की गति का प्रयोग करते हैं।

(४) तीकोनी अवस्था में खिलाड़ी खड़े होते है। अ, ब को देता है जो कमर घमाकर स को हेड करता है। स गेंद अ को देता है जो ब को हेड मारता है।

(५) साथी १०–१५ गज की दूरी पर खड़े होते हैं। साथी के एक ओर गेंद फेंकते हैं जिससे उसे आगे, बगल में या पीछे जाना होता है जिससे हेड करने का सही स्थान मिल जाये। गेंद फेंकने की ऊचाई वदलती रहती है।

(६) गेन्द फेंका जाये जिससे हेड के लिये खड़े होकर कूदा जाये।

(७) गेन्द फेंका जाये जिससे आगे दौड़ कर हेड किया जाय।

(८) साथी को वौली किक दी जाये जो आगे आकर हेड करता है।

(९) गेन्द फेंका जाये, साथी नीचे फेंकने वाले के पैर पर हेड करता है।

हेड करने के खेल :

(१) दो टीम ६-८ खिलाड़ियों की। प्रत्येक टीम के पास एक गेन्द हेड से जितनी बार पास कर सकते हैं करें। जिसका अधिक हेड होगा उसकी जीत होगी।

(२) हेड से वौली बौल—सर्विस हाथ से-बौल वापस भेजना हेड से।

(३) हेड से राऊन्डर्स—गेन्द हाथ से पिच करना और हेड से मारना।

(४) हेड से टेनिस—सर्विस वौली किक या नीचे के फेंकने से की जाती है। गेद हेड से या वौली किक से वापस किया जाता है।

(५) हेड से दिवाल टेनिस—सिर से सर्विस करना। बाद में वौली किक या हेड से एक टप्पे पर गेंद दिवाल तक भेजते रहना।

## गोल कीपर Goal Keeping

गोल बचाने को कौशल मे दूसरों से बिल्कुल भिन्न हैं। महत्वता हाथ के प्रयोग पर दिया जाता है।

गोलकीपर के लिये वैसी क्रिया तथा व्यायाम की आवश्यकता होती है जिससे उसका लचीला पन बढेगा। हाथों को मजबूत करने का उद्देश्य होगा।

गोल कीपर से लिये लम्बा डौल अच्छा है। एक हाथ की जगह गोलकीपर के लिये मुख्य बात है सुरक्षा। एक हाथ की जगह प्रयोग करना चाहिये। जहां तक हो सके शरीर दोनों हाथों के पीछे होना चाहिये।

नीची गेंद को पकड़ना :-

गोलकीपर गेद की सीध में अपने को रखता है। पैर मिले हुये होते हैं। जैसे वह हथेली ऊपर रखते हुये हाथों को गेंद के नीचे रखने के लिये झुकते हैं कोहनी अन्दर की ओर रहती है और जैसे हाथों में गेंद आ जाता है वे सीने की ओर लाये जाते हैं जिस से गेंद मजबूती से पकड़ा जाये।

कुछ गोलकीपर बगल में उकड़ू बैठ जाते हैं। वे घुम कर समीप वाले पैर पर आधा घुटना टेकते हैं। जैसे गेंद हाथ में आ जाता है वे गेंद भेजने के लिये खड़े हो जाते हैं।

कमर के ऊंचाई का गेंद पकड़ना :

हाथों के पीछे शरीर से गेंद पकड़ना चाहिए। हथेली ऊपर की ओर जिससे गेंद सीने के पास पकड़ कर रख लिया जाये। हाथ गेंद को ढके रहते है।

सीने की ऊंचाई का गेंद पकड़ना :

क्रिया पहले की तरह। कितने गोलकीपर एक हाथ गेंद के ऊपर दूसरा नीचे रखते हैं। कोहनी शरीर के समीप होती है और उंगलियाँ फैली होती हैं। गेंद ढोढ़ी के नीचे पकड़ी जाती है। गोल कीपर कभी ऊंची गेंद के लिए कूदते हैं और गेंद पकड़ते हैं।

यही तकनीक बगल से ड्राइव करके गेंद रोकने में भी प्रयोग होता है। बगल से गेंद गिरने पर भी यही तकनीक प्रयोग होता है।

सिर के ऊपर गेंद पकड़ना :

हाथों को गेन्द के पीछे और उंगलिया छितरी हुई रखते हुये

पकड़ना । यदि किक तेज है तो गोलकीपर हाथों को पीछे जाने देता है । गेन्द की गति का सही अन्दाज होना चाहिए । जैसे गेन्द हाथ में आता है कोहनी मुड़ जाते हैं जिससे गेन्द शरीर के सामने नीचे लाया जाय ।

एक अच्छे गोलकीपर का चिन्ह है ऊंचे गेन्द को रोकना ।

कभी कभी ऊँचीं गेन्द को लेना संकटमय होता है। ऐसी अवस्था में गेन्द क्रास बार के ऊपर कर दिये जाते हैं। हाथ से मार के गेन्द नहीं भेजना चाहिये। कूद कर जैसे हथेली और उंगलियाँ गेन्द से समर्पक करती है हाथ घुमाकर उसे क्रौसवार के ऊपर कर दिया जात। है। यदि गेन्द क्रौस बार से ऊंचा हो तो गोलकीपर को उसे पकड़ना चाहिए ।

यदि गेन्द क्रौस बार के नीचे तेजी से आ रहा हो तो दोनों हाथ प्रयोग करना चाहिये ।

जब अनेकों लोग गेन्द के लिये कूदते हैं तो वह गेन्द घूसे से मारता है। गेन्द को डेड करने के लिये जब गोलकीपर जमीन पर गिरता है तो उसे गेंद अपने शरीर के नीचे खींच लेना चाहिये। हाथों से गेंद पकड़े हुए शरीर को उसके ऊपर लाना चाहिये। वह अपने पैरों पर गेंद शरीर से चिमटाये खड़ा होता है और झुके हुये बाहर निकलता है ।

गोलकीपर पेनालटी एरिया में गेंद जहाँ चाहे वहाँ रख सकता है किन्तु वह बिना टप्पा खिलाये चार पग से अधिक नहीं ले सकता है। गोलकीपर को प्रतिद्वन्दी को धोका देना सीखना होगा। हाथ में गेंद पकड़े हुये वह दिखा सकता है जैसे टप्पा खिलाना चाहता हो

और इसकी जगह पर झुकते हुये दूसरी ओर निकल जा सकता है। वह ऐसे अनेकों काम कर सकता है।

गेंद फेंकने के लिये ऊपर हाथ से गेंद फेंका जा सकता है। जमीन पर गेंद लुढ़काया या ऊपर फेंका भी जा सकता है।

अभ्यासः—

(१) नीची आती हुयी गेंद को रोकना।

(२) फील्ड में जा कर २० गज से आती गेंद रोकना।

(३) दाहिने बायें आते हुये गेंद रोकना।

(४) कमर तक आती गेंद रोकना।

(५) सीने तक आती गेंद रोकना।

(६) कूद कर ऊंचे गेंद को हाथों को ऊपर किये रोकना।

(७) कई एक आते हुये गेंद को बचाना।

(८) साथी पेनालटी मार्क पर खड़ा होता है वह एक हाथ से, वौली, हाफ वौली और ड्राइव से गेद देता है। वह गोलकीपर को उस के पहुंच के बाहर गेंद मार कर छकाना चाहता है।

(९) ऊंची गेंद को रोकना, बार के ऊपर फेकना, घूसे मारना। एक गेंद फेंकता है दूसरा गोलकीपर के सामने आक्रमण के लिये आता है।

(१०) साथी ५-१० गज की दूरी पर खड़ा होके शीघ्रता से गेंद गोल में लुढ़काता है। कई एक गेंद होते हैं। गोलकीपर उन्हे रोक रोक कर फेकता है।

(११) एक आक्रमणकर्त्ता गेंद गोल तक लाता है। गोलकीपर आगे बढ़कर कोण को छोटा करता फिर उस के पैर पर ड्राइव

करता।

(१२) तीन फारवंड १८ गज से शूट करते। उन्हे रोकना।

(१३) दो वींग के खिलाड़ी गेंद सेन्टर करते और एक तीसरा गोल में मारता।

गोलकीपर को स्थान तथा गति का सही अनुमान होना चाहिये। उसे सदा उस अवस्था के लिये तैयार रहना है जिसकी आशा नहीं किन्तु हो सकती है। गोलकीपर गेंद देखते ही तैयार हो जाता है किन्तु वह बचाने के लिये उसी समय चाहता है जब गेंद मारा जाता है।

जब गेंद तिरछी आती है तो गोलकीपर गेंद की ओर बढ़ता है कितना और कैसे बढ़ना है अनुभव से ही मालुम किया जा सकता है।

सम्बन्धित अभ्यासः—

(१) गोलकीपर दो बैक के साथ गेंद रोकते हैं।

(२) गोलकीपर अपने साथियों को गेंद देता है।

(३) जैसे नं० २ में किन्तु गेंद गोल में मारा जाता है। जैसे फारवर्ड चाहते हैं वैसा गेंद देता है।

(४) दूसरों के साथ कोर्नर किक रोकना।

(५) दूसरों के साथ गोल के समीप फ्री किक रोकना।

(६) पेनालटी किक़ रोकना।

## थ्रो इन (Throw in)

नियम है कि फेंकने वाला गेंद सिर के ऊपर से फेंकेगा। थ्रो इन दोनो हाथ से होना चाहिये। एड़ी उठ सकती है किन्तु दोनो पैर

ज़मीन पर होना चाहिये।

यदि थ्रो इन ३५ गज तक हो तो इस से अच्छे खेल की सम्भावना हो सकती है। थ्रो इन केवल हावस के लिये नहीं किन्तु सभी के लिये है इस लिये प्रत्येक को इस का अभ्यास करना चाहिये और अच्छी दूरी तक थ्रो करने की चेष्टा करनी चाहिये।

थ्रो के लिये गेंद दोनो हाथों के उंगलियों से पकड़ा जाता है जिस से उनका ज़ोर गेंद के फेंकने के समय पीछे हो।

अधिक लोग पैर फैला कर खड़ा होना पसन्द करते हैं। घुटना आगे मुड़ा हुआ होता है हाथ सिर के पीछे मुड़ते हैं और एड़ी ज़मीन से कुछ उठी रहती है। शीघ्रता से पैरों को सीधा करना और उसी समय पुट्ठों के ऊपर कमर की शक्ति से पूर्ण सामने की गति होती है। गति का हाथों के शक्ति शाली झुलाव और कलाइयों और उंगलियों के झटके से गेंद फेंकने के समय अन्त होता है। सम्पूर्ण गति सुगमता से सन्तुलित की जाती है। वह धीरे से किन्तु शक्ति से आरम्भ होता है और तब तेजी बढ़ती जाती है और अन्त में चाबुक की तरह झटका दिया जाता है।

लम्वी फेंक के लिये मजबूत पेट की पेशियों और शक्तिशाली तथा लचीले कंधों की आवश्यकता होती है।

अभ्यास:—

(१) पैर में फैसला रखे हुये और पीठ साथी की ओर एक मेडिसिन गेंद पकड़ना। आगे झुकना, ऊपर जाना और सिर के ऊपर से साथी को फेंकना। साथी वही काम करता है।

(२) एक खिलाड़ी बैठ जाता है दूसरा ५ गज दूर खड़ा होता

है। खड़ा साथी मेडिसिन बौल, बैठे साथी को फेंकता है जो पकड़ता है वह गेंद के साथ लेट जाता है और फिर वहाँ से उठते हुये गेंद साथी को फेकता है।

(३) न० २ की तरह किन्तु दोनों बैठ कर फेंकते है।

(४) गेंद फेंकना और दूरी नापना।

(५) वौली बौल-दो तीन खिलाड़ियों से जो मेडिसिन बौल नेट या रस्सी के पार फेंकते हैं।

(६) गेन्द फेंक कर गोल पोस्ट को मारना।

## आक्रमण Attack

आक्रमण करना खेल का उद्देश्य है। इसी से गोल किये जायेंगे। साधारण विधि, सीधे पास करना, पहली बार में शूट करना इत्यादि। किन्तु कभी कभी इन्हीं से काम नहीं चलता। प्रतिद्वन्दी यदि अच्छे स्तर के है तो उनके लिए ऐसी चतुरता दिखानी पड़ेगी जिससे वे धोखा खा जाये और तब गोल किया जाय।

सबसे मुख्य आक्रमण की विधि W बनावट की विधि है। यह खिलाड़ियों के गुण से बना है। जैसे सेन्टर फारवर्ड का घुसना, विंग का तेजी से आक्रमण और इनसाइड फारवर्ड का सृष्टात्मक षडयन्त्र। कभी कभी एक ओर का इनसाइड फारवर्ड आगे बढ़ता है और अन्दर खेलता है और फिर इसी के साथ दूसरे ओर का इनसाइड फारवर्ड भी पूरी लाइन के साथ आगे या दो सेन्टर फारवर्ड प्रणाली कभी कभी अच्छा काम करती है। कभी कभी चार फारवर्ड आक्रमण जिसके पीछे सेन्टर फारवर्ड रहता है हाफ वैक को आगे खींच लेता है।

बचाव के सन्तुलन के लिए फुल बैक आगे नहीं बढ़ते। इस लिए विंग मैन यह देखते हैं कि पीछे हट जाने से उन्हे काम करने का अधिक स्थान मिलता है। इससे भाले की भांति आक्रमण का अवसर मिलता है। यह उस समय उत्तम है जहां इनसाइड फारवर्ड और सेन्टर फारवर्ड आपस में एक दूसरे से आर पार होते रहते हैं जिससे वे बीच में आक्रमण कर सके।

सीढ़ी की भांति आक्रमण, भाले की भांति आक्रमण का एक प्रकार है। एक तरफ का विंग फारवर्ड खेलता हैं और बाकी खिलाड़ी तिरछी सीढ़ी बना के दूसरे विंग तक जाते हैं। राइट आउट साइड विंग आक्रमण आरम्भ करता है और लेफ्ट आउटसाइड विंग आक्रमण ोना का कार्य करता है।

(१) खेल में बिल्कुल यही विधि नही होगी। यह केवल एक आदेश है। स्थिति के अनुसार परिवर्तन होगा। कभी कभी खिलाड़ी स्थान बदल देते हैं जिससे दूसरे टीम को कठिनाई हो। जैसे विंग मैन के पास गेंद हो तब सेन्टर फारवर्ड दौड़ के विंग में आगे हो जाता है पास लेने के लिये और इनसाइड सेन्टर का स्थान ले लेता है।

विंग इनसाइड का स्थान ले लेता हैं।

एक विंग मैन अपना स्थान छोड़ के फारवर्ड लाइन के पीछे चल कर दूसरे टीम के बचाव में गड़बड़ी कर सकता है।

स्थान का परिवर्तन कुछ देर के लिये रखा जा सकता है।

गहरे रूप में आक्रमण :

साधारण टीम आक्रमण के समय पेनालटी एरिया तक जा कर

चौड़ी हो जाती है। ऐसी अवस्था में गेंद खो देने का अधिक मौका है। जब आक्रमण गहराई से होता है तब अधिक मौका मिलता है खाली स्थान पाने के लिये और गेंद खेलने के लिये ।

क्योंकि बचाव समीप आने से शक्ति शाली हो जाते हैं इस लिये आक्रमण करने वालों को चाहिए कि उ हे पूरे मैदान में फैला दें। फुल बैक विंग का ध्यान रखें जो तेज और भयानक हैं इस लिये उन्हे लाइन के समीप रखना चाहिए जिससे बीच में काफी स्थान इनसाइड फारवर्ड के काम करने के लिए मिले ।

जब गहराई में आक्रमण होगा तो पास आगे और पीछे होगा। एक पीछे आते हुए खिलाड़ी को आगे से पीछे गेंद देना गोल के लिए भयानक हो जाता है ।

पीछे पास से आने वाले खिलाड़ी को अपनी अवस्था सही करने का अवसर मिल जाता है।

तिरछा फारवर्ड पास आधुनिक खेल हैं। दो खिलाड़ी एक बचाने वाले को हरा देते हैं ।

यह देखा जाता कि जैसे गेंद तिरछा जाता है खिलाड़ी आगे बढ़ते हैं। किन्तु सीधे पास में खिलाड़ी तिरछा चलते हैं। तो यह कहा जा सकता है कि एक सीधा पास दो तिरछे पास के बराबर है और बचाने वाले को बिलकुल घुम कर गेंद बचाने के लिये जाना होता है ।

पीछे पास सीधे पास की प्रारम्भिक अवस्था है ।

बचाने वालों को जब पीछे मुड़ कर खेल देखना पड़ता है तब उनके लिए कठिनाई होती है। केवल उनकी गति धीमी नही हो

जाती किन्तु वे खेल का सही अनुमान नहीं लगा सकते क्योंकि वे सब खिलाड़ियों को नहीं देख सकते। फनेल प्रणाली से बचाने वाले पीछे हटते हैं जिसमें खेल सामने रहता है और आक्रमण पर दृष्टि रहती है। एक बचाने वाला तिरछे पास के पहले सफलता की आशा करते हुये पीछे हट सकता है किन्तु यदि खेल किसी बचाने वाले के पीछे हो जाये तो उसे घूमना पड़ेगा और नयी अवस्था का सामना करना पड़ेगा। यह बचाव असंतुलित करने की प्रणाली को स्वीच प्ले कहते हैं।

इसका अच्छा उदाहरण है जब खेल एक विंग से दूसरे विंग में किया जाता है। जैसे ही एक विंग में आक्रमण बनता है बचाने वाले उस जत्थे से आक्रमण के लिए अपने घेरा का संतुलन करते हैं। शीघ्रता के साथ दूसरे विंग के खिलाड़ी में इसी तरह का संतुलन बचाव में होता है और अपने स्थान का प्रयाप्त पुनः स्थापना करता है।

खेल के मैदान के आर पार या स्वीच प्ले अनेकों स्थान से आरम्भ हो सकते हैं। गोलकीपर दोनों वींग को इच्छा अनुसार गेंद दे सकता है फुल और हाफ बैक अपने विपरीत विंग को पास दे सकते हैं। यह चाल सीधे गोल पर आक्रमण करने से अच्छा रहता है। जैसे सेन्टर फारवर्ड राइट विंग की ओर बढ़ता है किन्तु आकस्मात घूम जाता और आउट साइड लेफ्ट को पास देता है। राइट बैक ने सेन्टर हाफ को घेरा देना आरम्भ कर दिया है जिस से दूसरे वींग पर आक्रमण न हो और आउट साइड लेफ्ट को एक बिलकुल खाली स्थान में छोड़ दिया है।

अचानक के खेल तथा धोखे से फंसाने की गति :

स्वीच प्ले के पीछे जो सिद्धान्त है वह एक महत्व पूर्ण सहयोगिक आक्रमण दिखलाता है जब कि वह एक शक्तिशाली, योग्य तथा बुद्धिमान बचाव से सामना करता है। एक अच्छा बचाने वाला सदैव आगे की बात सोचता है। यदि वह आक्रमण का दूसरा दाव देख सकता है तो उसकी तैयारी करेगा। तेजी तथा ठीक काम किसी रुकावट या बाधा को हटाने में सफलता प्राप्त कर सकता है किन्तु जब एक बचाने वाले को धोखा दिया जाये और उससे गलत अनुमान लगवाया जाय तो वह हार सकता है। धोखे का झुकाव जैसे पास करने में महत्व रखता है वैसे ड्रिबल करने में भी।

खाली स्थानों का प्रयोग :

बुद्धिमानी के साथ खेलने में खुले स्थान का महत्व बहुत है। अच्छा पास दूसरे खिलाड़ियों के अच्छे स्थान लेने से बहुत सरल हो जाता है। यदि खिलाड़ी अच्छे खुले स्थान में और पास न आये तो उससे हानि नहीं। उसके गति के कारण वास्तविक आक्रमण से ध्यान हट जाता है। इस दूसरे साथी के लिए उत्तम खेल का मौका निकल सकता है। खिलाड़ियों को आगे की बात सोचना चाहिये जिससे कि जब भी पास दिया जाय वे सीधे या दूर से उस खिलाड़ी की जो गेंद पा रहा हो सहायता करते हैं।

पहिले बार मार कर पास करने में खिलाड़ी को अपनी सही स्थान में होना चाहिये जब कि गेन्द उस के पास जा रहा हो जो पास करने जा रहा हो। यदि वह गेन्द में देर करता है तो उसके साथियों को रुक कर दूसरे खुले स्थानों में जाना पड़ जायेगा।

पास करने के बाद रुकना नहीं चाहिये। उसे एक नये स्थान में जाना चाहिये। उसे एक नये स्थान में जाना चाहिये जिससे उसे फिर पास मिल सके। अतएव एक फुल बैक को गोलकीपर को पास देने के बाद एक खाली स्थान में होना चाहिये क्योंकि वह उसी को पास दे सकता है। फारवर्ड को पास देने के बाद हाफ बैक को सर्म्पक रखना चाहिये क्योंकि फिर पास मिल सकता है। इस प्रकार गेन्द प्राप्ति की उत्सुकता का अर्थ है अच्छी तैयारी तथा स्थान का अच्छा ज्ञान। इससे अनेक सम्भग्वना उत्पन्न होती है जिसमें आपस में पास हो क्योंकि प्रत्येक खिलाड़ी जैसे आक्रमण बढ़ता है अपने स्थिति में प्रगति लाने कीं चेष्टा करता है।

जव भी किसी के पास गेन्द हो और वह देखता है कि उसके पास अनेक साथी आ रहे है जो खुले स्थात में हैं तो वह अच्छी तरह से पास कर सकेगा। गेद पर क्षेत्रित करना प्रबेश खेल का अच्छा रूप है। यह स्पष्ट है कि बहुत से खिलाड़ियों को क्षेत्र से बाहर रहना पड़ेगा किन्तु जव तक आक्रमण के प्रत्येक खिलाड़ी की यह उत्सुकता है कि गेन्द उसको मिले तब तक अनेक खिलाड़ी होंगे जिन्हे पास दिया जा सकता है। गेन्द क्षेत्रित करना बचाने की चतुरता का स्वभाविक परिणाम है। जिसमें गेन्द और गोल के वीच में गिनती की श्रेष्टता है।

खेल निर्धारित करना

खाली स्थान में पास के लाभ के कारण यह भी कभी नहीं समझना चाहिए कि जो समीप से घिरा हो उसे पास नही करना चाहिये ।

खेल निर्धारित करने का अर्थ है कि बचाने वालों को अपने स्थान से हटा कर ऐसी अवस्था लाये जो आक्रमण करने वाले चाहते हैं।

आफ साइड का जाल :-

आफ साइड जाल को हटाने का तीन मुख्य प्रकार हैं।

(१) जिसके पास गेन्द हो वह ड्रिवल करके बचाने वाली लाइन तोड़ दे और अपने ही आप गेन्द ले जाये फिर पीछे पास करना उस साथी को जो खाली स्थान में दौड़ने को तैयार हो।

(२) चौकोर पास या पीछे पास करना उस साथी को जो खाली स्थान में दौड़ने को तैया र हो।

(३) गेन्द बचाने के लाइन के पीछे खाली स्थान में पास करें जिससे साथी दौड़ कर दूसरों के लेने से पहिले ले ले। पास में कुछ देरी कर दी जाती है जिससे वह तेजी से आ सके और उससे आफसाइड अवस्था में होने के पहिले की जाती है।

किक आफ :-

इसमें खेल निर्धारित करने का अवसर मिलता है। जैसे गेन्द पीछे पास करना जिससे फारवर्ड अपना सही स्थान ले लें।

थ्रो इन :

प्रत्येक थ्रो इन से एक या कई खेल निर्धारित हो सकते हैं। साधारणत: थ्रो इन को कोई ध्यान में नहीं रखता और यदि उससे गे द पास दी जाये तो अच्छे खाली स्थान में गेन्द पास किया जा सकता है।

जैसे ही गे द फेकने वाले के सिर के पीछे जाये खेल निर्धारित

हो जाय।

कौरनर किक :-

दो फुल बैक दोनों सिरे की रक्षा करते हैं और गोलकीपर के स्थान की रक्षा करते हैं यदि वह बाहर निकल जाये। इनसाइड और सेन्टर फारवंड हाफ बैक से घेरे जाते हैं। आक्रमण करने वालों के लिये शीघ्र कोरनर किक लेना लाभदायक है। आक्रमण करने वाले सीढ़ी की अवस्था में गोल के पास खड़े हों या पेनालटी ऐरिया के पास खड़े हों।

## बचाव Defence

बचाव के दो मुख्य विधि है। एक के पास एक और ज़ोन डिफेन्स जिसमें खिलाड़ी के लिये एक क्षेत्र होता है जिसका बचाना उसका काम है।

एक के पास एक तो बिल्कुल साफ है। प्रत्येक को अपने जिम्मेदारी पता रहता है। ऐसे खेल से तीन बैक का खेल निकला है जिसमें सेन्टर हाफ सेन्टर फारवंड को रोकता है।

अनुभव से पता चलता है कि एक के पास एक (Man to man) बचाव की विधि अच्छी है क्योंकि इसमें आक्रमण तथा बचाव करने वालों की गिनती प्रायः एक सी रहती और प्रत्येक पग पर बचाव का उपाय तैयार रहता है और जैसे ही आक्रमण आरम्भ होता है बचाव भी आरम्भ होता है। किन्तु जब आक्रमण करने वाला एक बचाव से आगे निकल जाता है तो किसी दूसरे खिलाड़ी को बचाव करना पड़ेगा। इसका अर्थ यह है कि उसे अपना खिलाड़ी छोड़ना पड़ेगा। इसमें बचाव का सन्तुलन बिगड़ जाने का भय है। इस

अवस्था में जोन डिफेन्स काम में आता है। इसकी तैयारी मैन टू मैन डिफेन्स के साथ ही होती है। गेन्द के क्षेत्र में कठिन बचाव का आयोजन होता है और क्षेत्र के बाहर बचाव में कुछ ढिलाई होती है। यदि गेंद किसी दूसरे क्षेत्र में लम्बे पास से भेजा जाये तो उस क्षेत्र के बचाने वाले गेंद के चारो ओर तैयार हो जाते हैं और दूसरे सहायक रक्षा के लिये स्थान ले लेते हैं। गोल के समीप प्रत्येक खिलाड़ी के पास समीप रक्षा की आवश्यकता होती क्योंकि वे गोल में शूट करने के अवसर प्राप्त रहते हैं।

आरम्भ ही से नये खिलाड़ियों को जोन डिफेन्स की प्रशिक्षण देना आवश्यक है। इसमें वह अपने स्थान की महत्वता समझता है और क्रमशः वह यह देखेगा कि उसका ध्यान एक विशेष खिलाड़ी पर है और उस पर ध्यान रखने की आवश्यकता है।

इन्ही दोनों सिद्धान्तों के ऊपर बचाव की चालाकी व्यवस्थित हैं। मैन टू मैन बचाव तत्कालिक बचाव के लिये उत्तम है।

संकटकालीन अवस्था में गेंद के समीप जो खिलाड़ी होता है वह बचाव करता हैं और दूसरे उसके स्थान की देख रेख करते हैं।

उपयुक्त घेरा :

जब गेंद किसी आक्रमणकर्ता के पास हो तो उपयुक्त घेरे की महत्वता कम नहीं की जा सकती है। दो खिलाड़ी आसानी से पास करके एक बचाव करने वाले के पार जा सकते हैं।

जब बचाव करने वाला खिलाड़ी आक्रमणकर्ता को घेरता है तो उसके साथी की अवस्था ऐसी होनी चाहिये कि वे अपने साथियों को सहायता दें क्योंकि यदि आकमणकर्ता गेंद ले कर पार निकलना

चाहेगा तो वे शीघ्र ही दो बचाव प्रस्तुत कर सकते हैं। इस अवस्था में प्रत्येक बचाने वाला अपनी आसानी से अपने साथी के सहायता के लिये समीप स्थान ले और उसी तरह व्यवस्था होती जाय तो कोई खुली स्थान आक्रमणकर्ता को नहीं मिलेगी। चेष्टा यह होनी चाहिए की आक्रमण कर्ता जितनी जल्दी हो पास न कर सके किन्तु गेंद मारने को विवश हो जाये।

## बचाव का सामतुल्य करना

बचाव के लिए अपने साथियों के समीप स्थान लेना है जिससे मैन टू मैन डिफेन्स हो जाये और आक्रमणकर्ता पर दो या तीन बचाव प्रभाव डाले। जिन से गेन्द छूट जाता है वे पीछे आकर कोई खतरे के स्थान का बचाव करें।

दो बचाव घेरा :-

बचाव वालों को सदैव एक और बचाव सहायक की तैयारी की आवश्यकता है। दूसरे व्यक्ति का काम है कि खाली स्थान का बचाव करे जैसे थ्रो इन में। हाफ बैक सामने के विंग मैन का घेरा करता है और फुल बैक स्वतंत्रता से कार्य करता है। इसी तरह फुल बैक गोलकीपर की सहायता करता है।

पीछे चल कर बचाव :-

जब बचाव करने वाला देखता है कि उपयुक्त घेरा नहीं हो सकता तो वह धीरे-धीरे पीछे जाता है जिससे उसके साथियों को अवस्था लेने का समय मिल जाये। जैसे एक बैक दो फारवर्ड के सामने है यदि वह एक के पास जाता है तो दूसरे को पास मिलता और शूट करने की स्वतंत्रता होती है इस लिये वह दोनो के बीच

में रह कर धीरे-धीरे पीछे जाताहै। इस से दूसरे खिलाड़ियों को उस की सहायता का अवसर मिल सकता है। कितना पीछे जाना चाहिये यह स्थिति पर निर्भर है। यदि शूट करने की दूरी पर है तो फिर बचाने कीं चेष्टा करनी होगी।

समीप सहायता :–

जितना बचाव समीप होगा उतना ही अच्छा होगा। अधिक फैलने से बचाव कठिन होता है। छः वचाने वालों को समीप संगठन से खेलना चाहिये।

गोलकीपर के साथ समझ :–

कभी-कभी ऐसी स्थिति हो जाती है कि अपने ही गोल में मार कर गेन्द गोलकीपर को दे जिससे वह उसे सुरक्षित करे। ऐसे पास तेज होने चाहिये जिससे आक्रमण करने वाले उस से लाभ न उठा लें। ऊँची गेन्द के लिये गोलकीपर से समझौता होना चाहिये कि उसे खेलने का अवसर दिया जाये क्योंकि हाथों के प्रयोग के कारण वह लाभ की अवस्था में होता है। जब गोलकीपर गेन्द खेलना चाहता है तो अपने साथियों को आदेशित कर सकता है।

गहरे बचाव:–

कितनी बार पीछे जाते जाते बचाव की एक सीधी लकीर हो जाती है। यदि इस में से आक्रमण पार हो जाये तो फिर कोई उपाय नहीं रहता। इस लिये बचाव सदैव गहरे में होना चाहिये।

फनेल डिफेन्स :–

जब गेन्द प्रतिद्वन्दी के हिस्से में है तो टीम बाहर फनेल की तरह फैल जायेंगे और मैन टू मैन स्थान लेंगे। जैसे गेंद उनके भाग

में आने लगे उन्हे सिकुड़ कर पेनालटी एरिया को लेते हुये एक अर्ध-वृत्त बनाना चाहिये। इस अवस्था में गोल की रक्षा अच्छी रीति से की जा सकती है। यह प्रणाली घुमायी जा सकती हैं और जहां तेज आक्रमण हों वहीं लागू की जा सकती है।

## कोचिंग (Coaching)

(१) खेल के समय कोचिंग महत्वपूर्ण होती है।

(२) स्थानीय प्रशिक्षण के लिये पीठ पर नम्बर लगाना उचित है।

(३) उचित अवस्था पर खेल रोक कर स्थिति का अध्ययन किया जाता है।

(४) नये खेल की अवस्था पहिले धीरे धीरे फिर अपनी गति से

(५) खेल में आवश्यकता से अधिक रुकावट नहीं होना चाहिये।

(६) खिलाड़ियों को पहिले नये खेलों का आदेश देना और फिर उनके प्रयोग में सहायता देना।

(७) अच्छे खेल की प्रशंसा होनी चाहिये। अलोचना भी आवश्यक है।

(८) यदि कोच अपने को योग्य समझे तो खेल में प्रदर्शन दे सकता है।

(९) घिशेष चुने हुये विषयों पर खेल का ध्यान आकर्षित करना। जैसे—नियन्त्रित, पास से दूर प्रवेश तैयार करना, लम्बे ज़मीन पर पास, सिर के ऊपर खेल पर ध्यान केन्द्रित करना, शीघ्रता से गेन्द प्राप्त करना, दोनों पैरों का प्रयोग, आक्रमण खेलों का प्रभाव देखना, बचाने वालों के द्वारा पीछे जाने का खेल का प्रभाव।

व्यक्तिगत कोचिंग:–

कमजोर खेलने वाले के पास एक अच्छा खेलने वाला रखना खेल किसी विशेष व्यक्ति पर केन्द्रित करते हुये।
दूसरे टीम से विशेष खिलाड़ी के कमजोरियों को ध्यान में रखते हुये खेल का आदेश ।

खिलाड़ी के किसी विशेष गुण को प्रोतसाहित, करन दूसरे-दूसरे स्थानों में खेल खिलाना जिससे उस स्थान का अनुभव हो और अपने खेल में उस अनुभव की सहायता ले ।

विशेष खेलों का अभ्यास:–

भिन्न-भिन्न आक्रमण तथा बचाव के खेलों का अभ्यास ।

कोचिंस शेशन:–

(१) शारीरिक तैयारी की व्यवस्था व्यायाम इत्यादि ।

(२) हलका जौगिंग,चलना,दौड़ना।

(३) पैरों में तेजी,लचीलापन,प्रतिक्रिया में शीघ्रता तथा दृढ़ता का विकास ।

(४) कौशल तथा सम्बन्धित अभ्यास ।

(५) तेजी तथा शक्ति से पूर्ण खेल ।

(६) दूसरों के साथ प्रतियोगिता अपने से अच्छे टीम के साथ ।

(७) खेल का विश्लेषण अपने खिलाड़ियों का,दूसरे अच्छे खिलाड़ियों का ।

(८) चित्र,फिलम,साहित्य इत्यदि के द्वारा उच्च श्रेणी की क्रिया का प्रदर्शन तथा अनुकरण ।

(३४)

# वौली वौल

## आधारित तथ्यें, गेंद पर नियन्त्रण

(१) नीची गेंद :

जब गेंद कमर से नीची आती है तो यह,आसानी से उठायी जा सकती है किन्तु इसके उठाने में साधारणतः कठिनाई होती है और उठाने से फाउल होने का अधिकतर भय रहता है। ऐसे गेंद उठाने के लिये दोनो पैर एक साथ या कुछ आगे पीछे होंगे और घुटने मुड़े हुये होंगे। हाथ कोहनी से ढ़ीले रहते हैं और मुड़ते हैं जिससे अंगूठे बाहर की ओर होते हैं, हथेली ऊपर होती है और उगलियां कुछ मुड़ी हुयी होती हैं। जब गेंद का सम्पर्क उगलियों से होता है तब गेंद खेलने में सम्पूर्ण शरीर का सहयोग होता है। घुटने सीधे होते हैं, कूल्हे उठाने की क्रिया के लिये आगे आते हैं, कंधे पीछे जाते हैं और हाथ ऊपर की ओर एक झूलने की गति उछालने या उठाने के लिये करता है। इस अवस्था में गेंद फेंक नहीं किन्तु मारा ही जाता है। यह देखना आवश्यक है कि गेंद का सम्पर्क उगलियों के सिरे से हो। कभी कभी हथेली भी गेंद से छू जाता है किन्तु गेंद का अधिक नियन्त्रण उंगलियों के ही सम्पर्क से होता है।

कितने ऐसे खेलने वाले हैं जो इस कठिन नीची गेंद को शीघ्रता से नीचे बैठ कर ऊंची गेंद की तरह ले लेते हैं। फुर्ती और लचीले-

पन से जो कठिन अभ्यास तथा परिश्रम से ही आ सकता है यह सम्भव है।

(२) ऊंची गेंद :

खेल में अधिकतर गेंद ऊंची आती है। ऐसे गेंद सीने के सामने कंधों की सीध में या सिर के ऊपर खेले जाते हैं। ऐसे गेन्द लेने का अच्छा अभ्यास होना चाहिए। अभ्यास में प्रथम चीज गेन्द की दूरी का निर्णय करना सीखना है। इसके लिए यदि गेन्द खेलने वाले से, कम दूरी पर गिर रहा हो, तो आगे बढ़ना, पीछे गिर रहा तो पीछे हटना या समय न होने पर झुक के ही लेना आवश्यक होगा।

गेन्द का सम्पर्क सदैव दस उंगलियों के सिरे तथा भीतर के मूल्यों से होगा। हथेली तथा हथेली के पीछे के उठे हुये हिस्से पर गेन्द के लगने से उसका नियन्त्रण ठीक नहीं हो पाता है।

गेन्द लेने के लिये बांया पैर आगे, घुटने कुछ मुड़े रहते हैं और शरीर का झुकाव आगे की ओर होता है। कोहनी बगल से अपर की ओर कंधों के नीचे उठी रहती हैं। कलाई अधिक से अधिक हाथों के सीध में फैली रहती है, कलाई तथा हाथ अन्दर की ओर उसी कला से घुमाये जाते हैं जिस क्रम से उंगलियों तथा अंगूठे की लम्बाई और पीछे शरीर के झुकाव का कोंण हो। हाथ सीने की ऊँचाई पर रखे जाते हैं और अंगूठे नीचे की ओर होते हैं। उंगलियाँ ऊपर फैली हुई दूसरे हाथ की दिशा में होती हैं। उंगलियां कुछ मुड़ी हुयी किन्तु मजबूती से गेन्द के सम्पर्क रखी जाती हैं। इन क्रियाओं से उंगलियों हथेली और हथेली के पीछे के उठे हुये हिस्से से एक खोखला बन जाता है। गेन्द को इसी खोखले में आना

चाहिए जो प्याले के रूप में होता है। गेन्द लेने से पहिले यह खोखला क्षेत्र सीधा रहता है।

गेंद उंगलियों पर आते ही उसे प्रायः १० फुट की ऊंचाई पर ऊपर फेंकते हैं जिससे दूसरे साथी के उंगलियों पर वह ऊपर से आकर गिरे। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि जब शरीर पीछे मुड़े या जब कोहनी ऊपर उठायी जाये तो हाथ में गेंद लेने वाले हिस्से का कोंण सीधे से आगे की ओर गेंद लेने की तैयारी में बदल जाता है।

जितना ही पीछे मुड़ना होगा, उतना ही वह सतह समानान्तर अवस्था को पहुंचती जायेगी। सही शरीर का मोड़, कोहनियों की स्थिति, उंगलियों और हाथों का रखना प्रत्येक खिलाड़ी की सुभीते के अनुसार सिखाया जायेगा।

अभ्यास:

(१) साथी के गेंद ऊपर फेंकने पर खिलाड़ी उसे ऊपर उछालने की चेष्टा करता है।

(२) जैसे न० १ में किन्तु खिलाड़ी उछालने के स्थान में गेंद मारता है।

विशेप ध्यान देने की बातें:

(१) हाथों का पूरी रीति से खुलना--इसी से शक्ति मिलती है।

(२) गेंद का नियन्त्रण इत्यादि तथा उंगलियों से होता है।

(३) हाथों में और शरीर की क्रिया से पूरी शक्ति मिलती हैं। यदि कार्य सही नहीं हो रहा है तो निम्नलिखित

कारण होंगे ।

(१) कोहनी को नीची करना ।

(२) उंगलियों के साथ गेंद का सम्पर्क न होना ।

(३) गेंद में शक्ति नहीं है तो हांथ नहीं खुल रहे हैं ।

गेंद ठीक करना या सेट अप :

सेट अप पास से मिलता जुलता है। टीम में तीन सेट अप करने वाले खिलाड़ी होते हैं जो स्पाईक करने वालों के साथ रहते हैं।

सेट अप करने वाले को दूसरी बार का पास मिलता है। यदि पास अच्छा हुआ तो उसे सही सेट अप करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। बहुत बार उसे सही पास नहीं मिलता और उसे कठिनाई के साथ सेट अप के लिये गेंद बनाना पड़ता है। सेट अप करने के लिये चेस्ट पास सब से उत्तम है क्योंकि उससे गेंद का नियन्त्रण सही होता है।

सेट अप तीन प्रकार से हो सकता है।

(१) ऊंचा सेट अप–ऐसे सेट अप नेट से बहुत समीप १०-१५ फुट की ऊँचाई पर दिये जाते हैं। जो लम्बे स्पाईक करने वाले होते हैं वे ऐसा सेट अप पसन्द करते हैं।

(२) नीचा सेट अप—ऐसे सेट अप नेट से बहुत अधिक ऊँचे नहीं होते—ये कुछ ही फीट ऊंचे होते हैं। इस प्रकार के सेट अप अधिक प्रयोग में भी नही लाये जाते यद्यपि इससे अच्छे प्रकार के खेल बनते हैं और इन्हें भी प्रयोग में लाना चाहिये।

इन दोनों के तुलना में कहा जा सकता है कि लम्बे सेट अप

से वौली तेज और शक्तिशाली होती हैऔर नीचे सेट अप से उतनी शक्ति, वौली में नहीं आती किन्तु छोटे ऊंचाई के स्पाईकर के लिए अच्छी है और यह शीघ्र खेल के लिए अच्छा है क्यों कि इसमें प्रति द्वन्दियों को सही स्थान लेने का अवसर नहीं मिलता ।

(३) यह सेट अप अधिक प्रयोग में नहीं आता है । इस सेट अप में गेंद नेट से बहुत पहले सेट किया जाता है । इस सेट अप में गेंद पास नहीं किया जाता किन्तु कर्ण रेखा से नीचे अर्धवृत लेते हुये नेट पर भेजा जाता है । इसमें और नीची सेट अप में नेट से सेट करने की दूरी का अन्तर है ।

सेट अप खिलाड़ी के द्वारा ध्यान देने की बातें :

(१) प्रत्येक सेट अप खिलाड़ी को अपने स्पाईक करने बाले खिलाड़ी के इच्छा के अनुसार गेंद सेट अप करना है ।

(२) पास लेने के लिए चेस्ट पास की अवस्था में गेंद की दिशा में होना । जैसे ही गेद गिरता है सेट अप करने के लिए शरीर भी दिशा स्पाईकर की ओर करके सेट अप करना चाहिये ।

(३) पास यदि ठीक न हो तो गेंद लेने की चेष्टा में न० २ करना भी हो सकता है तो स्पाईकर की ओर पीट कर करके ही सेट अप करना चाहिये ।

(४) गेंद जो सीने के नीचे आते हैं उनका सेट अप जमीन पर एक घुटना टेक कर करने की आवश्कता होती है । इसमें अधिक तेजी की आवश्कता है ।

(५) गेंद सेटअप करते समय सही ऊंचाई और नेट से सही दूरी ध्यान का आधार रखना चाहिए । गेंद सदैव स्पाईकर के सानने होना

चाहिये और गेंद की चेष्टा ऊंचाई का स्थान 'स्पाईकर और सेट अप के मध्य होना चाहिये ।

अभ्यास :

(१) खिलाड़ी गोलाई में खड़े हो जायें। बीच से उन्हें गेंद फेंका जाये और उनसे वापस पास लिया जाये । यह दोनों ओर से हो । अभ्यास के साथ ऊंचाई बढ़ा दी जाये।

(२) दो भागों में विभाजित करके प्रतियोगिता करना ।

(३) दो खिलाड़ियों में आपस में पास ।

(४) जैसे न० ३ किन्तु नेट से सटे हुए ।

(५) जैसे न० ३ में किन्तु नेट के इधर उधर और गेंद १०–१२ फुट की ऊंचाई से पास करें।

(६) पीछे के लाइन पर खिलाड़ी एक लाइन से खड़े हो जायें। दूसरे कोने से गेंद सर्व किया जाय और तब एक एक खिलाड़ी सेन्टर में १०'–१५ फुट की ऊंचाई से पास करने की चेष्टा करे।

(७) गेंद नेट में मार कर नेट के नीचे से उठाना और कोर्ट के अन्दर भेजना या पार भेजना ।

## सर्विस Service

सर्विस दो प्रकार से किये जा सकते हैं। अन्डर हैंड तथा ओवर हैंड । अन्डर हैंड सर्विस ओवर हैंड से आसान है ।

अन्डर हैंड सर्विस :

बायां पैर आगे करके खड़ा होना, गेंद बायें हथेली में पकड़ना अँगूठा आगे और उगलिया दाहिनी ओर होंगी बायाँ घुटना कुछ मुड़ा होगा और दाहिना घुटना सीधा ।

दाहिने हाथ को पीछे से झुलाते हुये और बायें हाथ को भी जो गेंद पकड़े हुये है पीछे करना और फिर दाहिने हाथ के हथेली और उठे हुए हिस्से से अच्छे झुलाव से गेंद मारना । कूल्हे कुछ ऊपर उठतें हैं और पीठ कुछ झुक जाता है इससे किस में शक्ति पहुंचता है । मारने के बाद दाहिने हाथ से गेंद के पीछे जाना होता है जो सामने ऊपर की ओर जाता है । इससे गेंद को ऊंचाई मिलती है ।

अन्डर हैंड सर्विस को कठिन करने का उपाय :

(१) ि थति वैसे ही जैसे साधारण सर्विस की किन्तु दाहिना हाथ सामने ड्राइविंग ऐक्शन से सामने आता है, अंगूठा आगे होता है और उंगलियां नीचे की ओर होती हैं । बाये हाथ में पकड़े हुए गेंद को दाहिने ओर हथेली और उंगलियों के मुड़ते हुए गति से जो हाथ और अंगूठे के घुमाने से संभव होता है, मारना चाहिए । ऐसे गेंद दाहिने मे बायीं ओर जायेगे ।

(२) प्रारम्भिक हाथ की गति वैसे ही जैसे साधारण अन्डर हैंड सर्विस में, किन्तु दाहिना हाथ जैसे सामने आता है वह बाहर दाहिनी ओर घुमाया जाता है और गेंद दाहिनी ओर हथेली से जिसमें छोटी उंगली आगे होती है मारा जाता है । इसमें गेंद का मार्ग बायें से दायें रहेगा ।

(३) दाहिना हाथ समानान्तर रूप में आता है, हथेली ऊपर की ओर होती है दाहिने हाथ में इस अवस्था से तेजी से कट करने की तरह सम्पर्क होता है । इससे गेंद घूम जाता है और हवा के बिरोध से प्रतिद्वन्दी के कोर्ट में ड्रोप करता है ।

पैर में दूरी लेकर खड़ा होना । दोनों हाथों से दाहिने कूल्हे के

सामने गेंद लेकर खड़ा होना । हाथ आराम से ढीले रहते हैं । क्रिया आरम्भ करने के लिए दोनें घुटना मुड़ते हैं और फिर सिर के ऊपर हवा में गेंद फेका जाता है २'–५' फुट तक जैसे ही गेंद ऊपर जाता है दाहिना हांथ पीछे और ऊपर जाता है और शरीर कुछ दाहिनी ओर मुड़ जाता है । आंखे गेंद पर सदैव होनी चाहिए । पीठ पीछे मुड़ जाती है और कूल्हा आगे की ओर होता है ।

जैसे ही गेंद नीचे आने लगता है दाहिना हाथ आगे आता है और सिर के ऊपर मारा जाता है । मारते समय हथेली प्याले की तरह गहरी होती है । मारने के समय दाहिना पैर सीधा और कूल्हा आगे झूलता है, शरीर का बायीं ओर मोड़ और दाहिना कंधा आगे जाता है । कलाई में झटका दिया जाता है जैसे ऐथेलेटिक्स में गोला फेंकते हुये ।

गेंद पहुंचने के स्थान :

गेंद सर्वदा पहिले पीछे दाहिने और फिर पीछे बायें कोट में पहुंचाने की चेष्टा करनी चाहिए । यह सेन्टर में कभी नहीं भेजना चाहिए । नेट के समीप ही ड्रोप करना एक अच्छा खेल है ।

आक्रमण :

नेट के एक ओर गेंद का तीसरा खेल आक्रमण या 'स्पाइक' होता है । आक्रमण के लिए पैर में अधिक शक्ति की आवश्यकता है जिस से अधिक उछला जा सके । खिलाड़ी को प्रतिद्वन्दियों की फील्ड में स्थिति का तथा क्रिया ज्ञान होना चाहिए जिस समय वह हवा में उछल रहा हो ।

अभ्यास :

पैरों में शक्ति लाने के लिए व्यायाम-दौड़ना। कूदने का व्यायाम पूरे शरीर की तैयारी का व्यायाम, गेंद को मुड़े हाथों से मारना, गेंद के ऊपर मारना।

गेंद को बायें हाथ में रख कर बिना उछाले हुये स्पाईक करने का अभ्यास—दाहिने हाथ में पीछे से आते समय कोहनी सामने रखने का आदेश। मारना, हथेली के प्याले के रूप में, मुट्ठी से, खुली हथेली से, या हथेली के पीछे उठे हुये हिस्से से।

गेंद को दोनों हाथों से पकड़ कर कूदना। कूदने की ऊँचाई पर गेंद को छोड़ देना और मारना, गेंद हवा में उछालना और खिलाड़ी उछल कर मारता है। गेंद सिर के ऊपर या सामने मारा जाये। नेट के पास गेंद उछालना और खिलाड़ी को मारने का अभ्यास देना।

धीरे धीरे गेंद नेट से कुछ पीछे करना जिससे खिलाड़ी को गेंद मारने के लिये कूदना पड़े।

कूदने के समय हवा में कूदने की तैयारी,लम्बे कूद की तरह खड़ा होना,बायां हाथ नेट की ओर, दोनों हाथ पीछे, घुटना मुड़ा हुआ और कमर पर शरीर कुछ ढीला,बजन पंजों पर होगा।

हवा में जाने पर दाहिना हाथ उठेगा, कोहनी कंधे से ऊपर और बगल में होगी, कदापि पीछे खीची हुयी होगी, हथेली प्याले की तरह गोलाई बनाये हुये नीचे की ओर होगी।

मारने के समय शरीर आगे आयेगा और बांयी ओर घुमेगा कंधे अन्दर और नीचे की ओर खीचेंगे। हाथ की गति नीचे और साथ ही कलाई आगे तथा नीचे गेंद के ऊपरी हिस्से पर झटके से

चोट करता है। गेंद मारने के बाद शरीर बायीं ओर नेट के सन्मुख आ जाता है।

गेंद मारने की शक्ति में शरीर का मोड़, कंधों का गिरना तथा कलाई का झटका, ये सब आधारित हैं, स्पाईक के पूर्ण लाभ के लिये गेंद मारने की दिशा नीची होनी चाहिये।

आक्रमण सिखाने के लिये मुख्य बात है गेंद कैसे मारना चाहिये। साथ ही शक्तिशाली स्पाईक के लिये दो बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता है, गेंद का विशेष स्थान पर गिराना तथा शक्ति के साथ गेंद भेजना।

सिखाने के प्रारम्भिक अवस्था में गेंद के नियन्त्रण पर विशेष ध्यान न दे कर गेंद के मारने पर ध्यान देना चाहिये, चाहे वह नेट ही में क्यों न हो। सीखने वालों के ध्यान में इस खेल के सन्तुलय का सही समझ होना आवश्यक है अर्थात हवा में उठना, शरीर पर नियन्त्रण, आवश्यक शक्ति का दिशा बदलाव, चलते हुये निशाने को मारना, तथा आदेशित करना और फिर ज़मीन पर नियन्त्रण के साथ वापस आना।

बचाव का खेल

बचाव के खेल के लिये बचाव के खिलाड़ियों की स्थिति ऐसी होनी चाहिये कि कम से कम समय तथा शक्ति में वे एक से दूसरी बचाव के स्थान पर सरलता से पहुंच सकें।

बचाव के दो सिद्धान्त हैं। (१) आक्रमण या आते हुये गेंद के सामने रहना। (२) गेंद पर आंखें गड़ी रहे।

खिलाड़ी को आते हुये गेंद को खेलने के लिये बचाव की स्थिति में

खड़ा होना चहिये मजबूत आधार से खड़ा होना पैर आगे पीछे जिस से दिशा में जाना हो सरलता से आ सके, घुटना मुड़ा हुआ, शरीर का झुकाव कुछ आगे, हाथ सीने के सामने, कोहनी बगल में उठे हुये, अंगूठे एक दूसरे की ओर और उंगलियों में प्रायः दो इंच की दूरी पर हल्के कटोरी के रूप में हो।

जैसे ही आक्रमण के लिये गेंद तैयार कर लिया गया हो वैसे ही बचाने वाले को ऐसे स्थान पर होना है जो आक्रमण के सीध में हो और गेंद पर आंखें लगी हुयी हों जिससे गेंद जहां भी भेजी जाये, बचाने वाला वहाँ से अपना सही स्थान ले सके।

यदि गेंद ऊपर आ रहा हो तो हाथोंको ऊपर उठा के गेंद लेना है।

यदि गेंद कूल्हे के नीचे आ रहा हो तो ऊपर के हाथ की स्थिति से उछालने की स्थिति में बदलना होगा।

यदि गेंद पहुँच के बाहर है तो उसके लिये लंज या ड्राइव करना पड़ेगा।

ब्लौक का प्रयोग

ब्लौक के लिये दोनों पैर उछालना चाहिए। हाथ ऊपर की ओर उठे रहते हैं और शरीर का झुकाव कुछ आगे की ओर होता है। ब्लौक नेट के कुछ पीछे से करना चाहिये। दो खिलाड़ियों का एक साथ ब्लौक करना उत्तम होता है।

ब्लौक में विशेष ध्यान ठीक समय से ब्लौक करने में है। इसी कारण गेंद पर सदैव आँख रखने की आवश्यकता होती है।

ब्लौक मे लाभ :

स्पाईकर के मस्तिष्क में डर डाल देता है। उनके खेल के

चतुराई को उलट पुलट देता है। आक्रमण करने वालों को भी सतर्क रहना पड़ता है।

ब्लौक से हानि—

जो टीम अधिक ध्यान ब्लौक पर देती है वे कभी कभी साधारण बचाव की ओर ध्यान नहीं देती। सही ब्लौक न होने से अधिक फाउल होने की सम्भावना है।

दो खिलाड़ियों के ब्लौक में व्यस्त रहने से पूरा खेल केवल चार व्यक्तियों पर निर्भर रहता है यदि ब्लौक में दोनों खिलाड़ियों का सही सहयोग न हो तो ब्लौक व्यर्थ होता है।

ब्लौक पर बिलकुल निर्भर न होकर उसे खेल का केवल एक अंग समझना चाहिये और परिस्थिति अनुसार इन सब के हल्की साधन उपलब्ध करना चाहिये।

बचाव के प्रकार :

सर्विस लेने के लिये खिलाड़ी बीच में प्राय: एक लकीर बना कर खड़े होते हैं। फौरर्वड अपने स्थानों में दाहिने पीछे जाते हैं और पीछे के खिलाड़ी अपने स्थान के बायें आगे जाते हैं। खेल का साधारण सिद्धान्त है पीछे वाले गेंद के लिये पीछे जाते हैं और आगे वाले आगे गेंद के लिए जाते हैं। यदि गेंद किसी कोने में जाता है तो सेन्टर बैंक उसे कवर करने की चेष्टा करता है।

ब्लौक करने के लिये यदि बायीं ओर से हो तो राईट फौरवर्ड तथा सेन्टर फौरवर्ड काम करते हैं यदि दाहिनी ओर से हो तो उसी प्रकार से प्रबन्ध होगा। यदि सेन्टर में ब्लौक हो तो सेन्टर

फौरवर्ड और लेफ्ट फौरवर्ड काम बायीं ओर से ब्लौक के समय राइट बैक लेफ्ट फौरवर्ड क्षेत्र में आता है, सेन्टर बैक लेफ्ट के तरफ चलता है, राइट वैक सेन्टर में आता है और राईट फौरवर्ड नेता के पांच फुट के समीप तथा बगल से १० फुट की दूरी पर रहता है।

इसी तरह दायीं ओर में ब्लौक के समय बायी ओर सम्वन्धित स्थान लिये जायेंगे।

अर्ध चन्द या हाफ मून डिफेन्स :

उस समय प्रयोग किया जाता है जब ब्लौक डिफेन्स पर अधिक ध्यान न दिया जाये। इस का साधारण सिद्धान्त है आक्रमण के केन्द्र को ले कर उस के पीछे एक अर्धवृत्त या पहिये के स्पोक की तरह एक केन्द्र मे चारो ओर फैलाया जाय-यह केन्द्र आक्रमण सम्बन्धित है तथा उसी के सम्बन्ध में सम्पूर्ण खेल के मैदान में घूमता है।

इस खेल का मुख्य व्यक्ति सेन्टर फारवर्ड है उसी के ऊपर इसकी सफलता निर्भर है।

दूसरा मुख्य व्यक्ति सेन्टर बैक है जिस की स्थिति सेन्टर फारवर्ड से सम्बन्धित है। उसे आगे पीछे तथा अपने बगल के खेल के सहयोग के लिये सदैव तैयार रहना चाहिये। जैसी गेंद की स्थिति हो उसी प्रकार उसे आगे पीछे चलना आवश्यक है।

इन दोनो स्थानों के साथ राइट और लेफ-बैक उस अर्धवृत्त में जो राइट और लेफ्फ फारवर्ड और सेन्टर बैक के द्वारा बनाया गया

है अपना अपना स्थान बना लेते हैं ।

इस खेल में ध्यान रखना चाहिये कि खिलाड़ी बहुत आगे न चले जायें और पीछे वाले खिलाड़ी गेंद लेने के लिये बहुत नीचे घुटने पर न हो जायें ।

आक्रमण का खेल :

एक अच्छा आक्रमण अच्छी सर्विस के द्वारा होता है। जिस सर्विस में तेजी, और मोड़ हो और वह घुमती हुयी आये तो उसमें बचाने वालों को कठिनाई होगी ।

सेट अप में गेंद नीची उछालना या'लो सेट अप''हाई सेट अप' से अच्छा होता है । खेल में अच्छा भाव रखना बहुत आवश्यक है । इस में शान्ति पूर्वक लड़ने की भावना से बहुत सफलता प्राप्त हो सकती है। प्रत्येक खिलाड़ी को उसका कर्त्तव्य मालूम रहना चाहिये । गेंद नेट से दूर फेंकने की चेष्टा का अभ्यास होना च.हिये ।

प्रत्येक खिलाड़ी को खेल की भिन्न-भिन्न स्थानों के कर्त्तव्यों का पूर्ण ज्ञान और अभ्यास होना चाहिये जिससे जहाँ भी हों वहाँ आसानी से खेल सके। प्रतिद्वन्दी के आक्रमण के अनुसार खेल में परिवर्तन करने का चातुर्य ।

प्रत्येक खिलाड़ी को दूसरे की जो उसके क्षेत्र के निकट है सहायता के लिये तैयार रहना आवश्यक है। सर्विस का उठाना अत्यन्त ही आवश्यक है इसी के द्वारा दूसरे टीम को बढ़ने से रोका जा सकता है । जब अपने स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान में जाने की आवश्यकता हो, तो कार्य के पूर्ण होते ही अपने स्थान पर पहुंचना चाहिये ।

जितने चातुर्य के खेल हैं उसका ज्ञान सब को अच्छी तरह हो जिस से संकेत पाते ही सब उस के लिए तैयार हो जायें।

प्रत्येक टीम के पास अनेक चातुर्य के खेल होना चाहिये।

अभ्यास :

सीजन के आरम्भ में आधार तथ्यों का अभ्यास जैसे सर्विस, पास, सेट अप, आक्रमण, शरीर की तैयारी का व्यायाम, सप्ताह में तीन दिन एक घंटा खेल तथा अभ्यास।

प्रतियोगिता में :

उचित अभ्यास तथा विश्राम खेल से पहिले गर्म होना, टीम को दृढ़ता तथा उत्साह के साथ खेल में भेजना। कैप्टन का अपने साथियों के साथ सही व्यवहार, जितने के समय उनको उन्ही भाव में रखना तथा हारते समय उत्साहित करना।

———

[३५]

# बास्केट बाल

## आधारित तथ्य :-

पकड़ना और पास करना :

वासकेट बौल में गेन्द का सही पकड़ना बहुत महत्वपूर्ण है। गेन्द दोनों हाथों के उंगलियों से पकड़ना चाहिये। पकड़ने या पास करने में हथेली का प्रयोग नहीं होता है। पकड़ने के लिये तैयारी की अवस्था में रहना आवश्यक है। गेन्द पकड़ने के लिये ढीलेपन से गेन्द की दिशा में आगे बढ़ना हाथ फैले हुये, दोनों में से कोई पैर आगे उंगलियां खुली हुई होंगी और गेन्द उंगलियों के सिरे से पकड़ा जायेगा, पकड़ने के साथ ही उसे अन्दर की ओर खींचना आवश्यक है यदि यह नहीं होगा तो गेन्द उंगलियों से लग कर उछल जा सकता है।

गेन्द सिर के ऊपर, सीने के सामने बगल में पास किया जा सकता है। यह सीधे नीचे, ऊँचा, या टप्पा खिला कर किया जा सकता है।

कभी कभी एक हाथ से भी गेन्द पकड़ा जाता है और उसके अभ्यास की भी आवश्यकता है।

पास करना :

वासकेट बौल में पास करने में कई एक प्रकार हैं।

१. सीने के सामने से पास या चेस्ट पास :

यह दोनों हाथों से किया जाता है। ये समीप के पास के लिये लाभदायक है। साधारणतः यह अधिक प्रयोग होता है।

चेस्ट पास करने में गेन्द चेस्ट की ऊंचाई पर लाया जाता है, हाथ गेन्द के पीछे होते हैं, उंगलियाँ गेन्द के चारों ओर फैली रहती हैं, कोहनी शरीर के समीप होते हैं, शरीर कमरे से कुछ झुका हुआ होता है। इस अवस्था से उंगलियों और कलाई के तेज झटके से गेन्द आगे ढकेला जाता है। हाथ फैलाते हुये किसी एक पैर पर आगे कदम लेना आवश्यक है जिसमें दोनों घुटने कुछ मुड़े हुये होंगे। पास करने में हाथ शरीर तथा पैरों में पूर्ण सन्तुलन की आवश्यकता है। दोनों हाथों को पीछे ले जाने मे पास समाप्त होता है।

दो हाथ मे हाथों के नीचे से पास :

यह उस समय प्रयोग होता है जब कोई बासकेट करने के लिये जा रहा हो। यह सदैव छोटा पास होता है और दौड़ने वाले के तेजी के अनुसार दिया जाता है। पिवट के बाद इसका अच्छा प्रयोग हो सकता है।

इस पास के लिये गेन्द को पीछे बगल मे दोनों हाथों से झुके हुये पकड़ना चाहिए। यहाँ से, फेकने ऐसा पास करना चाहिये और ऐसा करते समय वजन पीछे से सामने की ओर लाना चाहिये। पीछे जाने के लिये दोनों हाथों को फैलाना है।

एक हाथ मे हाथ के नीचे से पास :

ऐसा पास भी छोटा पास होता है। यह भी उसी समय प्रयोग होता है जब कोई बासकेट करने जाता है पास करने के लिये गेन्द

कूल्हे के समीप पीछे कमर की ऊंचाई पर लाया जाता है। दाहिना हाथ गेंद के बिलकुल पीछे होता है और बांया हाथ आगे उंगलियां खुली हुयी होती हैं। दायें हाथ को आगे लाने से पास होता है। गेंद उंगलियों के सिरे से जाता है। पीछे जाना, दाहिने हाथ के फैलाव तथा हथेली ऊपर रहने से होता है।

टप्पे से पास—बाउन्स पास :

यह बचाने वाले गार्ड से बच के, पास करने का तरीका है। यह दोनों हाथों से या एक हाथ से किया जा सकता है।

दोनों हाथों से पास करने के लिये चेस्ट पास की तरह पकड़ना होगा, शरीर आगे झुका हुआ और घुटने कुछ मुड़े हुये होंगे। पास कमर के पास से आरम्भ होगा। पास में चेस्ट पास की तरह हाथ, कलाई तथा उंगलियों की क्रिया होगी और पाने वाले से ३ फुट आगे जमीन पर टप्पा खा कर उछल के पाने वाले के कमर के ऊँचाई तक जाये।

एक हाथ से बाऊन्स पास करने के लिये गेंद बगल में एक हाथ से लाया जाता है और तब टप्पा दिया जाता है।

दो हाथ का बगल से पास :

यह पास साइड लाइन के पास किया जाता है पिवट के बाद।

गेंद दोनों हाथों से बगल मे कान के पास लाया जाता है। दोनों हाथों से शरीर के सामने एक बहारने की गति सी क्रिया करते हुये और साथ ही बायें पैर से आगे बढ़ते हुये पास किया जाता है। पीछें जाना दोनो हाथों के फैलाने से होता है।

बेस वौल पास :

यह लम्बे पास के लिये प्रयोग होता है। बेस वौल की तरह पास होने के कारण इसका नाम बेस बौल पास पड़ा।

बेस वौल पास के लिए पैरों में दूरी हो। आरम्भ में गेंद दोनों हाथों से शरीर की दाहिनी ओर किया जाता है। गेंद फेकने की अवस्था में कानों के पास लाया जाता है और इस क्रिया में बेस वौल की तरह एक हाथ का प्रयोग होता है। यहाँ से गेन्द एक हाथ से फेंका जाता है साथ ही शरीर का वजन पिछले पैर से अगले पैर पर आ जाता है। पीछे जाना दाहिने हाथ के द्वारा होता है।

सिर के ऊपर से पास या ओवर हेड पास :

यह बासकेट के लिये जाते हुये साथी के लिये प्रयोग होता है।

ओवर हेड पास के लिये सिर के ऊपर गेंद दोनों हाथ से लायें। अगुलियां खुली हुयी होंगी और अंगूठा पीछे होगा। कोहनी कुछ मुड़ी हुई होगी जिससे गेन्द सिर के कुछ आगे होगा। कलाई और उंगली के झटके से गेंद पास किया जायेगा। पीछे आना दोनों हाथों से होगा।

हुक पास :

दाहिने हाथ से हुक पास करने के लिये डिफेन्सीव गार्ड की ओर पीठ करके और मुह एक ओर करके खड़े होना, बायें पैर सेकूद कर गेंद दोनों हाथों से पकड़कर, शरीर के समीप लाना होता है। फिर गेद को एक हाथ से पकड़ना जिस से वह हाथ और कलाई से मिला रहे। साथ ही हवा में घूम कर गेंद को उंगलियों के ऊपर

से झटका दे कर डिफेन्सीव गार्ड के ऊपर फेंकना। यह पास बहुत ही प्रभाव पूर्ण है किन्तु बहुत अभ्यास की आवश्यकता है।

पीछे पास या बैक पास :

दोनो हाथों से गेंद पकड़ना, बायां पैर आगे रहेगा, शरीर आगे झुका हुआ होगा। कलाई के द्वारा हाथ के बगल के पीछे गेंद लाना और शरीर को और आगे झुकाना। गेंद पीछे तेज़ी से झटका देकर फेंकना और पीछे जाना।

बैक पास एक हाथ से भी हो सकता है। गेंद एक हाथ से पीछे लाना और पीठ के पीछे पार एक झटके से गेद फेंकना।

## पास के लेन देन में मुख्य बातें

पास लेने में :

उंगलियां खुली रहें,आँख गेंद पर,गेंद हाथ में आते ही पीछे खीचना,जहां तक सम्भव हो गेंद लेने के लिये आगे बढ़ना,गेंद शरीर के पास रखना,पास लेने के लिये तैयार रहना,गेंद मजबूती से पकड़ना।

पास करना :

सिर ऊपर, आंखे आगे, गेंद पर नियन्त्रण, गेंद को एक हाथ से दूसरे हाथ में घुमाते रहें। कलाई तथा उंगलियों का अच्छा प्रयोग पास में। पास कम से कम सीने की ऊंचाई की हो,लेने वाले के सम्बन्ध से पास देना,गेंद लेने वाले के सामने देना,पास तेज होना चाहिये, पास गार्ड से दूर देना चाहिये, पास देने में निश्चयात्मकता होनी चाहिये, प्रतिद्वन्दी के आने के पहिले पास, पास समझ के साथ होना

चाहिये,साथी के समीप होने पर पास तेज़ नहीं होना चाहिये,सब तरह के पास सीखना चाहिये ।

## शूटिंग

बासकेट बाल में विजय, शूटिंग के द्वारा ही होता है ।दूसरों से अधिक पोइन्ट शूट करना खेल का ध्येय है । इसमें अनेकों प्रकार के शूटिंग हैं और प्रत्येक खिलाड़ी को इसमें अभ्यास होना अनिवार्य है नहीं तो खेल सही तरह नहीं खेला जा सकता ।

(१) ले अप शाट् :

यह खेल में बहुत अधिक प्रयोग होता है और बासकेट के दोनों ओर से किया जा सकता है । यह तेज़ी के साथ किया जा सकता है किन्तु इस के लिये ठीक समय पर करना, ताल तथा सन्तुलन की आवश्यकता है ।

यह दाहिने या बाँये दोनो हाथों से किया जा सकता है । दाहिना पैर प्रयोग करने के लिये टेक आफ़ बाँये पैर से लेना होगा । बासकेट के पास जितना ऊपर कूदा जा सके, कूदते हुये आंखों को उस स्थान पर जहाँ बासकेट करना है लगाते हुये ऊपर जाने के समय दाहिने हाथ को गेंद के पीछे रखकर और बाये हाथ को सामने,दाहिने हाथ से गेंद छोड़ना है और छोड़ते समय कलाई तथा उगलियों की अच्छी सहायता ली जाय । इसके बाद पीछे जाना ।

(२) चेस्ट शाट :

यह बासकेट से प्रायः १५-२० फुट की दूरी से फेंका जाता है । गेंद चेस्ट पास की तरह पकड़ते हुये उंगलियाँ खुली हों और अंगूठा

पीछे हो। गेंद उंगलियों के सिरे से पकड़ा जायेगा। पैर खुले हुये या कुछ आगे पीछे रह सकते हैं। घुटना कुछ मुड़ा हुआ और शरीर सामने झुका हुआ होगा। आँखे रिंग पर केन्द्रित होंगी। गेंद फेंकने के पहिले कलाई मुड़ेगी घुटना सीधे करते हुये स्प्रिग के झटके की तरह गेंद फेंकी जायेगी जिसके साथ और उंगलियों और कलाई का कार्य मिला रहेगा। गेंद हवा में वृत्ताकार रूपमार्ग रिंग में जाने के लिये लेगा।

जितनी दूर से चेस्ट शाट होगा उतना ही घुटना मुड़ा होगा।

(३) एक हाथ से सेट शाट या वन हैंड सेट शाट :

यह खड़े होकर या दौड़ कर लिया जा सकता है। दाहिना पैर और एड़ी ज़मीन पर और आगे वजन के साथ, घुटना कुछ मुड़ा हुआ। बांया हाथ गेंद के नीचे दाहिना गेंद के पीछे होगा। आँख रिम पर केंद्रित हो। गेंद कलाई के झटके से फेंकी जाये। गेंद का मार्ग हवा में वृत्ताकार रूप का होगा। शाट के समाप्त होने के साथ दाहिनी एड़ी और बायां पैर जमीन से ऊपर उठ जायेगा। दौड़ कर शाट करने के लिये शाट करते समय। वेग कुछ धीमा होगा।

(४) कूद कर शाट या जम्प शाट :

जम्प शाट के लिये ठीक समय पर काम, उछाल तथा सन्तुलन होना आवश्यक है।

गेंद दोनो हाथों से सीने के सामने पकड़े हुये, उंगलियाँ फैली हुयी हों, घुटना और कोहनी मुड़ी हुयी हो, घुटना अधिक से अधिक मुड़ा हुआ हो। आँखें रिम पर केन्द्रित हो। जैसे ही गेंद सिर पर लाया जाय पंजो पर खड़े हो कर जितना ऊपर हो सके उछाला

जाय और गेंद को फेंकने के स्थान पर ला कर फेंकना। पीछे जाना और संतुलन के साथ नीचे आना। बहुत दूर से यह शाट यत्न नहीं करना चाहिये। दौड़ कर जम्प शाट की भी यही रीति है।

डि्बलिंग :

यह एक अच्छी कला है किन्तु गलत प्रयोग से खेल में हानि होगीं। डि्बलिंग से खेल में सहायता होनी चाहिये। यह उसी समय करना चाहिये जब किसी को पास करने का अवसर नहीं और बासकेट तक पहुंचने का अवसर है। जब खिलाड़ी प्रतिद्वन्दियों से बुरी तरह घिरा हो। जब कोई खेल आरम्भ किया जा रहा हो। गेंद अपने पास रखने के लिये।

एक दो ड्रिबल से अधिक नहीं करना चाहिये जब तक वास्केट तक न पहुंचना हो। ड्रिबल से पास सदैव उत्तम होता है।

ड्रिवल का सिद्धान्त :

किसी हाथ से ड्रिबल किया जा सकता है,हथेली कप या कटोरी की तरह गोल हो,गेंद को उंगलियों से जमीन की ओर ढ़केलते हैं। यह एक विशेष ताल के साथ होना चाहिमे। गेंद जितना नीचा रह सके रखना चाहिये। धीरे-धीरे आँखें गेंद से हटा लेना चाहिये। शूट करने के पहिले टप्पा कुछ ऊंचा करना चाहिये।

पिवट :

पिवट गार्ड के घेरे से निकलने का एक उपाय है। इसमें पैरों के काम,संतुलन,तथा समतुल्य की आवश्यकता है। यह खड़े होकर दौड़ते हुये, एक पैर आगे रख कर खड़े होने में किया जा सकता है। कोई एक पैर पिवट का काम कर सकता है और शरीर उसी पर

चारों ओर घुमता है। पिवट कई एक अवस्थाओं में प्रयोग हो सकता है।

(१) खड़े हो कर पिवट :

जब दोनो पैर जमीन पर हैं, किसी एक पैर पर पिवट हो सकता है। यह गार्ड से संतुलन को भंग करने के लिये प्रयोग होता है।

(२) उलट के फेर का पिवट-रिवर्स पिवट :

आगे पैर पर पिवट करके उलट कर घुम जाना, वजन सामने पैर पर रहता है। दाहिने पैर से चल देना।

(३)सामने की पिवट-फ्रन्ट पिवट :

बांये पैर पर पिवट करना दायें पैर से गार्ड से दूर हो जाना।

(४) हिलते हुये पिवट-रौकिंग पिवट—

पिछले पैर पर पिवट करते हुये शरीर को आगे पीछे करने की क्रिया करना।

भुलावा देना-फेक एण्ड फेंट्स—

यह वह गतियां होती हैं जो प्रतिद्वन्दी को धोखा देने के लिये की जाती हैं। यह साधारणत: पिवट के साथ प्रयोग होता है।

धोखा,गेंद,आँखों,हाथ,पैर,सिर तथा कंधों के द्वारा किया जा सकता है। जैसे ड्रिबलिंग के पहिले गेंद से झुकाने की गति,आंखो से देखना एक ओर और पास या पिवट दूसरी ओर करना आदि।

आड़ करना या स्क्रिनिंग :

प्रतिद्वन्दी के अनेक मार्ग में आड़ कर देने को स्क्रिनिंग कहते हैं। इसके करने में शारीरिक सम्पर्क नहीं होना चाहिये। स्क्रिनिग में

आक्रमण करने वाले फारवर्ड को उस के गार्ड से स्वतंत्र करने का उद्देश्य रहता है। अच्छे स्क्रिनिंग में सही समय से कार्य करना तथा सही वेग की आवश्यकता होती है।

स्थायी स्क्रिनिंग में अवस्था स्थित होती है और खिलाड़ी अपने टीम के लिये खड़े होकर आड़ करता है। खेल में ऐसी अवस्था उत्पन्न होती है जब किसी खेल के आरम्भ करने वाले को आड करना पड़ता है। यह भी प्रायः स्थायी स्क्रिनिंग की तरह ही होता है। आक्रमण करने के चातुर्य में स्क्रिनिंग बहुधा प्रयोग होता है।

## आक्रमण प्रणाली

व्यक्तिगत आक्रमण :

व्यक्तिगत आक्रमण का अर्थ है, कि खिलाड़ी ने आक्समिक आरम्भ तथा थम जाना, इधर उधर घसकना, भुलावा, अनेकों प्रकार के घूमने आदि गुण अर्जित किये हैं तथा निपुणता प्राप्त की है। उसमें स्कोर करने की योग्यता होनी चाहिये।

किसी टीम का आक्रमण तीन बातों पर निर्भर करता है।

(१) व्यक्तिगत खेलने वालों के आधारित तथ्यों का सही प्रयोग।

(२) तेज गति से गेन्द का चलना।

(३) खेलने वालों की गति।

टीम आक्रमण

भिन्न भिन्न खेलों का प्रयोग जिस में तेजी से निकलना, पिवट,

चतुरता से गेन्द चलाना, अच्छी शूटिंग आदि उचित रीति से व्यवहार में आते हैं।

तेज़ी से निकलना :

तेजी से निकलना जिससे प्रतिद्वन्दी खिलाड़ी का सही अनुमान न लगा सके, शीघ्रता तथा सुगमता से स्कोर करने का तरीका है। इसका उद्देश्य है कि इसके पहिले की प्रतिद्वन्दी समझे कि क्या हो रहा है गेन्द सामने के कोर्ट में आ जाये। यह फील्ड में किसी भाग से आरम्भ किया जा सकता है।

इस के करने का कोई विशेष रीति नहीं है। तेजी इसकी मुख्य चीज़ है।

बचाव की प्रणाली :

बचाव उतना ही महत्व पूर्ण हैं जितना आक्रमण। खेल का उद्देश्य है अपने लिये वास्केट स्कोर करना और प्रतिद्वन्दियों को स्कोर करने से रोकना। इस रोकने में बचाव की प्रणाली का प्रयोग होता है। एक अच्छी टीम में बचाव तथा आक्रमण दोनों अच्छे होते हैं।

व्यक्तिगत बचाव :

## खड़े होने का तरीका

इस प्रकार खड़ा होना चाहिये जिससे चारो ओर, आसानी से चल सकें। इसमें सदैव तैयारी की अवस्था रहती है। सबसे अच्छी अवस्था है पैरों को आगे पीछे करके खड़ा होना, पैर के गोलों पर वजन रखना, घुटनों को मोड़ना तथा कूल्हे के नीचे करना तथा

हाथों को पूरा खोल के रखना जिससे एक हाथ ऊपर और दूसरा बगल में रहे ।

पैरों को खोल के रखना आगे पीछे तथा बगल में चलने के लिये आगे पैर, बगल के पैर या पीछे पैर से आरम्भ करना तथा दूसरे पैर को पीछे ले जाना । पैर एक दूसरे के आर पार कभी नही होंगे । अपने प्रतिद्वन्दी के ओर न झुकना न कदम बढ़ाना ।

स्थान सदैव प्रतिद्वन्दी और उस के बास्केट के बीच होना चाहिये । यदि प्रतिद्वन्दी तेजी से आ रहा हो तो पीछे, हट जाना चाहिए । यदि मध्यम गति से आ रहा हो तो मिलना चाहिये । प्रतिद्वन्दी को देख कर कार्य क लिये सही निर्णय करना आवश्यक है । प्रतिद्वन्दी क बहुत समीप नही होना चाहिये । सही दूरी पर उसके साथ रहें ।

विभिन्न प्रकार के खेल, पिवट, धोखा, तेज निकलने आदि चातुर्य के आक्समिक होने के लिये तैयारी की दशा में रहें और उसक काट के लिये निर्णय करे ।

उनके भूल के द्वारा अपने लाभ के लिये काम करना अच्छे खिलाड़ीं तथा टीम की योग्यता समझी जाती है ।

बचाव का विशेष चातुर्य :

फ्री थ्रो में या आस पास पिवट करने वाले खिलाड़ी के सामने खेलना है तो यदि वह वासकेट के समीप हो तो उसके सामने से आक्रमण करना चाहिये । चेष्टा यह करना चाहिये कि उसे पास न मिले ।

यदि वह लेन के बाहर है तो उसके बगल में होना चाहिये ।

उसे पास मिलने से रोकना चाहिए। उसने और उसके बासकेट के बीच स्थान लेना चाहिए।

यदि कोई उसके पास आ रहा हो तो उसका भी ध्यान रखना चाहिये।

कौरनर में गेन्द के साथ खिलाड़ी को आक्रमण दूर से करना चाहिये। जिससे न वह ड्रिबल कर सके और न पास कर सके। अपने समीप से उसे नहीं जाने देना चाहिए। चेष्टा होनी चाहिए की वह शूट करे।

सेन्टर लाइन और फाउल सर्कल के बीच के खिलाड़ी को उसके तेजी, उसके शूट करने की योग्यता के अनुसार, उससे अपनी दूरी रखें।

कोर्ट के साइड्स पर गेन्द लिए हुए खिलाड़ी का गार्ड ऐसे स्थान से करना चाहिए जिससे वह कौरनर में जाने को बाध्य हो जाये।

उस खिलाड़ी को जिसके पास गेन्द आउट आफ बाउन्डस है उसे उसके और बासकेट के बीच में खेलना चाहिए। उसके पास वापस न जाये इसका ध्यान होना चाहिए। उसके बहुत समीप नहीं होना चाहिए। वाधा तथा आड से बचाना चाहिए। ऐसे स्थान में होना चाहिये जिस से जहाँ से खेल आरम्भ हो वहीं उसका सामना कर सकें।

ले अप शाट के ब्लौक करने के लिये जो हाथ खिलाड़ी के समीप हो उसका प्रयोग करना चाहिये।

ड्रिबल को तोड़ने के लिये चेष्टा होनी चाहिए जिससे उसीके मार्ग का पता चल जाये और फिर स्थिति लेकर गेन्द पर आक्रमण

करें। उसे या तो रुकना पड़ेगा या साथ भागना पड़ेगा। भागने के समय उससे एक कदम आगे रहें। उसे कौरनर की ओर जाने को बाध्य करें। यदि ड्रिबल न रोक सकें तो शाट अवश्य ही रोकने की चेष्टा करें। ड्रिबलर से न बहुत आगे न बहुत पीछे जाना चाहिये।

टीम का बचाव :

एक आदमी के साथ एक आदमी या मैन टू मैन इस प्रकार के खेल में प्रत्येक खिलाड़ी एक प्रतिद्वन्दी खिलाड़ी को गार्ड करता है। और सम्पूर्ण खेल में यह उसका उत्तरदायित्व हो जाता है कि उसे गेंद ले कर आगे बढ़ने और बासकेट करने से रोके।

मैन टू मैन डिफेन्स खेलना बहुत ही कठिन खेल है। इस में प्रवल इच्छा, दृढ़ संकल्प, आरम्भ करना, आत्म विश्वास, कर्तव्य में लीन होना आदि की आवश्यकता होती है।

जोन डिफेन्स :

ज़ोन डिफेन्स में प्रत्येक खिलाड़ी को एक नियुक्त ज़ोन को गार्ड करना पड़ता है। इस अर्थ में यह मैन टू मैन डिफेन्स के विपरीत है। इस खेल का सिद्धांत है कि जैसे गेंद सामने कोर्ट नेट में प्रतिद्वन्दी को मिले वैसे पीछे आ जायें और प्रत्येक अपने बचाने का नियुक्त स्थान ले लें। इस अवस्था में गेंद खेलें, न कि, खिलाड़ी। डिफेन्स दो में या तीन में हो सकता है जिस में से प्रतिद्वन्दी पार न जाने पायें। प्रत्येक खिलाड़ी की गति गेंद सम्बन्धित है। वह गेंद के स्थान के अनुसार अपने जोन में चलता है।

साधारणतः तीन मुख्य बचाव हैं।

(१) दो पीछे और तीन आगे ।

(२) तीन पीछे और दो आगे ।

(३) दो पीछे, एक बीच में और दो आगे ।

ये तीनो घूमते हुये ज़ोन की तरह भी प्रयोग में आ सकते हैं। इस अवस्था में पूरे डिफेन्स उस क्षेत्र में होंगे जहाँ गेंद हो ।

किसी एक प्रकार के खेल पर बिलकुल निर्भर नहीं होना चाहिए। जैसी स्थिति हो उसी के अनुसार खेल का प्रकार भी होना चाहिए।

ज़ोन से बाहर निकलने में अनेको उपाय हैं। एक उत्तम उपाय तेजी से घेरा तोड़ने का उपाय है। ज़ोन डिफेन्स में शक्ति बीच में होती है। इसलिए किनारे और दूर पर कमजोरी हो सकती है इसलिए किनारे से ज़ोन आसानी से तोड़ा जा सकता है।

ज़ोन तोड़ने का एक दूसरा उपाय है कि एक क्षेत्र में दो आक्रमण करने वालो को रख दे। इस से डिफेन्स के गार्ड को उधर जाना होगा और इस कारण डिफेन्स का संतुलन बिगड़ जायेगा। इस प्रकार के खेल में दो खिलाड़ी भी डिफेन्स में होने चाहिए क्योंकि यदि गेंद पीछे आये तो वे उस की रक्षा कर सकें।

अभ्यास :

(१) दो ग्रूप में आमने सामने एक कतार में खड़ा होना। सामने का खिलाड़ी दूसरे सामने खिलाड़ी को चेस्ट पास देता है और पास देकर पीछे जाता है।

(२) इसी बनावट में भिन्न भिन्न पास का अभ्यास।

(३) एक वृत्त पर खिलाड़ी खड़े होते हैं और विभिन्न प्रकार

के पास आपस में करते हैं। बीच में एक दो खिलाड़ी पास रोकनेकी चेष्टा करते हैं और यदि सफल होते हैं तो जिनका पास वे रोकते हैं उनसे स्थानान्तर होता है।

(४) तीन खिलाड़ी अ, ब, स त्रिकोण स्वरूप खड़े होते हैं। अ, ब को पास करके स के स्थान पर पहुंचता है ब, स को पास करके अ के स्थान पर पहुंचता है और इसी प्रकार भिन्न २ पास चलते रहेंगे।

(५) खिलाड़ी रिंग के सामने खड़े होकर शूट करते हैं और धीरे धीरे दूरी बढ़ाते जाते हैं।

(६) खिलाड़ी रिंग के दोनों ओर खड़े होते हैं। एक ओर से गेंद दूसरी ओर, पहले खिलाड़ी को बासकेट से कुछ पहिले फेंका जाता है, जो दौड़ के लेता है, एक स्टेप और टप्पा लगाता और ला अप शार्ट करता है। वह अपने लाइन के पीछे आता है। उसी लाइन का दूसरा खिलाड़ी गेंद लेकर दूसरे लाइन के पहिले खिलाड़ी को उसी तरह फेंकता है और वह उसी तरह बासकेट कर के अपने लाइन के पीछे चला जाता है। अभ्यास इसी तरह चलता जाता है।

(७) खिलाड़ी तीन कतार में खड़े हो जाते है। कतार अ-ब-स। —अ-ब-स साथ दौड़ते हैं। अ-स को पास करता स के सामने बासकेट के पास के लिये दौड़ता जब अ, ब के सामने से दौड़ता है उसी समय स, ब को पास कर देता है और ब आगे बढ़-कर फिर अ को पास करता है बासकेट करने के लिये।

(८) अ-ब-स—अ स को पास करता है जो आगे बढ़कर लेता है किन्तु उसका गार्ड उसके सामने आता है तो वह पिवट करता है

और उसी समय ब उसके बायें ओर आ जाता है और पास लेता है, इतने में अ बासकेट के नीचे आता है और पास पाकर बासकेट करता है।

(९) एक कतार में खिलाड़ी खड़े होते हैं। एक खिलाड़ी दूसरे के चारों ओर पूरी लाइन में घूम घूम कर ड्रिबल करता है और खतम करने पर दूसरे को पास करता।

(१०) न० ९ की तरह किन्तु जब खिलाड़ी दूसरों के पास ड्रिबल कराने आता है तो वे रोकना चाहते हैं और वह पिवट कर के दिशा बदल कर आगे चलता है। प्रत्येक सप्ताह के लिए निश्चित प्रशिक्षण कार्यक्रम होना चाहिए जिस में प्रत्येक खिलाड़ी को आधार भूत तथ्यों में अभ्यास दिया जाय, आक्रमण तथा बचाव के चातुर्य में अभ्यास, जम्प बौल का खेल, अन्त और बगल के लाइनों का खेल, आधे कोर्ट में खेल आदि किये जायें।

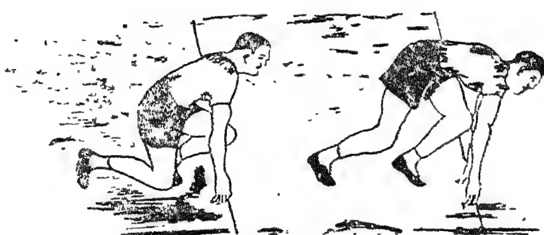
कार्य क्रम में क्रमशः प्रगति होनी चाहिए। प्रत्येक घंटे मे शारीरिक तैयारी का अभ्यास भी व्यायाम, दौड़ आदि के द्वारा होना चाहिए। सप्ताह के बीच में दूसरे टीम से मैच इत्यादि खेलना आवश्यक होगा।

---

# [३६]

# एथेलेटिक्स

## स्प्रिंटिंग Sprinting



स्टार्ट :

६ इन्चका गढ़ा इस प्रकार खोदना चाहिए कि पिछले पैर का घुटना दूसरे पैर के गोलाई के विपरीत हो। गढ़े के पीछे का भाग सीधा होगा। आन योर मार्क (On your mark) के आदेश पर गढें में अपने स्थान लेना चाहिए जिससे पिछले पैर का जांघ सीधा ऊपर-नीचे हो और हाथ कँधे के नीचे हो उंगलियां लाइन पर अंगूठे और चारो उंगेली के सहारे सतुलन में सहायता होगी। गेट सेट (Get set) के आदेश पर वजन आगे डालना चाहिए। कंधों को ६ इन्च आगे करते हुए शरीर उठाना चाहिए जिससे पिछले पैर का घुटना जमीन से ६ इन्च ऊपर हो जाय कूल्हे कंधे से

ऊपर हों, ऊपर लिखे आदेश पर एक गहरी साँस लेना चाहिए और स्टार्ट तक रोके रहना चाहिए करीब दो सेकण्ड तक। आँखे करीब दस गज की दूरी पर देखें। गो (Go) के आदेश पर कई एक शारीरिक प्रतिक्रियायें तत्कालीन होंगी। दौड़ने वाला दोनों पैरों से एक ही समय गढ़ो के विरुद्ध धक्का देगा। बांया हाथ आगे ऊपर एक तेज हरकत से झूलेगा, दायाँ हाथ में कोई विशेष चेष्टा नहीं होगी। जैसे ही पैरों की ताकत गढ़ों के विरुद्ध समाप्त हो चुके, दाहिना पैर ट्रैक के ऊपर एक तेज दबाव की गति Jabbing motion से डाला जायगा। दाहिने पैर का सम्पर्क जमीन से स्टर्टिग (Starting) लाइन के ८ इन्च आगे होगा।

उसी झुकी हुई अवस्था में पहले पाँच स्ट्राइड अधिक से अधिक शीघ्रता से पूरी शक्ति के साथ लाने में प्रयोग करना चाहिए। दूसरे पग पर दाहिने हाथ का अच्छे झुलाव के साथ आगे ड्राइव होगा। शरीर का झुकाव आगे होगा और पैरों से ट्रैक पर जाब किया जायगा और तेज ड्राइव होगी। बाकी पाचों स्ट्राइड में इसी प्रकार की क्रिया होगी जिस में हाथ का झुलाव अधिक होगा और धीरे धीरे शरीर ऊपर उठेगा।

बिल्ड अप:

दौड़ दूसरे दौड़ में पैरों की गति में परिवर्तन होगा। तेज जाब से ऊंचा घुटना और जांघ ऊँची तेज आगे की गति में परिवर्तित होंगे।

मुख्य परिश्रम पैरों के नीचे लाने में नहीं किन्तु शीघ्रता से घुटनो को प्रत्येक स्ट्राइड में उठाने में होगा। हाथों की गति झटके

से बदल कर कुछ लम्बे झुलाव में होगा। हाथों की गति अत्यधिक तीव्र होती रहेगी।

बिल्ड अप दौर तथा आरम्भ के ड्राइव दौर में अन्तर यह है कि पैरों की गति अधिक पुश और पुल का मेल है न कि केवल पुश की चेष्टा करना। रेस में किसी दूसरे हिस्से से बिल्ड अप में घुटने आगे के झुलाव में अधिक ऊंचे आते हैं। पहले दस गज में ड्राईव होता है और दूसरे तीस गज में बिल्ड अप होगा। दूसरे स्ट्राइड से स्ट्राइड की दूरी क्रमशः बढ़ती जाती है तथा ३५ गज तक सब से लम्बी स्ट्राइड हो जाती है।

११० मीटर स्प्रिंट :

पहले ४० गज एक स्टाइल से दौड़ने हैं। यहाँ तक अधिक से अधिक तेजी लाई जाती है और फिर उसी को निम्न रीतियों से रखा जाता है।

दौड़ने वाला अधिक से अधिक तेजी ४० गज निशान पर लाता है। फिर यह तेजी पैरों की गति बदलने से कायम की जाती है। यह ऊंचे घुटने के उठाने के स्थान पर घुटने की नीची आगे कदम फैलाव में कुछ लम्बे पैर के पहुंच से की जाती है। यह कहा जा सकता है कि साधारण स्प्रिंट्स से ग्लाइड के फार्म में बदल जाना है। यह परिवर्तन कंधों को आगे ले जाने में और हाथों को और ढीली और कुछ नीची स्थिति, गति के करने में होता है। बहुत से दौड़ने वालों को यह समझने में कठिनाई होगी कि तेजी-ऐसी ढिलाई की अवस्था में कैसे बनी रहेगी। बिल्ड अप से बहुत कम परिश्रम इस अवस्था में करना पड़ेगा। दौड़ का यह पक्ष किसी

दौड़ने वाले को कठिनता से आता है क्योंकि इस में शरीर पर पूर्ण मानसिक नियन्त्रण रहता है।

समाप्ति :

अत्याधिक दौड़ने वाले अपनी तेजी इस ढीले रूप में या ५० गज तक बनाये रख सकते हैं। इस समय शरीर बहुत सीधा होगा और गज तक कुछ तेजी में कमी होगी। इस रुकाव को रोकने के लिए और यह निश्चय होने के लिए कि पूरी शक्ति रेस में लग रही है एक रूप जो बहुत कुछ बिल्ड अप की तरह है बाकी २० गज में प्रयोग किया जा सकता है।

ढीले पन से बदल के फिर बिल्ड अप के स्थिति मे—कंधे फिर आगे की ओर किये जाते हैं, हाथ उठाये जाते हैं घुटने की क्रिया उठाई जाती है तथा पूरी शक्ति अधिक से अधिक तेजी लाने के लिए लगाई जाती है। शरीर की स्थिति में क्रमश: परिवर्तन लाया जाती हैं किन्तु शक्ति एक आकस्मिक धड़कन के साथ छोड़ी जाती है। यह कठिन चेष्टा टेप (Tape) तक रखी जाती है किन्तु शर्त यह है कि दौड़ने वाला अपना फार्म और ताल न छोड़े। किसी भी दौड़ने वाले को अपने फार्म का नियंत्रण हटने नहीं देना चाहिए जिससे उसके मांस पेशियाँ बँध जाय या "टाई अप" हो जाय। दौड़ में आखिरी कदम में टेप के छूने के लिए अन्तिम चेष्टा की जाती है यह कन्धों को आगे फेकने के द्वारा किया जाता है।

२०० गज की दौड़ :

२२० मीटर की दौड़ में पहिला ४० स्ट्रायिड ११० मी० की तरह दौड़ी जाती है। ढीलेपन की अवस्था ४० वे गज पर आना

चाहिए। दौड़ने वाले को ८० गज के निशान तक बगैर फार्म के बदले हुये अधिक शक्ति प्रयोग करना चाहिए। यहाँ चेतावनी दी जाती है कि तेजी कम न हो जो कि एक ढीलेपन की अवस्था में प्राकृतिक है यदि दौड़ने वाला ध्यान न रखे। यह ढीलेपन की अवस्था १७५ गज तक रखी जाती है। इस के लिए कठिन परिश्रम और अभ्यास की आवश्यकता है। क्योंकि इतनी दूरी तक ढीलेपन की अवस्था में तेज गति सम्भालना आसान नही है। १७५ वें गज पर नयी शक्ति के भड़काव का प्रयोग होना चाहिए। जैसे की ११० मी० में २० गज पर होता है बहुत से दौड़ने वालों के शारीरिक रीति से इस शक्ति को अब तक रखना कठिन होगा। यह सम्भव हो सकता है कि यह शक्ति की भड़क प्राय: २५ गज तक रखी जा सके इसलिए जहाँ तक सभव हो ढीले हों किन्तु अच्छा फौर्म अन्तिम २० गज तक बनाये रखना चाहिए। यह समझना अत्यन्त कठिन है कि दौड़ने वाला दौड़ में अन्तिम पक्ष मे अपने को ढीला करते हुए भी अपनी तेजी में कमी नहीं आने दे सकता है।

प्रतियोगिना के लिए आदेश :

दौड़ में पहले गर्म करना—यह दौड़ शक्ति का नियन्त्रित भड़काव है इस में उचित मास पेषियाँ उचित समय में प्रयोग होती हैं अतएव गर्म करने के द्वारा शरीर की तैयारी और शक्ति केन्द्रित किया जाता है। यह जौगिंग विंड स्प्रिंट, व्यायाम और प्रारम्भिक. आरम्भ के द्वारा किया जा सकता है।

संवेदना उत्तेजना तथा उस का नियंत्रण :

उत्तेजना आवश्यक है तथा प्रकृति भी इसमें सहायता करती

है। किन्तु यदि उत्तेजना का सही नियन्त्रण न किया जाय तो दौड़ने वाला अपने श्रेष्ट सफलता के लिए व्यर्थ परिश्रम करेगा। कितनों के लिए यह सरल होगा तथा कितनों के लिए यह कठिन भी होगा। किन्तु प्रत्येक के लिए एक निश्चित कार्यक्रम गर्म करने का होना चाहिए, दौड़ के पहले मालिश, स्टाटर तथा उसकी प्रणाली को जानना, तथा स्टार्टिग ब्लाक्स रखना आदि अत्यन्त सहायक होंगे।

समय से उपस्थित होना, पसीने के कपड़े अन्त तक पहिने रहना, ढीले रहना इत्यादि, मानसिक सावधानी अत्यन्त आवश्यक है।

आरम्भ की अवस्थायें सरलता तथा सुगमता से लेना। 'गो' के आदेश पर 'गन' के छूटते ही जितनी शीघ्रता से निकल सकें निकलना।

कोचिंग कार्य क्रम :

(१) ६ सप्ताह तक प्रारम्भिक मौसम की शरीर की तैयारी, व्यायाम आदि करना चाहिए।

(२) आधार भूत तथ्यों का अभ्यास, इसके प्रत्येक छोटे-छोटे तत्वों का अभ्यास, अच्छे स्टार्ट का सीखना और उसको दोहराना चाहिए।

(३) प्रतियोगिता के समय में अधिक कार्य न किया जाय, सप्ताह में दो दिन बिलकुल हलका काम किया जाय तथा एक दिन विश्राम रखा जाये।

(४) तेज क्रिया करने के लिए शरीर को गर्म करने की आवश्यता है। गर्म करने में कार्य से अधिक शक्ति का प्रयोग करना।

(५) अभ्यास के समय, पूर्ण शक्ति से तेज कार्य, थकान आ

जाने से पहले करना चाहिए। सहने की शक्ति के काम बाद में आना चाहिए। थकान से मांस पेशियों को हानि हो सकती है।

(६) प्रशिक्षण की समस्या शारीरिक होने के साथ मानसिक भी है। जिस दौड़ने वाले को अपने ऊपर विश्वास नहीं होता है तो वह स्टार्ट करने के समय गड़बड़ा जाता है। अपने ऊपर विश्वास रखना सिखाया जा सकता है तथा इसकी ट्रेनिंग भी दी जा सकती है। आवश्यकता से अधिक विश्वास होने से भी हानि की सम्भावना होती है।

मध्य दूरी की दौड़ :

अनुभवी दौड़ने वालों के लिए १/४ मील की दौड़ भी एक डैश (Dash) होती है। तथा २०० गज की दौड़ की तरह दौड़ा जा सकता है। अधिकतर दौड़ने वालों के लिए वही स्टार्ट बिल्ड अप (जो पहिले दिए जा चुके हैं) प्रयोग करना चाहिए। ८० गज की निशान पर ढीली अवस्था में परिवर्तन होना चाहिए। हाथ की क्रिया कुछ नीची होनी चाहिए। स्ट्राईड लम्बे तथा सरलता से लेने चाहिए, पैर की एड़ी तथा पैर की गोलाई, ट्रैक पर गिरने के समय सतह पर होना चाहिए। पैरों, हाथों तथा कंधो के पेशियो मे कोई खिचाव नही होना चाहिए।

४४० गज की दौड का अन्त :

३०० गज के निशान पर दौड़ने वाले को सबसे आगे वाले व्यक्ति के २ स्ट्राइड पीछे स्थान लेना चाहिए यदि रेस के पहले हिस्से में गति तेज रही हो। इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए ३०० गज की दूरी पर बहुत परिश्रम करना पड़ेगा। यदि इस

परिश्रम की आवश्यकता हो, तो परिश्रम के बाद ढीला हो जाना चाहिए। ४०० गज के निशान पर जैसे २२० में १७५ गज पर किया गया था वैसे ही करना होगा। ऐसी दौड़ २० गज तक होगी। यह ढीली अवस्था में होना चाहिए। यह दौड़ इतनी छोटी तथा तेज होती है कि दौड़ने वाले को अपने ध्येय की पूर्ति का एक ही अवसर मिलता है। बुद्धिमत्ता इसी निर्णय में है कि इस अवसर का प्रयोग कब और कैसे किया जाय। जब अवसर तथा स्थान निश्चित कर लिया जाय तो पूर्ण, आक्समिक शक्ति से उसकी पूर्ति की चेष्टा की जाय। सीधे दौड़ में पहले तीसरे हिस्से में ही दूसरों से आगे बढ़ने की चेष्टा करनी चाहिए।

प्रशिक्षण सगठन :

प्रतियोगिता के तीन सप्ताह पूर्व भाग लेने वालों को श्रेष्ठ अवस्था में होना चाहिए। मानसिक, सवेगात्मक तैयारी के लिए दौड़ की कौशलता, कदम की गति तथा तेजी के कार्य और पर्याप्त विश्राम होना चाहिए।

(१) यह एक तेज दौड़ है तथा इस कार्य में अत्यधिक सहन शक्ति की आवश्यकता है। अभ्यास में इन दोनों बातों का ध्यान देना आवश्यक है।

(२) हफ़्ते में पाँच दिन का प्रशिक्षण उचित है।

(३) स्टार्टिग का अभ्यास २० गज तक तथा स्प्रिंटिग का ६० गज तक, प्रत्येक दिन के अभ्यास के कार्यक्रम में होना चाहिये।

(४) उत्तम सहने का कार्य १-४मील दौड़ने वालो के लिए ३३० बार बार दौड़ने के द्वारा होता है। जैसे तीन बार २२०

सबसे अच्छे टाइम के १ सेकेन्ड के अन्दर और बीच में ५ मिनट से काम विश्राम एक सहने के कार्य का उत्तम प्रबन्ध है।

(५) स्प्रिट कार्य में तेजी के लिए अधिक कार्य करना चाहिए किन्तु यह इतना नहीं होना चाहिए कि फार्म में खराबी आ जाये या अधिक खिचाव हो।

(६) सही पग का ज्ञान १-४ मील में दौड़ने वालों के लिए महत्व पूर्ण है।

(७) समय देखने के लिए पूरे दौड़ के अभ्यास के समय दौड़ना नं चाहिए। केवल टीम के चुनाव के लिए दौड़ा जा सकता है।

(८) सम्पूर्ण शरीर का व्यायाम आवश्यक। है पेट और पीठ के व्यामाम विशेष रूप से आवश्यक है। ४४० गज के दौड़ने वालों के लिए तथा पैर की मांस पेसियों का बढ़ावा अत्यन्त आवश्यक है।

(९) सबसे उत्तम एक व्यायाम ४४० गज दौड़ने वालों के लिए, वह रीले हैं जो समाप्त नहीं होती हैं। इस रीले में तेजी सहना, बटान का अभ्यास सामूहिक प्रतियोगिना तथा पग निर्णय सभी सम्मिलित हैं। रीले टीम में प्रत्येक व्यक्ति को तीन बार २२० या अधिक दौड़ना पड़ता है। यह साधारण रिले की तरह आरम्भ होता है किन्तु प्रत्येक टीम का अन्तिम व्यक्ति बटान पहिले व्यक्ति को पास करता है तथा यही एक या कई बार दुहराया जाता है।

आधे मील की दौड़ :

आधे मील की दौड़ में सिद्धान्त वैसे ही है जैसे ४४० गज में केवल थोड़ा अन्तर है। पहिले ३०० गज ४४० गज की तरह दौड़ा

जायेगा केवल गति कुछ धीमी होगी। ढीली अवस्था पहले लैप के अन्त तक रखना चाहिए और दूसरे के १५० गज तक। इस समय दौड़ने वाले को जो लीड कर रहा हो उसके १० गज समीप आना चाहिए। दूसरे लैप के बीच में १५० गज ढीली अवस्था में दौड़ने का आयोजन होना चाहिए जिससे शक्ति अन्तिम परिश्रम के लिए बचा ली जाय।

अन्तिम ३०० गज दौड़ने की दो रीतियां हैं।

(१) आकस्मिक श्रेष्ट शक्ति का प्रयोग और अन्त लाइन से २०० गज पहले लीड करना।

(२) लीडर के पीछे ऐसा स्थान रखना जहां से वह आसानी से पिछले कर्व (Curve) के पास आगे वढ़ सकता है और अन्त के लिए पूरी शक्ति आरम्भ से ही लगा सकता है और टेप के पास ड्राईविंग स्प्रिट कर सकता है।

इस रेस की गति को निर्धारित करना दौड़ने वाले की योगिता और कोच के विचार पर निर्भर है।

प्रशिक्षण :

सामूहिक दौड़ ३५ मिनट, आसान जौगिंग ५ मिनट, ऊपरी धड़का व्यायाम १० मिनट, तेज गति का काम ३० मिनट, चलना और जौगिंग, तेज गति का काम, आराम से चलना, तेज गति काम ५ मिनट, आराम से सामूहिक जौगिंग तथा चलना, २०० या ४०० मील धीरे धीरे दोहराना, २०० या ४०० की तेज गति से दोहराना, पेस वर्क ४४०-६६०, चलती रहने वाली रीले, टाइम ट्रायल।

साप्ताहिक कार्य क्रम :

सोमवार-२०० या ४०० दोहराना, मंगल पेस वर्क ६६० गज या ट्रायल ६६०, बुध तेज गति काम दोहराना २२०, वृहस्पतिवार दो या तीन ४४०, शुक्रवार विश्राम शनिवार— प्रतियोगिता ।

लम्बी दौड़ :

(१) एड़ी और पैर के नीचे की गोलाई जमीन पर एक ही साथ आयेंगे ।

(२) सामने की गति में घुटना आगे रहता है ।

(३) पैर का निचला हिस्सा आगे ढीला होकर झुलता है ।

(४) सीना चौडा रहता है ।

(५) हाथ ऊपर और सीने से अलग रहते हैं ।

(६) कंधे उतने ही हिलते हैं जितने से संतुलन हो । लम्बी दौड़ में गति समान होना चाहिये ।

## प्रशिक्षण

तेज गति खेल Speed play or fartl ckof gosta holmer

दौड़ क्रौस कन्ट्री होगी जहाँ जमीन अच्छी हो । जहाँ अच्छी जमीन उपलब्ध न हो वहाँ खेल के मैदान के चारों ओर स्थान बना लेना चाहिए । एक से दो घंटे तक प्रत्येक दिन प्रशिक्षण होना आवश्यक है ।

(१) साधारण दौड़ ५-१० मिनट तक (२) स्थिर तेज गति एक या दो किलो मीटर (३) तेज चलना ५ मिनट (४) आसानी से दौड़ना चाहिए, बीच-बीच में ५५-६५ गज चिड़ स्प्रिंट करना चाहिए जब तक कुछ थकावट न हो । (५) आसानी से दौड़ना

चाहिए बीच २ में तीन चार तेज कदम उठाना चाहिए। (६) चढ़ाई पर १६५–२२० गज (७) तेज गति १ मिनट फिर न० ६। यही घंटे के अन्त तक होना चाहिए। ध्यान रहे कि अभ्यास के बाद थकावट न मालूम हो वरन उत्तेजना मालूम हो।

सीजन के बीच की ट्रेनिंग

सोमवार :-

(१) फार्टलेक (Fartlek) ४५ मिनट (२) पहला ४४० गज दौड़ (३) न० २ दो या तीन बार करना बीच में ५ मिनट आसानी से दौड़ना। (४) दो घंटा पूरा करने के लिए चलना तथा आसानी से दौड़ना।

मंगल :-

(१) फार्टलेक २० मिनट (२) ८८० के ट्रैक पर रेस से प्रत्येक लैप दो सेकेण्ड कम (३) एक घंटे में फिर यही करना।

बुद्ध :-

जंगलों या खेतों में दो घटे चलना।

बृहस्पत :-

सोमवार की तरह किन्तु ऊपर २-९ बार चढ़ना १५० गज प्रत्येक बार।

शुक्रवार :-

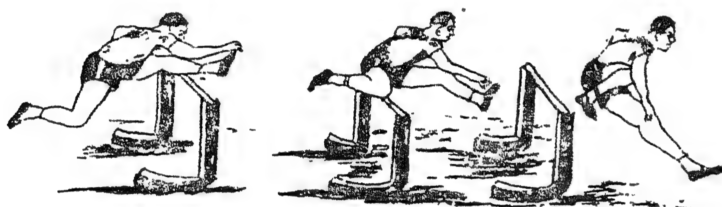
मंगल की तरह किन्तु चार बार ४४० दौड़ना प्रत्येक लैप रेस के स्पीड से १ सेकेण्ड कम।

शनिवार :- विश्राम

रविवार :-

गर्म होना तथा एक मील दौड़ना। पहला ४४० गज और अन्त का १०० गज रेस की स्पीड से दौड़ना। बीच की दौड़ रेस से २ सेकेण्ड प्रति लैप कम। कठिन पेसिंग प्रत्येक १० दिन के बाद होना चाहिए।

## हाई हर्डल The High Hurdle



रेस का आरम्भ १०० गज की दौड़ की तरह १५ गज तक है। कोई कोई अपना कदम दूसरे दौड़ से और लम्बा करते हैं। यदि दौड़ने वाला उसी पैर को जो वह हर्डल के ऊपर पहले लाता है, पीछे रख कर स्टार्ट करे तो पहिले हर्डल के लिए उसके कदम बिलकुल ठीक आयेंगे। जैसे दाहिने पैर से हर्डल के ऊपर जाने के लिए स्टार्ट में दाहिना पैर पीछे रखना होगा।

प्रवेश और टेक आफ :

जैसे ही दौड़ने वाला हर्डल के समीप आता है उसके शरीर में जितना हो सके झुकाव आगे होगा या स्प्रिंट से अधिक झुकाव होगा। पहले हर्डल के लिए टेक आफ होती बांये पैर से होगा और जो गति उसके बाद होती है ऐसी होगी कि जैसे दौड़ने वाला एक ऊंचा लम्बा

कदम अपने दाहिने पैर से ले रहा हो। टेक आफ के पहले बांया हाथ आगे ड्राइव होगा और इतनी जोर से होगा कि उसका धक्का बांय कंधे में मालूम हो। उसी समय शरीर का झुकाव आगे होगा जैसे कि दौड़ने वाला अपने कंधे और सिर को आगे की ओर अपने प्राकृतिक स्थान से बहुत आगे धक्का दे रहा हो। दाहिना पैर आगे और ऊपर किक किया जायगा जिससे वह हर्डल के ठीक ऊपर से पार कर ले। बायां हाथ तथा दायाँ पैर हर्डल की ऊँचाई ३' ६" पर हर्डल के समीप आते हुए होगा। बांया पैर जमीन के ऊपर तेज गति से खींचा जायगा और बायां घुटना पुट्ठों की ऊँचाई पर पर पहुचेगा। इस अवस्था में जांघ बिलकुल समानान्तर होगा और सीधे बांई ओर लक्षित होगा। दाहिना हाथ साधारण झुकाव में होगा और शरीर के पीछे होगा जब कि बायां हाथ सामने की ओर फैला होगा।

इस समय जैसे साधारण स्प्रिंट में होती है उससे सिर कुछ अधिक ऊँचा रहेगा।

हर्डल तथा लैंडिंग :

अभी तक जो क्रिया थी वह शरीर को हर्डल की ऊँचाई तक उठाने और लाने के लिए की गई थी। इसमें बाधा पार करने के लिए पैगों से पूर्ण लाभ उठाया जाता है जिससे धड़ जितना कम हो सके उतना कम उठाया जाय। जैसे ही बायाँ हाथ और दाहिना पैर हर्डल पार करते हैं, वे जोर से नीचे लाये जायेंगे। इसका उद्देश्य है, कि जितना जल्दी हो सकें उतनी जल्दी हर्डलर दाहिना पैर जमीन पर लाये। जैसे ही बायां हाथ नीचे लाया जाता है

वह बायीं ओर खींचा जायेगा जिससे कोहनी में उतनी मोड़ रहे जितनी बांये घुटने के पास होने में छू जाने की सम्भावना न हो। हर्डल के ऊपर से बायें घुटने को झटके के साथ अपने स्थान पर लाते हैं जिससे वह शरीर के बिल्कुल बायीं ओर पुट्ठों की ऊंचाई तक होता है। इसके बाद घुटना जैसे ही हर्डल के पार आगे जाता है, नीचे की ओर लाया जाता है, किन्तु पैर का वेग, घुटने से नीचे के साथ बहुत अधिक होगा। दाहिना हाथ बायाँ पैर के साथ आगे बढ़ता है। दाहिने पैर को हर्डल से चार फुट के अन्दर जमीन पर आना चाहिये।

हर्डल के बीच :

एक बटे ५ पूरे हर्डल के पार करने में हाथ तथा पैर के लक्षित वेग (Directive motion) को एक क्षण भी रोकना नहीं चाहिए। जब हर्डलर दाहिने पैर के गोलाई पर लैंड करता है तब भी ऐसा ही होगा। शरीर का झुकाव बहुत आगे होगा और दूसरे स्ट्राईड में बायां पैर होगा। हर्डल के बीच, तीन कदम लिए जायेंगे और दौड़ने वाले की यह चेष्टा होगी कि जितनी शीघ्रता से यह दूरी तै की जा सकती है, करे। बाकी नौ हर्डल पर फौर्म वैसे ही होंगे जैसे कि पहले हर्डल पर।

अन्त :

अन्त के १५ गज बहुत तेजी से दौड़ा जाता है। दौड़ने वाले को हाथ और पैरों को तेज वेग से ड्राईव करने पर ध्यान देना चाहिये। यह फौर्म बिल्ड अप की तरह होगा। टेप के पास भी अन्त १०० गज की दौड़ की तरह होगा।

मुख्य बातें :

जब तक मांस पेशियां, दौड़ने, किक करने तथा फैलाने के द्वारा ढीले न हो जाँय तब तक हर्डल नहीं करना चाहिए।

बांया पैर का टेक आफ पैर के गोले से होना चाहिए न कि पूरे पैर से। अधिकांश हर्डल बायां हाथ और दाया पैर के नीचे की गति को बहुत देर में आरम्भ करते हैं। इस की गति तेज होनी चाहिये।

पैर के फैलाव, शरीर के लोच तथा दाहिने पैर को तेजी से नीचे लाने के लिये विशेष व्यायाम की आवश्यकता होगी। जिस क्षण दायां पैर ठीक हर्डल के ऊपर रहता है, हर्डलर को दाहिने पैर को सही अवस्था में लाने के लिए उस पैर के अंगूठे को नीचे करते हुए, बाध्य करना चाहिए जिस से पैर के तथा टांग के मांस पेशियों में तनाव हो।

तकनीक का अभ्यास इस क्रम से होना चाहिए। बायां हाथ, दाहिना पैर, बायाँ पैर, शरीर का झुकाव, दायां पैर तेजी से नीचे, शरीर की स्थिति, दाहिना हाथ।

सही फौर्म में शरीर दांया बांये नहीं मुड़ेगा। दाहिने हाथ की गति कठिनता से आती है।

नये हर्डलर रेस में प्रत्येक हर्डल तक जाने का एक मासिक परिश्रम करने लगते हैं जैसे कि प्रत्येक 'बाधा' ही दौड़ का उद्देश्य हो।

मांसिक रीति से हर्डल से दूर दौड़ने का ध्यान करना चाहिए। ध्यान रहे कि रेस टेप के पास अंत होगा।

उपरोक्त उनके लिए है जो दाहिना पैर हर्डल पर पहले लाते हैं।

अभ्यास :

प्रारम्भिक शरीर गर्म करना।

जौगिंग जिससे दूसरे अभ्यास के लिए गर्म हो जांय।

सरल विंड स्प्रिट, क्रमशः आधी शक्ति से गति तेज करना

१५ - २० तक साधारण शारीरिक व्यायाम।

वौम अप, विंड स्प्रिट।

६ - ८ सरल स्टार्ट।

तीन प्रैकटिस हर्डल १२ गज की दूरी पर, वीच में पांच कदम लेना।

कुछ ३ हर्डल ९ गज की दूरी और ३ कदम पसन्द करने हैं। स्प्रिटिंग प्रैकटिस।

## लो हर्डल (The Low Hurdles)

आधारित सिद्धान्त दोनो हर्डल के एक से हैं। लो हर्डल में दौड़ने वाला स्प्रिंटर होना चाहिए जो २०० गज स्प्रिंट दौड़ सके। वह हर्डल से स्प्रिंट दो सेकेण्ड पहिले समाप्त कर देगा।

यहाँ आदेश उनके लिए है जो पहिले हर्डल पार करने के लिए दाहिना पैर पहिले प्रयोग करते है। टेक ऑफ पूरे दौड़ के स्ट्राइड में बाये पैर के गोले से होगा। बांया हाथ और दाहिना पैर जितनी तेजी से हर्डलर कर सकता है आगे ड्राइव किये जायेंगे किन्तु यह हर्डल की ऊंचाई २' ६" तक होगी। बांया पैर आगे झटका जायगा

और घुटना ऊपर उठाया जायगा किन्तु इतना ही ऊंचा होगा जिस से हर्डल पार हो जाय। शरीर का झुकाव वैसे ही होगा जैसे स्प्रिट में।

हर्डल तथा लैनडिग :

हर्डल के ऊपर की गति हाई हर्डल की तरह होगी किन्तु गति कुछ वेग से होगी क्योंकि ऊचाई जिसके लिए पैरों को कम उठाना है, कम है। दाहिना पैर तेजी से ट्रैक पर आयेगा और जमीन पर हर्डल के ३ फुट के अन्दर होगा। बांया पैर हर्डल के ऊपर और आगे इतनी तेजी से लाया जा सकता है जिससे शरीर का झुकाव सही रखा जा सके और दौड़ने वाला ऐसा अनुमान करेगा जैसे की वह इस स्थान पर वेग तेज कर रहा है।

**हर्डल्स के बीच :**

बीस गज हर्डल्स के बीच की दूरी ७ कदम में परी करनी चाहिए। इसके लिए अभ्यास की अत्यन्त आवश्यकता है।

अंत :

स्प्रिंट के समान होगा।

अभ्यास :

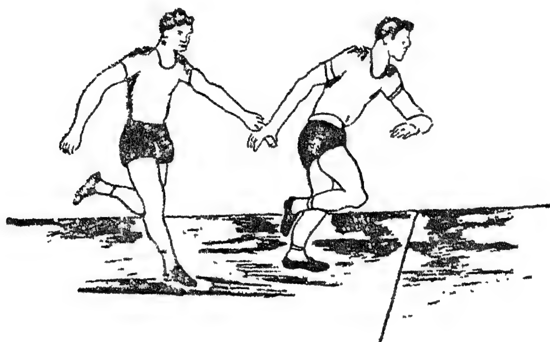
प्रारम्भिक कार्य-जौगिंग और सरल विंड स्प्रिट के बाद १०-१५ साधारण शारीरिक व्यायाम।

सि टिंग का अभ्यास हर्डल के पंहले, कुछ तेज विंड स्प्रिट के बाद। ६-१५ बार स्टार्ट और छोटे स्प्रिट करना है। प्रतियोगिता की अवस्थाओं का ध्यान रखते हुए अभ्यास करना है। लो हर्डलर में

तेजी के लिए स्प्रिंट और कौशल के लिए हर्डल पर काम किया जाये। हर्डल्स के लिए सहने की शक्ति का उत्तम उपाय है बार बार तेजी से कार्य करना। इसके लिए २२० गज के आगे या कम दौड़ना चाहिए। कभी-कभी ३०० गज या ३५० गज दौड़ना भी लाभदायक होता है।

सबसे उत्तम अभ्यास, मील की दौड़ के चुनाव में आने की चेष्टा करना है, यह मनोरंजन तथा शक्ति एकत्रित करने का उत्तम उपाय है।

## रिले रेस (Relay Race)



रिले रेस साधारण रेस की तरह है केवल उसके प्रथम लैप का आरम्भ तथा अंत भिन्न है। जहाँ बटान पास करने की कला का सीखना आवश्यक है। बटान पास करने की अनेक विधियाँ हैं।

आरम्भ करने के समय बटान बीच की दो उंगलियों तथा अंगूठे से हथेली के साथ पकड़ा जाता है।

स्प्रिट रिले

स्प्रिट रिले में बटान को उत्तम लेन देन का उत्तरदायित्व देने वाले और लेने वाले दोनों पर निर्भर करता है। इसलिए दोनो को पर्याप्त अभ्यास की आवश्यकता है।

लेने वाले का रिले के२०गज के क्षेत्र के पीछे शरीर एक चौथाई दाहिने घुमी हुयी और सिर एक चौथाई घूमा हुआ होना चाहिये जिससे कि वह अपने साथी को आते हुए देख सके। लेने वाला अपना दाहिना हाथ देने वाले की ओर बढ़ाता है। जब देने वाला करीब सात कदम जाने वाले से रह जाता है तो लेने वाला बांई ओर मुड़ जाता है तथा दौड़ना आरम्भ करता है। दाहिना हाथ पीछे फैला नीचे की ओर तना रहेगा,कोण ४५ अंश उंगलियां मिली होंगी अंगूठा फैला होगा तथा इसके बीच का जो स्थान होगा वह नीचे की ओर होगा। जैसे लेने वाला तेज होता जाता है हाथ सख्त रहता है। बटान के दाहिने हाथ से सम्पर्क के समय हाथ दृढ़ता से उसे पकड़ लेता है और झटके से शरीर के सामने लाता है जहाँ वायाँ हाथ दाहिने हाथ के नीचे पकड़ लेता है। दाहिने से बायें में स्थानान्तर उसी समय शरीर के सामने होता है।

देने वाला बटान अपने बांयें हाथ में साधारण झुकाव के साथ झूलते हुये लेने वाले के दो कदम तक लाता है। तब बांया हाथ बढ़ाया जाता है और बटान बनाये हुए स्थान के नीचे जो लेने वाले के दाहिने हाथ से बनाया गया है, रखा जाता है। बटान उस स्थान में ऊपर की ओर हाथ विरुद्ध देने वाले के बांई कलाई को गति से जोर से उठाया जाता है लेने वाला बटान पकड़ कर झटका देता है

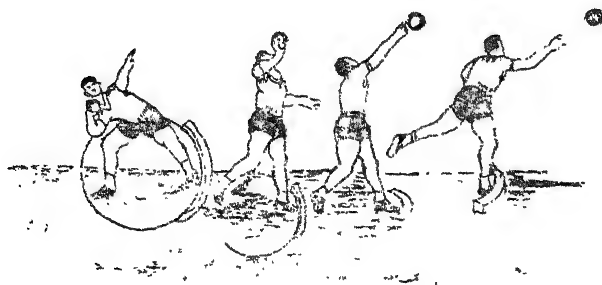
जैसे बताया जा चुका है।

उत्तम "पास" उस समय होता है जब देने वाला अपने उच्चतम शीघ्रता से दौड़ता है, लेने वाला भी उसी शीघ्रता पर लेने के समय होता है। 'पास २० गज के अंदर हो जाना चाहिए।

मुख्य बातें :

देने वाले को बटान देते समय गति धीमी नहीं करनी चाहिए। उसे अपनी पूरी तेजी रखनी चाहिए। बटान देना, देने वाले की ज़िम्मेवारी है। लेने वाले को उचित समय पर दौड़ना आरम्भ करना चाहिये और चेष्टा करना चाहिये कि अत्यधिक वेग से लेन-देन हो। जब तक बटान मिल न जाय लेने वाला दाहिना हाथ पीछे फैलाये रहे। लेने के बाद उत्तर दायित्व पाने वाले का है। झटका देने से पहले बटान अच्छी तरह पकड़ना आवश्यक है।

## शौट पुट The Shot Put



अंगूठा और छोटी उंगली शाट को हाथ में संतुलित रखनी हैं और शाट का वजन हाथ के ऊपरी हिस्से पर रहता है। दाहिनी

कोहनी कंधे से झुकी हुई और ठीक उसके नीचे होगी। इसके बाद की गति इस प्रकार होगी, बांयें पैर को आगे रिंग में झुलाया जायगा, इसके साथ बायीं कंघा और हाथ भी पैर के ताल के साथ ले जाया जाता है तथा दाहिने पैर से आगे हौप करना चाहिये। हौप में दाहिना पैर जितना जमीन से मिला रह सकता है रखना चाहिए। हौप के अंत में दाहिना पैर जमीन पर बांयीं के कुछ आगे आयेगा। दाहिनी एड़ी कुछ वजन सम्भालेगी जब कि बांयीं एड़ी जमीन के ऊपर होगी। दाहिना हाथ कंधे से कोहनी तक सीधी होनी चाहिए तथा कमर दाहिनी तरफ मुड़ी होगी ताकि जहाँ तक हो सके बायीं ओर की मांस पेशियां फैलें और दाहिने ओर की मांस पेशियां सिकुड़े। इस अवस्था में दाहिना कंधा बांये से अवश्य नीचा रहेगा और बायां हाथ संतुलन लाने के लिए उठा हुआ होगा। दाहिने घुटने में बायें से अधिक मोड़ होगा। पैर ऐसे गिरेंगे जिससे एक लकीर दाहिने पैर के गोले से खिची हुई और बायें पैर के गोले को पार करती हुई उधर जायगी जिधर शाट फेका जायगा। सिर जितना सीधा रह सके रखा जायगा। जैसे ही शरीर का वजन पैर पर आता है, और शाट प्रायः एक इन्च नीचे और गर्दन से दूर किया जायगा। यह कोहनी को नीची करने से होगा।

रीवर्स (Reverse :

ऊपर की पोजीशन 'रीवर्स' का आरम्भ है जिसमें एथलीट की शक्ति, तेजी तथा शाट की ऊँचाई में परिवर्तन हो जाता है। रिवर्स का आरम्भ शाट को कान के पास से ऊपर उठाने तथा उसी समय

शरीर की अवस्था दाहिने मुड़ने से सीधे होने में बदल देने से होता है। इस परिवर्तन के साथ सम्मिलित किन्तु कुछ क्षण बाद आरम्भ होने वाला एक 'पुश अप' और दाहिने पैर से कुछ आगे बढ़ना है। बायां पैर रिवर्स के लिए एक पिवट का काम करता है और जमीन से मिला रहता है। जब तक हाथ से शाट छूट न जाय जो एक पीछे झुलाव के साथ छूटता है। शाट सिर के ऊपर पूरा किया जाता है। कमर एक सीधी अवस्था से होते हुऐ बायें झुलाव पर होता है जब दाहिना पैर अपनी पूरी शक्ति शाट को दे देता है तो वह जमीन छोड़ देता है और उस स्थान तक हौप करता है जहाँ बायां पैर था। रिवर्स में शरीर १८० अंश के कोंण से घूमते हुए बिल्कुल विपरीत घूम जाता है। जैसे ही शौट हाथ से छूटने पर होता है दाहिनी कलाई पीछे मोड़ी जाती है। कलाई फिर तेजी से अपनी वास्तविक अवस्था पर लाई जाती है और कलाई की शक्ति भी शाट जैसे हाथ छोड़ने लगता है उस में मिला दी जाती है।

शाट हाथ को जमीन से ४५ अंश कोंण पर छोड़ता है। दाहिना हाथ शाट के दिशा में बढ़ाया जाना चाहिए और आँखों से उसके मार्ग को देखते रहना चाहिए। शरीर का संतुलन दाहिने पैर पर बांया पैर और हाथ पीछे फैलाने की सहायता से तथा दाहिना हाथ धड़ के साथ उसी दिशा में झुके हुए होने की सहायता से होगा। गतियाँ जिसका वर्णन ऊपर किया गया है एक समय में होती हैं तथा इन की भिन्न भिन्न अवस्थायें जो होती हैं वे क्षणिक होती हैं।

शौट पुट के आरम्भ से रिवर्स के अन्त तक गति सुगम होनी

चाहिए। हौप का उद्देश्य तेजी लाने में हैं यदि यह प्राप्त न हो तो उद्देश्य पूरा नहीं हो रहा है।

अनुभवी ऐथलिटों ने यह पाया है कि वे फौर्म का आरम्भ मांस पेशियों में काफी ढिलाई से करते हैं और सेट पोजिशन में शरीर के पूरे मांस पेशियों में तनाव उत्पन्न कर देते हैं। रिवर्स उस शक्ति का भड़काव है जो पैरों, कमर, हाथों, कंधों तथा कलाई में हौप के तेजी के साथ शौट में दिया जाता है।

साधारण गलतियाँ :

संतुलन न होना–संतुलन आँखों से होता है, संतुलन में पीठ सीधी और चपटे पैर पर खड़े होना।

शौट पुट फेंकने के पहिले या फेंकने के समय प्रारम्भिक क्रिया करना जो उसके जाने की दिशा में न हो।

वृत्त के पिछले हिस्से में काफी नीचे न होना और ग्लाईड करने के समय नीची न रखना।

सिर तथा कंधों की सम्बन्धित अवस्था को ग्लाईड के बीच- या उसके बाद बदल देना।

वृत्ता में चलने के समय पुट्ठों के साथ शाट तथा कंधों को बहुत पीछे न रखना।

ग्लाईड के समाप्त होते ही शरीर को ऊपर और बाहर के गति प्रवाह को चलने न देना।

ग्लाईड के समय होने पर दाहिने पुट्ठे को सामने घूमने देना। पुट्ठों को पहिले ऊपर तब सामने ड्राइव न करना। फेंकने की क्रिया में अधिक शक्ति के लिये बायां पैर तथा हाथ के झुकाव पर अधिक

जोर देना।

शौट को काफी ऊँचा न फेंकना। सम्पूर्ण शरीर को फेंकने की दिशा में न बढ़ाना।

अभ्यास :

दो मुख्य बातें आवश्यक हैं (१) कठिन परिश्रम तथा सही अभ्यास। अभ्यास का समय सात पक्ष (phases) में संगठित होना चाहिए।

(१) गर्म करना। १०-१५ मिनट शौट पुट पर सम्बन्धित व्यायाम।

(२) स्थित अवस्था से शौट फेंकना १५ मिनट तक।

(३) फौर्म तथा अनुभव के लिए वृत्त के पार आसानी से शौट फेंकना १० मिनट तक।

(४) सही तकनीक ध्यान में रखते हुये उत्तम दूरी के समीप फेंकना १०-२० मिनट तक।

(५) वृत्त के पार लगातार अभ्यास, गति, प्रवाह और दूरी पर अधिक जोर न देते हुये अच्छे फौर्म की छोटी छोटीं बातों पर ध्यान देना।

(६) अन्तिम कार्य समय जिसमें एथेलिट ध्यान पूर्वक अपनी गति (Speed) शक्ति तथा संतुलन बनाना चाहता है।

(७) किसी दूसरे इवेन्ट का करना जिससे मानसिक विश्राम हो तथा सम्पूर्ण प्रगति संतुलन तथा गति में उन्नति हो।

---

## डिसकस थ्रो The Discuss Throw)



डिसकस थ्रो भी एक जटिल फौर्म हैं जिस में एथेलिट अपनी शक्ति, जो वह घूमेने,हाथ,पैर तथा शरीर के प्रयोग से प्राप्त करता है,डिसकस में देता है।

घूमना :

फेकने वाला वृत्त के पीछे उस की ओर मुंह करके खड़ा होता है और पैर फेकने के दिशा में लकीर के समकोण पर होते है। हाथ को संतुलन के लिए झुलाने के बाद बायां पैर एक सही एक बटा दो फिट से दो फिट तक वृत्त के केन्द्र की ओर बढ़ाया जाता है ओर उसी समय बायां कंधा और हाथ शरीर का घुमाव आरम्भ करते हैं। शरीर बायें पैर पर अर्ध वृत्त घूमता है। तब दाहिना पैर जमीन पर रखा जाता है और वजन उसी पैर पर डाला जाता है। घूमना दाहिने पैर पर चलता है और एक और अर्धवृत्त घूम जाता है। तब बायां पैर जमीन पर रखा जाता है। ध्यान रहे कि प्रत्येक पैर के घूमने के निशान एक लकीर पर होंगे और डिसकस वृत्त के व्यास पर होगा।

सेट पोज़िशन :

पैर जमीन पर मजबूती से रखे जाते हैं। दाहिने पैर में अच्छा मोड़ होता है और बांये में कम। पुट्ठे पैर के बीच में होते हैं। शरीर दाहिनी ओर मुड़ा हुआ होता है और कमर के मांस पेशियां

तन जाती हैं। बांया हाथ कंधे की ऊंचाई पर रखा रखा जाता है। दाहिना हाथ बिलकुल पीछे जहां तक जा सकता है, रहता है। यह अवस्था उलट कर फेरने (Reverse) का आरम्भ है। इस समय सम्पूर्ण मांस पेशियों में तनाव होगा।

उलटी ओर फेरना (Reverse)

उलटी ओर फेरने का आरम्भ डिसकस के खीचने के साथ ही साथ दाहिने कंधे को आगे धक्का देने से होता है। इसके फौरन ही बाद कमर के मांस पेशियों का मोड़ बायीं ओर, दाहिने पैर को सीधा करना और बांयें पैर को पीछे धक्का देने से होता है। डिस-कस का खिचाव चलता रहता है। जब ये गतियाँ संतुलित होती हैं तब शरीर एक अर्धवृत्त के द्वारा बायीं ओर ऐसी तेजी से घूमती है कि पैर जमीन छोड़ देंगे और दाहिना पैर उस स्थान पर आयेगा जहाँ बांया पैर था। दाहिना हाथ उस समय डिसकस पकड़े रहेगा और वह उसी लकीर पर होगा जिस पर शरीर वृत्त के पार जाते समय था। छोड़ने के अन्तिम ४ फुट पहले हाथ में तेजी होना चाहिए। अन्तिम छोड़ना तर्जनी के ऊपर से होना चाहिए। डिसकस छोड़ने के समय हाथ में शीघ्रता के साथ एक खिचाव बाईं ओर होगा। यह अधिकतर कलाई की गति होगी। यह झटका वहाँ तक जाने देना उचित है जहाँ दाहिनी कोहनी में काफी मोड़ हो। रिवर्स अथवा उलटी ओर फेरने के बाद संतुलन वैसे ही किया जायगा जिस प्रकार की शाट पुट में।

मुख्य बातें :

डिसकस उस समय अच्छी तरह पकड़ा जायेगा जब पहली

तीन उँगलियों के मोड़ पर अच्छी पकड़ होगी। डिसकस उँगलियों के तनाव को ढीला किए बिना छोड़ा जायेगा। अच्छे डिसकस फेंकने वालों की तर्जनी अंगुली पर एक गांठ हो जाती है।

यह अत्यन्त आवश्यक है कि शरीर के घुमाव में पूर्ण नियन्त्रण रहे यदि ऐसा नहीं होगा तो घुमाव उलटी ओर फेरने में व्यर्थ होगा। सही सेट पोज़ीशन की बहुत आवश्यकता है। एक केन्द्र से फैलने वाली शक्ति का संतुलन पैरों, कमर, हाथ और कलाई के साथ डिसकस के ऊँचाई और वेग में सहायक होती है।

पांच वर्ष के कठिन परिश्रम के बाद ही यह कला उत्तम रीति से आयेगी।

साधारण गलतियाँ :

उच्च कोटि की गति, घुमाव में प्राप्त करने और अधिक से अधिक शक्ति एकत्र करने की चेष्टा में संघर्ष से ही अधिकतर डिसकस की गलतियाँ होती हैं। इसके पहले कि डिसकस के अन्य तथ्यों का ज्ञान हो, गति प्रवाह को एक समस्या बन जाने देने से रोकना। आँखों को उस सतह के नीचे आने देना जिस सतह में डिसकस फेंका जा रहा हो।

शरीर के ऊपरी भाग को घुमाने के आरम्भ में बहुत अधिक आगे और गोलाई में जाने देना। ऊपर हाँप करने के स्थान पर गोलाई में हाँप करना, बांये पैर को आड़ और शक्ति की इकाई की तरह फेंकने में समय न लगाना। घूमने के अंत में अन्तिम फ़ेक के लिए हिचकना। दाहिने पुट्ठे को बहुत शीघ्र आगे घूमने देना बांयें पैर के अगूठे पर पीछा नहीं किया जाना। उड़ान में डिसकस को

टेढ़ा मेढ़ा होने देना या दाहिनी ओर सरकने देना ।

अभ्यास :

१ आरम्भ के घंटों में सरल दौड़ । गर्म करने का व्यायाम । खड़े होकर फ़ेंकना । डिसकस को पुट्ठों से अलग रखना और फेंकने के आरम्भ ही में ऊंचाई ले लेना । फेकने के आरम्भ में नीचा आसन जिससे पैर और पुट्ठों की शक्ति में वृद्धि हो ।

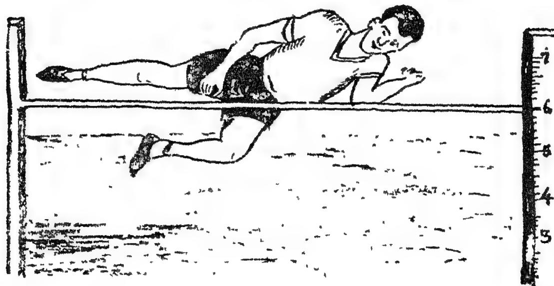
२ वृत्त के अंदर से फेकना । पूरी क्रिया पर ध्यान देना । अच्छी दूरी पर फेंकने की चेष्टा करना ।

३ वृत्त के अंदर से फौर्म के लिए फेंकना, आधार भूत तथ्यों पर ध्यान देना ।

४ खड़े होकर फेंकना ।

५ अन्य ईवेन्ट्स करना ।

## हाई जम्प (The High jump)




कूदने वाला बार के पास बांयी ओर से ४५ अंश के कोण से आता है । टेक आँफ मार्क करीब २" बार के सामने होगा । दौड़ने वाला बार के पास सरल दौड़ से आता है, टेक ऑफ मार्क को

बांये पैर से सही स्ट्राईड में छूता है। बांया पैर ज़मीन पर ठोस रीति से रखा जायेगा जिसमें पैर का गोला और ऐड़ी साथ होंगी। दाहिना पैर आगे झूलेगा जैसे एक और कदम लेना है। दाहिना घुटना एक मजबूत उठान के साथ जितना ऊपर हो सके उठाया जायगा। घुटना टुड्डी के सतह तक पहुचना चाहिए और उसी समय दाहिना पैर जितना ऊपर कूदने वाला कर सके, किक करेगा।

जब दाहिना पैर उठाया जा रहा होगा शरीर का वजन कंधे को उठाने के द्वारा और दोनो हाथ ऊपर फेकने के द्वारा उठाया जायगा। बायां टाँग और पैर अपने पूरे उछाल(spring)से ऊपर को उठाने में सहायता देगे। इस समय तक की सारी क्रियाये शरीर को एक ऊपर की गति की ओर ले जायेंगी। जितना भी हो सके ऊपर उठना चाहिये। जैसे ही दाहिना पैर अपने सबसे उंचे स्थान तक पहुंच जाता है उसे बार के ऊपर जोर से ले जाते हैं और बायां हाथ ऊपर दाहिनी ओर पुश किया ज़ाता है। इस समय शरीर समानान्तर होगा और मुह नीचे की ओर होगा। बायें पैर को उसके प्राकृतिक गति ही में छोड़ देना चाहिये जब तक कि शरीर के करीब मुह नीचे न हो तब उसे(बायें पैर को) बड़े तेज झटके से पीछे किक करना चाहिए। (यह इस समय आकाश की ओर होगा) किक इतना तेज होना चाहिए कि बायाँ घुटना बायें कूल्हे की सन्धि की ऊँचाई तक पहुंचे। बार से नीचे आने में एक सरल अवस्था ली जायेगी यदि एक हलका धक्का दाहिने पैर को उसी समय जिम समय बायें पैर को ऊपर किक किया ज़ाता है लगाया जाय। दाहिना हाथ उसी समय नीचे

आना चाहिए। शरीर या तो मुँह नीचे किए हुए गिरेगा अथवा दाहिनी ओर गिरेगा।

मुख्य बातें

(१) दाहिने पैर का एक ऊँची गति, झाड़ने की ऐसी गति का किक।

(२) ऊँचा और प्रबल कंधे का उठाना।

(३) सावधानी से बार पर पलटने के आरम्भ में ठीक समय का प्रयोग करना। कितने कूदने वाले बहुत शीघ्रता से पलटने की चेष्टा करते हैं।

(४) सही समय से बायाँ पैर का एक कड़ा ऊपर का किक।

जब यह फौर्म पूरा सही रूप से किया जायेगा तब पार करने के क्षण में शरीर व मुँह नीचे होगा और बार धड़ के बीच की लाईन के नीचे होगा।

ऊँची किक का इतना अभ्यास होना चाहिए कि सर के ऊपर एक फुट तक आसानी से किक किया जा सके। जब तक कूदने वाले ने बार पार न किया हो, सिर कूल्हे से ऊपर रखना चाहिए। यह सिर को बायीं तरफ घुमाने और बायें हाथ को पीछे फेंकने और पैर के ऊपर के किक के पीछा करने के द्वारा किया जा सकता है। सही क्रिया करने से कूदने वाला ऊपर जाते समय दाहिने घुटने की ऊँचाई के बराबर ऊँचा जा सकता है।

अभ्यास

हाई जम्प में ऊँची श्रेणी का संतुलन, शीघ्रता और पूर्ण शारीरिक अंगों में लचीलेपन की आवश्यकता है। हाई जम्प करने वाले

को ऐथलेटिक्स की दूसरी आईटम करना चाहिए।

गर्म करना :

जौगिंग, बार बार विंड स्प्रिंट, फैलने वाले व्यायाम। जिन मांस पेशियों से जम्प किया जाता है उस पर ध्यान देना चाहिए।

(१) कूदने वाले पैर से हवा में सरलता से कूदना साथ ही साथ आगे जाने वाले पैर का झुलाव क्रमशः बढ़ाना।

(२) खड़े हुये अवस्था से आगे जाने वाले पैर को अधिक से अधिक किक करना और गर्म होने पर सिर के ऊपर किक करना। हर्डलर के लिए हर्डल पर किए जाने वाले व्यायाम उपयुक्त हैं।

इस बात पर ध्यान रखना आवश्यक है कि ये क्रियायें केवल प्रारम्भिक हैं और गर्म करने के लिए हैं। शक्ति के लिए व्यायाम और मांस पेशियों में विकास के लिए जम्प करने के घंटे के बाद होना चाहिए न कि पहले।

ऊची कूद :-

बार उतना ऊपर रखना जितनी अधिक बार पार किया पर जा सके। ऊँचा कूदना किन्तु फौर्म के लिए कूदना। नीची बार ही सही कार्य किया जाय तो ऊंचाई की आवश्यकता नहीं। तेजी से दौड़ना, ऊंचा कूदना और सही ले आउट होना चाहिए।

एक दिन में जितना कूदा जा सकता है वह धीरे धीरे प्रत्येक महीने में बढ़ाया जाना चाहिए। फौर्म के लिए जम्प करना चाहिए किन्तु सहने की शक्ति के लिए भी चेष्टा करना चाहिए।

कूदने के बाद का व्यायाम :-

जम्प करने के बाद अभ्यास किए हुए व्यायाम किये जाने

चाहिए। इनका उद्देश्य उन मांस पेशियों के मजबूत करने तथा विकसित करने से है जो ऊँची कूद में प्रयोग होती है।

निम्नलिखित में से व्यायाम किये जा सकते हैं।

(१) ऊँची कूद विशेष कर टेक ऑफ पैर पर। शरीर जितना नीचे जा सके और जितना ऊपर जा सके करना चाहिए।

(२) स्प्रिंट करना, घुटनों की ऊँचाई क्रिया तथा पैर और एड़ी की अधिक उछाल पर जोर देना।

(३) हाई हर्डल करना तथा हर्डल सम्बन्धित व्यायाम।

(४) कूल्हे के मोड़ का व्यायाम, खड़े होकर, बैठ कर। अच्छी कूल्हे की कसरत।

(५) शाट फेंकना—अच्छा फौर्म और दूरी की चेष्टा। थोड़ी देर में अनेकों बार।

(६) हाई जम्प सम्बन्धित क्रियाये—हाई किक और टेक ऑफ पैर के ऊपर कूदना।

## हाप स्टेप एंड जम्प The Hop Step and Jump

यह लम्बी कूद (Long Jump) के समान है।

टेक आफ :

टेक आफ लम्बी कूद के समान है। केवल बायां हाथ दाहिने हाथ से ऊँचा जायगा। हाथ के क्रिया में यह परिवर्तन शरीर में संतुलन बनाये रखने के उद्देश्य से होता है ताकि स्टेप के लिये उत्तम स्थिति हो।

हाप :

जैसे ही दाहिना घुटना टेक आफ के बाद अधिक ऊँचाई प्राप्त

करता है, घुटने को नीचे गिरने दिया जाता है। बायां हाथ दाहिने घुटने के साथ नीचे झूलता है। हाप के पिछले भाग में दाहिना घुटना दाहिना पैर और बायां हाथ प्रबल झुलाव के साथ आगे की ओर बढ़ना आरम्भ करते हैं। टेक आफ के बाद बायां पैर की गति, शरीर के संतुलन के लिए होता है। बायें पैर पर, गोला तथा एड़ी के साथ, सीधा शरीर तथा सीधे बायें पैर पर गिरने पर हाप पूरा होता है।

स्टेप :

स्टेप की तैयारी दाहिने पैर तथा हाथ के आगे झुलाव को पूरा करने से तथा बायें पैर पर गिरने से इस तरह समय मिलाना कि थोड़ी आगे की गति कम हो, होती है। जैसे ही बायां पैर जमीन छोड़ता वह अपनी झुलाव आगे पूरा स्टेप को देता है। इस अवस्था में कंधे, बायें पैर से काफी आगे रहेंगे। दूसरे शब्दों में स्टेप के लिए टेक आफ लेते समय शरीर आगे को झुकाव रखता है। स्टेप के अन्त में दाहिना हाथ नीचे पीछे की ओर होगा। बायां हाथ कंधे की ऊँचाई पर और आगे होगा।

कूदना :

कूदना दहिने पैर से होता है। इसके भी वही सिद्धान्त हैं जिनका लम्बी कूद में भी पालन किया जाता हैं। हाथ आगे और पीछे फेंके जाते हैं जो झुलाव में साथ आये थे। बायां घुटना जितना ऊँचा हो सके उठाया जाता है और कड़े झटके से सामने ड्राइव किया जाता है। हाथों के झुलाव से कंधा तथा धड़ ऊपर उठायें जाते हैं। दाहिना घुटना कूदने मे बायें घुटने के स्थान पर उठाया

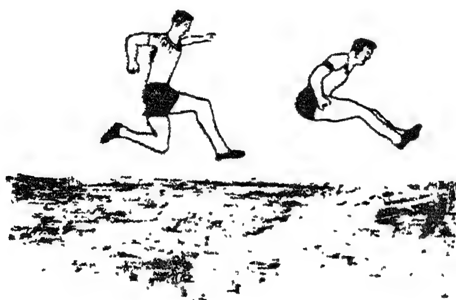
जायगा। गिरना वैसे ही होगा जैसे लम्बी कूद में होता है। किन्तु पैर साथ रहेंगे।

जो टेक आफ दाहिने पैर से लेते हैं उनके लिए बांयें पैर के स्थान पर बायां पैर पढ़ना चाहिए।

अभ्यास :

घुटना मोड़ना, ऊपर उछलना, दोनों पैरों से बारी बारी खड़े होकर कूदना, हाप स्टेप तथा खड़े होकर जम्प करना। स्प्रिन्ट आधार होना चाहिये। लो हर्डल की तेजी तथा ताल का अभ्यास करना चाहिए। हाई जम्प सिज़र प्रणाली। प्रत्येक एथलिट को कार्यक्रम बनाना होगा। कूदने का अधिक अभ्यास।

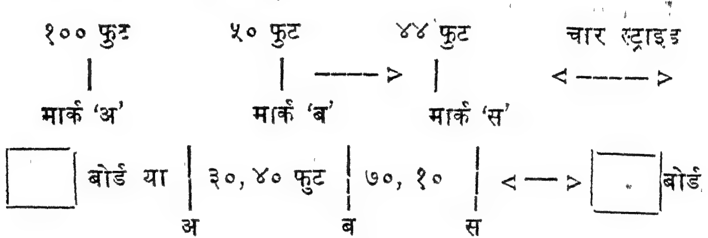
## लम्बी कूद The Long Jump



लम्बी कूद में सही फौर्म के द्वारा दौड़ने की तेजी और जमीन पर से उछलने की योग्यता का सम्मेलन होगा।

दौड़ना :

टेक आफ से पहले की दौड़ लम्बी कूद में बहुत महत्वपूर्ण है। दौड़ उतनी ही होना चाहिए जितने से कूदने वाला अपनी अधिक तम तेजी, टेक आफ मार्क तक कर ले। तीन चेक मार्क की प्रणाली प्रायः प्रयोय में आता है। जिससे दौड़ में सही कदम तथा सही दूरी का पता चलता है। उदाहरणार्थः—




मार्क स टेक आफ बोर्ड से ६' स्ट्राईड की दूरी पर है। अधिकांश कूदने वालों के लिए उत्तम तेजी से दौड़ते हुये यह २४ फुट होगा। मार्क ब बोर्ड से काफी दूर है जिससे वह उत्तम तेजी पा सके। अधिकांश कूदने वालों के लिए यह दूरी बोर्ड से ९० फुट होगा किन्तु प्रत्येक कूदने वाले को इस दूरी का व्यक्तिगत अनुभव होना चाहिए और पता चला लेना चाहिए कि कौन सी दूरी उसके लिए उपयुक्त है। मार्क ,अ, 'ब' से १० फुट पीछे है। कूदने वाला 'अ' से आरम्भ करता है और जैसे एक स्प्रिन्टर तेजी उत्पन्न करता है, उसी तरह वह भी तेजी उत्पन्न करता है और अपना कदम मार्क 'ब' पर चेक करता है। अपनी तेजी बढ़ाता जाता है तथा मार्क 'स' पर अपने कदम चेक करता है। और टेक आफ बोर्ड पर सही पैर से टेक आफ, प्रत्येक यत्न से लेता है।

टेक आफ :

बोर्ड पर से टेक आफ लेना तेजी तथा उछाल के सम्मेलन का समय है। परिणाम स्वरूप उस समय अनेकों गतियां होती हैं। निम्नलिखित आदेश उनके लिए हैं जो बांया पैर कूदने के लिए प्रयोग करते हैं।

बांये पैर से बोर्ड का सम्पर्क एड़ी और गोला सहित होना चाहिए तथा शरीर का वजन भी सीधे उसी पैर पर होगा। जैसे ही दायाँ पैर अन्तिम स्ट्राईड से झूलता हैं दाहिना घुटना तेजी से सामने लाया जाता है तथा उतना ऊँचा उठाया जाता है जितना कि कूदने वाला कर सकने में समर्थ होता है। इस घुटना उठाने के ताल से हाथ ऊपर और आगे फेंका जाता है। कंधे ऊपर उठाये जाते है। बायें पैर में जितनी उछाल है वह उछाल देता है और बांया पैर उसी समय बोर्ड छोड़ता है जिस समय सम्पूर्ण शरीर ऊपर की ओर आगे बढ़ना आरम्भ करता है।

सही फौर्म में ऐसा प्रबल हाथों और कंधों का उठाना होगा कि उछलने के समय शरीर के धड़ का वजन पैरों पर से हट जाता है और एक सुगम तालबद्ध परिवर्तन दौड़ने से कूदने में हो जाता है। शरीर को कूल्हों के सन्धि स्थान पर मुड़ना नहीं चाहिए किन्तु प्रायः सीधी अवस्था रखना चाहिये।

हवा में (In the air) और गिरना (Landing) :

पैरों की गति हवा में होती रहती है और हाथ ऐसी गति करते हैं जिससे संतुलन बना रहे। बायें पैर का घुटना दाहिने पैर के घुटने की ऊंचाई तक उठाया जाय। पैरों से हवा में दौड़ने का सा दृश्य

होगा। जब शरीर नीचे आने लगता है तो सीना बल पूर्वक आगे करके तथा हाथों को ऊपर फेंकना चाहिए। इस क्रिया से शरीर कूल्हे की सन्धियों के स्थान पर दोहरा होने से रुक जायेगा। गिरना एक पैर दूसरे पैर के आगे ज़मीन छूने के द्वारा हो सकता है या दोनों पैर साथ हों।

जो दाहिने पैर से कूदते हैं उनके लिए बायें के स्थान पर दाहिना और दाहिनें के स्थान पर बायां पड़ना चाहिए।

अभ्यास :

लम्बी कूद की यह प्रारम्भिक आवश्यकतायें हैं, पैरों, पेट और पीठ की मांस पेशियों पर प्रबल प्रभाव, कदम की समानता, ऊपर कूदना। मांस पेशियों पर प्रथम ध्यान देना आवश्यक है। खेल, जिमनास्टिक, लम्बी कूद से सम्बन्धित क्रियायें तथा साथ ही स्प्रिंट उपयोगी होंगे। पैर और एड़ी का विशेष व्यायाम, स्किपिंग, चलते दौड़ते, हर्डल करते या उसके व्यायाम करते हुए जान बूझ कर अधिकता से पैरों पर कूदना। तेजी के लिए तेजी से कार्य करना चाहिए। अभ्यास के अंत में विंड स्प्रिंट्स (Wind Sprints) कदम की समानता, चेक मार्क के द्वारा करना चाहिए। तेज छोटा दौड़ होना चाहिए, जितना ऊपर हो सके उछलना चाहिए जिसमें सिर और सीना ऊपर रहे और सही तरह से गिरना, उत्तम अभ्यास है।

गर्म करना :

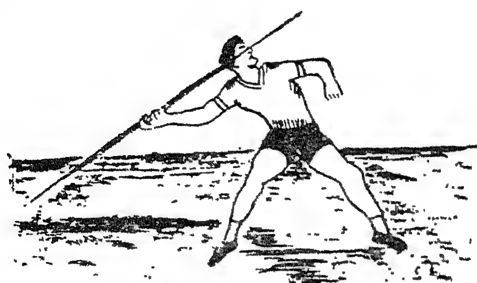
सरल व्यायाम तथा विंड स्प्रिट्स फिर स्प्रिंट्स के साथ काम करना। ६ से ८ स्टार्ट २० गज तक फिर तीन चार स्प्रिंट ३०-६० गज तक।

कूदना :

चेक मार्क पर दौड़ना। फौर्म के लिए कुछ कूदना। तीन चार बार तेजी से कूदना। ध्यान पूर्वक तथा बुद्धिमता से अभ्यास। टेक आफ से पहले चार स्ट्राईड में अपने को संभालना जिससे अच्छे संतुलन से ऊपर कूदें और सही रीति से गिरना।

लम्बी कूद सम्बन्धित क्रिया में भाग लेना। २२०, ३५० गज लम्बी दौड़ से सदैव समाप्त करना।

## जैवलिन-थ्रो The Javelin Throw



जैवलिन पकड़ने का जो भी तरीका अपनाया जाय उसमें हाथ, कलाई तथा उंगलियों को लचीलापन तथा ढीलापन अवश्य मिलना चाहिए और जैवलिन सीधी तथा समानान्तर उड़ान में नियंत्रित होना चाहिए तथा पकड़ इतनी अच्छी हो ताकि एकत्रित शक्ति का प्रयोग ( जो जैवलिन में विशेष रूप से होता है ) हो सके। पकड़ने के दो तरीके हैं। एक उंगली से पकड़ना या दो उंगलियों से पकड़ना दोनों तरीकों में जैवलिन हथेली में

तिरछी, निशान वाली उंगली के सहारे, हाथ के पीछे तक रखी जाती है। जैवलिन दृढ़ता से नियन्त्रण के लिए पकड़ा जाना चाहिए किन्तु कड़ेपन से नहीं।

जैवलिन दो प्रकार से फेंका जा सकता है। (१) फिनिस फार्म तथा (२) अमेरिकन फर्म, द्वारा।

फिन्शि फौर्म :

इसमें ७५ फुट की कुल दौड़ होती हैं। फेंकने के लकीर के पास आधी तेजी से पहुंचने पर जैवलिन सिर के ऊँचाई से लाया जाता है तथा दौड़ने की दिशा से समानान्तर रहता है। जैवलिन फेंकने में लकीर के पहिले जिसमें रुकने का स्थान हो, एक हाप दाहिने पैर से दाहने पैर पर किया जाता है। हाप के समय दाहिना हाथ पीछे प्रायः पूरी लम्बान से बढ़ाया जाता है, धड़ पीछे झुकाया जाता है; बायां हाथ उठाया जाता है और वजन इस प्रकार हटाया जाता है जब कि हाप पूरा हो जाय तो वजन दाहिने पैर के पीछे होगा। जब दाहिना पैर जमीन पर लगता है तब वजन आगे कर दिया जाता है। दाहिना हाथ जैवलिन को फेंकना आरम्भ करता है। बायां हाथ पीछे से नीचे आने लगता है। बायां पैर दाहिने पैर के थोड़ी देर बाद जमीन पर आता है। उपयुक्त क्रियायें लगातार होती हैं जब तक जैवलिन फेंक न दिया जाय। फेंकना पैरों के स्थान के उलट के फेरने से (Reverse) पूरा होता है। यह कुछ आगे दाहिने पैर से हाप करने से होता है जब कि बायां पैर जमीन के ऊपर पीछे झूलता रहता है।

अमेरिकन फौर्म :

इसमें कुछ अधिक दौड़ है। जैवलिन दाहिने हाथ में रहते हुये पीछे पूरी लम्बाई से फैला रहता है। ३ बटे चार की तेजी से दौड़ते हैं। फेंकने के पहले एक क्रौस स्टेप (Cross step) लिया जाता है। बायां पैर दाहिने पैर के सामने दाहिनी ओर रखा जाता है। दाहिना पैर बायें पैर के पीछे झूलता है तथा दौड़ने की दिशा में दाहिनी ओर रखा जाता है। शरीर ९० अंश कोण दाहिने घूमता है क्रौस स्टेप (Cross step) से शरीर अपनी पहली अवस्था से समकोण बनाता है तथा तेजी कुछ कम हो जाती है। जैवलिन दौड़ के समानान्तर रखा जाता है और क्रौस स्टेप के बाद सीने के सामने से पार किया जाता है। घुटना काफी मुड़ना चाहिए और शरीर का वजन दोनों पैरोंपर बराबर रहना चाहिए। थ्रो हाथ को आगे झटका देने के द्वारा होता, है जिस प्रकार एक गेंद फेंका जाता है। जब उलट के फेकना (Reverse) करते हैं वैसा ही होगा जैसे 'शाट पुट' में किया जाता है शरीर बांयी ओर घूमता है।

अभ्यास :

इस में एक लम्बे अवसर के प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। टम्बलिंग (Tumbling) जिमनास्टिक इत्यादि से लाभ होगा किन्तु जैवलिन सम्बन्धित मांस पेशियों के विकास की आवश्यकता होती है। पुल अप, पुश अप, रस्सी पैरेलर पौलर तथा होरीजेन्टल बार, मुट्ठी का व्यायाम, स्प्रिन्ट करना तथा फुटबाल फेंकना सीधे हाथ से, आदि लाभदायक होगा।

वास्तविक जैवलिन फेंकना, प्रतियोगिता के मौसम से ६ सप्ताह

पहले फेंकना चाहिए । जैवलिन दूर फेंकने के लिए और शरीर के गति-प्रवाह (Body Momentum) के साथ फेंकने के लिये समय लगेगा तथा क्रमशः उन्नति होगी । एक महीना सब फेंकना, फार्म के लिए होगा, दौड़ में धीमी गति-प्रवाह होगी ।

मौसम के समय :

उत्तम परिणाम जैवलिन में उसी समय होता है जब मांस-पेशियाँ ढ़ीली तथा विश्राम लिए होती हैं । प्रतियोगिता के पहले जैवलिन का कोई काम नहीं होना चाहिए । यदि मौसम के पहले का कार्य सुचारु रूप से किया गया है और यदि फेकने के योग्यता में क्रमशः प्रगति हुई है, तो ऐसे एथेलिट सप्ताह मे पहिले तीन दिन में काफी काम कर लेंगे । श्रेष्ठ पूर्णता, विशेष ध्यान, विशेषता तथा काग्रचित्तता से आती है ।

(१) गर्म करना—जौगिग और क्रम से बढ़ाया हुआ वींड स्प्रिट्स । १० मिनट गर्म करने में फैलाने वाले व्यायाम और उन व्यायामों को जो जैवलिन के क्रिया में सहायक हैं, व्यतीत करना चाहिए ।

(२) प्रारम्भिक थ्रो फार्म के लिए :-फेंकना, गर्म करने के लिए, ध्यान से होना चाहिए । विशेष निर्बलताओं तथा नई चीजों के सीखने के ऊपर भी ध्यान देना चाहिए ।

(३) प्रतियोगिता के प्रवाह से फार्म के लिये फेंकना :—प्रतियोगिता की अवस्था तथा चेष्टा के अनुसार कार्य दौड़ के पूरे प्रवाह का प्रयोग और पूर्ण क्रिया का प्रयोग । इससे दूरी के लिए कार्य नहीं हो रहा है । यद्यपि दूर फेंकने की चेष्टा न की जा रही

है तौ भी दूरी अच्छी होगी। ध्यान इस बात पर होगा कि थ्रो, कैसा हौ रहा है ना कि कितनी दूर हो रहा है। कितना थ्रो होगा यह व्यक्ति की शारीरिक दशा, थकान, मौसम आदि पर निर्भर होगा।

(४) फार्म तथा दशा के लिए फेंकना :—फार्म की कुछ बारीक चीजे, पूरी दौड़ के साथ अभ्यास नहीं की जा सकतीं हैं। थकान की दशा में पूर्ण प्रवाह से कार्य करना हानिकारक होता है। सही फार्म से फेंकना लाभदायक सिद्ध होता है।

(५) दूसरे कार्य या व्यायाम करना :—स्प्रिन्ट, हाई जम्प तथा खड़े होकर लम्बी कूद से लाभ होगा और रुचि बढ़ेगी। पूरे अभ्यास के लिए १-१/२ घंटे का समय आवश्यक है।

## हैमर थ्रो The Hammer Throw

हैमर ७ फुट व्यास के वृत्त से फेंका जाता है और ऐथलिट अपना शरीर घुमाता है जिससे हैमर को गति दिया जा सके। जितनी तेजी से शरीर घुमाया जायेगा, हैमर उतनी ही दूर जायेगा।

पकड़ने की रीति :-

बायें हाथ की उंगलियों के दूसरे जोड़ों से हैण्डल पकड़ा जाता है तथा दाहिना हाथ बायें के ऊपर रहता है।

स्थिति :-

वृत्त के निचले हिस्से पर खड़े होकर और फेंकने की दिशा की ओर पीठ करके दोनों पैर मजबूती से जमीन पर रख कर, पैरों के मध्य १२"-२१" का अंतर रखा जाता है। घुटने कुछ मुड़े रखे जाते हैं तथा अंगूठे कुछ बाहर की ओर रहते हैं। हैमर, फेंकने

वाले के दाहिने ओर स्थित रहता है। यहाँ से एक सुगम संतुलित झुलाव की तैयारी की जाती है।

झुलाव Swing

हैमर थ्रो, कई एक झुलाव (swing) देने के साथ आरम्भ किया जाता है और इन के ढीले झुलाव (swing) दे सकने में निपुणता पाना ही सीखने वालों की विशेषता है।

जैसे प्रत्येक झूल (swing) दिया जाता है हैमर के नीचे आने के साथ (जो दाहिने पैर के बाहर जमीन से ६" से १२" तक ऊपर होता है) हाथ आगे बढ़ाये जाते हैं। हाथों में ढीलापन (Relaxation) होने के साथ, हाथ सीधे रहना चाहिए। यह अवस्था उस समय होगी जब हैमर, फेंकने वाले की दाहिनी ओर होगा तथा हाथ मुड़ जायेंगे जब हैमर बायीं ओर होगा। जब वास्तविक घूमना आरम्भ होता है तो हाथ कभी नहीं मुड़ते हैं। हैमर, ऐथलिट के बायीं ओर से ऊपर जाता है तथा दाहिनी ओर से नीचे आता है।

झुलाने (Swing) का सब ऊपरी स्थान सिर, बायें कंधे के ऊपर तथा पीछे हवा में है। हैमर के ऊपर जाते समय हाथ सिर के ऊपर से नहीं चेहरे के सामने से जाते हैं। संतुलन के लिए कमर शरीर के साथ सीधी रहेगी। शरीर का भार कुछ आगे बायें पैर पर होगा। ऐथलिट उस समय हैमर छोड़ने के पहिले तीन में से पहले घुमाव (Turn) के लिए तैयार होता है जब हैमर अन्तिम झूले (Swing) के झुलाने को आरम्भ करता है और नीचे आने की गति में दायें से बायें चलता है।

पीवट (Pivo ):

घूमना, हैमर के तेज करने से और बायें पैर पर घूमने से होता

है। इसमें दो रीतियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं। अधिकतर 'एड़ी-अंगूठा' (Heel-Toe) रीति घूमना, प्रयोग में आता है। दूसरा 'अंगूठे' (Toe) पर घूमना है। एड़ी-अंगूठा (Heel-Toc) घूमने में ऐथलिट को एक से दूसरे घुमाव (Turn) में अवस्था ठीक रखने में सहायता मिलती है क्योंकि वह अपने बायें पैर से जमीन से सम्पर्क सदैव बनाये रहता है।

पहला घुमाव :-

पहला घुमाव धीरे से आरम्भ होना चाहिए और क्रमशः बढ़ते रहना चाहिए। जब दाहिने पैर के अंगूठे के दाहिनी ओर नीचे पहुंचता है और हाथ सीधे रहते हैं, तो ऐथलिट अपनी १८० अंश कोण का घुमाव (Turn) अपने बायें पैर की एड़ी के बाहर से आरम्भ करता है।

पूरे घुमाब के समय सिर और आंखें हैमर की ओर होती हैं। इस अवस्था में हैमर, फेंकने वाले के आगे होता है। घुमाव पूरा होने के पहले ऐथलिट का शरीर, हैमर के आगे होना चाहिए।

जब तक सम्भव हो दाहिना पैर भूमि पर होना चाहिए और जैसे पैर ऊपर उठना आरम्भ करे, उसे ऊपर गोलाई से और नीचे जितनी तेजी से हो सके उठना चाहिए, जिससे शरीर, को हैमर के आगे कर दे। दाहिने पैर का अंगूठा पहले घूमना चाहिए फिर एड़ी घूमना चाहिए।

जब पिवट (pivot) समाप्त होता है, दाहिना पैर कदम आगे पूरा कर लेता है और ऐथलिट २' वृत्त के पार चल चुकता है। वह उसी सम्बन्धित अवस्था में होता जैसे वह घूमने के प्रारम्भ

में होता है।

घूमने की किसी अवस्था में बायां पैर पृथ्वी से सम्पर्क नहीं हटाता है। वह अब दूसरी बार घूमने को तैयार होता है।

दूसरा घुमाव :-

दूसरा घुमाव हैमर दो बार घूमने से तेजी पर होगा तथा अन्तिम घुमाव में और तेजी पकड़ेगा। इस घुमाव में कमर सीधी होगी, हैमर में समान झुलाव होगा, एक छोटा और जल्दी दाहिने पैर से कदम लेना होगा तथा हैमर से आगे जाने की क्रिया सम्पन्न होगी। हाथ ढीले होने चाहिए जिस से गति प्रवाह हैमर में शरीर से जितना दूर हो, रख सके।

तीसरे घुमाव के समाप्त होने के बाद, वजन विशेष रूप से बायें पैर पर होना चाहिए मगर हैमर दाहिने पैर के दाहिनी ओर होगा। शरीर का वजन हैमर के प्रभाव के विरूद्ध कार्य करेगा। बायें पैर पर वजन डालना उस समय आरम्भ होगा जब तीसरे घुमाव का ३/४ हिस्सा समाप्त हो जायेगा। यह वजन का बदलाव केन्द्रिय लकीर से बायीं ओर, दाहिने पैर के जमीन छूने से पहले झुकने से होगा। तीसरा घुमाव समाप्त होते ही वजन मुड़े हुये बायें पैर पर होना चाहिए और दायां पैर शरीर को फेंकने के स्थान में लाने के लिए, घुमाने में प्रयोग होगा।

थ्रो Throw) :-

तीसरे घुमाव के अन्त में सरलता से हैमर छोड़ने में एक अच्छा थ्रो (Throw) होगा। अनुभव के साथ पैरों, धड़, सीना तथा हाथों को प्रबल उठाने की गति के द्वारा हैमर के ऊपर अधिक प्रभाव

डाला जा सकता है।

हैमर जमीन से ४५ अंश के कोण से बायें कंधे के ऊपर से छोड़ा जाता है। हैमर की गति से, ऐथलिट फेंकने की दिशा में घूम जाता है।

उलट कर फेरना :-

कुछ ऐथलिट थ्रो के बाद दाहिने पैर पर संतुलन के लिए जाना आवश्यक नहीं समझते हैं। किन्तु यह समाप्त करने की रीति उत्तम है। जो भी हो बायें पैर पर जब शरीर फेंकने की दिशा में घूमता है, पिवट (Pivot) होना चाहिए।

अभ्यास :-

शारीरिक कार्यक्रम। दो सप्ताह वृत्त से फेंकना। पूरे साल का अभ्यास—मौसम के समय निम्नलिखित कार्यक्रम अपनाना ऐथलिट के लिए उपयोगी होगा।

सोमवार को :

४४० की दौड़ और २० मिनट की शारीरिक तैयारी का व्यायाम, हैमर झुलाना, १५ मिनट बिना फेंके हैमर घुमाना। २० मिनट फार्म के लिए, स्प्रिन्ट, और जॉग।

मंगलवार को :

जॉग ४४०, २० मिनट शारीरिक तैयारी का व्यायाम, एक घंटा पूर्ण हैमर का कार्य, तीन चार अच्छे थ्रो, स्प्रिन्ट जॉग।

बुद्धवार को :

जॉग ४४०, २० मिनट व्यायाम, मंगल का कार्य, एक घंटे

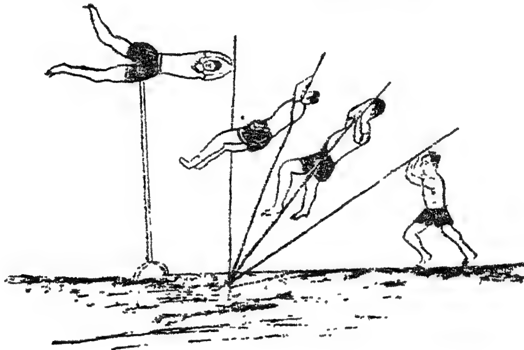
हैमर फेंकना, हर्डल पर दौड़ना, जाँग ।

वृहस्पतिवार को :

जाँग ४४०, २० मिनट व्यायाम फौर्म के लिए हैमर फेंकना, जाँग.

शुक्रवार को :—विश्राम

## पोल वाल्ट (Pole Vault)



पोल वाल्ट कूदने वाले इवेन्ट्स (events) में से सबसे कठिन और अत्यन्त तकनीक पूर्ण है। इसी कारण वर्षों के अभ्यास की आवश्यकता होती है ।

दौड़ :

प्रवेश या दौड़ अधिक महत्वपूर्ण है। कोई भी कूदने वाला उस समय तक ऊंची दूरी नही कूद सकता है जब तक उसका प्रवेश ठीक न हो। कूदने के लिए टेक आफ मार्क, हाथ से पकड़ने के सीधे नीचे होगा जब कि हाथ, सिर के ऊपर फैलाए हुए होंगे और पोल, वोलटिंग बौक्स में होगा ।

दौड़ ५०-७० फुट होगा और कदम इतने अच्छे होने चाहिये कि कूदले वाला यदि आँख बंद करके भी आये तो टेक आफ मार्क पर सही पैर आयेगा। दौड़ में पोल दाहिनी ओर लाया जाता है। टेक आफ से चार स्ट्राईड पहिले पोल का सिरा कुछ नीचे किया जाता है यह कूदने का प्रारम्भ है। पोल,बौलटिंग बाक्स में घुसाया जाता है, दाहिने हाथ से मजबूती से पकड़ा जाता है और बायां हाथ दाहिने हाथ तक ऊपर सरकाया जाता है। वौलटिंग बाक्स के साथ सम्पर्क के बाद पोल बिल्कुल सिर के ऊपर रहेगा और हाथ पूरी दूरी से कुछ कम फैला रहेगा। पोल के बालटिंग बाक्स में जाने के बाद ही और साथ के ताल से, दाहिना घुटना कंधे के बराबर ऊंचा उठाया जायगा। इसके तुरन्त बाद ही दाहिने पैर के झुलाव से सीधे खड़े होने की अवस्था ली जायगी। दाहिने घुटने के उठाने के साथ बांया पैर का एक निश्चित पुश होता है। जमीन से इस पैर से उछाल के बाद यह पोल की गोलाई में झूलता है और दाहिने पैर की अवस्था के साथ आ जाता है।

पुल अप और हैंड स्टैंड :

(ऊपर खींचना और हाथों पर खड़ा होना)जब पैर जमीन को पूरी रीति से छोड़ देते हैं तब हाथ पोल के ऊपर जोर से खींचते हैं। पोल खिचाव के साथ सीधी अवस्था में आयेगा, साथ ही शरीर साधारण अवस्था से झूलते हुये एक ऊपर से नीचे उलटी हुई अवस्था एक घड़ी में लटकने(Pendulam)के समान जिसमें हाथ की स्थिति खूंटी का काम करती है, ले लेता है। जैसे पैर ऊंचे जाते हैं पुल अप चलता रहता है। शरीर के घुमाव के साथ पोल से पुल अप प्राकृतिक

रीति से पुश अप में परिवर्तित हो जाता है। पुश अप का अन्तिम भाग वही शारीरिक क्रिया है जैसे कि जमीन पर हैण्ड स्टैंड करते हैं।

जैक नाइफ (Jack Knief) और गिरना (Landing) :

अभी तक की क्रियाओं से पोल सीधा रहता है। शरीर के ऊंचाई पर पहुंचने के बाद पैरों को पहले नीचे आने दिया जाता है जिससे कूल्हे के पास मुड़ जाता है और कूदने वाले की वही स्थिति होती है जैसे पानी में डाईव करने के लिए जैक नाईफ़ अवस्था होती है। पैरों के नीचे चलने के बाद और हाथों के हैंड स्टैड में पूरे काम करने के बाद हाथों में तेजी के साथ पोल से कूद कर झटका देना चाहिए और पीछे झटकना चाहिए।

इस से कोहनी के 'बार' से लड़ने की सम्भवना नहीं होती है तथा शरीर को सीधे होने में सहायता होती है। बहुत से पोल वौल्ट करने वाले निम्नलिखित स्थानों पर बहुत शीघ्रता करते हैं।

(१) टेक आफ के समय स्प्रिग में।

(२) पुल अप में बहुत जल्दी पुल अप करना।

(२) पैर बहुत शीघ्रता से गिराये जाते हैं इस से पहले कि अधिक से अधिक ऊंचाई ली जाय।

(४) पोल को शीघ्रता से छोड़ देते हैं।

अभ्यास :

अभ्यास बराबर होना चाहिए। चूंकि हफ़्ते में तीन अभ्यास की सीमा है, इसलिए महीनों और वर्षों के परिश्रम से ही यह आ सकता है। सीखने की अवस्था में पहली चीज पहले आना चाहिए।

कोई पुंल अप सही नहीं कर सकता है जब तक उस के झुलाव के गति-प्रवाह में सुगमता और पूरी लम्बान न हो। ऐसा झुलाव संतुलित और समयानुसार टेक आफ़ में है।

इस बात पर बार-बार जोर देने योग्य है कि पोल वाल्ट एक एकता पूर्ण कार्य है। पहिले पग से लेकर जमीन पर गिरने तक एक एकता पूर्ण कार्य है। एक कार्य क्रम दूसरे में चलता जाता है और ऐसा मालूम होता है कि यह एक छोटे२टुकड़े का बना हुआ, सम्पूर्ण कार्य है। इसके लिए जिमनास्टिक, रस्सी पर चढ़ना और विशेष व्यायाम महत्वपूर्ण हैं। तौभी यह जानना आवश्यक है कि ये कार्य वौल्ट का स्थान नहीं ले सकते। वौल्ट करना आवश्यक है जो भी अवसर मिले सम्पूर्ण गति के ताल, समय और संतुलन के साथ वाल्ट करना उचित है। अभ्यास में नीची ऊँचाई और अधिक ऊँचाई से फौर्म के लिए अभ्यास करना आवश्यक है। नीची और अधिक ऊँचाई पर वौल्ट करने में अंतर है।

(१) गर्म करना—सरल विंड स्प्रिंट, फैलने का व्यायाम, कुछ स्पर्ट ६० गज के नीचे।

(२) पोल वौल्ट—दो तीन गर्म करने के व्यायाम के बाद किसी ऊँचाई पर वौल्ट करना। पूरी वौल्टिंग के तेजी पर पूरी दौड़ लेना। वौल्ट के समय जिस समस्या का हल करना है उस का ध्यान ठीक रहे। उसी पर बुद्धिमानी से ध्यान देना है। अभ्यास में केवल एक या दो बातों पर ही ध्यान दिया जा सकता है। अभ्यास बिना किसी समस्या के ध्यान में रख कर करने से व्यर्थ होता है। इस बुद्धिमानी से अभ्यास करने में दो लाभ हैं। इससे अच्छे फौर्म

का एक मौखिक समझ आ जाती है। इस के द्वारा एथलिट के मांस पेशियों को भी समझने में सहायता मिलती है।

टेक आफ के सही स्थान पर ध्यान देना चाहिये।

(३) वौल्ट के बाद का कार्य--स्प्रिंट और हर्डल करना, जिमनास्टिक और टम्बलिंग का कार्य करना।

प्रत्येक अभ्यास के दिन का अन्त, सहने की शक्ति के कार्यों से अंत होना चाहिए, यह ४४० गज के नीचे दौड़ा जा सकता है।

———

[३७]

# शारीरिक शिक्षा सम्बन्धी मनोविज्ञान

## मनोविज्ञान परिभाषा क्षेत्र

मनोविज्ञान क्या है ?

मनोविज्ञान का अध्ययन किसी न किसी रूप में अरस्तू के समय में भी पाया जाता है। उस समय यह दर्शन शास्त्र का एक अंग था आध्यात्मक विचारों की अवनति तथा बाह्य वैज्ञानिक परीक्षण की उन्नति के परिणाम स्वरूप १९ वीं शताब्दी में यह एक विज्ञान के रूप में विकसित। हुआ मनोविज्ञान का अंग्रेजी शब्द साइकालोजी है जो यूनानी भाषा से लिया गया है। यह दो शब्दों, साइकों तथा लोगस जिनका अर्थ आत्मा तथा विचार है, से बना है। इसका शाब्दिक अर्थ हुआ आत्मा का विचार।

मनोविज्ञान का वास्तविक अर्थ आत्मा का विचार ही है। प्लेटो ने कहा था कि मनुष्य भी प्रकृतितः आत्मा तथा शरीर से निर्मित है। यह दोनो आपस में भिन्न हैं। आत्मा को केवल ज्ञान से समझा जा सकता है। अरस्तू ने आत्मा को मुख्य कार्यो का योग समझा था।

यह परिभाषा बिल्कुल स्पष्ट नहीं हैं। इसके द्वारा आत्मा क्या है ? ऐसे प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिलता। यह दर्शन

शास्त्र का विषय है।

इसके पश्चात् मनोविज्ञान की परिभाषा मस्तिष्क का अध्ययन बताया गया। यहाँ भी कई ऐसे प्रश्न उठते हैं जिनका उत्तर देना कठिन हो जाता है। जैसे मस्तिष्क की प्रकृति, स्थूल पदार्थ से भिन्नता इत्यादि। मस्तिष्क के अध्ययन की परिभाषा में मनोविज्ञान तर्क ज्ञान से मिलता जुलता रहा और इस कारण अस्पष्टता रही। परन्तु फिर भी आगे चल कर यह विचार मिलेगा कि सही मनो-विज्ञान के लिए मस्तिष्क के संबंध में कुछ सिद्धान्त अवश्य मानने पड़ेंगे।

आधुनिक मनोविज्ञान के संस्थापक डेकार्ट माने जा सकते हैं। मस्तिष्क की परिभाषा के अन्त हो जाने के पश्चात् यह चेतना का विज्ञान समझा जाने लगा। मनोवैज्ञानिकों ने यह समझ लिया कि कल्पित दर्शन शास्त्र के विचारों को त्याग कर यह जानना आवश्यक है कि, मष्तिष्क के घेरे में किस वस्तु पर निश्चयीकरण हो सकता है। डेकार्ट इस परिणाम पर पहुंचे थे कि एक निश्चित विषय था कि मैं विचार करता हूं, इच्छा करता हूँ तथा अनुभूति करता हूँ। इसका अर्थ है कि मुझको ही चेतना की अवस्थाएं होती हैं या अनुभव के प्रकार होते हैं, जिनको अर्न्तदर्शन के द्वारा परीक्षा की जा सकती है। डेकार्ट के अनुसार मस्तिष्क का वास्तविक गुण सोच या विचार करना है, इसके विपरीत वाह्य जगत है। यह वाह्य जगत तथा विचार आपस में संबंधित हैं। मनोविज्ञान इसी संबंध का अविष्कार करना चाहता है। डेकार्ट ने मस्तिष्क की परिभाषा में कहा कि यह विचार करने वाली विस्तृत वस्तु है

जिसका गुण चेतना है ।

चेतना का अर्थ 'मालूम करने' से लिया जाता था । इसे कैसे जान सकते हैं । प्रत्येक चेतना व्यक्तिगत है । अन्तंदर्शन निज का था और उसका अध्ययन मन संबंधी तथा विचारवान था । इस प्रकार का मनो विज्ञान शिक्षा के लिए लाभप्रद नहीं था । क्योंकि बुद्धिमान प्रौढ़ के मनोविज्ञान की आवश्यकता न थी वरन् उत्तेजित बालक के मनोविज्ञान की आवश्यकता थी इसके अतिरिक्त विज्ञान होने के नाते मनोविज्ञान को यह बताना था कि कोई चेतना विशेष रूप क्यों धारण करती है तथा मनुष्य के लाभार्थ उस पर नियंत्रण कैसे किया जा सकता है । फलतः मनोविज्ञान चेतना के विज्ञान की परिभाषा में स्वीकृत न हो सका ।

इसके पश्चात् मनोविज्ञान व्यवहार के विज्ञान के रूप में आया । मनोवैज्ञानिकों ने यह प्रश्न किया कि हमारी परीक्षा की वास्तविक वस्तु क्या है ? वे इस परिणाम तक पहुँचे कि चेतना की अवस्था अपने अनुभव की परीक्षा तक सीमित है किन्तु व्यवहार के अध्ययन के योग में कोई भी जीवित प्राणी जो व्यवहार करता है समहित हो जाता है । किसी की चेतना अवस्था का सीधा अध्ययन किसी के द्वारा संभव नहीं है किन्तु व्यवहार का अध्ययन किया जा सकता है । उदाहरणार्थ यदि तुम क्रोधित हो तो तुम्हारे क्रोध का अध्ययन नहीं किया जा सकता किन्तु तुम्हारे बाह्य व्यवहार का, अध्ययन हो सकता है जैसे आँखों का लाल होना, बंधी हुई मुट्ठी तमतमाता चेहरा । इन व्यवहारों के द्वारा समझा जा सकता हैं कि

तुम क्रोधित हो। यहां अध्ययन तुम्हारे क्रोध का नहीं वरन् तुम्हारे क्रोधित व्यवहार का हुआ। इस परिणाम के प्रभाव क्या हैं ? यह अत्यन्त सरल एवं साधारण है। मैं भी तुम्हारी तरह एक प्राणी हूँ। मैं जानता हूँ कि क्रोध की अवस्था में मैं भी इसी प्रकार का व्यवहार करता हूँ। जब तुम मेरी तरह व्यबहार करते हो तो मैं इस परिणाम पर पहुँचता हूँ कि तुम क्रोधी हो। अतएव एक लाभदायक मनोविज्ञान के प्राप्त करने के लिए अपने अनुभव की परीक्षा के परे जाना है तथा व्यवहार का अध्ययन करना है साथ ही साथ अपने व्यवहार के उदाहरण से उसका अनुवाद करना है।

मनोविज्ञान की आधुनिक परिभाषा–

It is the interpretation and explanation of behaviour in mental or psychical terms. —Ross

यह मानसिक रूप में व्यवहार का अनुवाद तथा उल्लेख है।

2. It is the science which seeks to interpret in psychical or mental terms the behavior of living organism so for as that is psychically conditioned.
Dr. James Drever

यह वह विज्ञान है जो जीवित प्राणी के व्यवहार को मानसिक रूप में अनूदित करता है जहाँ तक वह आत्मिकता से निर्धारित होता है।

3. Psychology is a scientific study of the activities of the individual. —Wood worth

मनोविज्ञान व्यक्ति के कार्य का वैज्ञानिक अध्ययन है।

4. The positive science of behaviour.
—Mc Dougall

5. Study of mental phenomenon.

—Dumville.

यह मानसिक रूप का अध्ययन है।

6. It is the science of mind or human nature as revealed in two aspects the inner which is mind and the outer called action or behaviour.

यह मन या मनुष्य की प्रकृति का विज्ञान है जो दो प्रकार से प्रकाशित होता है आन्तरिक जो मन है तथा बाह्य जिसे गति या व्यवहार कहते हैं।

## मनोविज्ञान का क्षेत्र

(१ शिक्षा मनोविज्ञान

पेस्टलॉजी प्रथम सर्वश्रेष्ठ शैक्षाणिक अविष्कारकों में से एक हैं। बालक का मन शिक्षक का प्रथम दायित्व है इस पर सर्वप्रथम आप का ही बल था। इस बात पर भी बल दिया जाता था कि शिक्षा की कला मानसिक रूप में सही ज्ञान पर आधारित होनी चाहिए।पेस्टलॉजी का ध्येय शिक्षा को मनोवैज्ञानिक रूप देने का था।

सर जौन आडम्स ने कहा था कि उनके मास्टर ने उन्हें लैटिन सिखाई इसमें सिखाने की क्रिया के कारण जॉन व लैटिन है। उनका कथन है कि शिक्षा देने के लिए शिक्षक को जॉन तथा लैटिन दोनों को ज्ञानना है। जॉन का ज्ञान ही मनोविज्ञान है।

शिक्षा में मनोविज्ञान यह मनोविज्ञान की एक नयी शाखा है। इसके द्वारा बालकों की बुद्धि का माप, उनकी रुचि, इत्यादि का पता लगता है तथा शिक्षा सही विधि से दी जाती है। शिक्षा सम्बन्धी विषयों का अध्ययन प्रयोग द्वारा होता है और उसके परि-

णाम से शिक्षा सरल तथा रुचिकर व उपयोगी बनाया जाता है।

(२) बाल मनोवैज्ञान :-

इसके अध्ययन से बालक के स्वभाव तथा रुचि का अध्ययन किया जा सकता है। बालक की मनोवृत्तियों को सही प्रकार से समझना उसके विकास के लिए अति आवश्यक है। माता पिता इस अध्ययन से बहुत लाभ उठा सकते हैं व्यर्थ और परेशानियों से बच सकते हैं।

(३) वैयक्तिक मनोविज्ञान :-

इसके अध्ययन द्वारा मनुष्य स्वयं को तथा दूसरों को सही रूप में समझ सकता है। मनोविज्ञान इसी अध्ययन से आरम्भ हुआ है। इस अध्ययन में अन्तर्दर्शन से अधिक सहायता मिलती है।

(४) असाधारण मनोविज्ञान :

इसमें मानसिक दोष के द्वारा जो असाधारण व्यवहार होते हैं। उनका अध्ययन होता है। इसकी विधि मनोविश्लेषण की है। आधुनिक काल में अप्राकृतिक जीवन के कारण मनुष्य अनेक दोषों द्वारा ग्रसित है जिनके कारण व्यवहार में असाधारणता आ जाती है। इस व्यवहार का अध्ययन इसी के द्वारा होता है।

(५) सामाजिक मनोविज्ञान :

समाज व्यक्ति के विकास में कौन सा स्थान रखता है तथा समाज के निर्माण में व्यक्ति का क्या उत्तरदायित्व है इसका ज्ञान इसी विज्ञान के अन्तर्गत कराया जाता है। चरित्र तथा व्यवहार के नियम समाज पर ही निर्धारित होते हैं। मूल प्रवृति का परि-

वर्तन समाज के नियमों के आधार पर ही होता है। उच्च समाज की स्थिति को इसी के द्वारा समझा जा सकता है तथा समाज के मन का पता इसी के द्वारा लग सकता है।

(६) व्यापारिक मनोविज्ञान

मालिक तथा परिश्रामिको का सही सम्बन्ध इसी के द्वारा ठहराया जा सकता है। शिल्पकारों तथा व्यवसायियों के लिए यह विज्ञान उपयोगी है। आधुनिक काल में व्यापार तथा शिल्पकारी उन्नति पर है इस कारण कितने उत्तरदायित्व, कर्त्तव्य, सुरक्षा, भय निश्चयता इत्यादि की समस्यायें उठती हैं जिनका हल इसी में मिलता है।

(७) सामान्य मनोविज्ञान

यह साधारण मनोविज्ञान है जिसमें व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन होता है।

(८) प्रयुक्त मनोविज्ञान

किसी विषय मे मनोविज्ञान के नियमों को प्रयुक्त कर उसको समझना तथा उससे लाभ उठाने को प्रयुक्त मनोविज्ञान कहते हैं। इस कारण इसकी अनेक शाखाएँ हो सकती हैं।

साधाणरतः मनोविज्ञान को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है साधारण तथा असाधारण। यह व्यवहार पर निर्भर करता है। प्रत्येक के वैयक्तिक तथा सामूहिक दो भाग हो सकते हैं।

---

# मनोविज्ञान के अध्ययन के विधियाँ

मनोविज्ञान एक विज्ञान है अतएव उसके अध्ययन में वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग स्वाभाविक ही है। मनोविज्ञान के सिद्धान्तों को प्रमाणित करने तथा उनकी सत्यता सिद्ध करने के लिये वैज्ञानिक प्रयोगों की आवश्यकता होती है। वैज्ञानिक विधि के पांच मुख्य अंग हैं। जिस विषय का नियम स्थिर करना हो उसके पूर्ण तथ्य एकत्रित करना, उनका वर्गीकरण करना, उनके आधार पर कल्पना की सृष्टि, कल्पना का निरीक्षण तथा प्रयोग, अन्त में नियम स्थिर करना।

मनोविज्ञान के अध्ययन की विधियों को दो मुख्य भागों में विभक्त किया जा सकता है। (१) निरीक्षण की बिधि (२) विवरण की बिधि।

(१) निरीक्षण की बिधि :

इस बिधि में मनुष्य में होने वाले अनेक व्यवहार, भाव, क्रियाये व चेष्टा आदि का अध्ययन किया जाता है।

इस विधि के दो प्रकार है (अ) अन्तदर्शन (ब) बहिर्दर्शन।

अर्न्तदर्शन विधि :

यह मनोविज्ञान की प्रमुख बिधि है। इस बिधि में मनुष्य अपनी मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन स्वयं करता है। यह एक

एक प्रकार से आत्म निरीक्षण की विधि है। इसमें मनुष्य का मन ही प्रयोगशाला है जहाँ वह विभिन्न तथ्यों को एकत्रित करता है दूसरे व्यक्ति के मन में क्या हो रहा है, क्या होगा या क्या हुआ था इत्यादि को हम उसी समय समझ सकते हैं जब उसी अवस्थामें स्वयं के मन की बातों को देखते हैं।

इस विधि के दोष :

अनेक मनोवैज्ञानिक इसे वैज्ञानिक की संज्ञा नहीं देते हैं क्योंकि यह अन्य किसी भी विज्ञान में प्रयोग में नहीं लायी जाती साथ ही साथ यह भी कहा जाता है कि अपनी मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन कठिन ही नहीं वरन् असंभव सा है। वास्तव में जिस समय किसी मानसिक अवस्था का अध्ययन किया जायेगा उस अवस्था का उसी समय उपस्थित होना कठिन है।

साधारण व्यक्ति इस विधि का उपयोग नहीं कर सकते क्योंकि उन्हें इसका अभ्यास नहीं होगा। व्यक्तियों में व्यक्तिगत विभिन्नता के परिणाम स्वरूप उनके बिचारों में भी भिन्नता होती है।

इस विधि में स्मृति से अधिक कार्य किया जाता है क्योंकि निरीक्षण के समय वास्तविक दशा उपस्थित नहीं रहती है। अतः वह मानसिक क्रिया न होकर उसकी स्मृति भाग रह जाती है। स्मृति के प्रयोग के समय वास्तविक अवस्था पर ध्यान न देकर केवल अनुमान मात्र से काम लिया जाता है।

बाल मस्तिष्क के अध्यन में यह उपयुक्त नहीं ठहर सकता किन्तु इस विधि के अलावा बाल मस्तिष्क का अध्ययन हो भी कैसे सकता है।

इस विधि में दोष हो सकते हैं किन्तु मनोविज्ञान की प्रमुख उपयोगी विधि यही है। मन की बाते मन के द्वारा ही जानी जा सकती हैं। दूसरे व्यक्ति के मन की बाते हम स्वयं के मन द्वारा ही समझ सकते हैं।

(ब) बहिदर्शन विधि :

मनोविज्ञान में चेतन तथा अचेतन व्यवहार और मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन होता है। दूसरों के मानसिक अध्ययन के लिए उनके व्यवहारों का निरीक्षण किया जाता है। यह भी मनोविज्ञान की एक मुख्य विधि है। विचार तथा कार्य में घनिष्ठ सम्बन्ध है। कार्यों का निरीक्षण कर उससे संबंधित विचारों का अध्ययन किया जा सकता है। व्यक्ति के मनोभाव उसके बाह्य व्यवहार से ही ज्ञात हो सकते हैं किन्तु इनको समझने में भी अर्न्तदर्शन की आवश्यकता होती है।

इस विधि के दोष :

क्योंकि इसमें अर्न्तदर्शन का मुख्य स्थान है अतः संभव है कि दूसरे के व्यवहार का वर्णन करते हुए बहिदर्शक अपने ही विचारो का वर्णन करने लगे।

यदि बहिदर्शक तथा विषयों के मानसिक विकास में अन्तर होगा तो यह दोषपूर्ण हो जायेगी क्योंकि ऐसी स्थिति में अनुमान से ही कार्य किया जा सकता है।

बहिदर्शक में यदि किसी प्रकार का पक्षपात होगा तो यह विधि दोषपूर्ण हो जायेगी यदि विषयी का व्यवहार बनावटी हैं तो विधि दोषित ठहरेगी।

इन सब दोषों के रहते हुए भी यह पद्धति व्यवहार में लायी जाती है। प्रशिक्षण तथा सतर्कता के साथ इसे व्यवहार में लाने से इसके दोषों को दूर करना संभव है। अपने ज्ञान के कारण इच्छानुसार नियंत्रण भी कर सकते हैं।

उपरोक्त दोनों विधियों का संयुक्त उपयोग करने से ही सही अध्ययन तथा विशेष लाभ प्राप्त होगा।

(अ) प्रयोग विधि :

सुपरिचित तथा सुनियंत्रित परिस्थिति में किए गए निरीक्षण को प्रयोग कहते है। इसमें मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन पूर्व निश्चित परिस्थिति में किया जाता है। यह वैज्ञानिक विधि है जिसके द्वारा प्रत्येक नियम की सत्यता प्रमाणित की जाती है।

प्रत्येक मानसिक क्रिया पर प्रयोग नहीं किया जा सकता है जैसे पागलपन को समझने के लिये किसी को पागल नहीं बनाया जा सकता है केवल लक्षणों के निरीक्षण से अध्ययन करना पड़ता है।

मन की क्रियाये जैसे रुचि,बुद्धि,स्मरण,शक्ति,कल्पना,संवेदना,ध्यान आदि पर प्रयोग किया जा सकता है। प्रयोग में शरीर, मानसिक तथा वातावरण संबंधी उन समस्त बातों का विवरण रखना पड़ता है जिनका प्रभाव विषयी की मानसिक क्रियाओं तथा व्यवहार पर पड़ सकता है।

आधुनिक मनोविज्ञान में बुद्धि माप का प्रयोग तथा व्यवसायिक योग्यता के प्रयोग द्वारा बहुत लाभदायक कार्य किए जा रहे हैं।

विधि के दोष :

मानसिक प्रक्रियाओं पर निर्जीव पदार्थ के समान नियंत्रण

करना कठिन है। सदैव कृत्रिम वातावरण जो प्रयोग के अनुकूल हो कठिन है।

प्रयोगकर्त्ता के द्वारा विशेष मानसिक दशा समाप्त की जाती तथा विशेष कृत्रिम उत्तेजना उत्पन्न की जाती है। मानसिक क्रियाओं का स्वभाविक दशा में अध्ययन होना चाहिये।

बनावटी वातावरण मन स्थिति के अनुकूल नहीं बनाया जा सकता। इन दोषों के होते हुए भी प्रयोग विधि का उपयोग करना आवश्यक तथा अनिवार्य है। मनोविज्ञान की उन्नति इसी के कारण हुई है। दोष होते हुए भी सतर्कता के साथ कार्य करने में अत्यन्त सफलता प्राप्त होती है।

(२) विवरण विधि :

(१) तुलनात्मक विधि—व्यक्ति के व्यवहार की तुलना अन्य व्यक्तियों तथा पशुओं से की जाती है। तुलना में समानता तथा भेद दोनों पर ध्यान दिया जाता है। मनुष्यों तथा पशुओं की मूल प्रवृत्तियों में विशेष अन्तर नहीं है। अतएव वास्तविक रूप जानने के लिए पशुओं के स्वभाव का अध्ययन भी होता है साथ ही कितने ऐसे प्रयोग हैं जो मनुष्यों पर लागू कर के तुलनात्मक विधि के रूप में मनुष्यों से सम्बन्धित कर नहीं किये जा सकते। अतः उन्हें पशुओं पर व्यवहार में लाया जा सकता है।

मनुष्य की मूल प्रवृत्तियां परिवर्तनशील हैं तथा पशुओं में मनुष्य की तरह विचार का अभाव है। अतः दोनों की तुलना करते समय उनकी परस्पर विभिन्नताओं पर भी विशेष ध्यान रखना चाहिए अन्यथा त्रुटि होने की सम्भावना होगी।

(२) मनोविश्लेषण विधि :—आधुनिक मनोविज्ञान चित्र

विश्लेषण की विधि द्वारा मन के अन्त:पटल का अध्ययन करता है। इस विधि से मन के २/३ भावों को समझने का प्रयत्न किया जाता है। मन का २/३ भाग छिपा या अचेतन रहता है केवल १/३ भाग चेतन में रहता है। अचेतन मन के प्रबल होने से व्यक्ति के व्यवहार में अस्वाभाविकता आ जाती है। व्यक्ति के ऐसे व्यवहाहों को समझने के लिए मनो विश्लेषण विधि प्रयोग में आती है। इस पद्धति के स्थापक फ्रायड महोदय हैं। मस्तिष्क की गुप्त अवस्थायें, स्वप्न सांकेतिक चेष्टाओं का विश्लेषणात्मकरूप से अध्ययन इस विधि किया जाता है। इस विधि के द्वारा उन अनुभवों का अध्ययन किया गया है जो साधारणतया निरर्थक समझी जाती हैं जैसे भूल, पागलपन, निरर्थक चेष्टायें आदि इस विधि के द्वारा यह प्रमाणित होता है कि मनुष्य का प्रत्येक कार्य अर्थपूर्ण है। निरर्थक क्रियायें गुप्त वासनाओं को प्रकाशित करती हैं।

(iii) विकासात्मक विधि :

इस अध्ययन में किसी व्यक्ति अथवा जाति के मानसिक गुण विलक्षणता, स्वभाव के विकास का पूर्ण अध्ययन किया जाता है जिसमें बाल्यावस्था से लेकर वृद्धावस्था तक की बातें आ जाती हैं। वशानुक्रम तथा वातावरण का प्रभाव कैसे तथा कितने समय में होना सम्भव है इत्यादि अध्ययन इस विधि के द्वारा होता है।

(iv) व्यक्ति इतिहास विधि :

मनुष्य के व्यक्तिगत इतिहास के अध्ययन से स्वभाव के कारण का अध्ययन किया जाता है। इसमें व्यक्ति पर विश्वास रख कर प्रश्न किए जाते हैं और इस प्रकार अन्य श्रोतों से भी सहायता मिले तो

की जा सकती है। व्यवहार की रुचियों को समझने तथा सुलझाने के लिए यह अति उपयोगी है।

(iv) प्रश्नावली विधि :

बालक के पूर्ण स्वभाव तथा अनुभव संबधी तालिका बनायी जाती है। प्रश्न विभिन्न प्रकार के होंगे। बालक प्रश्नों का उत्तर देता है या सही उत्तर चुन लेता है। इसके आधार पर उसकी योग्यता आदि का अध्ययन होता है।

———

[३९]

# शारीरिक शिक्षक के लिए मनोविज्ञान की महत्ता

शारीरिक शिक्षक दूसरे अध्यापकों के समान अध्यापक है। जिस तरह कुम्हार को अपनी मिट्टी के विषय में जानने की आवश्यकता है उसी प्रकार शारीरिक अध्यापक को भी बालकों की रुचि, विशेषतायें, विकास के मार्ग तथा विधि, मन, भावनाओं इत्यादि को भली भाँति जानना है। खेल एक मूल प्रवृत्ति है। इसे शिक्षा में कैसे प्रयोग करें तथा जीवन विकास, चरित्र निर्माण इत्यादि में इनका क्या स्थान है केवल मनोविज्ञान के अध्ययन से ही ज्ञात किया जा सकता है।

अध्यापक को अपने विषय में जानना भी आवश्यक है क्योंकि उसे शिष्यों के सम्मुख उदाहरण स्वरूप होना है वही उनका आदर्श रूप होता है। कभी कभी मनुष्य समाज के सन्मुख तो कुछ और तथा गुप्त रूप में कुछ और ही होता है। इस प्रकार सामाजिक जीवन तथा वैयक्तिक (गुप्त) ज़ीवन में समानता नहीं हैं। ऐसे पुरुष दो व्यक्तित्व के होते हैं। दोनों व्यक्तित्व में सदैव संघर्ष रहता है और इसका परिणाम बुरा होता है। इस व्यक्तित्व के व्यवहार का पता चल जाता है। विद्यार्थियों पर इसका प्रभाव बहुत अनुचित होना

है । शारीरिक शिक्षा का अध्यापक विशेष रूप से बालकों के साथ स्वतन्त्रता से कार्य करता है और इस कारण स्वयं पर नियंत्रण न कर सकने के कारण अपने सही रूप का प्रकाशन कर सकता है। यह अवस्था सोचनीय है । अतएव शिक्षक अर्न्तदर्शन के द्वारा अपने को समझ सकता है तथा पवित्र, आदर्शमय जीवन व्यतीत कर बालकों को अत्यधिक लाभ पहुंचा सकता है ।

संसार में सफल जीवन व्यतीत करने के लिए यह आवश्यक है कि हम उसको सही रूप में समझ सकें जिनके साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलना है। मनोविज्ञान दूसरे को समझने में बहुत महत्ता रखता है । दूसरों से कैसे व्यवहार हो, दूसरों को कैसे प्रभावित करें इत्यादि मनोविज्ञान ही बता सकता है ।

मनोविज्ञान तथा शिक्षा मनोविज्ञान के द्वारा अध्यापक प्रणाली, विधि, आयु की विशेषता, रुचि का महत्व, सही पाठ्यक्रम, अभ्यास, तैयारी, शारीरिक क्षमता, प्रवृत्तियों की शक्ति तथा परिवर्तन, शासन आदि मुख्य विषयों का सही ज्ञान प्राप्त करता है । यह शारीरिक शिक्षा के अध्यापक के लिए भी अति आवश्यक है ।

मनोविश्लेषण से यह पता चलता है कि मनुष्य अपनी अतृप्त इच्छाओं के कारण असाधारण व्यवहार करता है । कहा जाता है कि प्रायः आधुनिक रोगों का एक मुख्य कारण यह असाधारण जीवन तथा उसके व्यवहार हैं । इसकी चिकित्सा में शारीरिक शिक्षा का भी प्रयोग किया जाता है । अतएव शारीरिक शिक्षा के अध्यापक के लिए मनोविज्ञान अत्यन्त उपयोगी है ।

मनोविज्ञान के द्वारा हम यह जानते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति के

विकास में वंशानुक्रम तथा वातावरण का प्रभाव होता है इसका नियन्त्रण तथा प्रयोग केवल मनोविज्ञान के द्वारा ही होता है ।

मनोविज्ञान के द्वारा हम व्यक्ति की विभिन्न मानसिक तथा शारीरिक प्रक्रियाओं से अवगत होते हैं ।

व्यवसायिक रुचि जानने के लिए यह बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ है ।

शारीरिक शिक्षा में मनोविज्ञान का एक मुख्य स्थान है क्योंकि शिक्षा संबंधी बातों को छोड़कर श्रेष्ट प्रतियोगिताओं में विजय मनोवैज्ञानिक आधार पर ही सम्भव है ।

इस विज्ञान की विभिन्न परीक्षाओं से शारीरिक शिक्षक व्यवसाय तथा शिक्षा के कार्यक्रम में बहुतायत से लाभ उठा सकता है ।

कुशाग्र तथा मन्द बुद्धि बालकों का स्वभाव तथा समस्याओं को समझना, बालक तथा उनके स्कूल से पृथक संबन्धों का सही अनुमान, मनोविज्ञान के द्वारा ही हो सकता है ।

वास्तव में वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन का कोई ऐसा स्थल नहीं है जहाँ मनोविज्ञान की आवश्यकता न हो । मनोविज्ञान का प्रभाव बालक के उत्पन्न होने से पहले ही उस पर पड़ जाता है तथा सामाजिक वंशानुक्रम के द्वारा वह अपना प्रभाव मृत्यु के पश्चात् भी समाज में छोड़ जाता है जिससे लोग प्रभावित होते रहते हैं ।

# नाड़ी मण्डल

यदि व्यक्ति की इन्द्रियाँ तथा प्रतिक्रियाएँ न रहें तो जीवन ही निरर्थक हो जायगा। मस्तिष्क तथा शरीर का आपस में घनिष्ठ संबंध है। जब शरीर का सम्पर्क किसी बाह्य पदार्थ से होता है तब मानसिक ज्ञान भी होता है। स्वयं के तथा संसार के विषय में ज्ञान हम इन्द्रियों द्वारा प्राप्त करते हैं। ज्ञान तथा उद्वेगों में शरीर के जो भाग विशेषतः कार्य करते हैं उन्हें नाड़ियाँ कहते हैं। ज्ञान तथा क्रियात्मक साधन दोनों का समन्वय तथा सुसंगठित रूप देने वाला अंग स्नायु मण्डल है।

स्नायु मण्डल :

स्नायु या नाड़ी मण्डल एक जाल के समान है जो सारे शरीर में बिछा हुआ है। इस जाल का एक केन्द्र है जिसके द्वारा सम्पूर्ण शरीर पर नियंत्रण होता है तथा एकता स्थापित होती है। व्यक्ति की ज्ञानेन्द्रियाँ उत्तेजना ग्रहण करती हैं और क्रियायें करती हैं। स्नायु मण्डल इस उत्तेजना को नियन्त्रण केन्द्र तक पहुंचाता है तथा कर्मेन्द्रियाँ उसकी प्रतिक्रिया करती हैं।

स्नायु मण्डल तीन भागों में विभक्त है :

(१) त्वक नाड़ी मण्डल (Peripheral Nervous system) त्वक नाड़ी मण्डल दो प्रकार का है। अन्तर्गामी (Afferent) या ज्ञानवाही

(Sensory) तथा निर्गामी (Efferent) या गतिवाही (motor) इन की संयुक्ति एक ओर त्वचा तथा मांसपेशियों से रहती है तथा दूसरी ओर सुषुम्ना (Spinal cord) से बाह्य उत्तेजना त्वक नाड़ी मण्डल द्वारा ग्रहण की जाती है तथा शरीर की मांस पेशियों का इस पर नियन्त्रण रहता है। नाड़ियो में कुछ ज्ञानवाही तथा कुछ निर्गामी होती है।

नाड़ी के मध्य भाग को नाड़ी कोष (Nerve cell) कहते हैं।

नाड़ी के छोर को अक्षातन्तु ( Axon ) कहते हैं।

नाड़ी का दूसरा छोर ग्राही तन्तु (Dendrites) कहलाता है इसकी अनेक शाखाएं होती है।

व्यक्ति की उत्तेजना को ग्राही तन्तु ग्रहण करते हैं। यह उत्तेजना नाड़ी कोष तक पहुंचायी जाती है तथा अक्षातन्तु के द्वारा बाहर प्रवाहित होती हैं।

जहां एक नाड़ी का ग्राहि तन्तु तथा दूसरी नाड़ी का अक्षितन्तु समीपस्थ होते हैं उस स्थान को साइनाप्स (Synapse) कहते हैं। साइनाप्स के द्वारा किसी विशेष प्रकार की उत्तेजना एक नाड़ी से आकर दूसरी नाड़ी में प्रवाहित हो जाती है। उत्तेजना सदा एक ही ओर प्रवाहित होती है। एक अक्षितन्तु का संबंध कई ग्राहितन्तुओं से हो सकता है। इस कारण विभिन्न विभिन्न दिशाओं से आई हुई उत्तेजनाएं एक नाड़ी के द्वारा ग्रहण की जाती हैं और वहां से भिन्न - भिन्न दिशाओं में उनका प्रवाह हो सकता है। साई-नाप्स के द्वारा उत्तेजना किसी विशेष ओर प्रवाहित की जा सकती है। साधारणतः उत्तेजना उसी ओर प्रवाहित होती है जिस ओर

उसका एक बार प्रवाह हो चुका है। साइनाप्स के इस कार्य के द्वारा अभ्यास करके किसी कार्य में सरलता लाई जा सकती है तथा नए कार्य में कठिनाई अधिक नहीं होती साइनाप्स, मस्तिष्क तथा सुषुम्ना के एकभूरे पदार्थ में जो सूक्ष्म भाग के रूप में होते हैं स्थित है।

सहज क्रिया Reflex action :-

ज़ब इन्द्रियाँ किसी कारण उत्तेजित होती हैं तो उस स्थान की ज्ञानवाही नाड़ियों के द्वारा सुषुम्ना या मष्तिष्क तक पहुँचती है। यहां गतिवाही नाड़ी उसे ग्रहण करती है और शरीर के बाहर प्रवाहित करती है इन नाड़ियों का सम्बन्ध मांस पेशियों से रहता है। इन मांस पेशियों के उत्तेजित होने से सहज क्रिया होती है।

त्वक नाड़ी मण्डल का संबन्ध सुषुम्ना से है। जो काम अपने आप होता प्रतीत हो वह सहज क्रिया है। जैसे मिठाई देख कर मुँह में पानी आना, आँख में किसी चीज़ के पड़ने से आँसू आना, पलकों का झपकना।

२. केन्द्रीय नाड़ी मण्डल Central Nervous System.

केन्द्रीय नाड़ी मण्ढल के दो भाग हैं। (अ) सुषुम्ना नाड़ी Spinal cord. (ब, मस्तिष्क (Brain)

(अ) सुषुम्ना नाड़ी :

सुषुम्ना नाड़ी में ३१ ज़ोड़ी नाड़ियाँ आकर मिलती हैं। प्रत्येक जोड़ी में एक ज्ञानवाही तथा दूसरी क्रिया वाही नाड़ी होती है सुषुम्ना के बाहर यह नाड़ियाँ गट्ठर के रूप में होती हैं और शरीर के अन्तिम भाग तक जाती हैं। उत्तेजना जिसके द्वारा इन्द्रियाँ प्रभावित होती हैं, दो प्रकार से काम कर सकती हैं। वे सुषुम्ना

तक पहुंच कर सहज क्रिया में परिणत हो सकती हैं, या सुषुम्ना से वह मस्तिष्क में पहुंचती हैं और वहाँ सम्बंधित भाग को उत्तेजित करके ज्ञान उत्पन्न करती हैं जिसका सम्बंध क्रिया से रहता है। जैसे यदि शरीर पर कुछ रेंगता हो तो हम तुरन्त झटक देते हैं। यह तो सहज क्रिया के द्वारा हुआ किन्तु यदि यह उत्तेजना मस्तिष्क तक पहुँचे, तो वहाँ रेंगने वाले कीड़े का ज्ञान होगा फिर हाथ पैर पर रेंगते हुए कीड़े को शरीर से अलग करने की क्रिया होगी।

सुषुम्ना में पहुंचने पर अन्तर्गामी नाड़ी में कई हिस्से हो जाते हैं। एक छोटे भाग का अन्त सुषुम्ना में ही हो जाता है और बड़ा हिस्सा मस्तिष्क में जाता है। जब तक उत्तेजना मस्तिष्क तक पहुँचती है उसके पहले ही सुषुम्ना निर्गामी नाड़ियों के द्वारा आज्ञा देकर शरीर की मांस पेशियों को तैयार कर देती हैं। प्रकृति का यह सुन्दर उपाय शरीर रक्षा के लिए है।

मस्तिष्क के द्वारा सुषुम्ना में कार्य का समर्थन होता है किन्तु कभी-कभी विरोध भी होता है।

सुषुम्ना सहज क्रिया का नियन्त्रण करती है तथा मस्तिष्क में होने वाली क्रिया की सहायक होती है।

शरीर की दाहिनी ओर का भाग मस्तिष्क में बायें ओर से तथा शरीर में बायीं ओर का भाग मस्तिष्क के दाहिनी ओर से नियंत्रित होता है। जहां ये नाड़ियाँ एक दूसरे को पार करती हैं, उस स्थान को सुषुम्ना शीर्षक कहते हैं। यहीं सुषुम्ना का अन्त होता है।

हमारे प्रतिदिन के अनेक कार्य सुषुम्ना द्वारा ही नियन्त्रित होते

है। आदत तथा सहज क्रिया पर नियंत्रण इसका मुख्य कार्य है।

"सुषुम्ना शीर्षक :

यह सुषुम्ना का सबसे ऊपरी बढ़ा हुआ भाग है। सुषुम्ना के नीचे के भाग में होने वाली उत्तेजनाएं मस्तिष्क में इसी के द्वारा जाती हैं तथा मस्तिष्क में होने वाली उत्तेजना सुषुम्ना के नीचे की ओर जाती है। अपने आप से होने वाले कार्य जैसे साँस लेना, पाचन क्रिया इसी के द्वारा नियंत्रित होते हैं। अन्तर्गामी नाड़ियां जो हृदय तथा फेफड़े से आती हैं यहीं आकर मिलती हैं।

(ब )मस्तिष्क :

मस्तिष्क के तीन भाग हैं तथा उनके कार्य भी भिन्न-भिन्न हैं।

(अ) बृहत् मस्तिष्क :-

यह दो भागों में विभक्त है। इनमें ज्ञान तथा क्रिया के उत्पादन स्थल हैं। मस्तिष्क का ऊपरी भाग समतल नहीं होता और एक भूरा पदार्थ फैला रहता है जो नाड़ी मण्डल का ही भाग है। मस्तिष्क के भिन्न-भिन्न स्थल शरीर के भिन्न-भिन्न भागों की क्रियाओं से संबंधित हैं। इसी प्रकार ज्ञान के लिए भी भिन्न भिन्न स्थल है।

यदि किसी स्थल में क्षति होती है तो उससे संबंधित क्रिया भी दोषित हो जायगी। जैसे श्रवण स्थल में क्षति होने से सुनने में कठिनाई होगी, या वाक स्थल में क्षति होने से बोलने में कठिनाई होगी या बोलना बन्द हो जायगा।

ज्ञान स्थलों में क्षति होने पर भिन्न-भिन्न प्रकार के दोष होंगे। इस प्रकार की अक्रियता को गतिरोध कहते हैं। एक स्थल में क्षति होने के कारण उसका प्रभाव दूसरे स्थलों पर भी पड़ता है। इसी प्रकार स्वस्थ अवस्था में भी एक स्थल दूसरे स्थल के कार्य में

सहायता प्रदान करता है। स्मृति के लिए जितनी इन्द्रियाँ व्यवहार में आएँ उतनी जल्दी स्मरण होगा।

(ब) लघु मस्तिष्क :-

यह भी दो भागों में विभक्त, वृहत मस्तिष्क के नीचे स्थित है। लघु मस्तिष्क एक ओर सुषम्ना तथा दूसरी ओर सेतु के द्वारा वृहत मस्तिष्क से जुड़ा है। इसका मुख्य कार्य उत्तेजनाओं से सम्बन्ध स्थापित करना तथा शरीर की क्रियाओं में समता स्थापित करना है। मस्तिष्क की इन्द्रिय उत्तेजना तथा क्रिया प्रवृति की सूचना सदैव आती रहती है।

(स सेतु :-

सेतु का रंग सफेद होता है। यह लघु मस्तिष्क के दोनों भागों को मिलाता है। वृहत् मस्तिष्क के दाहिने सूत्र इसी स्थान पर एक दूसरे को पार करते हैं।

३ स्वतंत्र नाड़ी मण्डल :-

स्वतंत्र नाड़ी मण्डल केन्द्रीय नाड़ी मण्डल की शाखा है। अनेक नाड़ी मण्डल सुषुम्ना से मिलकर स्वतंत्र नाड़ी मण्डल में मिलते हैं इससे दोनों सम्बन्धित हो जाते हैं। स्वतंत्र नाड़ी मण्डल में बहुत से चक्र रहते हैं।

स्वतंत्र नाड़ी मण्डल के तीन भाग हैं :-

(अ) शीर्षणी Cranial अपने आप होने वाली क्रियाओं का नियंत्रण करता है।

(ब) मध्यम Sympathetic यह शीर्षणी तथा अनुत्रिका के

विपरीत कार्य करता है। जैसे यदि वे पचाने का कार्य करें तो यह पचाने की क्रिया का विरोध करता है।

(स) अनुत्रिका Sacral यह मलमूत्र त्याग करने तथा काम भाव की उत्तेजना में कार्य करता है। स्वतंत्र नाड़ी मण्डल के चक्र तथा ग्रन्थियाँ असाधारण अवस्था में तरल पदार्थ उत्पन्न करती हैं जिनसे उद्वेग प्रबल हो जाते हैं और विशेष शक्ति का प्रवाह होता है इस कारण संवेगों के प्रभाव में असमर्थ होते हुए भी व्यक्ति बड़े-बड़े कार्य कर डालता है। जैसे भय के संवेग में एक व्यक्ति निर्बल होते हुए भी अपनी रक्षा के लिए सात फुट ऊँची दीवार लाँघ सकता है या तेजी से भाग सकता है जो साधारण अवस्था में उसके लिए संभव नहीं है।

गिल्टियाँ Glands

पिण्ड या गिल्टियाँ शरीर की उपयोगी क्रियाओं का संचालन करती हैं। भोजन का पचना, शरीर का विकास, शरीर में परिवर्तन इत्यादि गिल्टियों के द्वारा ही होती हैं। ये गिल्टियां दो प्रकार की होती हैं।

(१) प्रणाली युक्त गिल्टियाँ Duct glands :-

ये तरल पदार्थ उत्पन्न करती हैं जो शरीर के कार्य में सहायक होती हैं। भोजन पचाने के लिए एक प्रकार के रस की आवश्यकता होती है जो गिल्टियों से बनता है। ऐसे ही पसीना, आंसू तथा लार सम्बन्धित गिल्टियां हैं।

(२) प्रणाली-विहीन गिल्टियाँ Ductless glands :-

इन गिल्टियों के द्वारा मानसिक उद्वेग बढ़ाये या घटाये जाते

हैं। इन गिल्टियों के द्वारा उत्पादित तरल पदार्थ सीधे रक्त में मिल जाता है तथा रक्त संचालन के द्वारा शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों में पहुंच जाता है।

(i) एड्रिनल्स Adrinal (ii) पीनियल Pire l (iii) पिट्यूटरी Pituitary (iv) कंठमणि Thyroid (v) उपचुल्लिका Para Thyroid

उपरोक्त मुख्य प्रणाली-विहीन गिल्टियां हैं।

(१) एड्रिनल्स :-

गुर्दों के ऊपरी भाग पर दो एड्रिनल्स गिल्टियाँ स्थित हैं जो एड्रिनलीन उत्पन्न करती हैं। इस रस के द्वारा शरीर सावधान हो जाता है और किसी प्रकार के संकट का सामना करने के लिए तैयार हो जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति अपने साधारण शक्ति से कहीं ज्यादा कार्य कर डालता है। खेल में चोट लगने पर कष्ट नहीं होता। निर्बल व्यक्ति भी खूब तेज भाग सकता है।

(२) पीनियल :-

यह मस्तिष्क की नली में स्थित है। शरीर विकास में इसका महत्व है। लिंग भेद के वाह्य चिन्ह् को प्रकाशित करने में सहायक है।

(३) पिट्यूटरी :-

यह मस्तिष्क के नीचे की नली से लटकती रहती है। इसके दो भाग हैं। सामने वाले भाग का कार्य शरीर को बढ़ाना तथा पिछले का कार्य आँत और रक्त वाहिनी नालियों पर होता है।

(४) कंठ मणि :-

यह गले की घन्टी के पास स्थित है। यह थायराविसन Thyro. in

रस का उत्पादन करती है जिसका प्रभाव समस्त शरीर पर होता है। यह शरीर के बढ़ाने तथा मजबूत बनाने में उपयोगी है। इसकी कमी से शरीर तथा मन के विकास में दोष तथा इसके बढ़ जाने से घेघा हो जाता है। भय तथा क्रोध की दशा में इस रस का उत्पादन आवश्यक मात्रा में नहीं हो पाता। इसके बिना शरीर स्वस्थ नहीं रह सकता। इसकी कमी होने से बीमारियों की अधिक संभावना रहती है। यह कृत्रिम रूप से भी पूरी की जा सकती है। प्रेम तथा उत्साह के संवेगों में यह बढ़ जाता है।

(५) उपचुल्लिका :-

यह छोटी होती है और चुल्लिका के दायें बायें भाग में दो दो होती हैं। इनमें दोष होने से रोग उत्पन्न होता है।

## मानसिक कार्य

सहज क्रिया Reflex action

यह क्रिया अपने आप होती है। जैसे शरीर पर यदि कुछ रेंगता हुआ मालूम हो तो हम वह अंग झटक देते हैं। रेंगने वाली चीज शरीर में उत्तेजना उत्पन्न करती है इसके द्वारा संवेदनात्मक नाड़ियाँ उत्तेजित होती हैं जिनका एक सिरा त्वचा तथा दूसरा सुषुम्ना से मिला रहता है। ये नाड़ी क्रियावाही नाड़ी को उत्तेजित करती हैं जिसके कारण पेशियों में गति होती है। परिणाम स्वरूप कार्य होता है। उच्च वर्ग के प्राणियों की सहज क्रिया जटिल होती है। जटिलता मस्तिष्क के विकास के संग बढ़ती है।

इस क्रिया में विचार की आवश्यकता नहीं होती तथा प्रयत्न के द्वारा एकाएक रोका भी नहीं जा सकता। छींकना, पलक गिरना, लार आना, आंसू आना, जम्हाई लेना आदि सहज क्रियायें हैं। यह

प्रकृति की देन जीवन रक्षा के लिए है।

सहज क्रिया में परिवर्तन सम्भव है। प्रभाव हीन उत्तेजना प्रभावशाली हो जाते हैं। उत्तेजना भिन्न भिन्न प्रतिक्रियाओं से संयुक्त हो जाते हैं।

हेतुपूर्वक प्रतिक्रिया Purposive Reaction

यह सहज क्रिया से भिन्न है। सहज क्रिया में वाह्य उत्तेजना होती है किन्तु इसमें उत्तेजना आन्तरिक है तथा हेतु लिप्त है। इस उत्तेजना से मन की स्थायी प्रवृति जाग्रित होती है और भिन्न भिन्न प्रक्रियाओं में से जिस से लाभ हो उसे चुन लेती है। सहज क्रिया क्षणिक होती है और उनका शीघ्र अन्त हो जाता है किन्तु हेतु पूर्वक क्रिया कुछ समय तक रहती है।

हेतुपूर्वक क्रिया में ध्येय होता है और उसी ओर अग्रसर होता है।

मूल प्रवृत्यात्मक प्रतिक्रिया (Instinctive Reaction)

ये जन्मजात हैं तथा हेतुपूर्वक हैं। इनमें परिवर्तन सम्भव है। इनकी प्रेरणा विशेष कारण से होती है।

अभ्यासात्मक प्रक्रिया (Habitual reaction)

ये आदत के कारण होती है। इनमें परिवर्तन सम्भव है। यह हेतुपूर्वक होती हैं।

विचारात्मक प्रतिक्रिया (Thoughtful reation)

सोच विचार के पश्चात ऐसी प्रतिक्रिया होती है।

संवेग त्मक प्रतिक्रिया (Emotional reation)

इसमें प्रबल संवेग के कारण प्रतिक्रिया होती है।

---

[४१]

# मूल प्रवृत्ति तथा संवेग

जीवित प्राणियों में जीवन शक्ति अर्थ पूर्ण जीव वैज्ञानिक रूप में दो मुख्य कार्य करती है । (१) स्वयं को जीवित रखना (२) जाति को जीवित रखना ।

यही दो मुख्य मूल प्रवृत्तियाँ हैं । इसे आत्म तथा काम की मूल प्रवृति कहते हैं ।

मनुष्य तथा पशुओं में ये आत्म जीवित रहने तथा जाति को जीवित रखने का साधारण उद्देश्य मूल प्रवृत्तियों की सेवा कुछ जन्मजात प्रवृत्तियों के द्वारा की जाती है जिनके द्वारा किसी विशेष दिशा की ओर तथा विशेष स्थिति में कार्य करने तथा भाव प्रकट करने की प्रेरणा मिलती है । मेक्डूगल महाशय कहते हैं, मूल प्रवृत्ति एक प्रकृति प्रदत्त शक्ति है जिसके कारण प्राणी किसी विशेष प्रकार के पदार्थ की ओर ध्यान देता है और उसकी उपस्थिति में विशेष प्रकार के संवेग अथवा मन क्षोभ की अनुभूति करता है एवं उस पदार्थ के संबंध में एक विशेष प्रकार का आचरण करता है ।

ये जन्मजात प्रवृत्तियां मूल प्रवृत्तियाँ कहलाती हैं इन्हें दो भागों में विभक्त किया जाता है :—

(१) व्यक्ति संबंधित, जैसे भोजन अर्जन की मूल प्रवृत्ति, भय, डर, क्रोध, घृणा, जिज्ञासा, रचना, संग्रह आदि ।

(२) जाति संबंधी; काम प्रवृत्ति, शिशु रक्षा।

(३) सामाजिक जीवन संबंधी; दूसरों की चाह, आत्मप्रदर्शन, हंसना, नम्रता।

मूल्य प्रवृत्तियों से व्यवहार का मुख्य उद्देश्य मिलता है। इन उद्देश्यों की पूर्ति का माध्यम समाज द्वारा निर्धारित होता है तथा उन स्थितियों के द्वारा भी जिनसे हम घिरे हुए हैं। जैसे भोजन ढूढ़ने की मूल प्रवृत्ति, जीविकोपार्जन, कृषि, शिकार, शिक्षा तथा बोलने के द्वारा। मूल प्रवृत्तियाँ दूसरी मूल प्रवृत्तियों की सहायता करती हैं।

सामाजिक परम्परा या समाजिक वंशानुक्रम:

बालक समाज में उत्पन्न होता है। उसी सामाजिक परिस्थिति का उस पर प्रभाव पड़ता है और यदि उसी स्थिति से वंश चलता रहे तो उसका प्रभाव अत्युत्तम होगा। यह वंशानुक्रम के कार्य सा प्रतीत होता है किन्तु वास्तव में यह वातावरण का प्रभाव है। सोनार का बालक सुनार होगा। मेंक्डूगल ने चूहों पर प्रयोग द्वारा यह स्पष्ट कर दिया कि अर्जित प्रवृत्तियां भी वंशजों को दी जा सकती हैं।

मैकडूगल महाशय १४ मुख्य मूल प्रवृत्तियाँ बताते हैं और उनके साथ १४ संवेग। संवेग मूल प्रवृत्तियों के साथ आते हैं और संवेग के द्वारा ही मूल प्रवृत्तियों की पूर्ति होती है। जब हम लड़ाई की मूल प्रवृति से प्रेरित हो कार्य करेंगे तो उसमें क्रोध का संवेग होगा।

संवेग की पूरी व्याख्या के लिए अध्याय देखें। मैक्डूगल महाशय की १४ मूल प्रवृत्तियां।

| मूल प्रवृत्ति | संबंधित संवेग |
| --- | --- |
| १. पलायन Escape | भय Fear |
| २. युयुत्सा Pugnacity | क्रोध Anger |
| ३. विकर्षण Repulsion | घृणा Disgust |
| ४. पुत्र कामना Parental | वात्सल्य Love |
| ५. संवेदना Appeal | दुःख Distress |
| ६. भोग Mating | कामुकता Lust |
| ७. जिज्ञासा Curiosity | आश्चर्य Wonder |
| ८. दैन्य Submission | आत्महीनता Negative self feeling |
| ९. आत्म गौरव Self assertion | आत्माभिमान Positive self feeling |
| १०. सामूहिक जीवन Gregariousness | एकान्तभाव Lonliness |
| ११. भोजनान्वेषण Food seeking | भूख Appetite |
| १२. संचय Acquisition | स्वत्व Ownership |
| १३. विधायकता Constructiveness | रचनात्मक भाव creativeness |
| १४. हास Laughter | आमोद Amusement |

मूल प्रवृत्तियों की विशेषतायें :

१. जन्म जात ।

२. कुछ मूल प्रवृत्तियाँ जन्म से कार्य करती हैं, कुछ समय पड़ने पर ।

३. इनमें किसी न किसी प्रकार का प्रयोजन तथा उद्देश्य होगा ।

४. इससे अनुभव प्राप्त होते हैं ।

५. यह सबके लिए समान हैं, इसमें जाति पांति, देश काल इत्यादि का भेद नहीं रहता ।

६. इनमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन संभव ।

७. इनके साथ एक संवेग अवश्य होगा ।

८. प्रत्येक मूल प्रवृत्ति में ज्ञानात्मक, संवेदनात्मक तथा क्रियात्मक अनुभव प्राप्त होता है ।

९. इसके प्रदर्शन में वैभक्तिक भेद नहीं ।

१०. यह कभी नष्ट नहीं होतीं, कम या तीव्र हो सकती हैं।

११. एक मूल प्रवृत्ति दूसरे की सहायता करती है ।

मूल प्रवृत्तियों का परिवर्तन:

समाज के नियमों के अनुसार कार्य करने के लिए मूल प्रवृत्तियों को उनके वास्तविक रूप में नहीं प्रदर्शित किया जा सकता है । इसलिए उनमें परिवर्तन की आवश्यकता हैं । इनका परिवर्तन निम्न प्रकार से किया जा सकता है ।

(१) दमन (Depression) मूल प्रवृत्तियों को कुछ समय के लिए इस अवस्था में डाल सकते हैं किन्तु वह नष्ट नहीं होती न ही दमन होता हैं । दमन के परिणाम स्वरूप मानसिक ग्रन्थियाँ उत्पन्न हो जाती हैं जिनका परिणाम भयंकर होता है ।

(२) विलियन (Inhibition) इसके द्वारा मूल प्रवृत्तियों को प्रबल होने से रोकते हैं ।इसकी दो विधियां हैं। निरोध तथा विरोध ।

(i) निरोध—में मूल प्रवृत्तियों को उत्तेजित होने का अवसर नहीं दिया जाता है यह विचार करते हुए कि इसके द्वारा यह नष्ट हो जायगी । यह सत्य है कि वह नष्ट नहीं होती वरन् दुर्बलता आ जाती है ।

(ii) विरोध–में एक मूल प्रवृत्ति को दबाने के लिए दूसरे को उत्तेजित किया जाता है ।

(३) मार्गान्तीकरण (Redirection) यह विधि सर्वश्रेष्ठ है। इसमें मूल प्रवृत्ति के मार्ग को बदल कर उसे उपयोगी बना दिया जाता है। लड़ाई की प्रवृत्ति में मनुष्यों को समाज की कुरीतियों से लड़ने के लिए शिक्षित किया जाता है। खेल के द्वारा मार्गान्तीकरण संभव है।

(४) शोध (Sublimation) यह भी एक श्रेष्ठ विधि है। इसमें व मार्गान्तीकरण में विशेष भेद नहीं है। केवल इतना ही अन्तर है कि मार्गान्तीकरण में मूल प्रवृत्ति का क्रियात्मक रूप पहले जैसा ही रहता है केवल उसका उद्देश्य व मार्ग बदल दिया जाता है।

शोध में मूल प्रवृत्ति का क्रियात्मक रूप भी बदल दिया जाता है और उसका उद्देश्य उसकी तृप्ति में ही निहित रहता है। वासना युक्त प्रेम का शोध ईश्वर प्रेम से किया जा सकता है। काम प्रवृत्ति का शोध बालकों तथा रोगियों की देख भाल में किया जा सकता है।

सहज क्रिया, प्राणियों को आकस्मिक हानियों से सुरक्षित रखने के लिए प्रकृति की देन है। जैसे छींकना, आँसू, लार, पलक झपकना। यह प्रकृति दत्त होती है और सदैव कार्य के लिए तत्पर रहती है, कार्य में शीघ्रता व समानता होती है, यह अपरिवर्तनशील है।

सहज क्रिया तथा मूल प्रवृत्तियों में समानता है तथापि कुछ अन्तर भी है। प्रत्येक में मूलप्रवृत्ति एक सी नहीं होती किन्तु सहज क्रिया एक सी होती है। सहज क्रिया परिवर्तनशील नहीं, मूल प्रवृत्ति है। सहज क्रिया अनजाने में होती है उसका विरोध नहीं

हो सकता। मूल प्रवृत्ति बुद्धि के साथ तथा नियंत्रण में भी संभव है।

## संवेग

मनोवैज्ञानिकों द्वारा मानसिक अनुभव के तीन पहलू माने गये हैं। ज्ञानात्मक (Cognitive), क्रियात्मक (Conative) तथा भावात्मक (Affective)। किसी बस्तु के विषय को जानना ज्ञानात्मक पहलू है, उस विषय से प्रेरित होकर क्रिया करना क्रियात्मक है तथा उससे उत्पन्न सुख या दुख की भावना भावात्मक पहलू के अन्तर्गत आती है।

जब व्यक्ति के मन में संवेग उत्पन्न होते हैं तो वह अनेक प्रकार की भावनाओं तथा क्रियाओं का अनुभव करता है। संवेग मन का वह भावात्मक अनुभव है जो मन में प्रचंडता से उत्पन्न होता है। जब व्यक्ति में यह भावात्मक पहलू उत्तेजित होता है तो उस व्यवहार को संवेग कहते है।

भावना का मनोवैज्ञानिक अर्थ सुख-दुख का अनुभव ही है। रुचिकर संवेदना से सुख प्राप्त होता है। मूल प्रवृत्तियों की पूर्ति से प्रसन्नता होती है।

भाव से संवेग में तीव्रता अधिक होती है फलतः कार्य में भी तीव्रता होती है।

संवेग की विशेषताएं :

(१) संवेग वैयक्तिक अनुभव हैं—प्रत्येक व्यक्ति का भाव तथा अनुभव उसका अपना होता है जो दूसरे से भिन्न होगा और यह उसकी मानसिक विशेषता पर निर्भर करता है।

इसका अध्ययन कठिन है। कई लोग अपने प्रबल भावों को बनावटी रूप में छिपा लेते हैं।

(२) संवेग की मुख्य विशेषता भाव है–प्रत्येक संवेग सुख या दु:ख से संबंधित है। प्रत्येक अनुभव में इन दोनों में से एक का होना आवश्यक है। यदि भाव सामान्य स्थिति में रहे तो संवेग की उत्पत्ति नहीं होगी। प्रबल भावों को ही दूसरे शब्दों में संवेग कहा जा सकता है, भाव जितना प्रबल होगा संवेग में उत्तेजना का उतना ही आधिक्य होगा।

(३) सवेग व्यापक है :-

प्रत्येक जीवनधारी संवेग का अनुभव करता है। संवेग की उत्तेजना तथा प्रकार भिन्न हो सकते हैं परन्तु संवेग का न होना असम्भव है। मस्तिष्क जितना विस्तृत होगा तथा विचार में जितनी दृढ़ता होगी उसी मात्रा में संवेग को नियन्त्रित किया जा सकता है। आत्म नियन्त्रण तथा निरीक्षण से संवेग शिथिल होते हैं। संवेगों पर पूर्ण नियन्त्रण भी हानिकारक होता है अत: किसी न किसी प्रकार इनका विकास होना आवश्यक है।

(४) संवेग क्रियात्मक अवस्था है :-

संवेगात्मक व्यवहार के लिए किसी प्रकार का भाव उत्तेजना उत्पन्न कर सकता है। उत्तेजित अवस्था में संवेग के वाह्य चिन्ह दिखाई दे सकते हैं। उत्तेजना के कारण व्यक्ति विशेष प्रकार का व्यवहार करता है।

संवेग का सम्बन्ध मूल प्रवृति से है। मैकडूगल महाशय का कहना है कि प्रत्येक मूल प्रवृति के साथ एक संवेग होता है तथा

मूल प्रवृति की पूर्ति के लिए संवेग की आवश्यकता होती है। जेम्स लैंग इस विचार से सहमत नहीं हैं।

(५) संवेग का आरापण संभव है :-

संवेग दृश्य तथा अदृश्य दोनों पदार्थ के प्रति हो सकता है। किसी व्यक्ति के द्वारा संवेग उत्तेजित होने पर उसके अभाव में वह किसी दूसरी वस्तु पर आरोपित हो सकता है।

जैसे घर का मालिक अपनी पत्नी से झगड़ने के बाद अपने नीचे काम करने वालों पर क्रोधित हो सकता है। प्रेम, भय आदि संवेग इसी प्रकार आरोपित हो सकते हैं।

संवेग के साथ शारीरिक परिवर्तन :-

कहा जा चुका है कि संवेग में क्रियात्मक प्रवृत्ति है। इस क्रियात्मक प्रवृति के कारण शरीर में इन कार्यों के कारण अन्दर तथा बाहर विशेष परिवर्तन होता है। क्रोध के संवेग में शरीर कांपने लगता है, चेहरा तमतमा जाता है, आँखें लाल हो जाती हैं, हृदय की धड़कन तीव्र हो जाती है, पाचन क्रिया ठीक काम नहीं करती है तथा रक्त का संचालन तीव्र हो जाता है। ऐसी अवस्था में एड्रिनल रस एड्रिनल ग्रंथि से उत्पन्न होकर रक्त में मिल जाता है जिससे व्यक्ति के अन्तर्गत असाधारण कार्य करने की शक्ति आ जाती है।

संवेग दो भागों में विभाजित किए जा सकते हैं।

(१) रचनात्मक संवेग जैसे प्रेम, आनन्द, जिज्ञासा, सहानुभूति, कौतूहल, सहयोग, भक्ति इत्यादि।

(२) विध्वंसात्मक संवेग–जैसे क्रोध, लोभ, भय, ईर्ष्या।

संवेग के उत्पन्न होने से मन में दो प्रकार के विकार होते हैं। एक अस्थायी तथा दूसरा स्थायी। अस्थायी मानसिक विकार उमंग होता है तथा स्थायी विकार स्थायी भाव कहलाता है।

उमंग :-

उमंग में संवेग का प्रभाव थोड़े समय के लिए ही रहता है। इस स्थिति में संवेग पुनः आ सकता है। व्यक्ति जब क्रोध के संवेग के कारण उमंग में रहता है तो अनायास ही यदि कोई निर्दोष सम्पर्क में आ जाय तो वह पुनः उस निर्दोष व्यक्ति पर क्रोधित हो सकता है। यदि क्रोध की अवस्था में किसी व्यक्ति का काम बिगड़ जाय और उससे कोई साधारण प्रश्न भी किया जाये तो वह फिर उस प्रश्न कर्त्ता पर क्रोधित हो सकता है। एक उमंग अपनी विपरीत उमंग का भी कारण हो सकती है।

स्थायी भाव Sentiment :-

जब मन में एक ही प्रकार का भाव बारम्बार उत्पन्न हो तो वह भाव मन में स्थायी हो जाता है, यही स्थायी भाव कहलाता है। उदाहरणार्थ, यदि किसी के प्रति बार-बार प्रेम का प्रदर्शन किया जाय तो कुछ समय बाद उस पदार्थ विशेष या व्यक्ति के प्रति प्रेम का स्थायी भाव बन जाता है।

व्यवहार का आन्तरिक नियंत्रण मूल प्रवृत्तियों में है। जीवन के उच्च नियंत्रण कैसे अर्जित किए जा सकते हैं।

अर्जित प्रवृत्तियाँ मूल प्रवृत्तियों के आधार पर बनती हैं। व्यवहार के अर्जित नियन्त्रण के विषय में पूछे जाने पर हम आदत की ओर संकेत करते हैं किन्तु आधुनिक शिक्षा मनोविज्ञान में

हम सम्बद्ध सहज क्रिया या स्थायी भाव के विषय में बात करते हैं।

यहाँ आदत तथा मूल प्रवृत्तियों में अन्तर देख लेना लाभदायक सिद्ध होगा।

मूल प्रवृत्तियां जन्मजात हैं तथा आदत अर्जित रक व्याख्या का आदत शब्द है जिसका अर्थ एक प्रकार का काम उसी रूप में बार बार दोहराना है। आदत का निर्माण मूल प्रवृत्तियों के द्वारा तथा उसकी सेवा में होता है अतः यह कहा जा सकता है कि आदत वह घिसा-पिटा मार्ग है जिस में मूल प्रवृत्ति स्वयं को प्रकाशित करती है। अतएव व्यवहार की वास्तविक शक्ति आदत नहीं किन्तु मूल प्रवृति है।

हम देखते हैं कि अनुभव अपने पीछे कुछ परिणाम छोड़ता है जो जन्म जात प्रवृत्तियों से मिल कर संवेगात्मक स्मृति का निर्माण करता हैं तथा यह व्यक्ति के मानसिक वनावट का एक भाव होता है जो भविष्य के व्यवहार को निर्धारित करता है। स्थायी भाव वह मानसिक बनावट है जो भावना ग्रंथि से प्रकार में तो नहीं वरन् अंश में भिन्न है।

साधारण व्यवहार में स्थायी भाव का अर्थ भाव तथा संवेग से है। जब कोई वस्तु, व्यक्ति या विचार किन्हीं संगठित संवेगों के केन्द्र बन जाते है तो यही समूह स्थायी भाव कहलाता है।

स्थायी, भाव संवेग, साधारण या जटिल से भिन्न है क्योंकि यह क्रियात्मक प्रेरणा अधिक निकटीय संबंन्ध रखता है, साथ ही साथ यह संवेग, की अपेक्षा अधिक स्थायी व एक सा रहने वाला है। उदाहरणार्थ हम घृणा का स्थायी भाव कहते हैं किन्तु क्रोध का भाव या संवेग कहलाता है। Mc Dougal महाशय कहते हैं।

dis"A Sentiment is a System in whitch a cognitive

disposition is linked with one or more emotional or conative disposition to form a structural unit that functions as one whole system ."

जैसे देश भक्ति के स्थायी भाव में यदि हम देश भक्त हैं अर्थात देश के प्रति हमारे मन में प्रेम है-यदि देश की स्वतन्त्रता या उन्नति संकट में है तो हम भयभीत होते हैं, विरोधी पक्ष पर क्रोधित होते हैं, देश के वीरों के साथ सहानुभूति प्रकट करते हैं, स्वयं के स्वार्थ को उसपर न्योछावर करने को तत्पर रहते हैं तथा उसके भूत तथा वर्तमान वैभव की प्रशंसा करते हैं । यहां देश ज्ञानात्मक वस्तु है । हम उसके प्रति क्रियाशील होने की चेष्टा करते हैं । स्थायी भाव विकास का फल है ।

व्यक्ति कुछ ही स्थायी भावों के साथ जीवन आरम्भ करते हैं और वे भी उसके व्यक्तिगत जीव वैज्ञानिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित रहते हैं । इस प्रगति के अवसर में स्थायीभाव, व्यक्ति या व्यक्तियों, संस्थाओं जैसे परिवार, क्लब, चर्च तथा चित्र, पुस्तक गहनतम मित्र या अस्पर्शी गुण जैसे न्याय, पवित्रता, दया पर स्थापित होता है ।

स्थायी भाव अपनी प्रकृति में शक्तिशाली होता है । वह उस प्रेरणा को शक्ति प्रदान करता है जिससे व्यवहार प्रेरित होता है ।

स्थायी भाव का जितना अधिक अभ्यास किया जायगा उस वस्तु विशेष पर उतना ही अधिक ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है, परिणामत: वह स्थायी भाव शक्तिशाली हो जाता है ।

यहां यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि किसी वस्तु के प्रति

स्थायी भाव का निर्माण करने में उस वस्तु विशेष की अनुपस्थिति में भी उस पर ध्यान नियंत्रित करने की शक्ति का होना आवश्यक है। Drever महाशय के अनुसार :—

"This experience is not an experience at the perceptual level of intelligenee but involves the ideational level as well."

स्थायी भाव उत्पन्न करने के लिए दो बातों का होना आवश्यक है :

(१) वस्तु का ज्ञानात्मक ज्ञान।

(२) वस्तु के प्रति संवेग उत्पन्न करना। तथा उसके ऊपर उनको संगठित करना।

स्थायी भाव उचित या अनुचित दोनों हो सकते हैं। अनुचित स्थायी भाव मानसिक ग्रथियों Complex के रूप में हो सकते हैं। कभी-कभी व्यक्ति को इस व्यवहार का ज्ञान नहीं रहता और उसके मन में अन्तर्द्वन्द होता रहता है। इस अवस्था में स्थायी भाव उसकी चेतना से परे रहता है। इसका कारण अचेतन मन का प्रभाव है। इसको मनोविश्लेषणद्वारा दूर किया जा सकता है।

आत्मसम्मान का स्थायी भाव :

स्थायी भाव एक दूसरे के नीचे अपनी महत्ता के अनुसार स्वयं को क्रमशः संगठित कर लेते हैं और एक मुख्य स्थायी भाव के अन्तर्गत समाहित हो जाते हैं। इस स्थायी भाव को इस योग्य होना आवश्यक है कि वह अन्य को अपने अन्तर्गत रख सके।

कोई साधारण स्थायी भाव यह योग्यता नहीं रखता। इस योग्य

केवल एक ही स्थायी भाव है। वह है आत्मसम्मान का स्थायी भाव जिसमें प्रत्येक मूल प्रवृत्ति तथा स्थायी भाव स्वयं के चारों ओर संगठित होते हैं। यदि कोई स्वयं को देख कर अनुभव करे कि वह कुछ संवेगों का अनुभवी है तथा कुछ स्थायी भावों का स्वामी है, तो उसमें स्वयं ही एक स्थायी भाव का उद्गम होगा जो उसके मानसिक जीवन में एक प्रधान एकत्व का कारण बन जायगा।

चरित्र में सुधार लाने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति का आत्म सम्मान पुनः स्थापित किया जाय।

यह देख चुके हैं कि किसी वस्तु, व्यक्ति या विचार के प्रति स्थायी भाव उत्पन्न किए जा सकते हैं। चरित्र के सम्बन्ध में नैतिक स्थायी भावों पर विचार करना है। नैतिक निर्माण का अर्थ है नैतिक स्थायी भावों को अर्जित करना, उस पर ध्यान केन्द्रित करना और उन्हें स्वयं स्थायी भाव में समाहित कर लेना। स्वयं का स्थायी भाव स्वयं के ही चारों ओर संगठित होता है। अतएव चरित्र का संगठन स्वयं ही होता है। व्यक्ति में मूल प्रवृत्ति तथा स्थायी भाव प्रमुख स्थायी भाव के चारों ओर संगठित होते हैं जो परिपूर्णता का कल्पित उदाहरण स्वयं Ideal self है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि यह अर्जित प्रवृत्तियों का कुल योग है, एक मानसिक व्यवस्था है, जो चिरकालिक, दृढ़ सर्वदा व्यवहार प्रेरित करने वाला तथा समाज के पारस्परिक संबंध का निश्चित परिणाम है।

सर्वसाधारण का विश्वास है कि चरित्र आदत का एकत्रीकरण भाग है किन्तु आधुनिक मनोविज्ञान इसे एक मानसिक व्यवस्था के

रूप में देखता है जिसका निर्माण आत्म सम्मान के स्थायी भाव के अन्तर्गत समाहित स्थायीभावों के उच्च सहयोग तथा संठगन से होता है।

चरित्र केवल शिक्षा तथा प्रशिक्षण का ही परिणाम नहीं है वरन् जन्मजात नियन्त्रण तथा स्वभाव की देन भी है।

कोई भी व्यक्ति उच्च नैतिक चरित्र प्राप्त कर सकता है। स्वभाव की भिन्नता से व्यक्तित्व में भी भिन्नता आ सकती है।

इच्छा :-

अपने जीवन के आरम्भ में हम उन्हीं वस्तुओं पर ध्यान केन्द्रित करते हैं जिसमें हमारी रुचि होती है। परन्तु उस समय जीवन प्रगति पथ पर होता है और वह पूर्णता प्राप्ति की ओर अग्रसर रहता है। जब जीवन के अनेक पक्षों की ओर जिन पर हमारा विशेष आकर्षण नहीं, ऐच्छिक ध्यान देते हैं तब इसका अर्थ यह है कि हम अपनी इच्छा शक्ति का प्रयोग करते हैं। इच्छा शक्ति क्या है ? यह मस्तिष्क की पृथक शक्ति नहीं जिसे हम अलग कर सकें। जब हम इच्छा शक्ति के प्रयोग की बात करते हैं तो हमारा अभिप्राय यह होता है कि व्यक्ति एक संघर्ष की स्थिति में प्रतिक्रिया कर रहा है तथा सम्पूर्ण व्यक्ति अपनी भूत अनुभूतियों के आधार पर अपना निर्णय या चुनाव भविष्य की अभ्यान्तरिक दृष्टि के अनुसार कर रहा है।

इच्छा का अर्थ संकल्प है। सही इच्छा का अर्थ कार्य करने के आदेश तथा कार्य रोकने की प्रवृत्ति के संतुलन में है। इसमें दूर-

दर्शिता, मूलप्रवृत्ति तथा स्थायी भाव के मध्य निर्णय करने की चेष्टा सम्मिलित है।

विलियम जेम्स इसको अंकगणित के रूप में रखते हैं।

Ideal impulse per se is greater than instiunctive propensity. But ideal impulse plus E (Effort) is lesser than instinctive propensity. In other words E (Efforts) adds itself to "I" the ideal impulse, then I prevails over natural propensity. E is the effort called forth by a sentiment. E is Extra dynamic brought to bear on the situation, this is 'will.'

The will then, is the sentiment, highest organisation itself coming into activity, it is "the organized self in its dynamic aspect."

इच्छा शक्ति स्वयं का उच्च संगठन तथा वह स्थायी भाव है जो कार्य करता है। यह संगठन स्वयं शक्तिशाली है।

नैतिक स्थायी भाव तथा मूल प्रवृत्ति के संघर्ष में यह इच्छा निहित है कि मैं स्वयं कार्य, चरित्र या व्यवहार का श्रेष्ठ आदर्श प्राप्त करूँगा जिसमें स्वयं के आदर्श का भाग समझता हूँ यह चरित्र के कार्य में परिणित है।

मूल प्रवृत्तियों पर विजय देने वाली वास्तविकता कोई गुप्त शक्ति नहीं वरन् स्वयं मूलप्रवृतियाँ ही हैं जिन्हें स्थायी भाव के रूप में संगठित किया गया है।

स्थायी भाव की विशेषता :-

स्थायी भाव जन्मजात नहीं अर्जित होते हैं। स्थायी भाव जीवन को गतिशील तथा क्रमबद्ध बनाते हैं।

स्थायी भाव में व्यापकता तथा निश्चितता होती है।

## आदत तथा चरित्र निर्माण

## Habit and character Formation

आदत Habit

मूल प्रवृतियों की सेवा में आदत का निर्माण होता है। किसी कार्य को बार बार एक ही स्थिति तथा एक ही रूप में करने से आदत बन जाती है। यह अर्जित होती है। यह एक प्रवृति का रूप धारण कर लेती है जिससे कार्य अपने आप ही हो जाता है। यह एक ऐसी मानसिक प्रवृति हो जाती है जो किसी कार्य की पुनरावृति के कारण अनायास ही मस्तिष्क में स्थान ले लेती है।

आदत के लक्षण :-

समानता—कार्य बराबर एक ही समान होता है।

सुगमता—जो कार्य एक बार किया जा चुका है उसे पुनः करने में सुगमता आ जाती है।

रोचकता—कार्य करने में आनन्द आता है।

ध्यान स्वतन्त्रता।

आदत डालने के नियम :-

(१) दृढ़ संकल्प के साथ आदत के कार्य को शीघ्रातिशीघ्र प्रारम्भ करना।

(२) किसी प्रकार की शिथिलता न आने पाए।

(३) किसी विशेष अवसर के लिए रुकना उचित नहीं। हर समय कार्य करने के लिए उपयुक्त है।

(४) नित्य प्रति अभ्यास

आदत के निर्माण के लिए बाल्यावस्था ही सर्व उपयुक्त है। जिस प्रकार की आदत की आशा की जाए उसी प्रकार के वातावरण

में रखना आवश्यक है। आदत आवश्यक तथा उपयोगी हो। बुरी आदतों के प्रभाव से दूर रखना ।

चरित्र Character

कहावत है कि चरित्र आदतों का समूह है। वास्तव में देखा जाये तो आदत चरित्र पर आधारित है। जिस व्यक्ति में सच्चरित्रता की अच्छी-अच्छी आदतें होती हैं उसी को चरित्रवान कहा जाता है।

आदतों का चरित्र निर्माण में पूर्ण सहयोग होता है। चरित्र का निर्माण वास्तव में स्थायी भाव के कारण होता है अतएव यह एक मानसिक रूप धारण कर लेता है और व्यवहार को प्रभावित करता है। मैक्डूगल, स्थायी भाव के संगठन को ही चरित्र कहते हैं। कभी कभी मानसिक ग्रन्थियों के कारण स्थायी भाव का संगठन नहीं हो पाता है और सदैव मानसिक संघर्ष बना रहता है। 'ऐसी अवस्था में उचित चरित्र निर्माण नहीं हो सकता है। सही चरित्र निर्माण के हेतु ग्रंथियों का निवारण आवश्यक है साथ ही साथ इसके द्वारा स्थायी भाव का संगठन आवश्यक है।

चरित्र निर्माण के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि आत्म-सम्मान के स्थायी भाव के अतिरिक्त अन्य स्थायी भाव संगठित हो जायें जिससे यह मानसिक रूप धारण कर व्यवहार को नियंत्रित रखे तथा आदेश दे। ऐसी अवस्था में यदि कोई सघर्ष होगा तो व्यक्ति पूर्ण रूप से उस विचार पर संकल्प के द्वारा विजय प्राप्त करेगा और वही कार्य होगा जो आत्म सम्भव के अनुकूल हो।

चरित्र विकास की तीन श्रेणियाँ हो सकती हैं।

(१) वातावरण के द्वारा निर्माण (२) दण्ड तथा पुरस्कार के द्वारा (३) आदर्श से प्रेरित होकर

[४२]

# वंशानुक्रम तथा वातावरण

## वंशानुक्रम तथा वातावरण का प्रभाव

क्या मनुष्य वही है जो वंशानुक्रम उसे बनाता है या जो वातावरण बनाता है अथवा क्या वह स्वयं ही अपने आपको बनाता है? जीवन के आरम्भ मे प्रत्येक व्यक्ति एक उत्पादक बीज कोष है जो दो बीज कोषों, एक माता तथा दूसरा पिता, की संयुक्ति के द्वारा बनता है। निश्चय ही यह वंशानुक्रम का फल है किन्तु यदि वातावरण अनुकूल न मिले तो उसकी मृत्यु हो जायगी या वह बेकार हो जायगा। किन्तु यदि वातावरण उसे उत्तेजित करे तो वह अपनी वंशानुक्रम की प्रकृति के आधार पर प्रतिक्रिया करेगा और इसी के कारण विकसित होगा। वह सीधे न केवल वंशानुक्रम का प्राणी, न ही वातावरण का प्राणी है।वह स्वयं अपने कार्यों का फल बनता है। यह रीति उसके विकास में आने वाले प्रत्येक पग पर दोहराई जाती है। प्रत्येक पग व्यक्ति की वातावरण सम्बन्धित प्रतिक्रिया है। इस कारण व्यक्ति को प्रत्येक पग पर पहले से भिन्न परिवर्तित अवस्था में छोड़ता है। वंशानुक्रम कभी भी पीछे छोड़ नहीं दिया जाता किन्तु व्यक्ति में वह विकसित अवस्था में ले लिया जाता है।

वंशानुक्रम :

यह कहना एक साधारण अनुभव है कि बालक मानसिक तथा शारीरिक गुण माता पिता से प्राप्त करते हैं। साधारण मनुष्य जो अनपढ़ है वह भी अच्छी नस्ल तथा वंशानुक्रम को समझता है तथा उस पर विश्वास करता है। वंशाक्रनुम के तत्वों के वर्णन के समय बताया जाता है कि समान समान ही उत्पन्न करता है या वश उत्पत्ति कर्ता के समान चलता है। बिल्ली के बच्चे भी बिल्ली ही होते हैं तथा मनुष्य के बच्चे मनुष्य। यह स्मरण करने की आवश्यकता है कि वंशानुक्रम केवल समानता ही नही लाता वरन् समानता तथा असमानता दोनों ही का मिश्रण उसमें रहता है। भिन्नता वंशानुक्रम से वैसे ही मिलती है जैसे समानता "वंशानुक्रम जन्मजात व्यक्तिगत गुणों का योग है।"

हम अपने माता पिता से शरीर नहीं प्राप्त करते किन्तु केवल एक कीटाणु। जिससे कुत्ते को जीवन मिलता है प्रायः मनुष्य के कीटाणु के समान ही होता है फिर भी एक कुत्ता होता है दूसरा मनुष्य। यह ऐसा क्यों है ?

(१) बाई जयमैन ने अपने सिद्धान्त बीजकोष की निरंतरता के नियम समझाने की चेष्टा की, किन्तु गाल्टन महाशय ने यह बताया कि बालक एक प्रकार से माता पिता के ही समान नहीं होता परन्तु अपने पूर्वजों से भी समानता रखता है।

कहा जा चुका है शरीर बीज कोष से कोषों के गुणों से बढ़ता है अर्थात स्त्री के अंडो से, जो उत्पादक बन जाता है। इस अवस्था में वहुत पहले कुछ कोष पृथक कर दिए जाते हैं जो अपनी वास्तविक

अवस्था में रहते हैं और सन्तानोत्पत्ति कोष नये व्यक्ति में बन जाते हैं जिन में से एक पुनः दूसरे मनुष्य के विकास आरम्भ का मौका हो सकता है। ये सन्तानोत्पत्ति कोष शरीर के किताब में कोई भाग नहीं लेते हैं तथा निरंतर वंशज के उत्पन्न करने वाले नहीं होते किन्तु बीज कोष के रक्षक स्वरूप हैं जो अपने वंशजों को उत्तराधिकार रूप में दे देते हैं जिससे वे अपनी सन्तान को उसी तरह देते जायं।

यह सिद्धान्त पूर्ण रूप से वंशानुक्रम को स्पष्ट नहीं करता है।

क्रम विकास Evolution :

थोड़े शब्दों में क्रम विकास का अर्थ है कि भिन्न भिन्न प्राणी एक ही पूर्वज से उत्पन्न हुए हैं तथा उच्च श्रेणी के प्राणी क्रमशः नीची श्रेणी के प्राणियों से क्रम से विकसित हुए है। इस क्रम विकास की क्रिया नियमानुसार है।

क्रम विकास के सिद्धान्त साधारणतया माने जाते हैं किन्तु उसके विकास की रीति के दो मतभेद हैं। जीवित प्राणियों तथा वातावरण के आपस के प्रभाव द्वारा इसका यथार्थ समझने की चेष्टा में भी एक मत प्रकट किया जाता है किन्तु प्राणी शास्त्र वैज्ञानिक दोनों की प्रमुखता पर पृथक पृथक बल देते हैं। इनके दो प्रमुख नाम लामार्क तथा डारविन के लिये जाते हैं।

लामार्क :

लामार्क जीवित प्राणी की क्रिया का वर्णन मुख्य रूप से करते हैं और इसके आधार पर सरल प्राकृतिक वर्णन करते हैं। उनका कहना है कि प्राणी में अपनी आवश्यकताओं की पूर्त्ति करने की

अतिरिक्त प्रेरणा होती है इसके कारण वह अपने को वातावरण के अनुकूल बना लेता है तथा इस हेतु वह अपने शरीर की बनावट का भी परिवर्तन कर लेता है। ऐसे परिवर्तन विशेषकर किसी अंग का प्रयोग या गलत प्रयोग सन्तान को समर्पित किए जाते हैं फिर वह उस परिवर्तन में उन्नति करते चले जाते हैं। इस प्रकार पुराने से नई जाति उत्पन्न होती रहती है। जैसे ज़िराफ और उनकी लम्बी गर्दन। इसमें दो बातें मानी जाती हैं (१) आंतरिक प्रेरणा की वास्तविकता (२) अर्जित परिवर्तन सन्तान को समर्पित होते हैं।

डारविन :

क्रम विकास सिद्धान्त की स्थापना का वास्तविक श्रेय डारविन महाशय को है। उन्होंने प्राकृतिक चुनाव के सिद्धान्त का प्रचार किया। उनके सिद्धान्त में अस्तित्व के संघर्ष तथा योग्य प्राणी का जीवित रहना है। जीवित रहने के लिए प्राणी को एक दूसरे से अधिक योग्य होना है क्योंकि जन्म जात भिन्नता के कारण प्रत्येक व्यक्ति में व्यक्तिगत भिन्नता होती है। डारविन ने संयोग परिवर्तन तथा आकस्मिक परिवर्तन को भी मान्यता दी है।

विरोधी सिद्धान्तों का अध्ययन करते हुए हम यह देखते हैं, कि डारविन का क्रम विकास सृष्टि से मन का बहिष्कार कर देता है। यह मनुष्य की शक्ति को, जिससे वह स्वयं को संभालता है, अंगीकार नहीं करता। मनुष्य अपने वातावरण का दास है किन्तु हम जानते हैं कि यह सत्य नहीं है, क्योंकि मनुष्य न केवल वातावरण के अनुकूल बनता है परन्तु वातावरण को भी अपने अनुकूल बना लेता है। जीवित रहने के लिए योग्यता ही केवल सर्व श्रेष्ठ

सिद्धान्त नहीं बन सकती जिसे हम अपने चिकित्सालयों तथा विश्राम गृहों में देखते हैं।

लामार्क का सिद्धान्त है कि जीवित रहने की इच्छा इस रीति में विशेष विषय है अर्थात् मूल शक्ति (Horme) आदत में परिवर्तन लाती है इस लिए बनावट में भी परिवर्तन आता है जो कि क्रम विकास का विषय है और यही हमारी आवश्यकता है।

शैक्षिक आधार पर हमें यह परीक्षा करनी है कि अर्जित परिवर्तन सन्तान में स्थानान्तरित होते हैं कि नहीं।

इस विवाद में आधुनिक समर्थन यह है कि अर्जित आदते किसी न किसी मात्रा में स्थानान्तिरत चरित्र होती हैं। जीवन के आरम्भ में शरीर जो आदत आर्जित की जाती है उसमें लगे रहने से यह की बनावट में परिवर्तन लाती है। जैसे लोहार की संतान को यदि उसी उत्तेजना के समक्ष डाला जाय तो वह उस काम को अपने माता पिता की अपेक्षा कम समय में ही सीख लेगा और उनकी बनावट परिवर्तन में बढ़ती होगी।

मैक्डुगल महाशय ने चूहों पर परीक्षण किया। चूहों को एक बर्तन में रखा जिसमें दो द्वार थे। एक में बिजली का शाक लगता था दूसरे में नहीं। यह इस बात का समर्थन करता है कि प्रारम्भ में १६५ गल्तियाँ थीं किन्तु २३ वें वंश में केवल २५ गल्तियाँ ही शेष रहीं।

वातावरण :

वातवारण के अन्तर्गत वह प्रत्येक प्रभाव आता है जो जीवन में मनुष्य को जीवन के प्रारम्भ से प्रभावित करता है। मनुष्य की

पौष्टिकता उसके आस पास के कीटाणु, बीमारी के कीटाणु जो जन्म के पूर्व तथा पश्चात् प्रभाव डालते हैं, दुर्घटना, शिक्षा, अनुभव आदि सब वातावरण के अन्तर्गत है। वातावरण बाह्य प्रभाव तथा क्रम विकास आन्तरिक प्रभाव, है।

कितने ही तत्व जो क्रम विकास के समझे जाते हैं परीक्षण में वातावरण के अन्तर्गत आते है। जैसे सामाजिक वंशानुक्रम।

वातावरण अधिकतर उत्पत्ति शक्ति के समान कार्य नहीं करता किन्तु प्रेरक तथा चुनने की शक्ति की तरह कार्य करता है। हम प्रकृति के संयोग को इस प्रकार व्यवस्थित कर सकते हैं कि जो कार्य उचित हों उसके लिए पर्याप्त उत्तेजना व्यवस्थित करें तथा जो उचित न हों उनको प्रकट होने का अवसर न दें। जब हम अफ्रीका के असभ्य निवासियों तथा एक सभ्य व्यक्ति के वास्तविक जीवन के अन्तर का अध्ययन करते हैं तो वातावरण के प्रचंड प्रभाव को उसकी जाति के उत्तेजक तथा असभ्य चुनाव की शक्ति को देखकर चकित रह जाते हैं।

दोनों का प्रभाव

वंशानुक्रम तथा वातावरण दोनों के संयुक्त प्रभाव से विकास तथा बढ़ाव होता है। बढ़ाव केवल जन्मजात शक्तियों के विकास से ही नहीं होता है और न ही केवल बाह्य शक्तियों का एक अशक्त वस्तु पर प्रभाव डालने से। यह दो तत्वों के पारस्परिक कार्य से सभव है। एक फूल का बीज बिना मिट्टी के जन्म नहीं ले सकता। किसी पौधे या मानव बीज के बढ़ने के लिए सदैव वातावरण से उत्तेजना तथा अवलम्ब की आवश्यकता

होती है। बंशानुक्रम के द्वारा दिशा तथा उन्नति की सीमा निर्धारित होती है और वातावरण के द्वारा सहारा तथा बढ़ाव के लिए कुछ अंशों में परिवर्तन होता है। बंशानुक्रम तथा वातावरण विभिन्न व्यक्तियों को स्तर पर लाने के लिए पारस्परिक त्रुटियों की पूर्ति करते हैं।

शिक्षा में उपयोग :—

हर्बट स्पेन्सर कहते हैं कि मस्तिष्क का शरीर के समान एक पूर्व निर्धारित मार्ग है। एक मार्ग जो कुछ अंशों में जाति के ऐतिहासिक भूत से निर्णय किया जाता है। बालक को जाति की तरह सीखना है।

"The education of the child must accord both in mode and arrangement with the education of mankind considered historically"

Nun says," The child is not some things to be moulded in one case by education, in another by heredity ."

उनका कहना है कि विकास की रीति में मुख्य विषय बालक ही है। वह अपनी इच्छानुसार वंशानुक्रम की देन तथा शैक्षिक अवसरों का उपयोग करेगा।

अर्जित परिवर्तनों के स्थानान्तरण के विषय में हम यह आशा पूर्वक कह सकते हैं कि एक पीढ़ी की आदत दूसरी पीढ़ी के द्वारा शीघ्रता से सीखी जा सकती है और किसी प्रकार का विरोध क्रमशः समाप्त हो जायगा। हमारा यह प्रमुख उत्तरदायित्व है कि हम यह देखें कि अर्जित आदत उत्तम है।

शिक्षा में व्यक्तिगत भिन्नता की ओर ध्यान देना परमावश्यक है। शिक्षक इस भिन्नता को मिटा नहीं सकता। मैक्डुगल कहते हैं कि मनुष्यों में उनकी जन्मजात योग्यता को देखते हुये बहुत भिन्नता है। अतएव प्रत्येक बालक को उसकी रुचि तथा स्वभाव के अनुसार शिक्षा देना है। शिक्षा का कर्तव्य है कि यह देखा जाय कि जो कुछ भी सम्भावित योग्यता जिस तरह भी वर्तमान है उसका नाश न हो।

एक पीढ़ी में शिक्षा व्यक्तिगत जीवन को प्रभावित करती है। जब उनके संतान होती है तो बीज कोष मे उसकी संस्कृति नहीं चली जाती। यह कहा जाता है कि माता पिता के विशेष गुण तो संतान में प्रकाशित होते हैं वह बंशानुक्रम के कारण नहीं वरन् माता पिता के साथ रहने के कारण होते हैं। यह वंशानुक्रम के समान प्रतीत होता है इस लिए इसे सामाजिक वंशानुक्रम कहते है। सामाजिक वंशानुक्रम एक प्रकार का शैक्षाणिक वातावरण है जिसमें संस्कृति नियम, परम्परा, तथा ज्ञान, जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को दी जाती, है आदि सम्मिलित हैं।

———

[४३]

# स्मृति

जब मस्तिष्क इस प्रकार के कार्य करता है जिससे वह अपनी क्रिया से ग्रहीत विचार अंकित करे, धारण करे तथा प्रत्याह्वान करे तो यह स्मृति के अन्तर्गत आता है। इसकी तीन प्रत्यक्ष स्थितियां या अंग हैं।

(१) समझ Apprehension

(२) धारण Retention मस्तिष्क, स्वास्थ्य रुचि तथा चिन्तन पर निर्भर करता है।

(३) प्रत्याह्वान Recall

(१) प्रतिमा Image के द्वारा अनुभव मस्तिष्क में एकत्रित किए जाते हैं जैसे नारंगी—गोल, पीली, सुगंध, स्वाद आदि इस प्रकार नारंगी की प्रतिमा होती है। यह प्रतिमा एक मानसिक चित्र है।

(२) स्मृति में दूसरा तत्व साहचार्य Association है। पहिले यह विचार था कि स्मृति एक शक्ति होती है किन्तु वास्तविकता यह नहीं है। यह केवल विचारों का साहचर्य भाग है। उत्ताम स्मृति का यही गुप्त भेद है। विचारों का साहचर्य वह शक्ति है जिसमें विभिन्न प्रकार के विचार आपस में मिलते है।

Janes Says" We have no general memory but only memories for particular things in so far as such things are formed into associated groups in our minds."

## साहचर्य का नियम

(अ) सान्निध्य का नियम Low of Contiguity :-

स्थान तथा समय में जो एक दूसरे के समीप हैं उनमें से एक के याद करने में दूसरा भी स्मृति में आ जाता है। समकालिक अनुभव तथा एक के बाद दूसरा आपस में मिल जाते हैं और एक साहचर्य बन जाता है।

(ब) समानता का नियम Law of Similarity :-

समान अनुभव आपस में साहचर्य हो जाते हैं जिस से एक के द्वारा दूसरे का स्मरण हो जाता है।

इसके अन्तर्गत वैपरीत्य का नियम भी आता है। जब दो विचार आपस में एक दूसरे के विपरीत हैं तो एक की स्मृति दूसरे को भी सामने ला देती है। स्मृति की उपयोगिता इस बात में है कि वह भूत अनुभवों को स्मरण रखती जिससे वर्तमान उद्देश्य में सहायता प्राप्त होती है।

साहचर्य स्थापित करने की दशायें तथा प्रत्याह्वान में सहायक,

(१) नवीनता Recency तात्कालिक घटनाये अधिक याद रहती हैं। घटना जितनी नवीन होगी उतनी अधिक याद रहेगी।

(२) पुनरावृत्ति Frequency जिस कार्य को बार बार दुहरा लिया जाता है वह उतना ही अधिक याद रहता है। जितनी बार काम को किया जाय उतना ही भली भाँति याद होता है।

(३) प्राथमिकता Primacy जिस व्यक्ति या वस्तु पर ध्यान देने में प्राथमिकता दी जाय वही अधिक याद रहता है। जिस वस्तु का प्रथम प्रभाव पड़ता है उसकी स्मृति तीव्र होती है।

(४) स्पष्टता Vividness जो बात समझ में आ जाय या स्पष्ट हो वह शीघ्र याद आती है।

(५) रुचि की प्रबलता Intrest जिस वस्तु में रुचि होगी वह शीघ्र याद होगा।

स्मृति के नियम :-

(१) लगे रहने का नियम The Law of Perseveration जो अनुभव स्पष्ट तथा समझे हुये हैं वह जाग्रत अवस्था में रहते हैं जैसे मधुर संगीत। हम चाहें या न चाहें लगे रहने का नियम चलता ही रहेगा। जब व्यक्ति सोने की चेष्टा करता है विचार उस समय भी चलते रहते हैं।

(२) साहचर्य का नियम Law of Association "Experience tend to reproduce things by virtue of their association" Myers.

स्पीयरमेन इसको स्वीकार नहीं करते। उनका कहना है स्मृति केवल एक मार्ग है जिसके द्वारा मानसिक शक्ति की दृढ़ पूँजी अपना प्रवाह दिखाती है।

(३) आदत का नियम Law of Habit को रहने के नियम तथा साहचर्य के नियम के कारण अनुभव पुनरावृत्ति करते हैं। अभ्यास तथा पुनरावृत्ति उन्हें और शक्तिशाली बना देते हैं। रटने की स्मृत्ति इसी प्रकार की है।

स्मृति में सहायक तत्व :-

(१) रुचि-वे वस्तुयें ज्यादा याद रहती हैं जो हमारे संवेग, स्थायी भाव, स्वयं स्थायी भाव से संबंधित हैं। रुचि तथा इच्छा स्मरण करने में अत्यन्त आवश्यक हैं।

सीखने की उत्तम विधियाँ :-

सीखने की विधियाँ हैं (१) खण्ड विधि (२) सम्पूर्ण विधि। खण्ड विधि में विषय को थोड़ा थोड़ा करके सीखा जाता है। सम्पूर्ण में विषय को पूरा एक साथ याद करने की चेष्टा की जाती है। बच्चों के लिए खण्ड विधि पूर्व विधि से अधिक उत्तम है।

मिश्रण विधि में दोनों के अच्छे गुण मिश्रित कर लिए जाते हैं। याद करने के विषय को सरल खण्डों में विभाजित कर लिया जाता है। पहले व दूसरे खण्ड याद करने के बाद तीसरे को याद करने से पहले सम्पूर्ण पुनः पढ़ लिया जाता है।

दूसरी मिश्रण विधि यह है कि प्रारम्भ से आरम्भ किया जाय और उसी प्रकार करते रहें जब तक कोई कठिनाई उपस्थित न हो कठिनाई पड़ने पर उसे सीखने के पश्चात् फिर आरम्भ से याद करना चाहिए जब तक दूसरी कठिनाई न मिले।

स्मरण के लिए अभ्यास के समय का उचित विभाजन होना चाहिए।

(३) पुनरावृत्ति (Revision)

(४) अर्थ युक्त ज्ञान (Meaningful Matter) समझी हुई वस्तु शीघ्र याद होगी।

(५) अभ्यास (Exercise)

(६) इन्द्रियों की सहायता ( Help of the senses ) जितनी इन्द्रियाँ एक ही समय में व्यवहार में लायी जाँयगी उतनी शीघ्रता से स्मरण शक्ति कार्य करेगी।

(७) इच्छा ( Willingness )

(८) समन्वय ( Coordinatiou ) ज्ञान का किसी वस्तु से सम्बन्ध उसकी स्मृति को तीव्र करता है।

(९) वस्तु स्थिति ( Nature of Subject Matter ) सरल वस्तु शीघ्रता से सीखी जायगी कठिन वस्तु में समय लगेगा।

(१०) वातावरण-स्मृति में वातावरण बहुत सहायक है। वातावरण के अनुकूल भावना होगी।

अच्छी स्मृति के लक्षण:—

शीघ्र याद कर सकना, देर तक याद रहना, समय पर स्मरण होना, व्यर्थ बातों को भूलना।

विस्मृति Forgetting :—

विस्मृति तत्कालिक स्मृति तथा स्थायी स्मृति में अन्तर स्पष्ट करती है। अधिक विस्मृति सीखने की प्रक्रिया के बाद होती है। आधी वस्तु सीखने के आधे घंटे बाद ही भूल जाते है। उसका २/३ भाग आठ घन्टे से लेकर ६ दिन में, ३/४ ६ दिन में तथा ४/५ एक माह में। अवनति प्रारम्भिक अवस्था में होती है। पुनरावृति शीघ्र ही होनी चाहिए।

तत्कालिक स्मृति में, लगे रहने का नियम सहायता करता है। स्थायी स्मृति मे यह सहायक नहीं, किन्तु साहचर्य आदत का पूर्ण रूपेण व्यवहार स्मृति के लिए आवश्यक है।

यह आवश्यक है कि अभ्यास का समय थोड़ा हो किन्तु विस्तृत हो। इसका कारण यह है कि थकावट कम होगी, लगे रहने की प्रक्रिया दोहरायी जायगी, साहचर्य के सम्बन्ध अधिक दृढ़ होंगे।

विस्मृति एक बहुत बड़ी कमी प्रतीत होती है किन्तु यह सत्य है कि प्रत्येक तत्व दृढ़ छाप छोड़ता है। विस्मृति आवश्यक भी है।

पहचान तथा प्रत्याह्वान :—

(१) छाप (२) छाप की धारणा (३) इच्छानुसार प्रत्याह्वान। अच्छी स्मृति के लिए वस्तु विषय में रुचि की आवश्यकता है।

पहचान में व्यक्ति जाने हुये अनुभव के प्रत्यक्षी करण से सहायता प्राप्त करता है। अभ्यास से धारण संभव है।

विस्मरण के उपाय :—

कभी कभी हम किसी बात को भूलना चाहते हैं, लेकिन ऐसा हो नहीं पाता। जितना भूलने की चेष्टा की जाय वह उतना ही स्मृति में रह जाता है। ऐसी अवस्था में जो हम विस्मृत करना चाहते हैं उसे भुलाने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए। कुछ समय पश्चात यह भुला दिया जायगा।

असाधारण भूल ( Abnormal forgetting ) कुछ भूलें असाधारण होती हैं। इनका कारण संस्कारों की निर्बलता नहीं होती और न रुचि की कमी ही होती है। स्मरण की प्रक्रिया में बाधा होती है संवेग की उत्तेजना से, संशय आने से तथा मानसिक ग्रंथि के कारण असाधारण भूल संभव है।

---

[४४]

# सीखना

जिन मूल प्रवृतियों के साथ मनुष्य जन्म लेता है वे जीवन के संघर्ष के लिए पर्याप्त नहीं होती । इसलिए व्यक्ति को कठिन परिस्थितियां तथा वातावरण में नवीन एवं सर्वोपयोक्त प्रतिक्रियाओं को सीखना पड़ता है । सीखना जन्मजात प्रवृतियों पर आधारित हैं जिसे संतोष-जनक परिस्थितियों के लिए परिवर्तित करना संभव है । इस प्रकार मनुष्य अपने जीवन में अनेक प्रतिक्रियायें सीखता है और सीखना प्रारम्भिक अवस्था में होता है ।

शिक्षा में संतोषजनक प्रतिक्रिया सामाजिक दृष्टिकोण से देखी जाती है ।

सीखने का अर्थ है संतोषजनक प्रतिक्रिया । मनुष्य प्रत्येक कार्य के द्वारा कुछ न कुछ अनुभव प्राप्त करता है जो मस्तिष्क में सुरक्षित रहते हैं और अवसर पड़ने पर उपयोगी सिद्ध होते हैं । अनुभव द्वारा इस प्रकार लाभ उठाने को ही सीखना कहते है ।

सीखना प्रत्यक्ष अर्थात अध्ययन के द्वारा तथा अप्रत्यक्ष, अनुभव के द्वारा होता है ।

सीखने के नियम–Laws of Learning

(१) परिणाम का नियम Law of Effect इसे संतोष तथा

असंतोष का नियम भी कहते हैं। जब प्रतिक्रिया का संबंध स्थिति तथा प्रतिक्रिया के मध्य संतोषजनक होता है तो यह दृढ़ हो जाता है। यदि इसके विपरीत होता है तो यह कमजोर हो जाता है।

मनुष्य तथा पशुओं में जन्मजात संतोष तथा असंतोष की भावना रहती है। जैसे पारितोषिक संतोष प्रदान करता है तो दण्ड असंतोष। शिक्षा का कर्तव्य है कि इस जन्मजात संतोष व असंतोष की भावना को अर्जित संतोष व असंतोष में परिवर्तित कर दे। यह स्थायी भाव तथा आत्मसम्मान के स्थायी भाव से संबंधित होना चाहिए।

जिन क्रियाओं में सफलता और संतोष मिलता है उनका प्रभाव गहन होता है। असंतोष से निराशा होती है।

(२) अभ्यास का नियम Law of Exercise अभ्यास से वस्तु सम्पूर्ण होती है। कार्य को बार बार करने से सीखने में सरलता होती है। बहुत सी प्रतिक्रियाओं में परिणाम का नियम तथा अभ्यास का नियम एक साथ कार्य करते हैं। हम उन्हीं वस्तुओं को बार बार करते हैं जिनसे प्रसन्नता मिलती है। निरर्थक काम को बार बार करना व्यर्थ है। बार बार कार्य को करने के लिए प्रसन्नता तथा सफलता आवश्यक है।

अभ्यास न करने से सीखा हुआ कार्य भी भूल सकते हैं। अभ्यास न करने से प्रगति भी कम हो जायगी। अभ्यास से ही दक्षता प्राप्त होती है।

(३) तत्परता का नियम Law of Readiness नाड़ी मंडल के द्वारा कभी प्रतिक्रिया होती है और कभी नहीं। जब कार्य करने के

लिए कोई तत्पर रहता है तो प्रसन्नता होती है यदि वह तत्पर नहीं रहता तो असंतोष होगा।

सीखने वाले में प्रबल इच्छा होना चाहिए। अरुचि तथा अनिच्छा सीखने में बाधक होती हैं। इच्छा तथा रुचि के साथ सीखने में तत्परता होगी।

सीखने के प्रकार :-

सीखना क्रियात्मक तथा विचारात्मक दो प्रकार का है।

(१) क्रियात्मक सीखना :-

निम्न वर्ग के प्राणी के सीखने का कार्य क्रियात्मक होता है। यह निम्न प्रकार से होता है।

(अ) प्रयत्न और भूल-Trial and Error

जन साधारण अधिकाधिक इसी विधि से सीखते हैं। एक कार्य में जब तक त्रुटियां होती रहेंगी उसे तब तक बार बार किया जायेगा जब तक उस त्रुटि का निवारण हो औरकार्य बिल्कुल सही हो जाय। और अभ्यास से ही भूल कम होगी। मनुष्यों की अपेक्षा पशुओं में इसका व्यवहार अधिक होता है। इसमें मस्तिष्क का प्रयोग कम होता है।

(ब) अनुकरण के द्वारा सीखना Learning by Imitation

बालक प्रायः दूसरों को देखकर उनका अनुकरण करता है। यह प्रयत्न व भूल द्वारा सीखने से उच्च श्रेणी का है। शिक्षा दूसरों का अनुकरण है। इस विधि में एक विशेषता यह है कि अनुकरण साधारणतया बिना लाभ हानि, अच्छाई बुराई का विचार करते

हुये कर लिया जाता है। यदि अनुकरण विचारात्मक हो तो अच्छा होगा ।

(२) विचारात्मक सीखना Learning by Insight

यह सबसे उच्च कोटि का सीखना है। इसमें बुद्धि तथा विचार का योग रहता है। इसलिए यह केवल मनुष्य वर्ग में ही संभव है। इसमें कार्य का निर्णय प्रयत्न तथा भूल के द्वारा नहीं वरन् कल्पना द्वारा किया जाता है। इस प्रकार का सीखना सर्वोत्तम है।

(अ) सम्बद्ध सहज क्रिया से सीखना Learnimg by conditioned Reflex

प्रत्येक क्रिया का एक स्वाभाविक परिणाम होता है। जैसे अच्छी खाने की वस्तु देखकर मुँह में पानी आना। यदि एक क्रिया से दूसरी क्रिया के परिणाम को जोड़ दिया जाय तो वह परिणाम बनावटी होगा।

कुत्ते को घंटी बजाकर खाना देने के समय लार का आना। तत्पश्चात् बिना खाना दिये घंटी बजाने से भी लार का आना। यहाँ भोजन की प्रतिक्रिया घंटी के साथ हुई।

इस प्रकार से सीखने में सामान्यीकरण, द्वारा जिसमें पहले अपूर्ण ज्ञान होता है, ज्ञान प्राप्त होता है। दूध का जला छाछ भी फूँक फूँक कर पीता है।

दूसरा विश्लेषण द्वारा, जिनमें सीखने वाले में विश्लेषण की दक्षता आ जाती है। अभ्यास के कारण वस्तु विशेष से परिचित हो जाता है।

इसका परिणाम स्थायी नहीं होता । यदि बार-बार घंटी बजाई जाय और खाना न दिया जाए तो कुत्ते के मुँह से लार का आना बन्द हो जायगा । इसमें परिबर्तन सरलता से संभव है ।

सीखने में उन्नति Progress in Learning

यह कई बातों पर निर्भर करता है, जैसे अभ्यास, रुचि, सीखने की रीति, अनुभव, आयु, शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य, सीखने का वातावरण, विषय की जटिलता आदि । सीखने में उन्नति सदा एक सी नहीं रहती ।

सीखने का पठार Plateau of Learning

मनोवैज्ञानिकों के कुछ प्रयोगों के द्वारा यह सिद्ध होता है कि सीखने का कार्य प्रारम्भ में तो कुछ वेग से होता है । फिर कुछ समय के लिए गति मन्द पड़ जाती है किन्तु अभ्यास करते रहने से पुनः उन्नति दिखायी देती है । इस प्रकार बीच में कुछ समय के लिए गति में जो स्थिरता आ जाती है उसे पठार कहते हैं । हर स्थिति में पठार की उपस्थिति सीखने में अवनति की सूचक नहीं होती । साधारणतया पठार की अवस्था में सीखे हुए कार्य का जमाव होता है इसलिए प्रत्यक्ष रूप में किसी प्रकार की उन्नति नहीं दिखायी पड़ती । सीखने में पठार के कई कारण हो सकते हैं । कुछ कारण इस प्रकार हैं—उद्देश्य के प्रति निराशा, अरुचि, असावधानी, थकान, सीखे हुए ज्ञान की दृढ़ता, शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य, गलत विधि को अपनाना, उन्नति बहुत मन्द आदि ।

सीखने के पठार में यह ध्यान देने योग्य है कि अभ्यास करने से फिर प्रगति होगी किन्तु एक ऐसी अवस्था भी आती है जिसके

आगे प्रगति संभव नहीं इसको शारीरिक व मानसिक क्षमता की सीमा कहते हैं। व्यक्तियों की शारीरिक तथा मानसिक क्षमता भिन्न-भिन्न होती हैं।

## क्रियात्मक सीखने की बिधियाँ

(१) अनायास प्रतिक्रिया का होना (Random Respones) :—

बालक तथा प्रौढ़ अनायास ही जब कुछ कर लेते हैं तो उसके द्वारा भी कुछ कुछ सीखते हैं।

(२. व्यर्थ प्रतिक्रिया की अवल्हेना (Elimination of wrong Responses :—

भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में प्राणी उन प्रतिक्रियाओं को त्याग देता है जिससे असंतोष होता है और उन्हे बार बार करता है जिससे संतोष होता है।

(३) उत्तेजना मे परिवर्तन (Substitution of stimulous) :—

किसी भी प्रतिक्रिया के लिए एक विशेष उत्तेजना की आवश्यकता होती है किन्तु एक विशेष उत्तेजना के स्थान पर दूसरी, तीसरी उत्तेजना भी कार्य कर सकती है

मिठाई को देखने से मुंह में पानी आता है। मिठाई के नाममात्र से मुंह में पानी आ सकता है। जिस डिब्बे में मिठाई रखी जाती है यदि खाली ही बन्द है और यदि सामने लाया जाय तो भी मुंह में पानी आ जायगा।

(४) प्रतिक्रिया का परिवर्तन (Substitution of Responses) :—

व्यक्ति जो कुछ भी सीखता है वह प्रतिक्रियाओं का ही फल होता है।

आग से जल जाने पर भाप में उसी समान वस्तु को वह सावधानी से छूयेगा। कई प्रतिक्रियाओं के पश्चात हम अनुभव से लाभ उठाकर सही प्रतिक्रिया करते हैं और पुनः करने में सरलता भी होती है।

(५) प्रतिक्रियाओं का एकीकरण (Combination of Responses):—

बालक सरल से जटिल प्रतिक्रिया की ओर बढ़ता है तथा क्रमशः इन प्रतिक्रियाओं का एकीकरण होता है। इसी कारण इस जटिल जीवन में इन प्रतिक्रियाओं के एकीकरण का प्रत्यक्ष प्रयोग दृष्टिगत होता है। किसी कार्य के करने में प्रारम्भ में कठिनाई का अनुभव होता है किन्तु अभ्यास से वही सरल हो जाता है। प्रतिक्रियाओं के एकीकरण से कार्य में सरलता आ जाती है।

सीखना तथा कौशल का स्थानान्तरण (Transfer of Learning and Skills) :—

पुराने विचारों के अनुसार स्मृति, सोच-विचार, तर्क कौशल, ध्यान, आज्ञा पालन आदि मस्तिस्क की शक्तियां समझी जाती थीं जिसमें बढ़ाना व घटाना संभव समझा जाता था जैसे किसी चीज़ में कुछ जोड़ दिया जाये या फिर निकाल लिया जाये।

यह सही है कि सीखने तथा कौशल का स्थानान्तरण हो सकता हैं किन्तु पुराने विचारों के अनुसार असम्भव है।

साइकिल चलाने से जो पैरों में शक्ति आती हैं उससे पहाड़ पर चढ़ने का काम लिया जा सकता है। उसी तरह नाव खेने से हाथों में जो शक्ति आती है उससे जिमनास्टिक में उपयोग किया जा सकता है। जहां मांस पेशियों में शक्ति का प्रश्न है वहां जो शक्ति एक अवस्था में अर्जित की गई है वह दूसरी अवस्था में प्रयोग में

लायी जा सकती है। यह कौशल की गति के लिए सत्य नहीं है फिर भी इस में कौशल आ ही जाता है। शक्ति अर्जित प्रतिक्रियाओं के बिना, जिनमें उसका प्रयोग किया जा सकता है,व्यर्थ है।

स्थानान्तर अपने आप नहीं होता। किसी अनुभव में जितना अधिक अर्थ होगा उससे उतना ही कुछ लिया जा सकना संभव है।

खेल में ईमानदारी की भावना को इस प्रकार सामान्यीकरण व्याप्त किया जा सकता है कि व्यक्ति प्रत्येक अवस्था में ईमानदार रहे। किन्तु यह तब तक सम्भव नहीं होगा जब तक इस नयी स्थिति में जान बूझ कर पुराने अनुभव के अनुसार काम न किया जाये।

सीखना जीतना सार्थक होगा, स्थानान्तरण उतना ही सम्भव। जब आवश्यक संबन्ध तथा विचार सीख लिए जाते हैं और सामान्यी करण व्याप्त हो जाता है तब यह जीवन पर्यन्त प्रयोग में लाया जा सकता है।

नियंत्रित प्रतिक्रिया के दृढ़ रखने के लिये यह आवश्यक है कि उसे सदा सहारा दिया जाय क्योंकि जब कभी स्थानान्तरण होता हैं तो परिणाम यह निश्चित करता है कि उसे सहारे की आवश्यकता है या उसे समाप्त कर देना है।

स्थानान्तरण को ध्यान में रखते हुये विलियन का कार्य महत्त्व-पूर्ण है विशेष जिमनास्टि के कार्य में। जैसे आसन के प्रशिक्षण में सीधे खड़े होने के लिए झुकने की प्रवृत्ति का विलियन करना है।

विलियन प्राणी का एक साधारण कार्य है विशेष कर आन्तरिक अंगों में।

अस्थिपन्जर के मांस पेशियों में विलियन सीधे प्रयोग होता है। जब किसी मांस पेशी का विलियन होता है तो वह कार्य में अधिक तत्पर हो जाती है। इससे यह प्रमाणित होता है कि विलियम कार्य में बाधक नहीं वरन् इससे भिन्न है। वास्तव में विलियन कार्य के लिए तैयारी करना है। यह परिवर्तन केन्द्र से संबन्धित है इसलिए मांस पेशियों से अधिक नाड़ी तन्तु में महत्व पूर्ण परिवर्तन दिखाता है।

विलियन को शरीर में गति की तैयारी समझना चाहिए। इस का प्रभाव व्यक्ति में गति की योग्यता को बढ़ाना है। यदि इसे कार्य से रोक दिया जाय तो हानि होगी।

शारीरिक शिक्षण में सीखन Learning in phsyical education.

शारीरिक शिक्षण तथा दूसरी प्रकार की शिक्षा में कोई विशेष मौलिक भेद नहीं है। सभी शिक्षा का आधार मनोविज्ञान है तथा वही नियम सर्वत्र व्यवहार में आते हैं। मनोवैज्ञानिक आधार भी एक ही है। यहां पर कुछ विशेष बातें हैं जो शारीरिक शिक्षण के दृष्टि कोण से उपयोगी हैं।

सीखने के लिए अनुभव की आवश्यकता है। उत्तेजनाओं के प्रति, प्रतिक्रिया करने से व्यक्ति सीखता है तथा अनुभव प्राप्त करता है। शारीरिक शिक्षण में इस बात पर ज़ोर देने की आवश्यकता है कि हमारा सीखना विभिन्न प्रकार की प्रतिक्रिया करना है। एक आती हुई गेन्द के प्रति प्रतिक्रिया, एक तेज़ी से भेजा हुआ टेनिस का गेंद तथा इसी प्रकार की अगणित उत्तेजनाँए। शारीरिक शिक्षण में सीखना प्रतिक्रिया करने का प्रकार है। शारीरिक शिक्षा

में प्रतिदिन बालकों को अपनी प्रतिक्रिया में उन्नति करना चाहिए।

हम साइनाप्स की विशेषता जान चुके हैं। ज्ञानात्मक स्नायु के देने वाले सिरे तथा गति वाही तन्तु के ग्रहण करने वाले की संयुक्ति को साइनाप्स कहते हैं। इसी स्थान पर स्नायु प्रवाह ज्ञानात्मक स्नायु के गतिवाही तन्तु परकूद कर जा सकती है। यह मस्तिष्क तथा मेरुदण्ड में स्थित हैं और उनसे होकर स्नायु प्रवाह एक ही ओर गतिवाही हो सकती हैं।

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि यदि यह साइनाप्स की संयुक्ति बार बार की जाए और प्रतिक्रिया संतोष के साथ हो तो ये स्नायु के सिरे आपस में समीप आते जायेंगे, स्नायु प्रवाह के प्रवेश में बाधा कम हो जायगी और संयुक्ति सरलता से होगी। किसी शारीरिक कार्य को बार बार सही रीति से करने में यदि संतोष हो तो वह कार्य सरलता से किया जाता है।

मनोवैज्ञानिक प्रयोगों से यह प्रमाणित है कि यदि कोई वास्तविक रूप में यह मान ले कि शक्ति शाली है और किसी कार्य को कर सकता है तो वह साधारण स्थितियों में भी अधिक शक्ति दिखायेगा। प्रत्येक कार्य के लिए विश्वास होना आश्वयक है कि वह किसी भी कार्य को ठीक प्रकार से कर लेगा।

मानसिक प्रयत्न और भूल के द्वारा सीखने में शारीरिक शिक्षण में लाभ होगा। इसके द्वारा खेलने वाले नयी-नयी स्थितियों को समझते हैं। साथ ही साथ उसमें कौन सी प्रतिक्रिया होगी इसका भी अनुमान लग जाता है। आदेशित निरीक्षण के द्वारा यह और लाभदायक प्रमाणित होगा। शारीरिक शिक्षा में प्रतिक्रिया योग

का विकास अत्यन्त आवश्यक है। किसी दी हुई उत्तेजना के उत्तर में यदि एक प्रतिक्रिया केवल की जाय तो उतना लाभ नहीं होगा जितना कि प्रतिक्रियाओं के योग से होगा।

जटिल कौशल अनेकों प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप हैं। शारीरिक शिक्षण में कौशल के करने में या उसकी गति में सही समय पर करने की कुशलता अनिवार्य है। गति यदि सही समय से तथा सही समय पर नहीं की जायगी तो उसमें पूर्णता प्राप्त नहीं होगी।

शारीरिक कौशल में सही समय पर कूदना, आरम्भ करना, पुश अप करना, टेक आफ लेना इत्यादि बहुत ही आवश्यक है। अभ्यास के द्वारा जो प्रतिक्रियाएँ सहायता नहीं देतीं उनके निवारण से यह संभव हो सकता है। सही प्रतिक्रियाओं का प्रयोग तथा गलत प्रतिक्रियाओं का निवारण ही इसका नियम है।

गतिवाही कौशल का विकास (Development of motor skills.

(१) विषयी को सीखने की रुचि तथा तैयारी हो।
(२) साफ नमूना जो समझ में आ जाय उसका प्रदर्शन।
(३) कौशल का विश्लेषण तथा शिक्षक का समझाना।
(४) विषयी के प्रदर्शन में निरीक्षण, अध्ययन तर्क के पश्चात अभ्यास।
(५) अभ्यास के समय शिक्षक के निर्देश तथा सहायना।
(६) सही प्रकार का अभ्यास।
(७) सही करने का अभ्यास।
(८) अपने आप कार्य हो इसका अभ्यास।
(९) सरलता तथा सुगमता से कार्य करना।

(१०) ठीक रीति तथा तेजी पर जोर। ठीक होना पहले आवश्यक है।

(११) अभ्यास के समय का विभाजन ऐसे हो कि थोड़े समय में ज्यादा से ज्यादा सीखा जाय।

(१२) उपयुक्त वस्तु तथा साधन का प्रयोग।

(१३) आत्मलोचन का प्रचार।

(१४) पूर्णता प्राप्त करने के लिए अभ्यास।

(१५) अभ्यास तथा प्राप्ति में संतोष।

(१६) कार्य के अभ्यास में रुचि।

(१७) कार्य का अभ्यास उसी प्रकार करना जिस प्रकार उस का व्यवहार किया जाय।

(१८) प्रदर्शन साफ हो।

(१९) पूर्ण ध्यान की आवश्यकता।

(२०) सही, तीव्रता तथा स्वच्छता के साथ कार्य करना।

———

[४५]

# विकास की अवस्थायें तथा विशेषता

प्रत्येक व्यक्ति इस बात का अनुभव करता है कि शैशवाकाल से अन्त तक विकास की अवस्थएँ हैं जिन्हें हम पार करते हैं तथा प्रत्येक अवस्था के विशेष गुण हैं। अवस्थाओं के वर्ग तथा आयु सीमा में कुछ मत भेद है।

वास्तव में इसकी विशेष आयु या समय निश्चित नहीं है। विकास क्रम से लगातार होता है। बच्चा बाल्यावस्था में तथा किशोर, युवावस्था में बिना निश्चित समय जाने ही प्रवेश करता है। कभी-कभी नई शक्तियां अचानक आती हैं परन्तु यह नियम है कि वह क्रम से ही परिपक्व होते हैं। बालकों में व्यक्तिगत भेद पाए जाते हैं। कुछ बालक किसी एक अवस्था में अन्य की अपेक्षा जल्दी आ जाते हैं और उसे पार भी कर लेते हैं।

डा० अर्नेस्ट जोनस ने मानव जीवन को चार निश्चित भागों में विभाजित किया है।

| | | |
|---|---|---|
| (१) शैशवावस्था | Infancy | जन्म से ५ वर्ष तक |
| (२) बाल्यावस्था | Childhood | ५ वर्ष से १२ वर्ष तक |
| (३) किशोरावस्था | Adolescence | १२ से १८ वर्ष तक |
| (४) युवावस्था | Maturity | १८ से आगे |

(१) शैशवावस्था (Infancy) जन्म से ५ वर्ष तक :

(१) इस अवस्था में बच्चा सीधे मूल प्रवृत्तियों के द्वारा प्रेरित होता है। उनकी वह तत्कालिक पूर्ति भी चाहता है। प्रत्येक उत्तेजना असम्बन्ध हो स्वतंत्रता से कार्य करती है। मूल प्रवृत्तियों का परिवर्तन केवल संतोष व असंतोष भावों के द्वारा होता हैं। जला हुआ बच्चा सदैव आग से डरेगा। आगे चलकर समाजिक वातावरण फिर इसी बात को पारितोषक तथा दण्ड के द्वारा स्पष्ट करता है।

(२) बच्चे में निर्भरता की भावना होती है। यह केवल शारीरिक सुखों के लिए ही नहीं होती वरन् उसके संवेगों की आवश्यकता के लिए भी। उसकी प्रकृति यह दावा करती है कि उसके प्रति प्रेम प्रदर्शित किया जाय।

(३) कल्पना के पूर्ण शैशवाकाल तारंगिक कल्पनाओं की आयु है। इस समय आत्म प्रदर्शन प्राप्ति की भावना किसी ज्ञात कार्य को बार बार 'दोहराने' में दृष्टिगत होती है। बालक निरन्तर व्यक्तियों तथा परिस्थितियों से प्रभावित होता रहता है जो आत्म शून्यता तथा भय कि भावना प्रदान करते हैं। वह खेल में व्यक्ति तथा स्थिति का नाटक करता है। वह विचारों की दुनियाँ में रहता है। वास्तविकता तथा कल्पना में स्पष्ट अन्तर नहीं कर पाता।

(४) संवेग, स्थायी भाव में संगठित होना आरम्भ होते हैं सर्वप्रथम हैं स्वयं के शरीर से प्रेम। शैशवाकाल शारीरिक अर्थ में आत्म प्रेम की आयु है। इसके पश्चात् मां के विचार पर स्थायी भाव बनाता है। फ्रायड के अनुसार बालक का पिता भी स्थायी भाव का कारण हो सकता है क्योंकि वह भी उसके वातावरण मे

संबधित है । किन्तु अद्भुत बात तो यह है कि मां का स्थायी भाव प्रेम का है और लड़के के लिए पिता का घृणा ।

वास्तव में बच्चे की पहली भावना अपने माता-पिता, भाई-बहन की ओर बहुत महत्ता रखती है क्योंकि इसी के द्वारा उसका भावी संवेगात्मक जीवन का दृष्टि कोण दूसरों के प्रति कैसा होगा इसका निर्धारण होता है ।

यह प्रथम सीढ़ी अनैतिक कहलाती है । क्योंकि विवेकयुक्त चुनाव के लिए वे बहुत छोटे हैं । बच्चे बहुत विश्वासी होते हैं अतः उन्हे जो कहा जाये उसे मान लेते हैं ।

बाल्यावस्था (Childhood) ५ से १२ वर्ष तक :

(१) बाल्यावस्था के विकास में मानसिक विकास व शारीरिक विकास एक समान नहीं होता किन्तु वह पानी की लहरों के समान होता है ।

तीन वर्ष तक विकास तीव्रगति से होता है इसके पश्चात् एक जमाव का समय होता है । ६ से ७ वर्ष में तीव्र गति से विकास होता है जो प्रायः स्थायी होता है । यह मानसिक तथा शारीरिक स्थायी स्थापना बाल्यावस्था की अन्तिम सर्वश्रेष्ठ विशेषता है । यह ध्यान देने योग्य है कि इस आयु में बालक के पेंचदार विकास के दौर में होता है । वह कुछ हद तक वातावरण की अनुकूलता प्राप्त कर लेना है जिसे वह पुनः किशोरावस्था में खो देता है तथा युवावस्था में प्राप्त कर लेता है ।

(२) सामूहिकता की मूल प्रवृत्ति प्रबल हो जाती है वह

दूसरे बालकों के साथ समूह में रहता है। अपने ही समान दूसरे बालकों कि संगत में आत्म प्रदर्शन के लिए इसे अनिवार्य माध्यम समझता है।वह समूह की गुप्त बातें अन्य को नहीं बताता। यहां सामूहिकता की मूल प्रवृत्ति अपने वास्तविक रूप में कार्य करती है और समाजिक व्यवहार का उच्च रूप दृष्टिगत नहीं हो पाता जिसमें दूसरों की भलाई तथा आत्मबलिदान दिखाई दे।

उसका व्यहार अधिकतर समाजिक प्रशंसा की आशा में स्थिर होता है जिसका मुख्य अधिकार समूह को है।

बाल्यावस्था के अन्तिम काल की नैतिकता भी जनता के मन के द्वारा नियमित होती है जो शक्तिशाली होती है और उसमें किसी प्रकार समझौता नहीं होता। बालक में यह भावना होती है कि उसका प्रथम दायित्व समूह पर है इसलिए नेता कि आज्ञाओं का पालन वह हर मूल्य पर करने को तत्पर रहता है। इसी कारण कभी-कभी उसकी अवस्था शोचनीय हो जाती क्योंकि साथ ही साथ वह दूसरे समाजिक समूहों का सदस्य है जैसे,परिवार स्कूल समाज आदि।

(३) दस बारह वर्ष का बालक स्वभावतः ही बहयमुखी होगा। अपने मानसिक जीवन का बाह्य वस्तुओं से संबध रखता है। वह स्वयं को बाह्य खेलों में लीन कर देता है जैसे खेल कैम्पिग आदि। उसकी रुचि कार्य करने में होती है। वस्तुएं कैसे कार्य करती हैं इसको जानने के लिए वह उत्सुक रहता है इस कारण अनेक सूचनाए विभिन्न विषयों पर एकत्रित करता है।

(३) किशोरावस्था (Adolescence) १२ वर्ष से १८ वर्ष तक :—

सैद्धान्तिक रूप से किशोरावस्था जीवन के प्रथम वर्ग की पुनरा-

वृत्ति मानी जाती है। यह जीवन के विकास का द्वितीय पेंचदार घुमाव है। बालक में वह स्थिरता समाप्त हो जाती है जो उसके बाल्यावस्था के अन्तिम काल में थी। विशेषतः यह एक विकास का काल है क्योंकि इसी समय बालक स्त्री या पुरुष में विकसित होता है। सन्तानोत्पत्ति कार्य का आगमन जिससे किशोरावस्था का आरम्भ होता है, कुछ में तो शीघ्रता से आता है, कुछ में देर से। इसका कारण लिंग, जाति, जलवायु व्यक्तिगत बनावट इत्यादि होता है। साधारणतः लड़कों की परिपक्वता १३ से १४ वर्ष में, लड़कियों की १२ से १६ वर्ष में होती है।

(१) इस आयु में शारीरिक परिवर्तन बहुत तेजी से होता है। हड्डियाँ तथा मांसपेशियां बढ़ती हैं। लम्बाई तथा वजन में विकास होता है। लिंग विभिन्नता के कारण शारीरिक अंग बढ़ते हैं। जीवन में नवीन जाग्रति होती है। यह उत्तेजना तथा शक्ति में वृद्धि का समय होता है। जीव आधारित कारणों के द्वारा जीवन में रुचि के परिवर्तन की एक बड़ी समाजिक महत्ता हो जाती है। कुछ मूल प्रवृत्तियों तथा झुकावों पर, इस आयु में विशेष नियंत्रण की आवश्यकता है जिससे वे समाज द्वारा मान्य मार्गों पर कार्य करें। शिक्षकों का दायित्व इसके प्रति अत्याधिक है।

(ii) मानसिक तथा संवेगात्मक चरित्र Mental and emotional character

जीवन, सैकड़ों रीतियों से जिनकी आशा भी नहीं की जा सकती, विस्तृत होता है और उन्हीं में से किसी एक को अपना ध्येय तथा मार्ग चुन लेता है। इसमें विरोधी उत्तेजनाएँ, प्रतिरोध

तथा आश्चर्य पूर्ण रूप में पायी जाती है। इन सब के मध्य मुख्य विशेषताएँ स्पष्ट रूप से दिखायी देती हैं।

(अ) स्वयं का विस्तार Expansion of selfhood

(१) यह एक स्वतंत्रता तथा आत्मप्रदर्शन का समय है किन्तु यह बाल्यावस्था के अन्तिम काल से सर्वथा भिन्न है। यह अवलोकन शक्ति की स्वतन्त्रता तथा आत्मप्रदर्शन जिसने जीवन की वास्तविकता की खोज करना आरम्भ किया है और इस भावना से प्रेरित है जीवन से प्राप्त करना तथा जीवन को देना उसका अधिकार है। किसी प्रकार के अधिकार को वह चुनौती देता है।

(२) वह शुद्ध रूप से तथा लगन के साथ दार्शनिकता को अपनाता है। वह साधारण अनुकरण नहीं करता। वह आन्तरिक गुणों को पहचानता और मूल योग्यताओं को जानता है।

खेल के पुनरावृत्ति सिद्धान्त से यह ज्ञात होता है कि वह शैशव काल की मानसिक प्रवृत्ति की ओर अवनति करता है। उसमें निर्भरता की भावना इसी सिद्धान्त के द्वारा समझी जा सकती है।

(ब) सामाजिक मूल्यों का नवीन ज्ञान New recognition of social values

प्रथम सामूहिक प्रवृत्ति की उत्तेजनायें, सही सामाजिक व्यवहार के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। किशोरावस्था की स्वतन्त्रता एक नवीन सामाजिक ज्ञान के द्वारा, आत्मप्रदर्शन की इच्छा के कारण तथा अन्य को सहायता देने व दूसरों से सहायता पाने के कारण प्रभावित होती है।

बाल्यावस्था के अन्तिम दिनों में यह भावना होती है जब वह

स्वयं के लिए जीवित है तो उसे वास्तविकता प्राप्त होती है किन्तु अब किशोरावस्था में वह वास्तविकता को बाल्यावस्था के स्वप्नों से कहीं अधिक गहराई में देखता है।

(स) संवेगात्मक अस्थिरता Emotional instability

बाल्यावस्था में जो स्थिरता होती है वह इस समय समाप्त हो जाती है। मानसिक तथा शारीरिक रूप से वह स्वयं को विधिवत नहीं कर पाता। भावों से प्रभावित तथा जिद्दी स्वभाव का होता है। वह इस धोखे में रहता है कि वह स्वयं सभी का आकर्षण बिन्दु है अतएव वह अत्याधिक आत्मचैतन्य रहता है। वह एक तीव्र संवेगात्मक जीवन व्यतीत करता है जिसमें उचित अनुचित व्यवहार की गति उसकी तीव्र उत्तेजना तथा शिथिलता में परिवर्तित प्रतीत होती है।

यह अदभुत् स्थिति किशोरावस्था के संवेगात्मक जीवन में विधिवत होने की असमर्थता के कारण होती है।

उसका नैतिक चरित्र साधारणतः उथल-पुथल में होता है और इस विषय में निश्चित रूप से कुछ कह सकना संभव नहीं। शैशव-काल के समान ही वातावरण के अनुकूल स्वयं को बनाने का कार्य उसे प्रारम्भ करना पड़ता है।

(द) सन्तानोत्पत्ति की मूल प्रवृत्ति का विकास Development of sexual instinct

किशोरावस्था का सर्वश्रेष्ठ केन्द्रित तत्व जो प्रत्येक पहलू को प्रभावित करता है वह सन्तानोत्पत्ति लिंग के विकास के कारण है। इस समय यह मूल प्रवृत्ति सर्वाधिक कार्यशील रहती है।

इस मूलप्रवृति में परिपक्वता के कारण उसमें कुछ चिन्ता आ जाती है इसलिए बढ़ते हुए बालक को प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है और चतुराई के साथ उस पर नियन्त्रण व देखभाल का होना आवश्यक है। डा० जोन्स कहते हैं कि व्यक्ति शैशवकाल के लैंगिक इतिहास की पुनरावृत्ति है जिसका उच्च स्थान बाल्यावस्था के अन्तिम काल में था। यह विशेष तीन गतियों में चलता है—

(१) आत्मलिंगिक उत्तेजना

(२) समान लिंगिक गति—उत्तेजना पूर्ण मैत्री जो लिंगिक स्वभाव में एक लिंग के दो व्यक्तियों में हो।

(३) भिन्न लिंगिक गति—संबंध का पात्र विपरीत लिंग का व्यक्ति।

यह तीनों गतियाँ एक दूसरे के बाद भी आ सकती हैं और सरलता से एक साथ भी रह सकतीं हैं।

लिंग किशोरावस्था का सर्वप्रमुख तत्व है और इसी का ही नहीं वरन् सम्पूर्ण जीवन का ही है।

Slaughter says "Like theover flows of a great, River it irrigates and fertilizes great tracks of lifes territory"

किशोरावस्था में शिक्षा का कर्त्तव्य है उसकी शक्तियों का मार्गान्तीकरण तथा शोध करना जिससे उन शक्तियों का प्रवाह समाज के द्वारा अन्य मार्गों पर हो सके।

प्रत्येक प्रकार की सृजनात्मक योग्यता में शोध का परिणाम केन्द्रित होना चाहिए।

लिंग शिक्षा का विशेष अध्ययन विषय है जिसे छोड़ा नहीं जा सकता। लिंग शिक्षा की अनुपस्थिति के कारण अनेक युवकों को को भीषण चोट पहुंचती है।

किशोरावस्था में अपने ही शरीर को पवित्र करना तथा स्वस्थ रीतियों के द्वारा जीवन के तत्वों का अध्ययन करना है।

(४) युवावस्था Maturity १८ वर्ष से आगे।

इस समयके वाद युवावस्था आती है। रुचि फिर बाह्य प्राकृतिक संसार तथा वस्तुओं की ओर आकर्षित होती है। कल्पना के संसार का अन्त हो जाता है और वास्तविकता सामने आती है। १८ वर्ष का युवक अब संसार का पुरुष हो जाता है।

---

[४६]

# खेल

खेल कोई साधारण घटना नहीं है तथा इसे कार्य से भिन्न करना सदैव सरल नहीं होता। खेल की अनेक महत्वपूर्ण तथा रुचिकर व्याख्याएँ दी गयी हैं।

खेल एक सामान्य प्रवृत्ति है जो उच्च कोटि के समस्त चेतन प्राणियों में पायी जाती है। पशु पक्षी भी खेलते हैं। खेल मे स्वतन्त्रता तथा आनन्द का अनुभव होता है।

बालक जन्म से ही खेलता है और जैसे-जैसे जीवन विकसित होता है वह खेलता है किन्तु खेल के प्रकार भिन्न हो जाते हैं।

"Play is Joyful spontaneous creative activity in which man finds his fullest self expression" Ross.

रास महाशय का कहना है "खेल स्वेच्छा पूर्वक होने वाली स्व-संचालित एवं आनन्द पूर्ण वह क्रिया है जिसमें व्यक्ति को आत्माभिव्यक्ति का पर्याप्त अवसर मिलता है।

खेल की प्रवृत्ति के अभाव में हमारी शारीरिक और मानसिक शक्तियों का विकास सम्भव नहीं है। खेल का उद्देश्य खेल में ही निहित रहता है। इसका प्रकार व्यक्तिगत तथा सामूहिक दोनों हैं।

खेल की विशेषताएँ :—

खेल में आनन्द की उपस्थिति है। आत्म स्फूर्ति से किये गए

कार्य में आनन्द का अनुभव होता है। खेल के परिश्रम में मनुष्य आत्म स्वतन्त्रता तथा उसके द्वारा आनन्द का अनुभव करता है।

खेल में स्वेच्छा की प्रमुखता होती है। वास्तविक खेल किसी भय या वाह्य शक्ति के प्रभाव के कारण नहीं हो सकता। आनन्द, उत्साह, परिश्रम, प्रसन्नता, स्वतन्त्रता इत्यादि गुण जो खेल के हैं वे इच्छा पूर्वक खेलने ही से हो सकता है। खेलने की भावना स्वाभाविक तथा आन्तरिक है इसकी प्रेरणा भी मन से ही मिलती है।

खेल में सक्रियता:— खेल में किसी न किसी प्रकार की क्रिया अवश्य होती है। क्रिया के रूप तथा प्रकार में भिन्नता हो सकती है। खेल देखना खेल नहीं कहा जा सकता। खेल में सक्रियता से भाग लेना आवश्यक है।

खेल में आत्म प्रकाशन:— खेल में व्यक्ति इच्छानुसार कार्य करता है क्योंकि वह स्वतन्त्र है।

खेल के लक्षण :—

खेल का ध्येय खेल के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। खेल केवल खेल के लिए खेलते हैं।

खेल में विशेष वाह्य लक्ष्य न होते हुए भी नियमितता होती है। खेल में कुछ दायित्व हैं जो स्वयं बनाये जाते हैं तथा उनका पालन पूर्ण रूपेण किया जाता है।

खेल में आत्म स्फूर्ति उत्पन्न होती है। खेल स्वतन्त्रता से होता है किसी वाह्य दबाव से नहीं। खेल में प्रसन्नता तथा आनन्द प्राप्त होता है, परिश्रम जितना भी कठिन हो आनन्द आता है, थकान नहीं मालूम पड़ती, बालक के खेलों में कल्पना की प्रबलता होती है।

खेल के सिद्धान्त :—

(१) अतिरिक्त शक्ति का सिद्धान्त (Surplus energy theory .)

जर्मन कवि शिलर ने इस सिद्धांत की स्थापना की ।हरबर्ट स्पेन्सर ने इसका समर्थन किया। उनका कहना है कि खेल अतिशय शक्ति का व्यवहार है। अनेक जाति के बालकों पर कोई दायित्व न होने के कारण उनमें आवश्यकता से अधिक शक्ति एकत्रित हो जाती है, यह अतिषय शक्ति खेल में प्रयुक्त होती है।

यह एक सेफटी वा.ब के समान जिसके द्वारा भाप आवश्यकता से अधिक जमा हो जाने पर निकाल दी जाती है, समझा जाता है। यह उदाहरण पदार्थिक जगत से लिया गया है। इसके द्वारा व्यक्ति के मानसिक तथा आत्मिक शक्ति का मुलझाव नहीं होता। इसके अतिरिक्त इंजन से निकली भाप के द्वारा हम यह कभी भी सोच नहीं सकते कि इंजन को पहले से कुछ उन्नम बनायी जा सकती है किन्तु खेल के द्वारा यही होता है। खेल के द्वारा बढ़ता हुआ व्यक्ति अपनी शारीरिक, मानसिक तथा नैतिक शक्ति को प्राप्त करने में सहायता प्राप्त करता है। खेल का यह सिद्धान्त उपयुक्त नहीं है।

खेल रूप रहित शक्ति निकालने की अवस्था न होकर क्यों भिन्न-भिन्न रूप ग्रहण करता है यह सिद्धान्त इसे स्पष्ट नहीं कर पाता है। जब हम थक चुके होते हैं तो क्यों खेलते हैं।

मनोरन्जन का सिद्धान्त ( Recreation theory . )

वर्लिन के लाजरस ने इस सिद्धान्त को जन्म दिया। खेल पुर्नप्राप्ति करता है। जबव्यक्ति शारीरिक तथा मानसिक रीति से

थक जाता है तो वह मनोरन्जन या दिल बहलाव करता है। यह परिवर्तन या क्रिया थकावट की विषनाशक औषधि के समान काम करता है।

यह सिद्धान्त खेल के केवल एक पहलू को स्पष्ट करता है किन्तु वालकों तथा जानवर के बच्चों के द्वारा अनेक प्रकार के खेलों को स्पष्ट नहीं करता।

(३) पूर्व अभिनय या जीवन की तैयारी का सिद्धान्त ( The antici patory or pactice Theory.)

यह मैलब्रान्ख के द्वारा प्रस्तावित किया गया था तथा काल ग्रूस ने इसे विकसित किया।

इस सिद्धान्त से ज्ञात होता है कि केवल उच्च कोटि के चेतन प्राणी खेलते है। उच्च वर्ग के प्राणियों के बालक जन्म के समय असहाय होता है, और कुछ समय तक अपूर्ण रहते हैं। इस समय वह माता पिता पर निर्भर करते हैं। यह अपूर्णता समय वह खेल में व्यतीत करते हैं। खेल के रूप में जो व्यवहार में आते हैं उन जीवन के गम्भीर कार्यों का ज्ञान होता है तथा उन्हीं कार्यों का अभ्यास होता है। जैसे बिल्ली के बच्चे हिलती हुई वस्तु के पीछे दौड़ते हैं। कुत्ते के बच्चे आपस में लड़ते हैं।

बच्चों के रचनात्मक खेल घर, किला, गाड़ी बनाना, लड़ाई के खेल जैसे कुश्ती, लड़कियों का गुड़िया का खेल स्पष्ट करते हैं कि भविष्य की प्रौढ़ अवस्था की तैयारी हो रही है।

ग्रूस के अनुसार खेल का निचोड़ उसकी जीव वैज्ञानिक उपयोगिता में है। मूल प्रवृत्तियाँ यहाँ क्रियाशील होती है इससे पहले

कि वह जीवन के गम्भीर कार्यो में आवश्यक हो। खेल प्राणियों के भविष्य का पूर्वाभिनय करता है। इस सिद्धान्त में महत्वपूर्ण सत्यता है जैसे जन्म के समय असहायता, अपूर्णता का समय आदि।

बुद्धि या ज्ञान मूल प्रवृत्तिवों के ढाले जाने पर निर्भर है जो ज्ञान पूर्वक व्यवहार की कच्ची सामग्री है जिसके रूप धारण करने के लिए अवसर की आवश्यकता है। यह अवसर अपूर्णता के समय प्राप्त होता है।

खेल, प्रकृति की शिक्षा देने की रीति है। इस अर्थ में कि वातावरण के अनुकूल होना पड़ता है। अतएव प्रथा शिक्षा की आवश्यकता क्योंकि जन्म के समय असहायता, मूल प्रवृत्तियों को ढांचे में ढालने की संभावना, समय अपूर्णता का अवसर विधि, खेल है। यह पग प्राणी जगत में साथ ही साथ विस्तृत है।

पुनरावर्तन का सिद्धान्त Recapituation Theory

स्टेनली हाल ने उपरोक्त सिद्धान्त की समालोचना की। उन्होंने कहा कि इस विषय मे वहुत पक्षपात है, छिछला है तथा सत्य से परे है क्योंकि यह भूत पूर्ण रूपेण भुला देता है जहां कि खेल का सम्पूर्ण बीज उपस्थित है। पुनरावर्तन के सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपनी समस्त जाति के विकास के इतिहास का अपने जीवन में पुनरावर्तन करता है। बालक विभिन्न प्रकार के जो खेल खेलते है वे केवल भिन्न भिन्न मानव एतिहासिक अवस्थाओं का पुनरावर्तन है। वे पूर्व तिहासिक चारित्रिक खेल खेलते हैं जैसे छिपना, तथा ढूंढना

पीछा करना और भागना आदि। यह खेल की क्रियायें अल्प-कालीन हैं क्योंकि बालक इन्हें कुछ समय पश्चात् ही छोड़ देता हैं किन्तु इसी अवसर में इन क्रियाओं ने उसके विकास में अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य किए है।

यह दो सिद्धान्त आपस में विरोधात्मक प्रतीत होते हैं। नन महाशय कहते हैं कि यह विरोधी न होकर एक दूसरे के पूरक हैं। खेल में यह स्पष्ट हो जाता है कि वे भूत के पुनरादर्शन हैं किन्तु यह उतना ही सत्य है कि वे भविष्य के प्रौढ़ जीवन के लिए सीधे उपयोगी हैं।

(५) रेचन का सिद्धान्त Cathartic Theory

कथा सिस शब्द अरस्तू के लेखों में से लिया गया है। यह शब्द औषधि विज्ञान के अर्थ में प्रयोग किया गया था। इसके द्वारा शरीर के विकारों का नाश होता है। इसी प्रकार शोकान्तक आत्मा के दोष को दूर करता है। दुखान्त नाटक के करने से भरे हुए भावों को शान्ति मिलती है जैसे-जैसे हम स्वयं को उस नाटक में डालते हैं।

रेचन क्रिया केवल दुखान्त तक सीमित नहीं है। हम एक सर्कस के एक क्लाउन या हंसी का स्वांग करने वाले की मूर्खता पर प्रसन्न होते हैं। क्यों? क्योंकि हम यह चाहते हैं कि दूसरे उन कार्यो को करें जो सभ्यता के वशीभूत हो हम नहीं कर पाते। सभ्य व्यवहार से बहुधा तनाव उत्पन्न होता है। किसी दूसरे के बाद कार्य करना या आप में होते हुये कार्य में मानसिक रूप से भाग लेना कुछ न करने से उत्तम है।

यह उत्ताम सिद्धान्तों में से एक है। खेल क्रिया में रेचक है, यह भरी हुई मूल प्रवृत्तियों, संवेगों को जो बाल्यकाल अथवा प्रौढ़ावस्था में सीधे प्रकाशन का अवसर न पा सके उनके लिए एक विकास है। कुछ मूल प्रवृत्तियां प्रदर्शन के लिए पर्याप्त योग नहीं पातीं। खेल में मूल प्रवृत्तियों की शक्ति को शान्ति मिलती है।

ये विभिन्न सिद्धान्त एक दूसरे के विरोधी नहीं वरन् पूरक हैं। यह एक अत्यन्त जटिल घटना का विस्तृत वर्णन है जिनके द्वारा खेल के भिन्न भिन्न रूप समझाने की चेष्टा की गयी है।

जीव वैज्ञानिक उपयोगिता, पुनरावृत्ति तथा रेचन, खेल में मूल प्रवृत्तियों को कार्य करते हुए दर्शाती है।

शिक्षा सबंधी महत्ता :

खेल प्रकृति की शिक्षा विधि है। अतएव यह शिक्षा के क्रियात्मक सिद्धान्त हो सकते हैं।

(१) शिक्षा को सर्वोत्तम बढ़ौती को सुरक्षित रखना है। हाल महाशय का कहना है कि प्रकृति के ऐसा करने की विधि खेल है।

(२) शिक्षा का दूसरा मुख्य दायित्व जन्म जात शक्ति का परिवर्तन शोध तथा मार्गान्तीकरण द्वारा हो। रेचन सिद्धान्त के द्वारा खेल के ये ही परिणाम हैं।

अतएव शिक्षक इसे भुला नहीं सकते खेल द्वारा शिक्षा विधि की मान्यता उत्तारोत्तार बढ़ती जा रही है।

कार्य तथा खेल :—इनकी परिभाषा तथा अन्तर करना कठिन है। यह कहा जा सकता है, कार्य वह है जो हमें आवश्यक रूप से करना है। खेल वह है जो हमारी इच्छा पर निर्भर करता है।

उत्साही कार्य कर्त्ता स्वयं की प्राप्ति के लिए कार्य करता है। उसके लिए कार्य भी खेल हो जाता है। अनिवार्य खेल भी कार्य बन सकता है। इसमें अन्तर कार्य के द्वारा नहीं वरन् कर्त्ता के भावों के द्वारा प्रकट होता है।

वह क्रिया जो प्रसन्नता से की जाय, जो व्यक्ति की स्वयं इच्छा से की जाय, जिसमें काम वाह्य शक्ति की अनिवार्यता का अभाव हो, जहाँ मूल प्रवृत्तियों की शान्ति होती है, वही खेल होगा।

जो एक व्यक्ति के लिए खेल होगा वही दूसरे के लिए कार्य हो सकता है। यदि वह किसी दूर की प्रेरणा के कारण हो।

मनुष्य को उच्चता की प्राप्ति खेल की आत्मा से ही हुई है।

खेल द्वारा शिक्षा :

खेल में कार्य करने में आनन्द तथा प्रसन्नता होती है। यही आदर्श यदि गम्भीर कार्यों मे प्रयोग में लाया जाय तो यह खेल द्वारा शिक्षा विधि का रूप ले लेगा। खेल द्वारा शिक्षा बालक के स्कूल के गम्भीर कार्यों से अलग नही करती, वरन् इसके प्रयोग में कार्य की रीति को काम करने वाले के लिए प्रसन्न चित्त कर देता है।

बालक की शिक्षा में मान्टेसरी, बेसिक तथा किंडर गार्टन पद्धतियां खेल द्वारा शिक्षा विधि का प्रयोग करती हैं। खेल के द्वारा शिक्षा में निम्न लाभ हैं—

(१) मानसिक विकासः (२) चरित्र विकासः

इमान्दारी, आज्ञा पालन, प्रसन्नता, नेतृत्व, सहयोग सहनशीलता

(३) इन्द्रिय परिपक्वता

(३) मूल प्रवृत्तियों का परिवर्तन

(ii) आज्ञा पालन

(iii) प्रसन्नता

(iv) नेतृत्व

(v) सहयोग

(४) मूल प्रवृत्तियों का परिवर्तन

(२) खेल के प्रकार :

(१) परीक्षात्मक खेल :—Experimental play वस्तुओं का प्रयोग विना किसी ध्येय विचार के करना। शैशव काल की यह प्रमुख विशेषता है। यह सर्वथा व्यक्तिगत होता है।

(२) अंग संचालन या गति खेल Movement play इसमें गतियुक्त खेल विशेष रूप से होते हैं जिसके द्वारा भविष्य जीवन की तैयारी होती है। बालक निरर्थक दौड़ते हैं बेचैनी होती है आवाज करते हैं आदि।

यह छिपने तथा खोजने के खेल में परिवर्तित हो जाता है। इसमें अनुकरण का अश आ जाता है जैसे कूदना, झूमकर चलना, रेंगना, दोनों पैरों पर कूदना आदि।

(३) रचनात्मक खेल Canstre ctiue play : स्काउटिंग तथा कैम्पिग जिसमें तरह तरह की रचना होती है। बालक तरह तरह की वस्तुएं बनाते हैं। बालक वस्तुओं को छूना चाहते हैं और समझना चाहते हैं कभी भी इस प्रक्रिया में वह वस्तुओं को तोड़ फोड़ देते हैं किन्तु उनका विचार ध्वंसात्मक न हो कर रचनात्मक होता है।

(४) द्वन्दात्मक खेल Fighting play · प्रौढ़ावस्था के पहले ये साधारण प्रतियोगिता तथा सरल खेल के रूप में होती है।

तत्पश्चात् दलों के मध्य, व्यक्तियों में होता है।

(५) मानसिक, संवगात्मक तथा इच्छा प्रकाश करने वाले खेल।

Intellectual, Emotional and volitional play

इन खेलों मे शारीरिक व्यायाम की प्रधानता नही होती है। इन खेलों में विचारने का कार्य प्रधान रूप में संवेगों को उत्तेजित करना तथा किसी कार्य करने या न करने की शर्त होती है।

इस प्रकार का खेल केवल मानव बालक की विशेषता है। साधारणता सभी खेलों में ज्ञान, संवेग तथा इच्छा का प्रयोग होता है किन्तु इस स्थान में विशेष रूप से मानसिक व्यायाम का खेल होता है।

इसके प्रयोग की विभिन्न विधियाँ :

(i) मोन्टेसरी विधि Montessori Method
(ii) किंडरगार्टन विधि Kindergarten Method
(iii) ड्रामा के द्वारा Drawing Method
(iv) डाल्टन प्लान The Dalton plan
(vi) प्रोजेक्ट विधि project Method
(vi) स्काउटिंग तथा गर्ल्स ग्राइड Boy Scout and girls gu'de

खेल का एक विशेष रूप—असत्य तथा अदृश्य वस्तु को सत्य या दृष्टमय खेल बनाना Make Belief Play

यह केवल अनुकरण के कारण जहाँ से इस के लिये सामग्री मिलती है नहीं होती। यह अचेतन विधि के द्वारा जीवन की तैयारी के लिए होता है। रेचन पद्धति से यह समझा जा सकता है। बालक के साधारण वातावरण उस के पूर्ण मूल प्रवृत्तियो के शान्ति का क्षेत्र नहीं देती। इस खेल विधि के द्वारा उसे मूल प्रवृत्तियों की भी हुई शक्तियों के निवारण के लिये मार्ग मिल जाता है।

---

# व्यक्तित्व

व्यक्तित्व शब्द का प्रयोग अपने में भिन्न-भिन्न अर्थ रखता है। कुछ के अनुसार व्यक्तित्व चरित्र का फल होता है। कुछ इसे संतुलन शक्ति समझते हैं जिस के द्वारा बुरे तथा भले कार्य की समीक्षा होती है। व्यक्तित्व का अर्थ शरीर, मन, संवेदनायें, मूल प्रवृत्तियाँ, उद्वेग, प्रत्यक्ष ज्ञान, कल्पना, स्मृति, बुद्धि, विवेक, शरीर गठन, सौष्ठव तथा मुखाकृति से भी लिया जाता है।

वास्तव में ये व्यक्तित्व के रूप हैं। व्यक्तित्व न शरीर है, न मस्तिष्क और न व्यक्ति का बाह्य रूप। व्यक्तित्व उसके सम्पूर्ण मानसिक तथा शारीरिक व्यवहार का दर्पण है जिसके द्वारा व्यक्ति मनुष्य तथा मनुष्यत्व को लिए हुए होता है। मनुष्य की विभिन्नताओं में एकत्व स्थापन करने वाला व्यक्तित्व है।

Sir T. P. Nunn says "Personality is the characterstic integration of an individual's structure, modes of behaviour, interest, attitudes, capacities, abilities and aptitude."

व्यक्तित्व एक वह शक्ति है जिसे हम केवल समझ सकते हैं तथा इसका विकास व्यक्ति के शारीरिक तथा मानसिक रूप में देख सकते

हैं। इन्ही गुणों के सही तथा पूर्ण विकास से व्यक्तित्व का विकास होता है।

## व्यक्तित्व के तत्व Factors of Personality

(१) बुद्धि Intelligence :-

यह अर्जित तथा जन्मजात होती है। इन्हीं कारणों से एक ही वातावरण में एक ही साधन के साथ शिक्षित होने पर भी दो व्यक्ति समान नहीं होते। मनुष्य की बुद्धि में परिवर्तन लाना संभव है। मनुष्य में विशेषता यह है कि वह शिक्षित हो सकता है और अपनी शक्तियों पर बुद्धि द्वारा नियंत्रण रख सकता है। मनुष्य का ज्ञान उसकी बुद्धि पर निर्भर करता है। जन्म से कोई मन्द तथा कोई प्रखर बुद्धि का होता है। दोनों की बुद्धि तथा उपयोगिता की सम्भावना है। सही विकास के लिए ज्ञान की आवश्यकता होती है।

(२) उद्वेगात्मक जीवन Emotionality :-

उद्विग्नता अथवा भावुकता का अर्थ उस क्षमता और सहन शक्ति से होता है जिसके कारण किसी प्रकार की उत्तेजना पर शीघ्र किसी भाव को व्यक्त कर देता है। उदाहरणार्थ प्रेम, प्रसन्नता, सहानुभूति, क्रोध, घृणा, दुःख, संकोच, दया आशा, निराशा, गंभीरता, उत्तरदायित्व, विरोध, उत्साह आदि भाव प्रगट करता है। यह सभी में पाए जाते हैं तथा समयानुकूल प्रदर्शित होते हैं। इन्हीं के द्वारा उसका विकास भी होता है।

कुछ मनोवैज्ञानिकों ने भावुकता की दृष्टि से चार प्रकार के व्यक्ति बताये हैं :—

प्रफुल्ल Elated, उदास Depressed, क्रोधी Irritable, चंचल Unstable.

प्रफुल्ल व्यक्ति इनमें से श्रेष्ठ है। किन्तु इसके साथ सफलता के लिए गम्भीरता की भी आवश्यकता है।

(३) व्यक्ति का रूप Physical Appearance :-

साधारणत: व्यक्तित्व को शारीरिक रचना के अर्थ में ही प्रयुक्त किया जाता है। इसमें लम्बाई, रंग रूप, आवाज़, वस्त्र, मुखाकृति, स्वास्थ्य, सुडौलता, आदि से अर्थ होता है। शारीरिक अंग की विकृति से भी व्यक्ति के व्यक्तित्व पर विशेष प्रभाव पड़ता है। यह मानसिक ग्रन्थि के कारण भी हो सकता है।

(४) सामाजिकता Sociability :-

व्यक्तित्व का विकास समाज में समाज के द्वारा ही होता है। व्यक्तित्व निर्णय में सामाजिकता के आदर्श गुण कसौटी की भाँति है।

(५) चरित्र Character :-

चरित्र आदतों का समूह है। आदत मूल प्रवृत्तियों की सहायता से ही बनती हैं। यदि मूल प्रवृत्तियों पर नियन्त्रण है तो आदतें अच्छी होंगी अतएव चरित्र भी सुन्दर होगा। चरित्र मनुष्य के सही विकास का चिन्ह है। चरित्र ही इच्छा शक्ति है। जिसके द्वारा भले बुरे के संघर्ष में भले की ही जीत होती है। मनुष्य में चरित्र सर्वश्रेष्ठ है तथा शिक्षा तथा प्रशिक्षण इसी ओर संकेत करता है।

(६) मानसिक दृढ़ता Mental force fulness :-

इसके बिना आत्मबल की कमी रहती है। सही चरित्र निर्माण

से मानसिक दृढ़ता आती है। जब संवेग तथा मूल प्रवृत्तियों पर सही नियंत्रण हो कर आत्म सम्मान के स्थायी भाव अन्तर्गत आए तो मानसिक दृढ़ता होगी। इसी का दूसरा नाम इच्छा शक्ति है। इच्छा शक्ति प्रबल हो तो मानसिक दृढ़ता होगी। डा० युन्ग ने सामाजिकता की दृष्टि से तीन प्रकार के मनुष्य बनाये हैं—

(१) अन्तर्मुखी Introvert :-

ऐसे व्यक्तियों का मन अपने बिचारों में व्यस्त रहता है। संसारिक विषयों का प्रभाव उन पर नहीं पड़ता। ऐसे व्यक्ति सदैव एकान्त की आकांक्षा रखते हैं। यह एकाग्रचित्त, सूक्ष्म बुद्धि तथा अध्ययनशील होते हैं, अन्य लोगों के प्रति अधिकतर उदासीनता की प्रवृत्ति रखते हैं। इनका ध्यान सदैव अपनी ओर ही केन्द्रित रहता है।

(२) बहिर्मुखी Extrovert :-

इनका दृष्टिकोण बाह्य होता है। यह अत्यधिक सामाजिक होते हैं। एकान्त में नही रह सकते हैं। सदैव समाज में अन्य लोगों से सम्पर्क बढ़ाने की चेष्टा करते हैं। ऐसे लोग सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक कार्यों में अधिक रुचि लेते हैं। यह अपने विचार सरलता से प्रकट कर सकते हैं।

(३) उभयमुखी Ambivert :-

कुछ ऐसे व्यक्ति भी होते हैं जिन में दोनों प्रकार की विशेषतायें पायी जाती हैं। यह दोनों के मध्य का है।

व्यक्तित्व का विकास Development of Personality :-

व्यक्तित्व के विकास में वंशानुक्रम तथा वातावरण दोनों सहायक

हैं। दोनों के प्रभाव से विकास होता है। वंशानुक्रम से शरीर, मानसिक शक्ति तथा प्रवृति एवं बुद्धि प्राप्त होती है। वातावरण के अन्तर्गत परिवार, स्कूल, शिक्षा, समाज आदि आते हैं।

बालक में व्यक्तित्व विकास के लिए उसे पूर्ण स्नेह की आवश्यकता है। सर्वप्रथम बालक अपने विकास के लिए दूसरों पर निर्भर करता है यदि वह अन्य लोगों पर विश्वास कर सके और सभी ओर से उसे प्रेम मिले तो व्यक्तित्व के विकास के लिए यह अत्युत्तम होगा।

बालक के संतुलित व्यक्तित्व के विकास में उसके माता-पिता के स्वस्थ संबंधों का महत्व सर्वाधिक हैं। जब तक माता-पिता में प्रेम का अभाव है बालक में प्रेम भावना का आना कठिन है। परिवार का वातावरण सहयोग का होना चाहिए।

बालक के प्रथम छः वर्ष बहुत महत्वपूर्ण वर्ष हैं। बालक का भौतिक व्यवहार का योग इसी आयु में बनता है।

शिक्षा संबंधी संस्थाओं का बालक के प्रति उत्तरदायित्व उसके विकास के हेतु अत्यन्त आवश्यक है।

समाज की छाप बालक पर अवश्य पड़ेगी। बालक के लिए सुन्दर सामाजिक वंशानुक्रम का होना आवश्यक है।

व्यक्तित्व का विकास एक जटिल क्रिया है। बालक में परिवर्तन धीरे धीरे व क्रम से होते हैं। जैसे जैसे उसकी आयु बढ़ती है उसकी बुद्धि में भी वृद्धि होती रहती हैं। साथ ही साथ विभिन्न क्रियाओं के करने का कौशल प्राप्त करता है।

बालक प्रारम्भ से ही मूलप्रवृतियों के आधीन रहता है। इनके

साथ संवेग उत्पन्न होते हैं और इन संवेगों को सही स्थायी भाव के अन्तर्गत करना आवश्यक है जिससे बालक के जीवन में नियन्त्रण तथा आदेश इन्हीं उच्च नियन्त्रणों से हो सके। इसके लिए सही वंशानुक्रम तथा वातावरण का ज्ञान तथा उनका स्थान समझते हुये उनके गुणों का प्रयोग करना है।

व्यक्तित्व के विकास में किसी प्रकार की मानसिक ग्रंथि बाधक न हो इसको ध्यान में रखना चाहिए।

बालक के प्रारम्भिक वर्षों में एक प्रकार की मनोवृत्ति बन जाती है जो उसके विकास में केन्द्रित रहती है।

बालक के व्यक्तित्व का विकास उसके जन्म लेने से पूर्व तथा उसके पश्चात् प्रत्येक पग पर जिन वस्तुओं के सम्पर्क में वह आता तथा प्रभावित होता है, व्यक्तित्व विकास वंशानुक्रम को सही वातावरण के द्वारा विकसित करने को ही कहते हैं।

---

# विशेष वर्गों की समस्या

मानसिक संघर्ष Mentalconflict.

भावना ग्रंथि संवेगात्मक स्मृति है जो व्यक्ति जो व्यक्ति को मानसिक बनावट का भाग बन जाती है। इनकी उपस्थिति के कारण चरित्र निर्माण में बाधा पड़ती है। मानसिक विकार का यह परिणाम है।

जब तक स्वस्थ वातावरण का प्रभाव व्यक्ति पर नहीं पड़ता तब तक मानसिक विकास उचित रीति से नहीं हो पाता। शैशवावस्था से युवावस्था तक का विकास भी संतोषजनक नहीं हो पाता केवल उन्नति मे ही बाधा नहीं पड़ती वरन् निचली सतह की ओर अवनति भी संभव है। विकास में यह असफलता फ्रायड महाशय के मनोविज्ञान के द्वारा ज्ञात होती है। यह नवीन मनोविज्ञान या अचेतन मन का विज्ञान विशेष बल लिंग पर देता है। अचेतन मन में छिपी हुई गहराइयों का अध्ययन इस नवीन मनोविज्ञान का मुख्य उद्देश्य है। चेतन मन केवल मन की ऊपरी सतह है। अचेतन मन का ज्ञान अन्तदर्शन नहीं हो सकता।

अचेतन मन के बढ़ने की रीति Process of the growth of the unconcious.

(१) जन्म के समय कुछ प्रवृत्तियां।

(२) अनुभव कुछ ग्रंथिया छोड़ जाते है जो भरी हुई वस्तु नहीं है ।

(३) किसी साधारण वस्तु के लिए स्थायी भाव ।

(४) स्थायी भाव जो आत्म स्थायी भाव के अन्तर्वन सगठित हो ।

उपरोक्त विकास सुगमता से नहीं होता स्थाई भाव के बनने में कुछ इधर उधर की भटकती प्रवृत्तियां अन्य के साथ संगठित नहीं होतीं ये भटकती हुई प्रवृत्तियां जीवित रहती हैं और अनुभव तथा व्यवहार में प्रभाव डालने की चेष्टा करती हैं । अतः इनमें तथा सर्वश्रेष्ठ स्थायी भाव में संघर्ष होता है । यही मानसिक संघर्ष प्रत्येक असाधारण व्यवहार की मूल जड़ है ।

विषयी को इस संघर्ष का ज्ञान होता है । मनोविश्लेषण के सिद्धान्त के अनुसार विषयी को इसका ज्ञान नहीं होता क्योंकि यह अचेतन मन में स्थित होता है । यही कारण है कि इस प्रकार के व्यवहार को समझने में कठिनाई होती है ।

यह अनुभव दुःख तथा थकावट देता है । मन इसकी शान्ति का उपाय करता है ।

समस्या का हल उस समय होता है (१) जब ग्रंथियाँ व स्थायी भाव एक दूसरे में समाहित हो जाते हैं । इसका अनुभव स्वयं को होना चाहिए । मनोविश्लेषण के विशेषज्ञ इस में स्वप्न के अर्थ, शब्द साहचर्य जिससे अचेतन मन की उत्तेजनाओं का पता चलता है सहायता देते हैं (२) यह सरल नही होता क्योंकि ग्रंथियां दृढ़ता से संगठित हो सकती हैं । (३) ग्रंथि को दबा कर बल पूर्वक

शान्ति उत्पन्न करना।

यह दबी हुई भावनाएं या ग्रंथियां मन की क्रियाशील शक्ति हैं। क्योंकि मन की एकता समाप्त हो जाती हैं तो शक्ति भी क्षीण हो जाती है, ये (१) रूप परिवर्तित कर भी कार्य कर सकती हैं (२) स्वप्नों में कार्य करती हैं (३) निद्रावस्था में चलना इनका चिन्ह है (४) छोटी चालाकियाँ तथा आदतें (५) निरन्तर चिन्ता में इसका प्रभाव दिखता है। शिक्षक को यह संघर्ष समझना है।

किशोरावस्था की समस्या Problem of Adolescence

(१) स्वयं को संगठित करने में कठिनाई। अन्तर्मुखी होने की संभावना। दिवास्वप्न में लीन रहना।

(२) उमंगों के विभिन्न छोरों तक पहुँचना इसका प्रमुख चिन्ह है।

(३) अनिमित होने की प्रवृत्ति।

बालापराधी Delinquency

(१) निर्णय करने में असफलता के कारण (२) अत्यधिक शक्तिशाली काम प्रवृत्ति (३) साधारण प्रवृत्तियां जो विकास में सम्मिलित नहीं हुई हैं उनके कारण (४) वंश परम्परा संबंधी (५) शारीरिक कारण (६) वातावरण संबंधी पारिवारिक तथा वातावरण आदि इनके अनेक रूप हो सकते हैं (७) इधर उधर घूमने की प्रवृत्ति (२) झूठ बोलना (३) चोरी (४) बल्वा करने वाले समूह का संगठन।

इनकी चिकित्सा संभव है।

(१) संघर्ष को समझना (२) दबी प्रवृतियों का मार्गान्तरीकरण या शोध (३) व्यक्तित्व का पुनः संगठन (४) दण्ड

लाभदायक नहीं ।

व्यवहार का श्रेष्ठ श्रोत विचार नहीं किन्तु संवेगात्मक प्रवृत्तियां हैं व्यक्तित्व के साथ या उससे अलग करके ।

दुर्बल बुद्धि Mentally Defficieht

(१) मन्द बुद्धि Dull

यह बौद्धिक कार्यो में पिछड़े हुए किन्तु शारीरिक तथा सामाजिक कार्यो में सामान्य होते हैं । इनकी शिक्षा के लिए अधिक परिश्रम करना पड़ता है । इनकी शिक्षा में प्रोत्साहन, प्रत्क्ष ज्ञान तथा सहानुभूति पूर्ण व्यवहार आवश्यकहै ।

निर्बल बुद्धि ( Feeble minded .

साधारण विद्यालय से लाभ नहीं पा सकते । साधारण मानसिक कार्यों में असमर्थ होते है । इनमें सूझ, तर्क तथा हल शक्ति का अभाव होता है । इनकी शिक्षा विशेष विधि तथा साधन से होती है ।

(३) मूढ़ बुद्धि :-

शरीर सुरक्षा की क्रियायें कर लेते हैं । थोड़ी बुद्धि के कार्य कर सकते हैं । इनको शिक्षित करना कठिन है । केवल हाथ पैर चलाने वाले कार्य कर सकते हैं ।

अकाल पक्व बालक Precocious child .

ये वे बालक हैं जो आयु के पहले मानसिक रूप में प्रौढ़ हो जाते हैं । ऐसे बालक आरम्भिक अवस्था में कुशाग्र बुद्धि के प्रतीत होते हैं परन्तु कुछ समय पश्चात् साधारण स्थिति में आ जाते है । यह अधिक सतर्कता के कारण तथा बड़ों की प्रशंसा इत्यादि के कारण हो सकता है ।

शारीरिक दोषयुक्त बालक Phisically handicapped.

**विकलांग** Physically handi-cappe l ;

ऐसे बालक पंगु होते हैं। हाथ पैर से लूला या लंगड़ा होना शारीरिक दोष के कारण लोगों की दृष्टि में हीन भाव से देखे जाते हैं इसी कारण इनके मन में मानसिक ग्रंथि बन जाती है। अपमान के कारण उनके मन में सदैव एक संघर्ष रहता है। जब उन्हें असमर्थता के कारण विचारों की पूर्ति करने का अवसर नहीं मिलता तो वे अनैतिक कार्यों द्वारा संतोष प्राप्त करते हैं। जहां चिकित्सा होने की सम्भावना हो वहां चिकित्सा होनी चाहिए।

मनोविश्लेषण विशेषज्ञों से सहायता प्राप्त की जा सकती है।

ऐसे बालकों के लिए यदि विशेष शिक्षा का प्रबंध हो तो उत्तम है।

कुछ और विशेष वर्ग में हैं जैसे दृष्टि हीन Blind, क्षीण दृष्टि Partially blind, बधिर Deaf क्षीण श्रवण शक्ति वाले Hard hearing वाक दोष युक्त Defective speech, गूंगे Dumb .

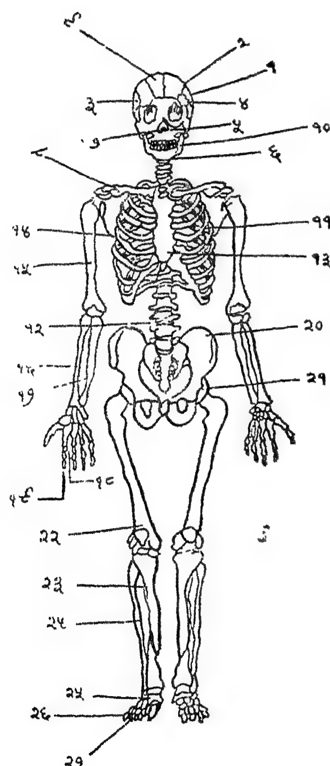
पिछड़े हुये बालक Backward child .

जो शिक्षा की साधारण सतह से नीचे हैं वे ही पिछड़े बालक हैं। इन बालकों का पिछड़ापन दूर किया जा सकता है। पिछड़ापन बौद्धिक जन्मजात एवं अर्जित कारणों से हो सकता है। कुछ बालक समान्य बुद्धि में कमी होने के कारण पिछड़ जाते हैं। कुछ में विशिष्ट विषय में पिछड़ापन होता है। शारीरिक दोषग्रस्त बालक भी पिछड़े हो सकते हैं। मानसिक अस्वस्थता के कारण भी बालक पिछड़ा हुआ हो सकता है। परिवार, वातावरण तथा विद्यालय भी पिछड़े पन का कारण हो सकते हैं।

उपाय:— उपरोक्त दोषों को दूर करना चाहिए।

---

# अस्थि संस्थान



1. Occipital पश्चादस्थि 2. Parietal पार्श्वकास्थि 3. Spheniod जतूकास्थि 4. Temporal शंखोस्थि 5. Maxillary (Superior) ऊपरी जबड़ा 6. Maxillary (Inferior) निचला जबड़ा 7. Nasal नाक की हड्डी 8. Clavical हसली 9. Cranium मस्तिष्क कोष्ठ 10. Face चेहरा 11. Ribs पसलियां 12. Spine रीढ़ 13. Sternum वक्षोस्थि 14. Shoulder Blade स्कंधास्थि 15. Humerus प्रगवडास्थि 16. Radius प्रकोष्डास्थि 17. Ulna अन्तः प्रकोस्ठास्थि 18. Metacarpal Bones करभास्थि 19. Phalanges हस्त अंगुल्यास्थि 20. Hip Bone कूल्हास्थि 21. Hip Girdle कूल्हा मेखेला 22. Femur उर्वास्थि 23. Tibia जंघास्थि 24. Fibula अनुजंघास्थि 25. Tarsalas कुर्चवास्थिया 26. Metatarsals प्रपादास्थियां 27. Phalanges प्रपाद अंगुल्यास्थियां ।

शरीर एक हड्डियों का ढांचा मात्र है। यह ढाँचा २०६ हड्डियों से मिलकर बना है। इन अस्थियो के द्वारा शरीर को आकार तथा स्थिरता मिलती है। मांस पेशियों को सहारा तथा विशेष अंगों की रक्षा होती है। अस्थि संस्थान के तीन मुख्य भाग हैं।

**१. खोपड़ी २. धड़ ३. हाथ तथा पैर।**

अस्थि :- यह वह वस्तु है जो शरीर को-मजबूती से ढाँचे के रूप में सहारा देता है। यह एक प्रकार के चूने के नमक से बना हुआ है जिसे Calcim phosphate कहते हैं। यह शरीर की सबसे मजबूत तथा कड़ी वस्तु है। इसका जमाव एक जाल के बिछावट की तरह है जिसे रग अथवा Fibers कहते हैं। चूने के नमक से हड्डी में कड़ापन आता है तथा रगों के जाल से यह तनावदार हो जाता है। इसके बिना हड्डी बहुत कड़ी होती है तथा सदैव टूटने की सम्भावना होती है। जैसे जैसे आयु बढ़ती जाती है यह चूने का नमक एकत्रित होता जाता है इसी कारण अधिक आयु में हलकी चोट से भी हड्डी टूट जाती है।

शरीर में दो प्रकार की हड्डियाँ पाई जाती हैं। एक बहुत ही कड़ी चीज जिसे Compact bone कहते हैं। यह हड्डी का ऊपरी हिस्सा होता है तथा कड़ापन देता है। इसमें रक्त संचालन असख्य छोटे तन्तुओं से जो इस में घुसे हुए हैं, होता है। दूसरी, एक मुलायम तथा गुलगुली वस्तु है जिसे Cancellous bone कहते हैं। इसकी बनावट झंझरी अथवा जाली के समान होता है। इनकी

दरारों में गूदा भरा होता है यह गूदा लाल अथवा पीले रंग का होता है। लम्बी हड्डियों में यह पीला होता है तथा चपटी हड्डियों में लाल होता है। इनमें अनेकों रक्त कोष, विशेष गूदे के कोष, तथा चर्बी के कोष होते हैं। इन कोषों के द्वारा ही हड्डी टूटने पर जुड़ने का सामान मिलता है तथा रक्त कोष भी बनते हैं। प्रत्येक हड्डी की सतह एक मजबूत झिल्ली से ढकी हुई होती है जिन्हें Periosteum कहते हैं तथा इस में रक्त कोष अत्यधिक होते हैं। इन्हीं के द्वारा अस्थि में एक संचालन होता है। इसी कारण टूटी हुई हड्डी के जुड़ने में इसके द्वारा महत्वपूर्ण सहायता मिलती है।

कुर्री या मुरमुरी हड्डी Cartilage :- यह हल्का नीला लिए सफेद रंग की होती है तथा मजबूत किन्तु लचीली होती है। यह अधिक दबाव सहन कर सकती है किन्तु यह तेज छुरी से आसानी मे काटी जा सकती है। यह शरीर के बहुत से भागों में पाई जाती है। उदाहरणार्थ, कान नाक पसली तथा जोड़ों में जहाँ सख्ती, ताकत तथा लचीलापन की आवश्यकता होती हैं, यह होते हैं।

इनका मुख्य कार्य :-१ थोड़े समय के लिए बच्चों के शरीर में हड्डियों तथा जोड़ों के लिए ढांचे का काम करना। यह क्रमशः अस्थि में बदल जाती है। २ हड्डियों के बीच के जोड़ों में अस्तर का काम देती है ३ हड्डियों के बनावट के बीच धक्का सहने का सहारा देती है।

रेशा Ligaments:— यह एक सफेद कड़े रेशों का समूह है जो आपस में मिल कर एक डोरी बना लेते हैं। इसका विशेष कार्य

अस्थि पंजर के बनावट को एक साथ रखना तथा खिचाव सहन करना है। इनमें लचीलापन नहीं होता किन्तु अधिक ज़ोर पड़ने से खिच जा सकते हैं।

अस्थि के साधारण प्रकारः— अस्थियाँ पाँच प्रकार की होती हैं। १—लम्बी भारी हड्डी २—छोटी गठी हुई हड्डी ३—लम्बी पतली हड्डी ४—चौड़ी पतली हड्डी ५—टुकड़ों में हड्डियाँ।

१—लम्बी भारी हड्डीः— जैसे जांघ की हड्डी (Femuer) यह विशेषकर बोझ सम्भालने तथा प्रप्येक सिरे पर मजबूत जोड़ों के लिए काफ़ी स्थान रखता है जिसमें जोड़ के लिए स्थान बन सके।

२—चौड़ी पतली हड्डी जैसे Scapula or shoulder blades. जैसे कन्धे की हड्डी। इसका कार्य मांस पेशियों के जोड़ के लिए चौड़ा स्थान देना है।

३—लम्बी पतली हड्डी ( Ribs पसली ) इनका कार्य घूमता हुआ ढांचा बनाना है।

४—छोटी गठी हुई हड्डी जैसे Wrist bone जैसे कलाई की हड्डी इसका कार्य ताकत तथा लचक देना है।

५—टुकड़ों में हड्डियांः—जैसे रीढ़ की हड्डी Vertibral column इनका कार्य आपस में एक दूसरे से सहारा तथा लचीलापन पाना है।

अस्थि संस्थानः—में खोपड़ी, रीढ़, पसलियां, स्कन्ध मेखला ऊपरी धड़ की हड्डियाँ, कूल्हा मेखला तथा निचली धड़ की हड्डी आती हैं।

खोपड़ीः—के दो भाग हैंः— १—मस्तिष्क कोष २—चेहरा।

मस्तिष्क कोष्ट ( Cranium ) यह आठ मजबूत चपटी, हल्की हड्डियों से बना है।

एक ललाटास्थि Frontal bone.

दो पार्श्वकास्थि ( Parietal bone ) एक पाश्चादास्थि। Occipital bone, २ शंखास्थि ( Temporal bone ) एक जतकास्थि (Spheroid bone) एक बहूछिदास्ति (Ethmoid bone) यह कुल जमा आठ होती हैं।

ये हड्डियां अचल कंघीदार सन्धियों द्वारा जुड़ी हुई होती हैं। बालक के मस्तिस्क में वे धीरे धीरे जुड़ती हैं। इसके नीचे की ओर एक गोल छेद भी होता है जिसके द्वारा यह सुषुम्ना मस्तिष्क से मिलती है।

चेहरा:—यह १४ हड्डियों से मिलकर बना है। यह हड्डियां इस प्रकार हैं:—दो ऊपरी जबड़ें की हड्डियाँ (Superior maxlliary) एक निचले जबड़े की हड्डी (Inferior maxillary) दो कपोलस्थि (Malar bones) दो तालू की हड्डियाँ Palate bone.

दो नाक की हड्डियाँ (Nasal bones) दो स्पंज हड्डियाँ (Spongy bones) दो अश्रुस्थियाँ (Lacrymal bones) एक नाक का पर्दा बनाने वाली हड्डी (Vomer)।

निचले जबड़े को छोड़ कर सब हड्डियाँ अचल हैं।

मेरुदण्ड Vertibral Column:— मेरुदण्ड वर्गों में विभाजित हैं:— (१) गर्दन में ७ कशेरुकायें Cervical vertibra. (२) पीठ में १२ कशेरुकायें जिनमे पसलियाँ मिली हुई हैं Dorsal vertibra.

(३) कमर में ५ कशेरुकायें Lumber vertibra.

(४) त्रिकास्थि में ५ कशेरुकायें Sacral vertibra पांचों आपस में जमे हुये हैं जिससे एक हड्डी बनती है।

(५) गुदास्थि में ४ कशेरुकायें Coccyx) हैं यह चार भी आपस में जमी हुई है।

मेरुदण्ड के द्वारा ऊपरी धड़ का वजन नीचे के धड़ में दिया जाता है। मेरुदण्ड में दो गोलाईयाँ हैं जो जन्म के बाद ही विकसित होती हैं एक गर्दन वर्ग तथा दूसरा कमर वर्ग का मेरुदण्ड है। गर्दन वर्ग का मेरुदण्ड उस समय दिखाई देता है जब शिशु सिर उठाना आरम्भ करता है, कमर वर्ग का मेरुदण्ड सीधे खड़े होने के साथ विकसित होता है।

कशेरुकाओं के बीच कोमलस्थि (Cartilage) की गद्दी रहती है जिसके कारण धक्का सहने का कार्य होता है तथा मेरुदण्डों के बीच गति सम्भव होती है। कोमलस्थि के द्वारा मेरुदण्ड का रूप बना रहता है तथा उसके पूरे लम्बान का एक चौथाई भाग होता है।

गर्दन वर्ग का मेरुदण्ड ( Cervical vertibra. )

पहले दो गर्दन के मेरुदण्ड को छोड़ शेष कन्धे तथा कमर के वर्ग से छोटे होते हैं। उनसे गति का विस्तार अधिक होता है इसी कारण व्यक्ति पीछे मुड़कर देख सकता है।

कन्धा वर्ग का मेरुदण्डः— इनका जोड़ पसली से है तथा उन के साथ गति भी होती है। इसके बनावट के कारण इस वर्ग में ज्यादा पीछे मुड़ पाते हैं।

कमर वर्ग का मेरुदण्ड:— यह कन्धा वर्ग तथा गर्दन वर्ग से ज्यादा बड़े तथा मजबूत होते हैं ।

प्रथम कशेरूका शिरोधर Atlas:– इसके बीच का स्थान दो हिस्सों में मजबूत रेशों के द्वारा विभाजित हैं । सामने का भाग दूसरी कशेरूका अक्ष Axis के द्वारा घिरा है तथा पिछले भाग सुषुम्ना के द्वारा रगें अक्ष की हड्डी के भाग को अपने स्थान में रखती है जिससे वे पीछे फिसल कर सुषुम्ना को चोट न पहुंचायें ।

दूसरी कशेरूका अक्ष:– यह वृत्ताकार मेरुदण्ड जिसमें धड़ एक वृत्तखण्ड दो आड़े, तथा एक कांटे दार चाल, मांसपेशियों के साथ जुड़ने के लिए, तथा चार जोड़ दार पट्टल, एक वृत्तखन्ड के प्रत्येक खम्बे के नीव के नीचे, तथा दूसरा उसके ऊपर है । इसकी विशेषता एक हड्डी की खूंटी है, जो उसके शरीर से ऊपर उठती है, जिसमें गर्दन के प्रथम मेरुदण्ड के साथ, जिसका नाम शिरोधर है, गतिवाही हो ।

त्रिकास्थि Sacrum:— यह पाँचों आपस में मिले हुये है । इस की गति ऊपर की ओर पाँचवे कमर वर्ग के मेरुदण्ड के साथ होती है तथा बगल में दोनों कूल्हास्थियों के अन्तर की सतह के साथ होती है । इस प्रकार यह कूल्हा मेखला का पिछला भाग बनाती है ।

गुदास्थि Coccyx:— गुदास्थि , त्रिकास्थि के निचले भाग से लगातार चलता है । इसका विशेष कार्य कूल्हे के फर्श के मांस-पेशियों के लिए जोड़ का काम देते हैं ।

वक्षस्थल:– वक्षस्थल की हड्डियाँ एक गुम्मज की तरह होती

हैं। वे छाती की हड्डियाँ या वक्षोस्थि कहलाती है जिसमें बारह जोड़ा पसली तथा बारह जोड़ा कन्धा मेरुदण्ड है ।

प्रत्येक पसली मेरुदण्ड से शरीर के पीछे जुड़ी हुई है । सामने ये वक्षोस्थि से मुरमुरी हड्डी से मिली हुई हैं । इस मुरमुरी हड्डी के कारण वक्षस्थल के दिवालों को लचक मिलती है जिससे सांस लेने की क्रिया की गति सम्भव होती है । ऊपर के सात पसलियां सच्ची पसली True ribs तथा नीचे के ५ झूठी पसली False ribs कहे जाते हैं । अन्त की दो पसलियाँ सामने जुड़ी हुई नहीं हैं इस लिए तैरती (Floating) हुई पसली कही जाती है । पसली सीने, फेफड़े दिल, गुर्दे, पेट इत्यादि को ढक कर बचाव देता है ।

शरीर की दो सौ छः हड्डियाँ दो भागों में विभाजित हैं :—

(१) धुरे की हड्डी Axial bone जो शरीर के बीच में है ।

(२) जुड़ी हुई हड्डियाँ (Appendicular bone) शरीर का ऊपरी हिस्सा :—कंधा, हाथ, बाजू, कलाई ।

शरीर के ऊपरी धड़ में दो हड्डियाँ हैं जिसे हसली (Coller-bone) की हड्डी तथा दो कंधे या (Shoulder blade) कहते हैं। clavical ६" की होती है तथा वक्षोस्थि Sternum. से जुड़ी रहती है । इसका कार्य कंधे और ऊपरी धड़ के भाग को छाती के दिवाल मे सही दूरी पर रखना है । यह बहुत आसानी से टूटता है ।

कंधे की हड्डी Scapula एक चपटी तिकोनी हड्डी है जो विश्राम के समय सीने के पीछे के भाग में २ से ७ पसली घेरती हैं । यह एक आधार है जिस पर ऊपरी अंग घूमते हैं ।

बाँह Arm ;-

प्रगण्डस्थि Humerus एक लम्बी हड्डी है। इस में एक सिर, गर्दन, डंडी तथा अन्त का छोर है। निचला भाग Radius तथा ulna के साथ कोहनी का जोड़ बनाने के लिए घूमता है।

हाथ Fore Arm :-

यह प्रकोष्ठास्थि Radius तथा अन्तः प्रकोष्ठास्थि ulna से बना है।

प्रकोष्ठस्थि एक लम्बी पतली अस्थि है जिस में सिर, गर्दन, डंडी तथा निचले भाग का छोर है। सिर एक चौड़े गोल पदार्थ के ऊपरी भाग के रूप का है तथा उसके ऊपरी सतह में एक छिछला गढ्ढा है जो प्रगरठ्स्थि Humerus के निचले छोर के बाह्य भाग के साथ घूमता है। इस गोल वस्तु की बगलें प्रकोष्ठास्थि (ulna) के ऊपरी हिस्से के साथ घूमता है। प्रकोष्ठास्थि की डंडी कुछ गोलाई लिए है। जब हथेली सामने होती है तो यह प्रकोष्ठास्थि के बाहरी हिस्से में होती है तथा जब हथेली पीछे की ओर होती है तो प्रकोष्ठास्थि के ऊपर और आर-पार होती है। इसके निचले भाग से कलाई के जोड़ के बनने में सहायता मिलती है और प्रकोष्ठास्थि के निचले हिस्से के साथ घूमती है।

अंतः प्रकोष्ठास्थि :-

में ऊपरी हिस्सा एक डंडा और निचला छोर होता है। ऊपरी भाग में एक दांतेदार, अर्धचन्द्राकार होता है जो प्रगण्डास्थि के आन्तरिक तथा निचले भाग के बाद के हिस्से के साथ घूमता है। ऊपरी हिस्से का नोक एक चोंच के रूप की अस्थि प्रणाली है जिसे

Olecranon कहते हैं। जब हाथ फैलाया जाता है यह प्रणाली एक गड्ढे में जो प्रगण्डस्थि के निचले हिस्से के पीछे है बैठ जाता है जिसके कारण कोहनी का जोड़ बंध जाता है तथा इसके आगे का फैलना रुक जाता है।

मणिबंध अस्थि The Carpus ;-

कलाई आठ मणिबंध अस्थियों से बनती है जो दो कतारों में बहुत नजदीक २ चार २ के अंक में बैठाये हुए हैं। यह एक लचीला किन्तु दृढ़ आधार देता है जिसके ऊपर हाथ तथा बांह की मांस पेशियां अपना जोर डाल सकती हैं।

मणिबन्ध अस्थि के ऊपरी हिस्से की चिकनी गोलाई की सतह है जो प्रकोष्ठास्थि तथा अंतः प्रकोष्ठास्थि के निचले हिस्से के साथ कलाई का जोड़ बनाने के लिए घूमता है।

मणिबन्ध का निचला सिरा पांच करभास्थियों (metacarpal bones) के ऊपरी सिरे के साथ घूमता है।

पाँच करभास्थियाँ (metacarpal bones) तथा अँगुलास्थियाँ (phalanges):-

पहली करभास्थि अँगूठे के आधार का अस्थि सहायक है। शेष चार हथेली के ढाँचों का रूप देती हैं। इन अस्थियों के निचले सिरे अगुलास्थियों के पहले कतार के ऊपरी सिरे के साथ उंगली के जोड़ बनाने के लिए घूमती हैं।

अंगुलस्थियाँ उँगलियो तथा अंगूठे की अस्थियाँ प्रत्येक उंगली में तीन अँगुलस्थियाँ होती है तथा अँगूठे में दो होती हैं।

निचला धड़ :-

इसमें दो कूल्हास्थियों (Hipbone) त्रिकास्थि (Sacrum)

टांग तथा पांव की हड्डी से मिलकर कूल्हा मेखला (Pelvic girdle) बनाती हैं।

कूल्हा मेखला—ये बेनाम की हड्डियों के बाहरी हिस्से के बीच में एक गहरा छेद है जिसे (Acitabulnm) कहते हैं यह उर्वास्थि के सिर के साथ घूमता है। (Acitabulnm) के ऊपर की चपटी हड्डी **Illium** है। हड्डी का वृतखण्ड जो उसके नीचे सामने है उसे Pubis कहते हैं। निचले पीछे के हिस्से को Ischium कहते हैं। प्रत्येक बेनाम की हड्डी त्रिकास्थि से मजबूत अस्थिबन्धन Ligaments के द्वारा मिला हुआ है जिस से Sacroilliac जोड़ बनते हैं। Pubis में दो हड्डियाँ सामने जुड़कर कुछ गतिवाही जोड़ बनाते हैं। गर्भ की अवस्था में स्त्री के शरीर के बन्धन कुछ ढीले हो जाते हैं जिस से कूल्हा मेखलाके द्वार बढ़ सके। कूल्हा का मुख्यकार्य एक ठोस आधार देना है जिस से वजन ऊपरी धड़ से नीचे की ओर भेजा जा सके। यह पैर में तथा धड़ के निचले हिस्से की शक्तिशाली मांस पेशियों के लिए एक लगाव का आधार देता है।

टाँगों की हड्डियाँ :-

जांघ की हड्डी-उर्वास्थि या (Femmur)। जानवस्थि या (Patella)। जंघास्थि या (Tebia)। अनुजंघास्थि या (Fibula)।

उर्वास्थि—का एक सिरा गर्दन, डंडा तथा बड़ा निचला छोर होता है। यह शरीर में सब से लम्बी हड्डी है। सिरा गोलकार है तथा acitabulm के साथ घूमता है। गर्दन की १-१/२'' लम्बी गोलाई है और बहुत मजबूत है। यह उर्वास्थि के डंडे से १२५ अंश के कोण पर मिलता है। डंडे में आगे की ओर उभार है।

जानवस्थि—घुटने के जोड़ सामने है। यह गोलाकार है। इसका कार्य अपने खींचने के समान कार्य के कारण लीवर या टेक को बढ़ाना है जो गड्ढे में फिसलने के द्वारा होता है।

जंघास्थि—का ऊपरी तथा निचला छोर एक डंडा होता है। एक तिकोनी जानवस्थि, अस्थिबन्धनो द्वारा जंघास्थि से जुड़ी रहती है।

अनुजंघास्थि—एक लम्बी पतली हड्डी है जिसका सिरा तथा निचला छोर है। इसका सिरा जानवस्थि के ऊपरी हिस्से के बाहरी भाग के साथ घूमता है तथा इसका निचला भाग मजबूत अस्थि बंधन के द्वारा उसी के द्वारा बाहरी भाग के निचले हिस्से से दृढ़ है।

पाँव की हड्डियाँ :-

पांव के मुख्य भाग की हड्डियाँ जो मिलकर कुर्चावस्थियाँ Tarsus बनाती है।

पैर की अगले हिस्से की हड्डी पाँच प्रपादस्थियाँ (metatarsals) कहलाती हैं।

अँगूठे की हड्डी प्रपाद अगुलस्थियाँ Phalanges कहलाते हैं।

कुर्चवास्थियाँ:—की दो सबसे बड़ी हड्डियाँ एड़ी की हड्डियाँ हैं।

पाँच प्रपादस्थियाँ तथा प्रपाद अंगुलस्थियाँ :-

प्रपादस्थियां हाथ की हड्डियों के समान है किन्तु वे नाप तथा ताकत में बड़ी है। अगुलस्थियाँ साधारणतः हाथ की हड्डी से छोटी तथा मोटी है। बड़ी उंगली में दो अँगुलियाँ तथा शेष तीन में तीन२ होती हैं।

पैर के झुकाव :—पैरों पर बहुत जोर पड़ता है विशेषकर कठिन व्यायाम के समय। पैर इस जोर को ताकत तथा लचक के द्वारा सहन कर लेता है। यह वृतखण्ड झुकाव के रूप में बना है जो रगों से संगठित होता है तथा मांस पेशियों से सहारा पाता है।

———

[५०]

# तन्तु

सर्वप्रथम शरीर का निर्माण एक कोष से हुआ है। वर्तमान शरीर ने एक कोष से बहु कोष जटिल अवस्था प्राप्त किया है। शरीर में अनेकों क्रियाये होती रहती हैं। इन कार्यों के करने के लिए विभिन्न प्रकार के कोष समूह हैं। इस प्रकार के कोष समूह को तन्तु कहते हैं। अनेकों माँसा कोषोंके मिलने से मांस तन्तु बनते हैं। अनेकों प्रकार के तन्तु मिलकर शरीर के भिन्न अंगों की रचना करते हैं।

लासिका वाहनियां Lympathic vessels. :-

केशिकाओं द्वारा लाया हुआ रक्त तन्तुओं के सम्पर्क में नहीं आता। केशिकाओं के दीवारों में से जो झिरमिरी होती है उसमें लसीका (रक्त रस) (Lymph) जो रंगविहीन पदार्थ है रिसता रहता है। लसीका में कार्बोहाईड्रेटस, प्रोटीन, जल, लवण तथा श्वेत रक्त कण मिले रहते हैं। इसमें लाल रक्त कण नहीं होता क्यू-कि यह दीवारों से निकल नहीं पाते। लसीका तन्तु कोणों तक पहुंचकर आक्सीजन पहुंचाता है और उनका पोषण करता है। तथा टूटे तन्तुओं और कार्बन डाईआक्साईड को वहाँ में हटाता है।

छोटी छोटी लसीका केशिकायें आपस में संयुक्त होकर लसीका वाहनियां (Lymphatic Vessels) बनाती है। इनके बीच मे

लसीका ग्रन्थियाँ होती हैं। कोषों में आवश्यक कार्य करने के बाद रक्त का एक बड़ा हिस्सा केशिकाओं में लौट आता है तथा लसीका केशिकाओं (Lymphatic Capillaries) में बहने लगता है। लसीका ग्रन्थियाँ रोग के कीटाणुओं को रोकती है तथा रक्त में श्वेत कणों को उत्पन्न करती है। ग्रन्थियों से होकर जाने के बाद ये दो बड़ी लसीका नली के रूप में हो जाती है। इन्हे वक्षास्थलीय लसीका नली (Thoahcic Chest) तथा दांई लसीका वाहिनी (Right Lymphatic duct) नाम से पुकारते हैं। इन नलियों में गति मांस पेशियों के कार्य तथा सांस की क्रिया के द्वारा होती है।

रक्त नलियां (Blood Vessels) :-

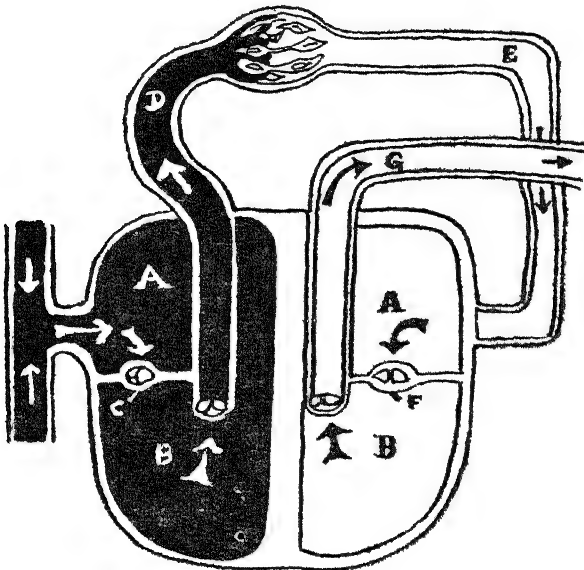
सम्पूर्ण शरीर में रक्त हृदय से जाता है तथा सम्पूर्ण शरीर से रक्त हृदय में आता है। यह दो वाहनीयों से होता है। धमनी (Artery) हृदय से सम्पूर्ण शरीर में रक्त ले जाती है। यह रक्त शुद्ध होता है तथा अच्छे लाल रंग का होता है। शिरा (Veins) के द्वारा सम्पूर्ण शरीर का अशुद्ध रक्त हृदय में वापस आता है। यह काला लिए लाल रंग का होता है। फेफड़ों में रक्त क्लोय धमनी (Pulmonary Artery) के द्वारा जाता है। वृहत धमनी (Aorta) फेफड़ों के अतिरिक्त सम्पूर्ण शरीर में रक्त ले जाती है।

दो शिरायें जो दायें अलिन्द (Right Auricle) में आती है वे फेफड़ों से रक्त वापस लाती है। जब धमनी हृदय से निकलती है छोटी-छोटी शाखाओं में बट जाती है। यहाँ तक की ये बाल की तरह पतली नलियाँ हो जाती हैं जिन्हे केशिकायें (Cpillary) कहते हैं। इन्ही के द्वारा रक्त का विकार ग्रहण किया जाता है तथा

भिन्न भिन्न अंगो को आक्सीजन तथा भोजन दिया जाता है। ये केशिकायें पतली धमनियाँ तथा शिराओं को संयुक्त करती हैं इस लिए केशिकाओं का अशुद्ध रक्त शिराओं के द्वारा हृदय में वापस आता है।

केशिकाओं के द्वारा शरीर में भिन्न भिन्न अंगो को भोजन तथा आक्सीजन देने के पश्चात तथा उन के विकारों को ग्रहण करने के बाद ये मिलकर शिरा बन जाती है। इन शिराओं में कुछ दूरी पर अर्धवृत्ताकार कपाट हैं जिनके द्वारा हृदय की ओर रक्त प्रवाह आसानी से होता है तथा विपरीत दिशा में रक्त प्रवाह को रोकता है। इसी कारण यदि हृदय से रक्त बहना चाहे तो ये कपाट बन्द हो जायेंगे। कपाटों में शिथिलता के कारण रोग हो जाते हैं।

हृदय Heart :-



हृदय रक्त संचालन संस्थान का केन्द्रीय अंग है। यह रक्त संचालन के दबाव तथा प्रवाह का नियन्त्रण करता है। यह रक्त वाहनियाँ शिरा से रक्त कम दबाव के साथ पाता है और उसे फेफड़ों के रक्तवाहिनीयों में पम्प कर देना है। जिससे वहाँ आक्सीजन मिल जाय। फेफड़ों से वापस रक्त फिर हृदय के द्वारा लिया जाता है और धमनियों में पम्प कर दिया जाता है जो शरीर के प्रत्येक अंग में लाती है।

इस प्रकार से हृदय दो प्रकार से रक्त संचालन का कार्य करता है। प्रथम फेफड़ों में तथा द्वितीय शरीर के सारे अंगो में।

इस कारण हृदय दो हिस्सों में बंटा हुआ है जो आपस में एक दूसरे से किसी प्रकार लेन देन नहीं करते हैं। ये हृदय का दाहिना भाग तथा बायां भाग कहा जाता है। दाहिना भाग दुषित रक्त, बड़ी शिराओं से प्राप्त करता है। और फेफड़ों में आक्सीजन से मिलने के लिए प्राप्त करता है। बायां भाग आक्सीजन मिश्रित रक्त प्राप्त करता है जो फेफड़ों से आता है यह धमनियों में पम्प किया जाता है जिससे तन्तुओं को भोजन प्राप्त हो सके।

हृदय एक खोखला अंग हैं जिसमें मोटे मांस पेशियों की दीवाल है। यह वक्षोस्थि के पीछे तथा शरीर के बीच से तथा बाँयें फेफड़े के बांई ओर स्थित है। इसे स्थान देने के लिए यह दांतेदार बना है और दाहिने से छोटा है। हृदय के प्रत्येक भाग में दो कमरे हैं, प्रथम है कोष्ठ अलिन्द तथा द्वितीय है कोष्ठ निलय।

बड़ी शिराओं से काला रक्त एक साधारण द्वार के द्वारा दाहिने कोष्ट अलिन्द में जाता है और वहाँ से वह एक खुले हुए स्थान से

जो एक कपाट के द्वारा नियन्त्रित रहता है, दाहिने कोष्ट निलय में पम्प किया जाता है।

दाहिना निलय दबाव पर फुसफुसीय धमनी Pulmonary artery में पम्प करता है जहाँ से वह फेफड़ों से होकर जहाँ पर उसे आक्सीजन मिल जाता है तथा वह चटक लाल हो जाता है फेफड़ों के शिरा या फुसफुसीय शिरा में चला जाता है। फुसफुसीय शिरा Triquspid Valve बिना कपाट के बायें कोष्ट अलिन्द में खतम हो जाता है तथा एक खुले स्थान के द्वारा जो एक कपाट Bicus pid Valve द्वारा नियन्त्रित रहता है, बायें निलय कोष में रक्त पम्प करता है। बांया कोष्ट निलय इस धमनीय रक्त को मुख्य धमनी, वृहत धमनी में पम्प करता है। रक्त पूर्ण शरीर में संचालित होता है तथा बड़ी शिरा में फिर वापस आता है जो हृदय की दाहिनी ओर है।

हृदय का ताल एक बनावट के द्वारा होता है जो नाड़ी तन्तुओं तथा मांस पेशियों से बना है। इस बनावट के परिणाम स्वरूप हृदय में मांस पेशियों के सिकुड़न का एक दौर आरम्भ होता है तथा प्रति पाँच सेकेण्ड में ६ बार होता है। यह सिकुड़न का दौर पहिले दोनों कोष्ट आलिन्द को एक साथ प्रभावित करता है जिससे वे सिकुड़ते हैं, दाहिना शिरा का रक्त दाहिने कोष्ट निलय में प्रवाह करता है तथा बायां आक्सीजन से मिला हुआ रक्त बायें कोष्ट निलय में प्रवाहित करता है। बहुत ही थोड़े समय में, यानी कि १/८ सेकेण्ड में ये दौर निलय में पहुंचते हैं जो एक साथ जोर से सिकुड़ते हैं तथा दोनों कपाटों को यांत्रिक गति से बन्द कर देते हैं।

इस कारण रक्त फुसफुसीय धमनी में बायें कोष्ट निलय से प्रवाहित किया जाता है तथा कोष्ट निलय में वापस लौटने से कपाटों के द्वारा जो इन धमनियों में हैं और अपने आप रक्त के पीछे दबाव के कारण बन्द हो जाते हैं, बचाता है।

हृदय के कपाट, गठिया बुखार के द्वारा रोगी हो जा सकते हैं। इसका अर्थ यह होगा कि वे अपनी जगह पर सही नहीं बैठेंगे और रक्त वापस लौट आयेगा।

दूसरी बीमारी की स्थिति उनके समीप होने की है जिसके कारण रक्त प्रवाह में रुकावट होगी और हृदय को तकलीफ़ होगी। कभी कभी एक ही कपाट में समीपता तथा असमर्थता हो जाती है।

हृदय के सिकुड़न से रक्त प्रवाहित होता है और इस प्रकार वृहत धमनी फैलती है और आवश्यकता से अधिक दबाव दौर के रूप में शरीर के सम्पूर्ण अंगो में बड़ी धमनियों के साथ दी जाती हैं जो नब्ज के रूप में मालूम किया जा सकता है। यह किसी बड़ी धमनी में भी मालूम किया जा सकता है। प्रकोष्टास्थि धमनी कलाई पर साधारणतः इस कार्य के लिए व्यवहार में लाया जाता है क्योंकि वहाँ यह त्वचा के सतह के नीचे ही पाया जाता है तथा कलाई शरीर का एक खुला हुआ अंग होता है। नाड़ी की चाल Pulse शिरा में नहीं मालूम किया जा सकता क्योंकि दबाव का दौर संचालन के छोटे केशिकाओं में समाप्त हो जाता है।

मांस पेशियाँ Muscles :—

शरीर का ४५ ०/० वजन मांस पेशियों का है। मांस पेशियां निम्न तीन प्रकार की हैं :—१ जो अस्थिपंजर की अस्थियों की गति

इच्छानुसार करता है उन्हे ऐच्छिक मांस पेशियाँ कहते हैं।

२ जो आंतों, मूत्राशय, धमनी तथा दूसरे अंगों की बनावट पर मांस पेशियों का जमाव करता है यह ऐच्छिक नियन्त्रण में नहीं होता है। इन्हे अनैच्छिक अथवा स्वतन्त्र मांस पेशियां कहते हैं।

३–जो धारी दार होती हैं किन्तु अनैच्छिक होती है ऐसी मांस पेशियां केवल हृदय में पायी जाती हैं।

मांस पेशियों की बनावट:— ऐच्छिक मांस पेशियाँ अनेकों रगों से बनी हैं। रगें १ १/२″ लम्बी होती हैं तथा बाल के बराबर मोटी होती है। इसमें आड़ी धारियां होती हैं जो अनैच्छिक मांस पेशियों में नहीं पाई जाती हैं। प्रत्येक रग एक लचीले खोल से ढका है तथा दूसरे रगों से जुड़ा हुआ होता है जिससे लम्बी लड़ी बन जाती है तथा समानान्तर गट्ठों में सजी रहती है।

मांस पेशियों का कंडरा Muscle Tendon.

प्रत्येक मांस पेशी का सिरा अस्थियों अथवा दूसरे बनावट से संयुक्त है। यह जोड़ मजबूत सफेद रगों का है जिसे कंडरा कहते हैं अथवा मांस पेशियों के रगों से सीधे जुड़ते हैं। साधारणत: मांस पेशियों का अन्त जो धड़ के समीप है, या तो अपने मांस पेशियों के रगों से जुड़ा है या छोटे कंडरो से, किन्तु सिरा धड़ से कुछ हट के एक कंडरा से जुड़ा रहता है जो एक बड़ी लम्बाई का होता है।

कंडरों के द्वारा छोटे दायरे में ताकतवर मांस पेशियों की शक्ति का प्रभाव होता है। कंडरों के द्वारा मांस पेशियों को दूर से काम करने की शक्ति मिलती है।

मांस पेशियों का उदगम तथा प्रवेशन The origin and Insertion of muscles .

ऐच्छिक मांस पेशियों का मुख्य कार्य, शरीर में गति उत्पन्न करना तथा नियन्त्रण करना है , तथा अस्थिपंजर पर प्रभाव डाल कर शरीर के प्राकृतिक आसन को सम्भालना है । प्रत्येक मांसपेशी साधारणत: जिस अस्थि को गति प्रदान करता है वह कंडरा के द्वारा जुड़ता है । जुड़ने के स्थान को 'प्रवेशन' कहते हैं । अपने दूसरे सिरे पर मांसपेशी कंडरा के साथ अथवा बिना कंडरा के दूसरी हड्डी के साथ या दूसरे बनावट के साथ स्थित रहता है, इस जुड़ने के स्थान को 'उदगम' कहते हैं । सब मांस पेशियों का ऐसा सरल उदगम तथा प्रवेशन नहीं होता है क्यों कि उनकी शक्ल, डील तथा स्थिति एक सी नहीं होती है ।

मांस पेशियों की उलटी क्रियाThe reverse action of muscles.

साधारण कार्य, मांस पेशियों का सिकुड़न करना है जिसके द्वारा उदगम तथा प्रवेशन के साथ आपस में एक दूसरे की ओर खिचते हैं । इस कारण मांस पेशियाँ उलटा असर भी कर सकती है यदि वह हड्डी जो गति प्रदान करती है, स्थित । है जिस प्रकार दरवाज़ा खोलने में हाथ की गति से दरवाजा शरीर की ओर खिच जाता है । किन्तु यदि दरवाजा बन्द है तथा खोलने की चेष्टा की जा रही है तो हाथ तथा बांह स्थित रहते हैं तथा शरीर दरवाजे की ओर खिच जाता है ।

मांस पेशियों का टेकने के द्वारा कार्य Liver action of muscls:-

मांस पेशियां शरीर में इस प्रकार स्थित है कि वे थोड़ी जगह

में ज्यादा असर पैदा कर सके। यह बचत केवल टेकन तथा घिरनी के द्वारा होता है।

एक से अधिक जोड़ों पर मांस पेशियों का प्रभाव:-Muscles acting upon more than one joint:—

बहुत से उदाहरणऐसे हैं जहां मांस पेशियां एक से ज्यादा जोड़ों पर कार्य करती है। मांस पेशियां एक ही प्रकार गति कर सकती हैं जैसे दोनों जोड़ पर संकुचन या एक पर संकुचन तथा दूसरे पर प्रसरण। दो विभिन्न प्रकार की गति एक ही साथ या पृथक हो सकती है जैसे लम्बे कंडरे जो उंगलियों का संकुचन करती है अनेकों जोड़ों से होकर जाती है और प्रत्येक में वही गति उत्पन्न करती है।

चतुर्शिरिसका मांस पेशी जिसका उदगम कूल्हास्थि के सामने से होता है कूल्हे का संकुचन कर सकती है और घुटने का प्रसरण करती है। दौड़ने या चलने में ये दोनों कार्य करती है। जब घुटने का जोड़ स्थिर रहता है तो कूल्हे का संकुचन करती है यदि कूल्हे का जोड़ स्थित हो तो घुटने का प्रसरण करती है।

मांस पेशियों के कार्य के प्रकार Types of muscular work:—

साधारण कार्य सिकुड़न का है। जिससे उद्‌गम तथा प्रवेशन आपस में खिच जाते हैं ऐसा कार्य बीच का Concentric कहा जाता है।

जब मांस पेशियां देखने में न छोटी होती हैं न लम्बी होती है तो इसे स्थित Static कहते हैं। जब मांस पेशियां किसी बाधा के कारण खिंची हुई अवस्था में निर्बल हो जातीहैं तो इसे अभ्यर्वा थन Eccentric कहते हैं।

---

# जोड़ या सन्धि

जोड़ या सन्धि Joints :-मांस पेशियों की हरकत को समझने के लिए हड्डियों की सन्धि, उनकी बनावट तथा प्रकार जानना आवश्यक है। अस्थि संस्थान के दो या उससे अधिक हड्डियों के संगम को संधि( Joints) कहते हैं। उनके प्रकार के अनुसार वे स्वतंत्र गति, अल्पगति, तथा गतिहीन होती है।

सन्धि का विभाग उनके प्रकृति तथा गति की परिधि पर निर्भर करता है।

१. सन्धि—जो गतिवीहीन है :-

ये वे सन्धियां हैं जहाँ हड्डी की सन्धि मुरमुरी अस्थि के द्वारा होती है जैसे पहली पसली तथा वक्षस्थि वर्ग। यह सन्धि मुरमुरी अस्थि के द्वारा, या कंघीदार सन्धियों द्वारा जोड़, जैसे खोपड़ी में होती है।

२. अल्प गति सन्धि :-

इन में दो अस्थि सतह रेशों से संयुक्त होती है जैसे जंघास्थि तथा अनुजंघास्थि के निचले हिस्से की सन्धि या रगों के साथ रेशो द्वारा मुरमुरी अस्थि जो अस्थि सतह के बीच में स्थित है। जैसे मेरुदल के धड़ों के बीच की सन्धि।

३. स्वतन्त्र गति सन्धि :-

इस में दोनों हड्डियों के सिरे मुरमुरी अस्थि से ढंकी रहती है

तथा एक रेशेदार झिल्ली की पतली थैली से संयुक्त होती है। यह थैली चिकने जाल से जिस साईनोवियल Synovial membrane झिल्ली कहते हैं मढ़ी रहती हैं। यह झिल्ली संधि को चिकना रखने के लिए एक तरल पदार्थ उत्पन्न करती हैं। इन की मजबूती रगों से होती है। जो बग़ल के सन्धि के खाली स्थान से संयुक्त रहती है तथा जिनके अंक शक्ति तथा स्थान, सन्धि के विशेष कार्य पर निर्भर है। सन्धि जिस की गति विस्तृत है। जैसे कि ऊपरी अवयव सन्धि में कूल्हा मेखला संन्धि से कम रगें हैं, जो उससे अल्प गतिवाही हैं, किन्तु शरीर के वजन सम्भालने के लिए उपयुक्त हैं। स्वतंत्र गति वाही सन्धि के निम्न ६ प्रकार है।

(१) कब्जेदार सन्धि Hinge Joints :- कब्जे की भाँति अस्थियों की गति आगे पीछे अर्थात एक ही सतह पर होती है जैसे कोहनी घुटना आदि।

(२) फिसलती हुई सन्धि Gliding Joints जैसे मेरुदण्ड के धड़ों के बीच तथा कुर्चवास्थियों के मध्य

(३) अपने केन्द्र पर घूमने वाले जोड़ Pivot Joints एक हड्डी कील का कार्य करती है तथा दूसरी उसके चारों ओर घूमती हैं जैसे प्रकोष्ठास्थि तथा अन्त: प्रकोष्टस्थि के ऊपरीं हिस्से की सन्धि।

(४) गोली तथा खत्तीदार सन्धि Ball anh Socket Joint एक हड्डी का गोल सिरा दूसरी हड्डी के प्यांले जैसे सिरे में फँस जाती है इस प्रकार हड्डियाँ स्वतन्त्रता से चारों ओर घूम सकती है। घुमाव चारों ओर गोलाई से होता है। जैसे कूल्हा तथा स्कन्ध सन्धि में होता है।

(५) फिसलने वाली ठंडी सन्धि Condyloid Joints :- इस

सन्धि में धनुषाकार हड्डी उभरी हुई हड्डी के खोखले में फंस जाती है जैसे कलाई की सन्धि । इसमें गति चारों ओर होती है किन्तु बीच के धुरे के चारों ओर गोलाई से नहीं घूमती ।

(६) काठी कसा हुआ सन्धि Saddle Joint :-ऐसे सन्धि को सतह धनुषाकार उभरी हुई खाली होती है तथा जो गति सम्भव है वह फिसलने वाली डडी सन्धि के प्रकार की है । जैसे अंगूठे की मणिबन्ध करभास्थि सन्धि ।

मेरु दण्ड की सन्धियाँ :-

(१) मेरूदण्ड के कशेरूकायओं में अल्पगति सन्धियां अपने स्थान पर दो मजबूत रगों के द्वारा जो उस के पूरे लम्बान तक जाती है रखा जाता है । इसमें से एक मेरु दण्ड के सामने तथा दूसरा पीछे से जुड़ता है ।

(२) स्वतन्त्र फिसलने वालीं सन्धि गतिशील सतह के मध्य जो कशेरूकाओं के वृत्त खण्ड से निकली हुई है प्रत्येक में एक फिसलने की गति होती है, जिसकी दिशा तथा विस्तार उनकी मेरु दण्ड में स्थिति पर निर्भर है । गर्दन तथा कमर वर्ग के कशेरूकाओं के गति में पीठ वर्ग के कशेरूकाओं से अधिक स्वतन्त्र है । इसके साथ प्रत्येक पीठ कशेरूकाओं में चार स्वतन्त्र फिसलने वाली । सन्धियाँ उनसे मिलती हुई पसलियों के लिए हैं ।

नुकीला उभार(Spinous Process) तथा पास के कशेरूका के वृत्तखण्ड के बीच का स्थान पीले रंग के अत्यन्त मजबूत रगों से भरा है जो साधारण रगों की तरह नहीं होती है किन्तु अत्यन्त लचीली होती है । यदि यह रग लचीली न हो तो मेरु दण्ड के सामने की गति असम्भव हो जायेगी ।

पसलियों की सन्धि (Rib Joints) :-

प्रत्येक पसली का सिरा तथा गर्दन दो फ़िसलनेवाली स्वतन्त्र गति सन्धि शरीर के साथ तथा उसी के विपरीत पीठ वर्ग के कशेरुकाओं का तिरछी व्यवस्थित प्रकार के साथ बनाती है। प्रत्येक पसली के गति में अपना प्रकार तथा विस्तार होता है। किन्तु सांस लेने की क्रिया में सब की गति संयुक्त होती है।

सांस लेने में वक्षस्थल (Thorax) का घेरा बढ़ जाता है। सांस छोड़ने में घेरा कम हो जाता है। सांस लेने में पसलियों, पसलियों सम्बन्धी मुरमुरी हड्डियाँ तथ वक्षस्थि की संयुक्त गति होती है। वक्षस्थल के सामने तथा बगल की दिवाल की गति ऊपर सामने तथा बाहर की ओर होती है। सांस छोड़ने में इसके विपरीत होता है।

स्कन्ध मेखला की सन्धि (Joints of the Shoulder Girdle) :-

वक्षोस्थि तथा अक्षकास्थि के बीच की सन्धि स्वतन्त्र सरकने वाली सन्धि है। केवल यहीं स्कंध मेखला धड़ के साथ घूमता है। इस सन्धि के कारण अक्षकास्थि स्वंतन्त्रता से चहु ओर घूमता है।

अक्षकास्थि का बाहरी सिरा स्कंधास्थि के साथ स्वतन्त्र गति सन्धि बनाता है जिसके द्वारा फिसलने की गति होती है। इन दोनो उपरोक्त सन्धियों पर बहुत ज़ोर पड़ता है इस लिए बहुत मज़बूत रग सहायता करते है।

स्कंध सन्धि (Shoulder Joint :-

यह गोल व खत्तीदार सन्धि है जो प्रगण्डस्थि व स्कन्धअस्थि के मेल से

बनता है। बनावट की दृष्टि से यह एक बलहीन सन्धि है, तथा अपनी शक्ति के लिए जिससे इसको शक्ति मिलती है, रगों से अधिक अपने चारों ओर घिरे हुए मांस पेशियों पर निर्भर है।

पूरी सन्धि एक थैली में बन्द रहती है तथा कुछ रगों से जो सामने तथा ऊपर हैं अपनी शक्ति पाती है। सात मुख्य मांस पेशियां अपना सहारा विशेषकर सन्धि थैली के ऊपरी हिस्से में देती है। थैली का निचला भाग अल्प सुरक्षित है अतएव जब कंधे का जोड़ उखड़ जाता है तो निचले कमजोर थैली के हिस्से के कारण होता है।

कोहनी की सन्धि The Elbow Joint ;-

यह कब्जेदार सन्धि है। प्रगण्डस्थि के निचले भाग अन्तः प्रकोष्ठि का ऊपरी सिरा तथा प्रकोष्ठास्थि के सिर की गति से बनता है। इसकी दो गतियाँ हैं फैलना तथा सिकुड़ना।

प्रकोष्ठस्थि तथा अन्तः प्रकोष्ठस्थि की सन्धि ( Joints between radial and ulna)

प्रकोष्ठस्थि तथा अन्तः प्रकोष्ठस्थि के बीच की ऊपरी तथा निचली गति दोनों अपने केन्द्र पर घूमने वाली सन्धि है। ऊपर की सन्धि में प्रकोष्ठस्थि का गर्दन एक रगों के वृत्ताकार के अन्दर घूमता है तथा निचली सन्धि में प्रकोष्ठस्थि का सिरा अन्तः प्रकोष्ठस्थि के चारों ओर घूमता है।

कलाई की सन्धि Wrist Joint ;-

यह फिसलने वाली डंडी की संधि है जो प्रकोष्ठस्थि के निचले भाग, मुरमुरी हड्डी की एक गोलाई जो अन्तः प्रकोष्ठस्थि के निचले

हिस्से से मिली है तथा मणिबन्ध अस्थियों का ऊपरी आकार से बनी है। यह सन्धि के दोनों ओर आगे तथा पीछे रगों से मजबूत किया हुआ होता है।

कूल्हास्थियों की सन्धि The Hip Joint ;-

यह एक गोली के समान तथा खत्तेदार सन्धि है जो असीटाबलम (Acitabulum) को कटोरे की भाँति गढ्ढे तथा उर्वास्थि के सिरे से बनता है। यह एक मजबूत थैली और रगों से घिरी है जिसके ऊपर यह विशेषकर अपनी स्थिरता के लिए निर्भर है। कूल्हास्थि सन्धि के सामने की रगें शरीर में सबसे मजबूत हैं।

घुटने की संधि The Knee Joint ;-

घुटने की सन्धि उर्वास्थि और जंघास्थि के ऊपरी हिस्से की दो हड्डियों से बनी है। दो अर्धचन्द्राकार रूप में रगों के टुकड़े जंघास्थि के ऊपरी हिस्से से मिली है। इन रगों का उद्देश्य हड्डियों की सतह तथा जंघास्थि के बीच एक चिकनी तथा सही बैठने वाली गति देने का है।

घुटने की सन्धि में एक ढीली थैली है जो एक मजबूत रग से दोनों तरफ सहारा पाती है। दो मजबूत रगें भी जंघास्थि से निकलती हैं तथा उर्वास्थि के डंडियों के बीच संयुक्त होती है तथा ये रगें सन्धि के मध्य के ऊपर आड़ी तरह से इस प्रकार स्थित है जिससे ये सन्धि के गति में बाधक नहीं होती है तथा उर्वास्थि को जंघास्थि के ऊपर आगे या पीछे फिसलने से बचाती है। घुटने की सन्धि का सामना, बहुत मजबूत मांस पेशियों के मिश्रित स्नायु से

जो घुटने तक फैलता है सहारा पाता है। घुटने की गोल हड्डी Patella जो इस स्नायु के अन्दर स्थित है दोनों डंडियों के बीच की नली के साथ चलता है। घुटने की सन्धि सबसे असुरक्षित सन्धि मालूम होती है। क्योंकि बोझा उठाने का टिकाव जो शरीर के दो सबसे बड़ी हड्डियों से दिया जाता है। वह बहुत अधिक है। सन्धि सतह आपस में समीप संगठित नहीं हैं तथा जो गति उससे उत्पन्न होती है वह अधिक है। तो भी यह सन्धि अत्यन्त मजबूत है क्योंकि इसे शक्तिशाली रगों तथा मांस पेशियों से जो इसके चहू ओर हैं, सहारा मिलता है।

जब ज्यादा चोट पहुंचती है तभी यह सन्धि भंग होती है। घुटनों में पानी की अवस्था (Synovitis) अत्यधिक साइनोवियल, तरल पदार्थ (Synovial fluid) के छूटने में होता है जो घुटनों की बीमारी या चोट के कारण होती है। जहाँ भी साइनोवियल झिल्ली हो वहाँ यह हो सकता है, अर्थात किसी भी स्वतन्त्र गति प्रकार के सन्धि में हो सकता है। साधारणतः यह घुटने में देखा जाता है।

घुटने की रगें साधारणतः खराब हो जाती हैं। इस अवस्था में वे सन्धि के प्राकृतिक गति में बाधक हो सकती हैं। जब एक पैर का घुटना मुड़ा हुआ मजबूती से जमीन पर रहता है तथा ऐसी ही अवस्था में यदि शरीर में प्रचन्ड गति हो तो मुरमुरी हड्डी को क्षति पहुंच सकती है। मुरमुरी हड्डी के क्षति से घुटना बंध जा सकता है।

टखने की सन्धि The nakle Joint :-

टखने की संधि जंघास्थि के निचले हिस्से तथा अनुजंघास्थि के निचले हिस्से तथा टालस (Talus) के घूमने वाली सतह से बनता है। यह एक कब्जेदार सन्धि है तथा इसकी थैली को मजबूत रगों से दोनों ओर सहायता मिलती है जिसमें छोटी रगें पीछे तथा सामने रहती हैं। बगल की रगें कभी २ टखनों के घूम जाने से टूट जाती हैं। अधिकतर यह ठीक रहती है किन्तु हड्डी का एक टुकड़ा अनुजंघास्थि के निचले हिस्से को फाड़ लेती है।

# शरीर क्रिया शास्त्र

## BLOOD CIRCULATION

**जीवधारी जीवन के ढंग की विद्या से शरीर के प्रत्येक कार्य तथा अंगों का पृथक पृथक तथा अंगों का सामूहिक कार्य का ज्ञान होता है ।**

रक्त संचालन संस्थान :-

रक्त वह तरल पदार्थ है जिसके द्वारा शरीर का प्रत्येक अंग भोजन प्राप्त करता है। यह हृदय के पम्प करने पर शरीर के भिन्न भिन्न संस्थानों में परिभ्रमण करता है। रक्त तन्तुओं को आक्सीजन तथा पाचन क्रिया में कुछ पदार्थ जो उनकी आवश्य कताएं होती हैं पहुँचाता है। रक्त उन दूषित पदार्थों को भी तन्तुओं से ले जाता है जो जमा हो जाते हैं। रक्त तन्तुओं को कीटाणुओं के आक्रमण से सुरक्षित करता है। रक्त में कुछ कोप होते हैं जो उस स्थान के चारों ओर जमा हो जाते हैं जहाँ कीटाणु आक्रमण करने की चेष्टा करते हैं। जैसे ही कोष घेरा डाल चुकते हैं तथा दुश्मन को बन्द कर लेते हैं वैसे ही कोप रक्त आक्रमण करते हैं तथा कीटाणुओं का नाश करते हैं।

रक्त की बनावट :-The composition of Blood.

रक्त एक तरल पदार्थ है जो शरीर के अन्दर गतिवान शारीरिक

तन्तु है। यह आँखों से देखने में केवल एक लाल तरल पदार्थ ज्ञात होता है किन्तु यदि एक ताजे बून्द रक्त का परीक्षण किया जाय तो कई असंख्य लाल रक्त कण दिखायी देंगे, जो एक पीले रंग के तरल पदार्थ में तैरते हैं जिसे रक्तवारि (Plasma) कहते हैं। इसमें अन्य कोष भी उपस्थित रहते हैं। यह श्वेत रक्त कण कहलाते हैं जो किटाणुओं को साफ करते हैं। यह गिनती में लाल रक्त कणों के समान अधिक नहीं है। रक्त वारि तथा कोष शरीर के योजना का बटे ११ भाग है।

रक्तवारि Plasma :-रक्तवारि जल के सदृश्य पीतवर्ण पारदर्शक द्रव्य है। इसमें जल, प्रोटीन, कुछ धातु जिसमें साधारण नमक मुख्य है। प्रोटीन में वह वस्तु है जिस से रक्त जम जाता है।

लाल रक्त कण Red Blood corpuscles :- इनका आकार गोल टिकियों के समान हैं। इन के दोनों तले अन्दर की ओर धँसे रहते हैं। ये बड़े लचीले होते है, इनमें एक गाढा तरल पदार्थ रहता हैं। इनका निर्माण रक्त रंजन (Haem-oglobin) युक्त जीवेज से होता है। रक्त रंजन का मुख्य गुण उसके आस पास से जहाँ आक्सीजन अधिक उस स्थान में ले जाने का है जहाँ वे नहीं है। जहाँ अत्यधिक आक्सीजन हो वहाँ से रक्त-रंजन आक्सीजन खींच लेता है तथा वहां तन्तुओं में छोड़ता है जहाँ आक्सीजन समाप्त हो गया हो अथवा थोड़ी मात्रा में हो। रक्त जिस में अधिक आक्सीजन हो वह चमकीला लाल रंग का होता है। जिस रक्त में कम आक्सीजन होगा वह धुंधला लाल होगा। यदि शिरा से रक्त लिया जाय तो वह भी धुंधला लाल

होगा क्योंकि रक्त ने आक्सीजन तन्तुओं को दे दिया है किन्तु वह यदि टेस्ट टयूब में आक्सीजन के साथ मिलाकर हिलाया जाय तो वह चमकीला लाल हो जायेगा।

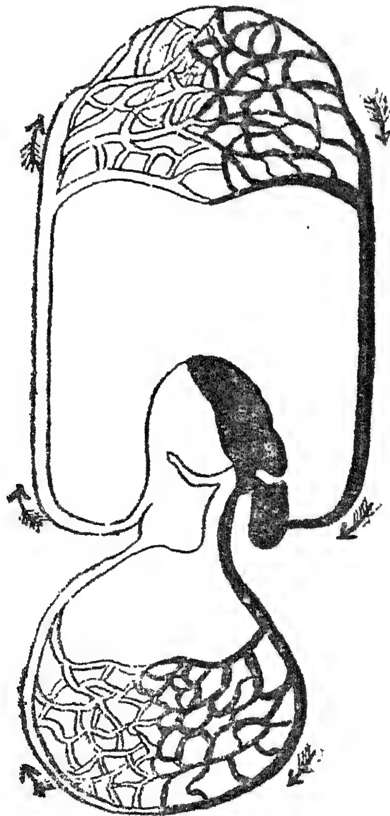
लाल रक्त कण अस्थि के गुदे में उत्पन्न होते हैं। स्वस्थ प्रौढ़ व्यक्ति में पांच या छः लाख, एक क्यूबिक मिलीमीटर रक्त में होते हैं। रक्त हीनता (Aneamia) में रक्तरंजन की कमी हो जाती है तथा लाल रक्त कण भी कम हो जाते हैं।

श्वेत रक्त कण white corpurles :- लाल रक्त में कणों बड़े होते हैं। वे वृत्ताकार होते हैं किन्तु लाल रक्त कण से भिन्न होते हैं। कोष के अंदर एक और शरीर होता है Neucleus श्वेत रक्त कण विभिन्न प्रकार के होते हैं। इनका कार्य समान है। रोगाणुओं से शरीर की रक्षा करना तथा रोगाणुओं को नाश करना है। श्वेत रक्त कण कुछ हड्डी के गूदे में बनते हैं तथा कुछ लसीका ग्रन्थि में।

रक्त संचालनThe circulation of blood :-हृदय, शरीर के प्रत्येक हिस्से में रक्त का संचालन नली के द्वारा करता है जो हृदय से बाहर रक्त ले जाते हैं उन्हें धमनी कहते हैं तथा जो रक्त हृदय में वापस लाते हैं उन्हें शिरा कहते हैं। धमनी अनैच्छिक मांस पेशियों तथा लचीले रंगों से बना है तथा अंदर से बहुत दबाव सह सकता हैं। हृदय के समीप उनका दायरा १ इन्च का है।

जैसे वे हृदय से दूर जाते हैं पतले होते जाते हैं तथा छोटी २ शाखाओं में बँट जाते हैं जिन्हें केशिकायें Capillary कहते हैं। प्रत्येक केशिका में दो सिरे होते हैं एक धमनी का सिरा जो धमनी

का अन्त होता है और शिरा का सिरा जहां से शिरा आरम्भ होता है ।



शिरा केशिकायें आपस में मिलकर छोटी २ शिरा बनाती है जो क्रमशः बड़ी होती जाती है जैसे जैसे उनके मार्ग में हृदय तक

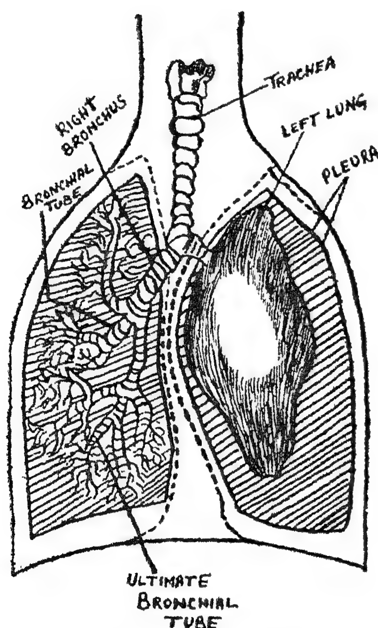
जाने में शाखायें मिलती है। शिरा की दीवार धमनी से पतली होती है तथा कम लचीली होती है क्योंकि उनके अंदर से ज्यादा दबाव नही पड़ता। उनके दीवारों में मांस पेशियों के रगें होती हैं।

प्रत्येक शिरा में जिसमें रक्त रहता है तथा जिसे पृथ्वी के आकर्षण शक्ति के विरुद्ध प्रवाहित होना पड़ता है उनके मार्ग में कपाट थोड़ी २ दूर पर स्थित हैं। ये कपाट रक्त को हृदय की ओर प्रवाहित होने में सहायक हैं तथा आकर्षण शक्ति के कारण उल्टी दिशा में प्रवाहित होने से रोकते हैं।

हृदय, बनावट तथा कार्य दूसरे अध्याय में दिये गये हैं।

———

# श्वास संस्थान
## RESPIRATORY SYSTEM




श्वास संस्थान में सांस की नली तथा फेफड़े आते हैं इनका कार्य रक्त के लिए आक्सीजन देना और कुछ दूषित पदार्थ जो शरीर से निकलते हैं, जिसमें विशेष है कार्बन डाइआक्साइड को हटाना।

वायु की नली Air Passage.—

वायु की नलियों में नाक का मार्ग Pasal passage, ग्रसनी Pharynx या गले का पिछला हिस्सा स्वर यन्त्र Larynx जिसमें रज्जु Vocal cord रहता है। वायु नली Wind pipe तथा क्लो मालियां Bronchial tubes का छोटा तथा बड़ा भाग आता है।

नाक का मार्ग Nasal Passage :—

यह सांस लेने में महत्व पूर्ण कार्य करते हैं। नाक का भाग दो भागों में विभाजित है। (१) दाहिना तथा (२) बायां नाक का मार्ग। यह एक विभाजक के द्वारा सेपृय Septum विभाजित होता है। प्रत्येक नाक के मार्ग के बाहरी दीवार पर तीन हड्डियों के कोर Flanges हैं। दोनों ओर दो गुफायें Cavitics हैं एक गाल की हड्डी में तथा दूसरे माथे की हड्डी में ठीक आंखों के ऊपर है। ये अपनी ओर के नाक के सुराग एक छोटी खुली हुई जगह से मिली है। नाक के सुराग तथा दूसरे खाली स्थान की पूरी सतह झिल्ली से मढ़ी हुई है जो एक साफ़ तथा कुछ लसलसा तरल पदार्थ Mucous छोड़ते हैं। यह तरल पदार्थ ठंढे मौसम में अधिक आता है। यह नाक की सुरागों को हवा की छलनी के कार्य के रूप में सहायक होता है तथा धूल तथा कीटाणुओं को अपनी चिप-चिपी झिल्ली में चिपका लेता है। यह तरल पदार्थ स्वयं कीटाणुओ के नाश करने की योग्यता रखता है। एक भीगी झिल्ली स्वास्थ्य के लिए अति आवश्यक है। जब यह गर्मी में खुश्क हो जाता है तो काम नहीं कर सकता इस कारण कीटाणु अन्दर जा कर रोग उत्पन्न कर सकते हैं। मामूली सर्दी जुकाम इसी तरह लगता है।

झिल्ली का बड़ा घेरा जो नाक के सुरंग की हड्डियों को ढकता है अधिकतर झिल्ली छोटे रक्त पात्रों से भरी हुई है। रक्त, इन पात्रों में गर्मी देता है जिससे हवा फेफड़ों में जाने से पहले गर्म हो जाये। इस प्रकार हवा गर्म होकर ग्रसनी Pharynx से होते हुए स्वर यन्त्र Larynx में जाता है तथा वहां से रज्जुओं Vocal cord के बीच

से होकर वायु नली में आता है। ये वायु नली दो नलियों में ( Bronchial Tubes ) विभाजित हो जाता है तथा फेफड़ों में जाती है। फेफड़े के तन्तुओं में यह नली इतनी अधिक विभाजित हो जाती है कि इनकी शाखायें देखना कठिन होता है। ये छोटी शाखायें वायु की थैली Air Bags में खुलती हैं। वायु नली की दीवारें और दो बड़े बड़े (Bronchial) नली अधिकतर मुरमुरी हड्डी की बनी है जो एक कड़े पदार्थ का काम देती हैं जिससे दीवार गिर न जाये तथा वायु मार्ग में रुकावट न हो।

फेफड़े Lungs :—

वक्षस्थलीय गुफा का अधिकतर भाग दाहिने तथा बायें फेफड़ों हृदय तथा रक्त के बड़े पात्रों से भरा है। फेफड़े का पदार्थ कम हलका छिद्र पूर्ण, सोखने वाली (Spongy) बिनावट का है तथा अत्यधिक लचीला है। इनमें लाखों वायु की थैलियां हैं जो प्रत्येक अत्यन्त क्षुद्र श्वास प्रणाली से खुलती है तथा उनमें धमनी तथा सिरा होती हैं। वायु की थैली की दीवारें लचीली होती हैं और उन पर एक पतली तह की कोषों का जमाव है। यह पतली तह रक्त केशिकाओं को जो थैली की दीवार में होती है, वायु से जो थैली में होती है, पृथक करती है तथा वायु की थैली से आक्सी-जन रक्त केशिकाओं में तथा कार्बन डाईआक्साइड विपरीत दिशा में भेजती है।

फेफड़े एक चिकनी झिल्ली (Plura) से ढकी हुए रहती है। जो वक्षस्थल के अन्दर की दीवार को तथा महा प्रचीरा के ऊपरी हिस्से को भी ऐसा मढ़ता है कि वह फेफ़ड़े को पूरी तरह से ढक लेता

है। केवल वह हिस्सा छूट जाता है जहां से वायु नली की अस्तर तथा क्लोमालिया, तथा रक्त पात्र अन्दर आते हैं। यह प्लूरा की थैली वह स्थान है जो प्लूरा के आन्तरिक तथा बाहरी तह के मध्य में है। प्राकृतिक स्वास्थ में यह स्थान होता ही नहीं है क्योंकि फेफड़े, सीने के दीवार से सटे रहते हैं किन्तु यदि प्लूरा का बाहरी या भीतरी तह छिद जाता है और इस स्थान में वायु प्रवेश कर जाती है तब वह ! वास्तविक स्थान बन जाता है क्योंकि फेफड़े अपने लचीले तन्तुओं के कारण सिकुड़ जाते हैं।

जीव सम्बन्धी शक्ति Vital Capacity :—

किसी व्यक्ति की जीव सम्बन्धी शक्ति पूरी सांस लेने के बाद पूरी सांस छोड़ देने के भाप से निर्धारित किया जा सकता है। साधारण सांस लेने में फेफड़े अपनी शक्ति का १/१० कार्य करती है तथा हवा का वजन जो फेफड़ों के बाहर जाती है तथा अन्दर आती है प्रत्येक सांस में ३००-५०० सी० सी० होता है। यदि मामूली सांस लेने के बाद ज्यादा से ज्यादा सांस लेने की चेष्टा की जाय तो जो और हवा निकाली जायेगी करीब १५०० सी सी होगी, इसी प्रकार सांस छोड़ने के बाद यदि ज्यादा से ज़्यादा सांस छोड़ने की चेष्टा की जाय तो वह भी १५०० सी०सी० होगी। इन तीनों का योग जो ३. ५०० सी सी जीव सम्बन्धी शक्ति होगी। साधारण स्वास्थ्य में भी यही रहता है। किसी २ हृदय तथा फेफड़े के रोग में यह कम हो जाता है। यह ऐथलेटिक्स तथा सांस के व्यायाम से बढ़ाया जा सकता है। सांस छोड़ने के बाद भी वायु थैली में सांस बच जाता है।

फ़ेफड़ों का जीव सम्बन्धी शक्ति का माप उनके शरीर के परिश्रम करने के समय के अधिक आक्सीजन की मांग की प्रतिक्रिया की योग्यता है। इस शक्ति की अधिकता से अधिक स्वस्थता की भावना नहीं होती किन्तु इसके द्वारा व्यक्ति क्रिया शील रहता है।

स्तर से कम जीव सम्बन्धी शक्ति हृदय तथा फेफ़ड़े के रोगों का चिन्ह है। वायु जो सांस के रूप में ली जाती है वह आक्सीजन २०.९६ ०/०, नाइट्रोजन ७९.०० ०/० तथा कार्बन डाईक्साईड ०.०४ ०/० मिला हुआ होता है। नाईट्रोजन पानी कर देता है। आक्सीजन की कमी से वही हालत होती है जैसे अधिक मदिरा पान करने से होती है। समझ बूझ में खराबी हो जाती है और उत्तेजना कम हो जाती है। किन्तु व्यक्ति को पता नहीं चलता है। जो सांस हम छोड़ते हैं उसमें १६ ०/० आक्सीजन है १४ ०/० कार्बन डाईक्साईड है। छोड़े हुए सांस में भाप काफ़ी होता है जिससे गर्मी निकल जाती है।

---

[४९]

# निशक्रमण संस्थान
## EXCRETORY SYSTEM

इस संस्थान का कार्य दूषित तथा व्यर्थ वस्तुओं को शरीर से बाहर निकालना है। इस संस्थान के अंतर्गत त्वचा, गुर्दे, फ़ेफड़े तथा मल द्वार आते हैं।

कार्बन डाईआक्साईड तथा पानी का फेफड़ों से निकलने का वर्णन हो चुका है। स्वास्थ में, शराब को छोड़ कोई और पदार्थ फ़ेफड़ों से बाहर निकाले नहीं जाते।

पाचन क्रिया से बचे हुए भोजन का मलद्वार के बाहर निकालने का भी वर्णन हो चुका है। यकृत (Liver) में थके हुए लाल रक्त कण के रक्त रंजक से बने हुए पित्त का रंग मल में जाता है जिससे उस का विशेष रंग होता है।

गुर्दे Kidneyes :-

दो गुर्दे मेरुदण्ड के दोनो ओर उदर के पिछली दीवार पर स्थित हैं। प्रत्येक गुर्दे में तन्तुओं की दो तहें हैं। एक बाहरी तथा दूसरा भीतरी। इसमें एक धमनी तथा एक शिरा और एक नली युरेटर (Ureter) जो कि मूत्र थैली से जुड़ी होती है। इस के तन्तु हजारों निशक्रमण इकाइयों से बना है और प्रत्एक में एक छोटी धमनी तथा एक छोटा शिरा है जो युरेटर से एक लम्बे नली से

जिसमें अनेकों फंदे हैं मिला हुआ है। ये बाहर निकालने वाले शाखों में, एक रक्त के गुच्छे का पात्र, जो एक थैली से ढका हुआ है, जिसका अस्तर एक विशेष कोष के द्वारा होता है, जिसमें चुनने की क्रिया होती है, केवल रक्त में कुछ ही पदार्थों को जैसे चीनी तथा नमक नली वाले हिस्से में छन कर जाने देता है।

रक्त के गुच्छे (Glomeruli) के द्वारा जो तरल पदार्थ छनता है उसमें साधारण नमक, यूरिआ तथा युरिक ऐसिड होता है। इस में प्रोटीन या चर्बी नहीं होती। नीचे नली में जाते हुए पानी तथा साधारण नमक कुछ मात्रा में शरीर की आवश्यकतानुसार शोषित हो जाते हैं। किसी गर्मी के दिन यदि कठिन परिश्रम किया जाय और पानी न पिया जाय तो एक गहरे रंग का तथा जमा हुआ मूत्र होता है जिसमें नमक कम होता है। पानी तथा नमक त्वचा के द्वारा पसीना बनकर निकलने के लिये आवश्यक है।

किसी ठंडे दिन में यदि जब तरल पदार्थ का ख़ूब सेवन किया जाय तो बहुत मात्रा में धुला हुआ मूत्र होगा। यह वह पानी होगा जिसे शरीर को आवश्यकता नहीं होती है।

त्वचा Skin :-

नमक तथा पानी पसीने के रूप में त्वचा के द्वारा निकाले जाते हैं।पसीने की ग्रन्थियां त्वचा के सतह पर विशेष यन्त्र द्वारा देखी जा सकती है। यह छोटे गढ्ढ़ों की तरह दिखाई देते हैं और जहाँ बाल नहीं होता है वहाँ अत्यधिक पाये जाते हैं। जैसे माथा हथेली आदि में, गर्मी में पसीना शीघ्रता से निकलता है या कठिन परिश्रम के बाद निकलता है, जो बूदं के रूप में त्वचा पर दिखाई

देता है। जैसे ही वह भाप बनकर उड़ जाता है त्वचा ठंडी हो जाती है।

पसीना निकलने का अर्थ है कि त्वचा अधिक मात्रा में कार्बन डाईआक्साईड उत्पन्न कर रही है।

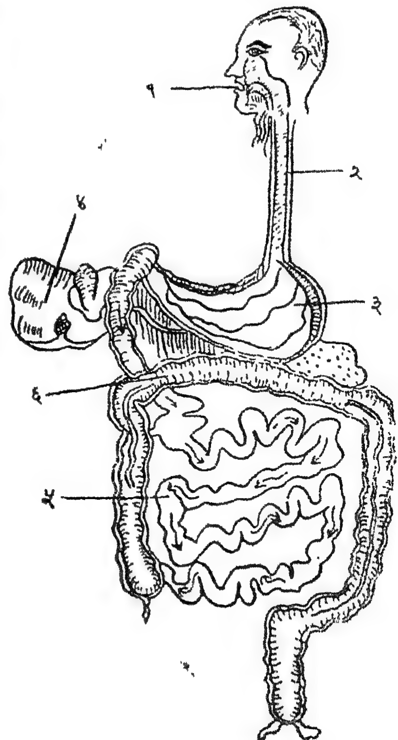
पसीना निकलने का सही महत्व शरीर के ताप पर प्रभाव डालने पर है। शरीर तीन प्रकार से गर्मी बाहर करता है। प्रथम किरण होकर निकलना, द्वितीय किसी वस्तु के द्वारा गर्मी निकालना, तृतीय भाप के द्वारा गर्मी निकालना।

यदि वातावरण में वायु का तापमान शरीर के तापमान की भांति है तब गर्मी पसीने का रूप धारण करके निकलेगी।

———

# पाचन संस्थान

DIGCSTISE SYSTEW




भोजन में जो खाया जाता है पाचन संस्थान के द्वारा इस रूप में बदल जाता है जिससे उसके द्वारा शरीर के विभिन्न अंगों का पोषण हो सके। उस क्रिया को जिससे यह सम्भव है पाचन क्रिया कहते हैं। इस क्रिया में भाग लेने वाले अवयव समूह को पाचन संस्थान कहते है।

शरीर में मुख से गुदा तक भोजन ले जाने वाली पचाने की नली एक नली के आकार की है जो मुँह से आरम्भ होता है और गुदा में अन्त होता है। यह शरीर में भोजन को एक

स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने में नियन्त्रण करता है। इसमें वह यन्त्र रचना है जिससे पेट में भोजन भरना पचाना जमा करना तथा अन्त में बाहर निकलना है।

इस संस्थान के मुख्य अवयव मुखगर्त, भोजन प्रणाली, अमाशय तथा आँत है।

मुख गर्त Mouth cavity ;-

जीभ, दाँत और लार सम्बन्धी ग्रन्थियाँ भोजन को अमाशय में पहुंचाने के पहले तैयार कर देती है। लार या थूक मुंह में अगल बगल और फर्श पर नाली के द्वारा निकलता है। इसमें पाचन क्रिया का गुण है परन्तु इसका मुख्य कार्य भोजन को चिकना करना है जिससे भोजन चबाने तथा निगलने में कठिनाई न हो। भोजन का विचार दृश्य, तथा सुगन्ध लार का परिचालन कर देती है।

गला The Gullet ;-

यह एक सँकरी मांस पेशियों की नली है जो १०" लम्बी है। यह ग्रसनी को आमाशय से मिलता है। यह वायु नली तथा हृदय के पीछे महा-प्राचीरा से होते हुए अमाशय में पहुंचता है। इसके ऊपरी हिस्से की दीवार ऐच्छिक मांसपेशियों से और इसका निचला हिस्सा अनैच्छिक मांसपेशियों से बना है। ऐप्पिजलोटिस Epiglotis के द्वारा भोजन फेफड़ों में नहीं जा पाता जो भोजन निकलने के समय अपने आप एक कूट द्वार की तरह स्वर यन्त्र के प्रवेश के ऊपर बन्द हो जाता है।

अमाशय Stomach :-

शरीर में मुख से गुदा तक भोजन ले जाने वाली पचाने की

नली का सबसे चौड़ा हिस्सा है। यह एक मांशपेशियों का बना हुआ अंग उदर के ऊपरी भाग में दाहिने ओर महाप्राचीरा तथा हृदय के ठीक नीचे स्थित है। यह स्थिति तथा आकार में शरीर के स्थान तथा कितना भोजन पदार्थ इसमें हैं, इसी के अनुसार बदलता रहता है। इसके दिवार तीन आड़े तिरछे अनैच्छिक मांस पेशियों के तह के बने हुए हैं तथा इस को एक मोटी झिल्ली का अस्तर है जिसमें ग्रन्थियाँ हैं जो उदर सम्बन्धी रसायन पदार्थ gastric juice छोड़ता है।

अमाशय का संकरा नीचे का हिस्सा Pylorus एक वृत्ताकार अनैच्छिक मांस पेशियों से मोटा किया हुआ है जो सिकुड़ने से अमाशय से बाहर का रास्ता रोक सकता है। पाइलोरस साधारणतः बन्द रहता है किन्तु पाचन क्रिया के समय यह समय २ पर खुलता रहता है जिससे भोजन आगे आंतो में जा सके।

आंते (Intestine) ;-

आँते दो असमान व्यास के हिस्सों में बँटी हुई है। पहला हिस्सा छोटी छोटी आँते तथा दूसरा हिस्सा बड़ी आंते कहलाती है। छोटी आँत २२' लम्वीं है और उसका व्यास १" है उसके दीवार में दो तह की अनैच्छिक मांस पेशियाँ और एक तह की हैं झिल्ली का अस्तर है जिसमें अनेकों ग्रन्थियाँ हैं जो उदर सम्बन्धी रसायन पदार्थ छोड़ते हैं। झिल्ली अनेकों सतह के परत में है जिससे शोषक (Absorbent) क्षेत्र बढ़ जा सके।

छोटी आंत का ऊपरी हिस्सा एक नली से मिला हुआ है जो और दो नलियों की संयुक्त से बना हुआ है, एक जिगर से पित्त की

नली जो गाल ब्लाडर (Gall bladder) से पित्त छोटी आंत तक पहुंचाती है, दूसरी एक ग्रन्थि अंग (Pancreas) से जो उदर सम्बन्धी रस छोड़ता है।

बड़ी आंत करीब ४' लम्बी है और व्यास २'' हैं। यह उदर गुफा के निचले दाहिने हिस्से से निकलती है और दाहिने ओर होते हुए ऊपरी हिस्से मे दांयी तरफ नीचे कूल्हे में जाती हैं यहां यह चौड़ी होकर मलद्वार बन जाती है। मलद्वार से जो पतली नली निकली है उसे मलद्वार नली (Anal Canal) कहते हैं। बड़ी आंत या बृहदान्ति के दीवार की बनावट छोटी आंत या क्षुदन्ति की तरह है किन्तु उस की झिल्ली में केवल बलगम निकालने वाली ग्रन्थियां है जो एक चिकनी तरल पदार्थ छोड़ती है। अमाशय तथा आंते उदर की थैली में एक दोहरे तह की झिल्ली के द्वारा जिसे मेसेन्ट्री (Mesentry) कहते हैं सहारा पाते हैं। यह उस झिल्ली का एक हिस्सा है जिससे सम्पूर्ण उदर की थैली मढ़ी जाती है। मेसेन्ट्री के द्वारा अमाशय तथा आंते बाहरी उदर की दीवाल से टिकी रहती है।

पाचन क्रिया Digestion :-

भोजन पचाने की पहली क्रिया मुँह में ही आरम्भ हो जाती है जहाँ लार कुछ क्रिया करता है। भोजन को अच्छी तरह चबाना चाहिए क्योंकि तभी पचाने वाला रस आसानी से उस पर काम कर सकता है तथा पाचन तथा शोषण क्रिया अच्छी तरह से होगा भोजन अच्छी तरह चबाने के बाद जीभ उसे गोली बनाता है निवाले निगलने के बाद वह गले से अमाशय में जाता है। अमाशय

में पहुंच कर वह एसिड गास्ट्रिक जूस (Acid gastric Juice) मे मिलाया जाता है। और तब प्रोटीन का पचना आरम्भ होता है। ये पाचन सम्बन्धी रस जठराग्नि(gastric juic ) उन कीटाणुओं को जो भोजन को दूषित करते हैं नाश कर देता है।

भोजन के निगलने के आधे घंटे के बाद आमाशय अपनी वस्तु छोटी आँत में छोड़ने लगता है और प्रायः तीन घन्टे में खाली हो जाता है। जब आमाशय की एसिड मिली वस्तुऐं छोटी आँत में जाती है तो वहाँ अलकलाइन (Alkaline) रस में जो आँतों के ग्रन्थियों से निकलता है उसका प्रसार खतम कर दिया जाता है। दूसरे रस जैसे पित्त तथा पेन्क्रियाटिक रस Bile and Pancratic Juice) छोटी आंत के ऊपरी हिस्से में जिस समय भोजन पदार्थ वहाँ से आगे बढ़ता है, डाला जाता है। पित्त में विशेष नमक होता है जो चर्बी पचाने में सहायता करता है। पानक्रियास से तीन तरह के तरल पदार्थ मिलते हैं जो प्रोटीन, चर्बी तथा कारबोहाईड्रेट के पचाने में काम करती है।

छोटी आंत से बाहर निकलने में भोजन दो घन्टा लेता है। इस समय वे तरल पदार्थ जो घुलने वाले नहीं हैं वे घुलने वाले बनाये जाते हैं। जो आंतों की दीवार से सोख लिए जाते हैं और रक्त संचालन के द्वारा शरीर में पुष्टि के लिए ले जाये जाते हैं।

जब वस्तुयें बड़ी आंत में पहुंच जाती हैं तब पाचन क्रिया का अन्त हो जाता है। बड़ी आंत में पहुंचने तक बचा हुआ भोजन बहुत तरल होता है किन्तु उनको बड़ी आंत से जाने के समय बचा हुआ पानी सोख लिया जाता है। जब बड़ी आंत की वस्तु गुदे में

पहुंचती है, वह वहीं रहती है जब तक मल के रूप में बाहर न ले जाय । आरम्भ से अन्त तक पाचन क्रिया में आठ घन्टे से कम नहीं लगता ।

पचाने वाली नली में भोजन की चाल ऐच्छिक रीति से निगलने से आरम्भ होता है । जैसे ही भोजन गले से नीचे उतरता है वह अनैच्छिक मांस पेशियों के नियन्त्रण के आधीन आता है जो उस के पीछे सिकुड़ते हैं और उसे आगे आमाशय की ओर ले जाने में सहायता करते हैं । इसी रीति से भोजन आमाशय और आंतो में अनैच्छिक मांस पेशियों के आधीन होता है जब तक वह गूदे तक न पहुंचे ।

पाचन क्रिया के समय रक्त उन अनेकों पात्रों में जो आमाशय और आंतो में रक्त पहुंचाते हैं जमा होता है । यदि वह वहाँ से हटा दिया जाय या कम कर दिया जाय तो पाचन क्रिया ठीक न होगी या बन्द हो जायेगी । जब भोजन के बाद कठिन परिश्रम किया जाय तो रक्त आंतो से एक नाड़ी के द्वारा हटाया जाता है । जिससे मांस पेशियों में रक्त का प्रवाह बढ़ जाय । इस कारण पाचन क्रिया में बाधा पड़ती है । कम से कम खाने के एक घन्टे बाद किसी प्रकार का कठिन व्यायाम आदि आरम्भ करना चाहिए । क्रोध या किसी प्रकार की दूसरी उत्तेजना जो भोजन के समय हो, उसका भी हानिकारक प्रभाव होता है । कारण एक ही है ।

शक्ति की मांग Energy Requirement :—

भोजन की शक्ति का नाप गर्मी की इकाई Heat unit से नापा जाता है जिसे कैलोरीज़ Calories कहते हैं । भोजन में उतनी

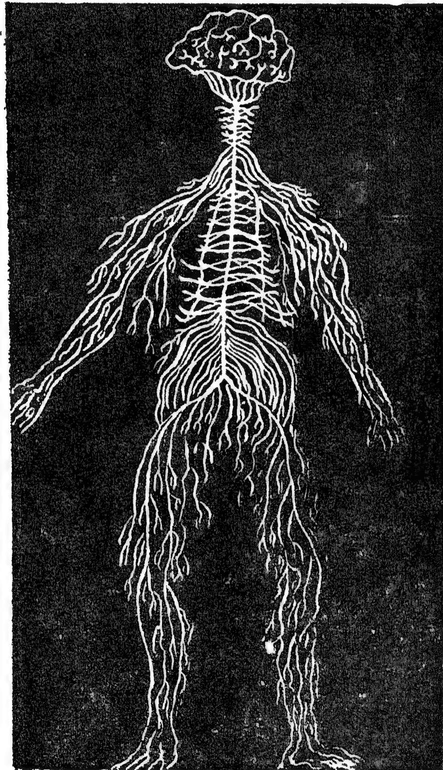
कैलोरीज़ होनी चाहिए जितनी शरीर की शक्ति की आवश्यकता है। एक व्यक्ति जो बैठ कर मानसिक कार्य करता है उसे ३००० कैलोरीज़ की २४ घन्टे में आवशयकना है। स्त्रियों को १० ०/० कम चाहिए। जो ज्यादा परिश्रम का काम करते हैं उन्हे ५००० कैलोरीज़ २४ घन्टे में चाहिए।

(१) कैलोरी में उतनी गर्मी है जितनी कि १ मिली मीटर पानी को १ डिग्री सेन्टीग्रेड ताप में ले जाने में लगे।

---

# नाड़ी तन्त्र या संस्थान

( The Nervous System )



नाड़ी तन्त्र एक अत्यन्त ही पेचीदा यंत्र है जिस के द्वारा मनुष्य अपने चारों ओर के वातावरण का प्रतिकार करता है तथा अपने

मानसिक और शारीरिक कार्यों को उचित सम्बन्ध में लाता है इस में (१) मस्तिष्क (Brain) जो खोपड़ी से बचाया हुआ है (२) सुषुम्ना Spinal Cord जो कशेरुकाओं के द्वारा सुरक्षित है तथा (३) त्वक नाड़ी मण्डल वे स्वतन्त्र नाड़ियां हैं जो सम्पूर्ण शरीर की आवश्यकता की पूर्ति करती है। इन के अलावा नाड़ी तंतुओं का छोटा समूह शरीर के भिन्न भिन्न अगों में है। ये मस्तिष्क के या सुषुम्ना के समीप स्थित है।

मस्तिष्क गुण ग्रहण करने का केन्द्र है। जहाँ सब अंदर आने वाले संदेश चाहे वे चेतन मन में आयें या न आये, उनका सूक्ष्म विश्लेषण करने के पश्चात पर्याप्त कार्य आरम्भ किया जाता है। सुषुम्ना वर्ग के नाड़ी तन्तु म तिष्क से संदेश ग्रहण करते हैं और भेजते हैं। ऊपरी सतह की नाड़ी सुषुम्ना तथा साधारण शरीर तन्तुओं के बीच संदेश भेजते हैं।

वात संस्थान की तुलना एक जटिल टेलीफोन प्रणाली से की जा सकती है जिस में मस्तिष्क स्वयं ही केन्द्रीय पारस्परिक अदला-बदली करने वाला है। दबाव दर्द, ताप, स्पर्श तथा स्थान के संदेश सम्पूर्ण शरीर से तथा कान नाक आँख और मुँह से संदेश भी ग्रहण करते हैं। यह शीघ्रता से मस्तिष्क में, छांटे जाते है समझे जाते है तथा परस्पर सम्बन्धित किए जाते हैं फिर यहाँ से सूचना तथा आज्ञा सम्पूर्ण शरीर में जाती है।

मस्तिष्क तथा सुषुम्ना को केन्द्रीय नाड़ी मण्डल भी कहते हैं। स्वतन्त्र नाड़ियाँ जो केन्द्रीय नाड़ी मण्डल से निकलती हैं तथा

यह वर्गीकरण शरीर रचना शास्त्र के दृष्टिकोण से है।

नाड़ी तन्तुओं की बनावट :-Structure of Nervous System.

नाड़ी तन्तु, नाड़ी कोष से और उनकी शाखाओं से बने हैं और जोड़ने वाले तन्तुओं से सहारा पाती हैं। नाड़ी कोष रूप तथा आकृति में भिन्न होते हैं। उनका एक बीज होता है और अनेकों छोटी शाखायें होती हैं जिन्हें ग्राही तन्तु Dendrite कहते हैं। ये सूचना ग्रहण करते हैं तथा एक शाखा मुख्य तन्तु Axon सूचना भेजने के लिए है। एक नाड़ी कोष तथा उनकी शाखायें नाड़ी मण्डल की आधारित इकाई Unit है जिसे स्नायु कोष Neuron कहते हैं। अधिकतर मुख्य तन्तु दो खोल से ढके हैं, बाहरी भाग एक पतली झिल्ली है और अंदर की एक सफेद चर्बी की वस्तु की बनी है। अंदर की झिल्ली सफेद और चमकदार दिखती है तथा चेता तत्व Nerve Fibre का समूह जो उससे ढके हुए हैं नाड़ी मण्डल की सफेद वस्तु white matter बनी है। कोष शरीर तथा उसके ग्राही तत्व में झिल्ली नहीं है तथा वे भूरे होते हैं। नाड़ी मण्डल के भूरे हिस्से में विचार प्रणाली कार्य करती है तथा सफेद हिस्से में केवल चेता तत्व पाये जाते हैं। त्वक नाड़ी मण्डल, मुख्य तन्तु के बने होते हैं इसी कारण सफेद होते हैं।

नाड़ी तन्तुओं का कार्य :-Function of Nervous Tissues

नाड़ी तन्तुओं का मुख्य कार्य नाड़ी प्रभावों को ले जाने का है। उच्च श्रेणी की उत्तेजित विशेषता के कारण नाड़ी तन्तु किसी उत्तेजना के प्रति, प्रतिक्रिया करते हैं। सही नाड़ी उत्तेजना की प्रकृति ज्ञात नहीं, किन्तु यह साधारण बिजली के करेन्ट current

के समान होती है ।

स्वतंत्र नाड़ी की बनावट The Structure of a free Nerve.

केन्द्रीय नाड़ी मण्डल से निकलने के समय चेता तत्व अपनी दो खोल रखती हैं तथा वे गठ्ठे के रूप में बँधती हैं। इसी प्रकार के अनेकों गठ्ठे मिलकर त्वक नाड़ी अथवा स्वतन्त्र नाड़ी बनाते हैं। जो नाड़ियां मस्तिष्क से उत्तेजना ले जाती है उन्हें निर्गामी नाड़ी Efferent Nerves कहते हैं। जो मस्तिष्क में उत्तेजना पहुँचाती हैं उन्हें अंतरगामी नाड़ी Afferent Nerves कहते हैं यह एक समान हैं केवल सिरा का अंतर है। अधिकतर निर्गामी नाड़ी, गति प्रद नाड़ी Motor Nerve होते हैं। उनमें से अधिकतर अंतग्गामी नाड़ी, ज्ञानवाही नाड़ी होती है।

गतिप्रद नाड़ी मांस पेशियों में जिन्हें वह देने का कार्य करती है उसी में अन्त हो जाती है और चेता तत्व को उत्तेजना भेजती है जिसके कारण वे सिकुड़ते हैं। ज्ञान वाही नाड़ियों में अत्यन्त ही उत्तेजक सिरे त्वचा में, मांस पेशियों में तथा सन्धियों में होते हैं। इनके द्वारा ज्ञानात्मक उत्तेजना मस्तिष्क में पहुंचायी जाती है जहाँ उत्तेजना समझी जाती है यद्यपि कि उत्तेजना वहाँ मालूम होती हैं जहां से वह लाई जाती है। त्वचा का यह क्षेत्र शिथिल हो जाता है यदि ज्ञानात्मक नाड़ियां जो उसे मस्तिष्क से मिलाती है कट जायें।

नाड़ियाँ जो अनैच्छिक मांस पेशियों को उत्तेजना देती हैं वह भी इसी प्रकार सम्बन्धित है तथा अधिकतर उनका तत्व ज्ञानवाही तथा गतिवाही नाड़ियों के साथ चलता है।

नाड़ी मण्डल के कार्य Functions of the Nervous System :-

नाड़ी मण्डल के कार्य तीन प्रकार से समझे जा सकते हैं।

(१) अनैच्छिक प्रणाली ।

(२) ज्ञानवाही गतिवाही प्रणाली ।

(३) सहज तथा पारस्परिक व्यावहारिक प्रणाली ।

(१) अनैच्छिक प्रणाली :—अनैच्छिक प्रणाली ही नाड़ी मण्डल का आधार है जिसके आधार पर नाड़ी की बनावट तथा कार्य में सुधार हुये । ये मनुष्य में सहवेदना नाड़ी प्रणाली Sympathetic Nervous System तथा सह-सहवेदना नाड़ी प्रणाली Para-Sympathetic Nervous System के रूप में हैं । ये दोनों प्रणालियां एक दूसरे के विरुद्ध हैं । सहवेदना नाड़ी प्रणाली, शरीर में उन कार्य तन्तुओं का प्रेरक है, जिनका कार्य संतोष जनक प्रतिक्रिया उत्तेजना तथा संकट के लिए महत्वपूर्ण है । इस कीक्रिया भली भाँति समझने के लिए यह जान लेना चाहिए कि जब व्यक्ति बुरी तरह भयभीत होता है तो क्या दशा होती है । इस अवस्था में मस्तिष्क के द्वारा भय ज्ञानात्मक तथा संवेगात्मक तरह से समझा जाता है जिस के द्वारा सहवेदना नाड़ी प्रणाली का यन्त्र कार्य आरम्भ कर देता है ।

कुछ नाड़ियों की उत्तेजना से तथा कुछ रसायनिक कार्य से जो नाड़ियों की उत्तेजना द्वारा होती है, हृदय बड़े वेग से तथा शक्ति से हरकत करता है, रक्त त्वचा तथा आंतों से हटा लिया जाता है तथा मस्तिष्क तथा मांस पेशियों को भेजा जाता है, पाचन क्रिया रुक जाती है और सांस भारी हो जाती है । इस अवस्था के छोटे छोटे चिन्ह हैं जैसे कि शरीर के रोयें खड़े हो जाते हैं और आँखें बड़ी हो जाती हैं ।

सह-सहवेदना प्रणाली दूसरी ओर न यपति के समान जीवन स्थापित करता है जिस में केवल बैठना तथा विचार करना या केवल बैठना ही है। यह एक पूर्ण भोजन करने के बाद किसी व्यक्ति के बैठने का चित्र है। सह-सहवेदना नाड़ी प्रणाली हृदय में प्रवाह तथा मात्रा को कम कर देता है, सांस की गहराई तथा चाल रोकता है और आंतो में कार्य रहित रक्त देता है। पाचन और पाचन सम्बन्धी रसों की क्रिया को प्रेरणा देता है।

सहवेदना नाड़ी प्रणाली तथा सह-सहवेदना नाड़ी प्रणाली के बीच उनका दायित्व, और दूसरे, ज्यादा जटिल यन्त्र के स्वतः नियन्त्रण का है उदाहरणार्थ पेशाब करना, मल त्यागना या बच्चा जनना।

(२) ज्ञानवाही गतिवाही प्रणाली The Sensori-motor system :

ज्ञानवाही गतिवाही प्रणाली उत्तेजना तथा गति को अपने वश में करता है। दो बड़े क्षेत्र मस्तिष्क के दोनों ओर केवल इसी काम से संबंधित है कि वे उत्तेजना को समझें और गति आरम्भ करें। ये क्षेत्र वृहत मस्तिष्क Cerebrum में स्थित हैं, जो कि नाड़ी मण्डल का सबसे अंतिम भाग है। विचार तथा अन्य मानसिक कार्य जो उत्तेजना तथा गति सम्बन्धित हैं उन सबका कार्य वृहत मस्तिष्क में होता है। दो बड़े चेता तत्व के गट्ठर वृहत मस्तिष्क के दोनों ओर से मस्तिष्क के निचले भाग में और मस्तिष्क के तने में जाते हुए सुषुम्ना में जाते हैं। उस कोष पर, जहां ये मस्तिष्क से आये हुए चेता तत्व, समाप्त होते हैं वहाँ मुख्य तन्तु उत्पन्न करते हैं जो गठ्ठों में कशेरुकाओं के बीच के स्थान से होकर त्वक

नाड़ी बनते हैं ।

३१ जोड़ी नाड़ियाँ हैं जो मेरुदण्ड से इस प्रकार निकलती हैं तथा अन्य १२ हैं जिन्हें कपाल (cranial nerve) नाड़ी कहते हैं जो मस्तिष्क के तने से वैसे ही निकलती है; तथा यह सिर तथा गर्दन की विभिन्न बनावट को भोजन देती है ।

जो चेता तत्व गतिवाही उत्तेजना मस्तिष्क से लाती है, सुषुम्ना के पहले हिस्से में समाप्त हो जाती है । वे कोष जो सूचना आगे भेजते हैं त्वक नाड़ी से होते हुए वे सुषुम्ना के पूर्व भूरे पदार्थ में स्थित हैं ।

त्वचा से तथा अन्य बनावटों से ज्ञानवाही उत्तेजना त्वक नाड़ी के पास से होकर उस कोष में जाते हैं जो पीछे के भूरे पदार्थ हैं । वहाँ से वे सुषुम्ना के पिछले हिस्से के पास से मस्तिष्क के ज्ञानात्मक क्षेत्र में भेजे जाते हैं । शुरू के भूरे पदार्थ के कोष से तन्तु तथा सुषुम्ना पीछे के भूरे पदार्थ से दो पृथक गट्ठर में बाहर जाते हैं जो सुषुम्ना के बाहर जुड़ते हैं और त्वक नाड़ी बनते हैं । इस कारण मिश्रित ज्ञानवाही तथा ज्ञानवाही नाड़ी के नाम से जाने जाते हैं । ये मिश्रित नाड़ी अनैच्छिक प्रणाली से मिलती हैं जिनका नाड़ी केन्द्र सुषुम्ना के समीप स्थित है ।

(३) सहज तथा पारस्परिक व्यवहारिक प्रणाली .-

इस बात पर जोर देना आवश्यक है कि सहज तथा पारस्परिक व्यवहारिक प्रणाली कोई पृथक तथा चैतन्य नाड़ी समूह नहीं है । किन्तु ये न पुराने वाली रीति से ज्ञानवाही, गतिवाही तथा अनैच्छिक प्रणाली से मिश्रित है यहाँ पर इस उद्देश्य से पृथक किया

गया है कि इसका कार्य वर्णन सरल रीति से हो। केन्द्रिय नाड़ी मण्डल के कुछ भाग हैं जो केवल सहज क्रिया की सेवा करते हैं। सहज क्रिया ज्ञानात्मक उत्तेजना की प्रतिक्रिया करते हैं। यह केन्द्रीय नाड़ी मण्डल के द्वारा संचालित होता है जहाँ कि ज्ञानात्मक उत्तेजना एक गतिवाही प्रतिक्रिया चेतना में जाकर अथवा न जाकर उत्पन्न करती है।

आसन पर नाड़ियों का नियन्त्रण The Nerve Contol of Posture :-

किसी पंक्ति में खड़ा होना एक सरल किन्तु थकावट का भी काम है। इस क्रिया मे अनेकों नाड़ियों तथा मांस पेशियों का कार्य सहज तथा पारस्परिक व्यवहारिक नाड़ी प्रणाली के द्वारा होता और स्वयं चलायमान है, समझा जा सकता है।

पहले जो व्यक्ति खड़ा है वह जानता है कि वह खड़ा है किन्तु कुछ ही देर में आपका विचार अन्य विषयों पर जाने लगेगा। कड़े जमीन का दबाव जो उसके पैर के तलवे में होता है भूल जायेगा किन्तु गिरेगा नहीं, वह खड़ा ही रहेगा। नाड़ी उत्तेजना पैरों के तलवों से नाड़ी मार्ग के द्वारा वृहत मस्तिष्क तक नहीं जाता है। उनमें से बहुतों को सुषुम्ना मस्तिष्क के तने, व मस्तिष्क के केन्द्र में भेज दिया जाता है। जो सुषुम्ना से आगे नहीं जाते मांस पेशियों को सिकुड़ने या ढीला करने की सूचना देते हैं जो मस्तिष्क के तने की ओर जाती हैं, उन केन्द्रों के द्वारा ग्रहण किए जाते हैं जिन्हें आंख, कान के पीछे संतुलन करने का अंग, धड़ तथा गर्दन की मांस पेशियाँ, कंडरा से भी उत्तेजनायें प्राप्त होती हैं।

मस्तिष्क के तने के केन्द्र अपने आप सुषुम्ना के पहले भूरे

पदार्थ को आज्ञा देने में जो अन्य नाड़ी तन्तुओं के द्वारा पैर के मांस पेशी वर्ग को आदेश तथा सहायता देते हैं कार्यवाही करते हैं। मस्तिष्क के तने से सूचना लघु मस्तिष्क को जाता है उस सूचना के अलावा जो उन बनावटों से, जो पहले बताये गये हैं मिलती है; जैसे सुषुम्ना तथा खुद पैर के तलवे।

सारांश यह है कि सुषुम्ना को कार्य करने की कुछ स्वतन्त्रता उसके सूचना ग्रहण करने आधार पर है किन्तु इसका नियन्त्रण मस्तिष्क के तने से होता है जिसे अच्छी तरह पूरी सूचना दी जाती है। इसके बाद मस्तिष्क का तना लघु मस्तिष्क से नियंत्रित होता है जिसके पास सम्पूर्ण शरीर के उपर्युक्त अंगों या बनावट द्वारा जो भी सूचनायें हो सकती है उसकी इच्छानुसार कार्य करने के लिए आती हैं।

शरीर का आसन बिना चेष्टा के सीधा रखने के लिए जो प्रणाली नाड़ी मण्डल करता है उन प्रणालियों से भिन्न नहीं है जो वह दूसरे आसनों के लिए व्यवहार करता है या किसी जटिल गति के टुकड़े देता है। एक दूसरे उदाहरण से समझा जा सकता है कि सहज तथा पारस्परिक व्यवहारिक नाड़ी प्रणाली कैसे ऐच्छिक गति को करने में सहायता देता है।

कोई व्यक्ति खिड़की के प्रकाश में सुई में तागा डालने के लिए आंखों के इशारे से तागे को सुई मे डालने के लिए एकाग्रचित्त होता है। पैर धड़ सिर गर्दन की अवस्था जैसे बताई जा चुकी है उसी प्रकार नियन्त्रित होता है किन्तु हाथ की अवस्था तथा हाथ और आँख की गति वृहत मस्तिष्क के कार्य का पूर्ण नियन्त्रण

करती है। हाथ की अवस्था जो कंधे के सम्बन्ध में है जिसे हाथ का आसन कह सकते है वह एक नाड़ी यन्त्र से नियन्त्रित है जो चेतना के बगैर जाने कार्य नहीं करता, यदि वह ऐसा न करे तो गड़बड़ी मच जायेगी। क्योंकि ध्यान बँट जायेगा तथा हाथ में जो कार्य है उस पर ध्यान पूर्ण रूप से केन्द्रित नहीं होगा।

यह हाथ की अवस्था वृहत मस्तिष्क के द्वारा कार्य के लिए उपयुक्त समझ कर नियत हो चुकी है और कहना चाहिए कि वृहत मस्तिष्क ने साधारण आज्ञा लघु मस्तिष्क तथा मस्तिष्क के तने को दे दी है तथा छोटी २ बाते उनके ऊपर छोड़ दी है। इसलिए हाथ कंधे के जोड़ के ऊपर और कुछ कोहनी के जोड़ पर जमा हुआ है तथा उँगलियाँ तथा कलाई को स्वतन्त्र गति के लिए छोड़ रखा है।

लघु मस्तिष्क तथा मस्तिष्क का तना पूर्व अनुभव से कार्य की रीति जानते हुए फौरन केन्द्रगामी नाड़ियों की उत्तेजना के द्वारा संधियाँ, मांसपेशियों तथा कंडरों से नाड़ी हाथ के हिलने के किसी प्रवृत्ति के लिए आता है, सूचित किए जाते हैं। सही करने वाले केन्द्रीत्यागी उत्तेजना भेजी जाती हैं जिससे वर्तमान अवस्था रखी जा सके।

मांस पेशियों के कार्य का नाड़ी समन्वय The nervous coordination of muscle Action :-

मांस पेशियाँ जो ऐच्छिक गति करती है वे प्रारम्भिक प्रेरक (Prime mover) कही जाती है। मांस पेशियां जो गति विरोध करती है उनको विरोधी Antagonist कहते हैं।

कुछ गतियाँ स्थिर आधार चाहती हैं जिनके ऊपर उनका कार्य किया जाये । मांस पेशियाँ जो इस प्रकार का कार्य दूसरी मांस पेशियों की सहायता के लिए करती हैं उन्हें साइनारजिस्टस Synergists कहते हैं । प्रत्येक गति जो शरीर के किसी अग के द्वारा किया जाय साईनाजिस्टिक की क्रिया चाहती है जिस से उनका कार्य सही तथा पूर्ण हो ।

यह स्पष्ट है कि संतुलित मांस पेशियों की सिकुड़न, आसन और संगठित रूप से सम्बन्धित है । और यह भी स्पष्ट है कि यदि कोई गति उपयुक्त संधि पर न करना हो तो मांस पेशियों की सिकुड़न प्रारम्भिक प्रेरक समूह में ऐसे मिल जायें कि उतनी ही बराबर की सिकुड़न विरोधी मांस पेशियां तन्त्वों में हो ।

मांस पेशियों की सिकुड़न शरीर की गर्मी का एक श्रेष्ठ स्त्रोत है । मस्तिष्क में एक नाड़ी केन्द्र है जो ताप का नियंत्रण शरीर में करता है तथा यह नाड़ी तन्तुओं को प्रभावित कर सकता है, जो मांस पेशियों को आदेश देते हैं तथा क्रियात्मक मांस पेशियाँ जब शरीर ठंढा रहता हैं तब सिकुड़न उत्पन्न करती हैं । यही थरथराना है ।

मांस पेशियों की तैयारी जन्मजात गुण है जो मांस पेशियों के विश्राम से उत्तेजित होती है । मांस पेशियों की तैयारी नाड़ी के भोजन प्रवाह को नष्ट कर देने से नष्ट हो जाती है । यह नाड़ी रोग की अवस्था में भी अनुपस्थित रहता है ।

खोपड़ी की नाड़ी Cranial Nerve.

खोपड़ी की १२ नाड़ी अपने कार्य में उच्च विशेषज्ञ है । नं०

१, २, ८, ९, सूघना देखना, सुनना, चखने का कार्य करती है। नं० २, ३, ६, ७, ११, १२ क्रियावाही नाड़ी हैं। ५ वाँ चेहरे की ज्ञानवाही नाड़ी है। १० वाँ सह-सहवेदना नाड़ी प्रणाली का हिस्सा है। उसमें ज्ञानवाही तथा क्रियावाही दोनों तन्तु हैं। खोपड़ी की नाड़ियों का आन्तरिक सम्बन्ध बड़ा पेचीदा है।

———

# व्यायामिक क्रिया
## PHYSIOLOGY OF EXERCISE

मांस पेशियों के गुण The properties of muscles.

यह बताया जा चुका है कि ऐच्छिक मांस पेशियां बहुत सी पेशियों के गट्ठर से बना है। जिसमें बहुत सी मांस पेशियों की रगे हैं। प्रत्येक नाड़ी तन्तु एक छोटी फैली हुई स्थिति में समाप्त होती है जिसे अन्त पात्र (End Plate) कहते हैं। यह नाड़ियों के अन्त होने का स्थान है तथा इसी हिस्से के द्वारा सिकुड़ने की उत्तेजना नाड़ी तन्तुओं को दी जाती है। जब कोई मांस पेशियां सिकुड़ती है तो वह और चौड़ी हो जाती है और आड़ी तिरछी धारियां आपस में समीप हो जाती हैं। जब वह ढीली होती है तो रगें पहले से सकरी हो जाती हैं तथा धारियों के बीच का स्थान भी बढ़ जाता है।

मांस पेशियों के सिकुड़न में रसायनिक परिवर्तन (Chemical changes during muscular cortractions.)

अभी तक इस विषय में पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ है। मांस पेशियों में १५ प्रतिशत प्रोटीन तथा कुछ ग्लाईकोजीन (Glycogen वसा (Fat)तथा फ़ासफ़ोरस (Phosphorus) होता है। जब मांस पेशियां उत्तेजित होती हैं, जहां आक्सीजन नहीं होता है तब

ग्लाईकोजिन चला जाता है तथा उसके स्थान में लैकटिक ऐसिड Lactic acid आ जाता है। आक्सीजन के अनुपस्थिति में बराबर उत्तेजित होने से लैकटिक ऐसिड जमा हो जाता तथा मांस पेशियां अत्यधिक थक जाती हैं।

आक्सीजन की उपस्थिति से लैकटिक ऐसिड जमा नहीं हो पाता है तथा यह हटा दिया जाता है। फ़िर कुछ पेशियों में ग्लाई-कोजिन में परिवर्तन हो जाता है। अतएव लाकटिक ऐसिड को हटाने के लिए जब कुछ देर मांस पेशियों का कार्य हो चुका हो तो आक्-सीजन आवश्यक होता है।

बहुत कठिन परिश्रम के व्यायाम में जितना प्राप्त आक्सीजन से लैकटिक ऐसिड हटाया जा सकता है उससे कहीं अधिक लैकटिक ऐसिड बनता है। इस लिए कुछ रक्त प्रवाह में मिल जाता है जहाँ कि वह मांस पेशियों पर दबाव नहीं डाल सकता है।

आक्सीजन कमी Oxygan debt.

तन्तुओं के लिए हो जाता है जिसके लिए उपाय करना आवश्-यक होता है जिससे लैकटिक ऐसिड की अधिकता हट जाय।

यह मानी हुई चीज है, कि कठिन व्यायाम के बाद श्वांस कुछ मिनट के लिए साधारण स्तर से अधिक लिया जाता है। आक्सीजन जो अधिक मात्रा में लिया जाता है, यह लैकटिक ऐसिड हटाने के लिए होता है। जो थोड़ी देर के लिए रक्त में एक विशेष रसायनिक पदार्थ द्वारा कार्य हीन कर दिया जाता है जब तक कि पर्याप्त मात्रा

में उसको हटाने के लिए आक्सीजन फेफड़ों के द्वारा न पहुंचाया जाय ।

व्यायाम के रक्त संचालन तथा श्वास सम्बन्धी परिवर्तन (Circulatory and respiratory changes during exercise).

व्यायाम के समय आक्सीजन की आवश्यकता अत्यन्त बढ़ जाती है । उसी समय मांस पेशियों से कार्बन डाई आक्साईड बनाया जाता है और फेफड़ों के द्वारा बाहर निकाला जाता है । श्वास तथा रक्त संचालन एक साथ काम करते हुए इन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपने को उनके अनुकूल बना लेते हैं ।

दूसरे महत्व पूर्ण परिवर्तन आगे दिये जाते हैं ।

१—रक्त संचालिका :—

(१) महाप्राचीरा के अधिक फैलाव की गति के कारण तथा साधारण मांस पेशियों के सिकुड़न से जो शिरा को दबाती है शिरा का रक्त अधिक मात्रा में हृदय में आता है ।

(२) हृदय की प्रत्येक गति पर परिमाण तथा निकसारी बढ़ जाता है जिसके कारण अधिक रक्त एक समय के इकाई में संचालन होता है ।

(३) फिर से रक्त का बटवारा होता है । अधिक, मांस पेशियों को रक्त जाता है और आंतो तथा त्वचा को कम जाता है । व्यायाम के समय मांस पेशियों को साधारण से १५ गुणा अधिक रक्त मिलता है ।

२—श्वास Respcratory :—

रक्त में अधिक कार्बन डाईआक्साईड हो जाने के कारण श्वास तेज तथा गहरा हो जाता है। जिसका कि एक उत्तेजना जनक कार्य उन नाड़ियों पर है जो श्वास को नियन्त्रित करते हैं।

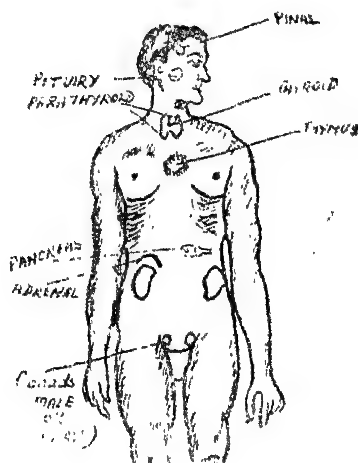
कार्बन डाईआक्साईड के गुण शिथिल करने में प्रयोग किया जाता है। यह शिथिल करने वाले पदार्थों के साथ दिया जाता है जिससे मरीज गहरा सांस लेता है तथा बेहोशी के अवस्था को तेजी से पहुंच जाता है।

———

[५८]

# नलिका विहीन ग्रन्थियां

## DUCTLESS GLANDS




शरीर में अनेकों ग्रंथियाँ हैं। कुछ ग्रन्थियाँ अपना पदार्थ नालियों के द्वारा शरीर के किसी विशेष भाग में डालती है। कुछ ग्रन्थियां ऐसी हैं जो सम्पूर्ण शरीर के लिए रस उत्पन्न करती है और छोड़ती हैं। तन्तुओं मे जब रक्त का प्रवाह होता है तो उसी प्रवाह में ग्रन्थियाँ अपना रस छोड़ देती हैं। इस में नल्किा की आवश्यकता नहीं होती। इसी कारण इन्हें नलिका विहीन ग्रन्थियाँ कहते हैं।

हारमोन Harmone, ग्रन्थियों द्वारा उत्पन्न रस को कहते हैं। निम्नलिखित, मुख्य नलिका विहीन ग्रन्थियां हैं।

(१) पिनियल ग्रन्थि Pineal Gland :-

लघु-मस्तिष्क के समीप मस्तिष्क के पिछले भाग में पिनियल ग्रन्थि स्थित है। इस का मुख्य कार्य लिंग प्रकट करना है। इसी के द्वारा पुरुषों के मूंछ दाढ़ी तथा स्त्रियों को पुरुषों से अलग पहचाना जा सकता है। स्त्री पुरुष के स्वर का अंतर भी इसी ग्रन्थि द्वारा होता है।

(२) पीयूष ग्रन्थि Petuitary Glands :-

यह मस्तिष्क के नीचे एक नली से लटकती रहती है। इसका निर्माण दो पिंडों द्वारा होता है। सामने के पिंड से शरीर के बढ़ाव के लिए रस उत्पादन होता है। यदि आवश्यकता से अधिक रस का उत्पादन हो तो देव शरीर परिणाम होगा। इस की कमी से बौनापन आ जायगा। इन के द्वारा मानसिक तथा लिंग सम्बन्धी विकास पर प्रभाव पड़ता है।

पिछले पिंड के द्वारा रक्त दबाव, आतों की गति तथा रक्त में शकर का नियन्त्रण होता है। यदि इस तरल पदार्थ की कमी होगी तो रक्त में उपस्थित चीनी का प्रयोग अच्छी तरह नहीं हो पाता है। श्वेतसार के द्वारा फ़ुर्ती के स्थान पर वसा उत्पन्न होता है। बालक मोटा हो जायगा, सुस्त हो जायगा। इस ग्रन्थि के द्वारा दूसरी ग्रन्थियों के कार्य पर भी नियन्त्रण होता है। जैसे चुल्लिका, एड्रीनल आदि का होता है।

(३) चुल्लिका ग्रन्थि Thyroid Gland :-

यह स्वर यत्र के नीचे गले में दोनों ओर गले में स्थित हैं। बाल्यकाल तथा किशोर अवस्था में इस ग्रन्थि का मुख्य कार्य होता है। इस के रस के द्वारा सम्पूर्ण शरीर के रसायनिक क्रियायें प्रभावित होती हैं। इस के रस में आयोडिन होता है। इस की कमी से गन्ड माला हो जाता है। ग्रन्थियां अपने नाप से बहुत अधिक बढ़ जाती है। इसकी कमी से निर्बलता तथा मन्द बुद्धि हो सकती है। युवा-अवस्था के चिन्ह भी भली भांति विकसित नहीं हो पाते हैं।

(४) उपचुल्लिका ग्रन्थि Parathyroid Gland :-

ये चार होती हैं और दोनों चुल्लिका के नीचे स्थित है। इस के द्वारा शरीर में कैलशियम पर नियन्त्रण होता है। इस की कमी से शरीर में कैलशियम कम हो जाता है।

(५) थाईमस ग्रन्थि Thymus Gland :-

यह वक्ष के ऊपर तथा गर्दन के निचले हिस्से में स्थित है। इसका सम्बन्ध लैंगिक वृद्धि से है।

(६) उपवृका ग्रन्थि Adrenal Gland :-

यह त्रिभुजाकार दो ग्रन्थियां होती है जो गुर्दे के ठीक ऊपर स्थित है। इनके द्वारा शरीर में जल तथा लवण का नियन्त्रण होता है। इस रस की कमी से पोटेशियम की मात्रा बढ़ जाती है।

उपवृका का आन्तरिक भाग ऐड्रीनलिन Adrenalin रस छोड़ता है। मनुष्य के अत्यन्त उत्तेजित होने से यह रस उत्पन्न होता है और इसके द्वारा मनुष्य बड़े से बड़े कार्य कर डालता है तथा

भीषण परिस्थितियों का सामना कर लेता है। मूल प्रवृत्तियों की उत्तोजना तथा क्रिया में यह सहायक है।

क्लोम ग्रन्थि (Pancreas)

ये छोटे कोणों के रूप में स्थित है। इससे छोड़े हुये रस को इनसलिन (Insulin) कहते है। इसकी कमी से शरीर में चीनी की मात्रा बढ़ जाती है। मधुमेह रोग हो जाता है।

८. प्रजनन ग्रन्थियां (Gonads) :-

स्त्री पुरुषों की प्रजनन ग्रन्थियां डिम्ब तथा शुक्र (Ovaris and tests) होती है। डिम्ब में रज तथा शुक्र में वीर्य उत्पन्न होता है। इनमें नारीत्व तथा पुरुषत्व के चिन्ह उत्पन्न करने की भी योग्यता है।

पुरुषों में दाढ़ी, मूछ, वीर्य तथा स्त्रियों में स्तन, रज, स्वर भेद इसी के द्वारा होता है। मानसिक तथा शारीरिक प्रभाव भी इसके द्वारा होता है।

---

# दोष का अवरोध, सुधार तथा सुधारक व्यायाम

## PREVENTIONS & CORRECTION OF FAULT; CORRECTIVE EXERCISE

दोष का अवरोध Preventions of faults. :-

बीमारी होने से यह अच्छा है कि यह चेष्टा करनी चाहिए कि बिमारी आने ही न पावे। किसी ने सत्य कहा है Prevention is better than cure अर्थात चिकित्सा से उत्तम अवरोध हैं। शारीरिक शिक्षा के अन्तर्गत इस बात की चेष्टा होनी चाहिए कि किसी प्रकार का दोष उपस्थित ही न हो न कि दोष सुधारने को जैसा ध्येय होगा वैसा ही कार्य भी पूर्ण होगा। यदि सुधार का ध्येय होगा तो सम्भव है कि व्यायाम सिखाते समय पूरी सतर्कता से व्यवहार न हो जिससे दोष उत्पन्न हो जाय। दोष उत्पन्न होने की सम्भावना की परिस्थिति को हटा देने से अथवा कठिन नियंत्रण करने से दोष उत्पन्न होने की आशा कम होगी। सर्व प्रथम सही विधि से सिखाने में तथा उचित और सही प्रदर्शन से, काम सिखाने के समय गलतियों से दूर रहने के आदेश से प्रत्येक व्यायाम में दोष जिसकी सम्भावना हो उसकी सही स्थिति का पूर्व ज्ञान, उत्साह अथवा उत्तेजना उत्पन्न करने वाली शिक्षा, सतर्कता तथा नियन्त्रण

से व्यायाम आदि में दोष का अवरोध किया जा सकता है ।

दोष का सुधार Correction of faults. :-

दोष सुधार का सर्वप्रथम नियम यह है कि जैसे ही दोष दिखाई दे, जितना भी छोटा क्यों न हो उसी समय उसको दूर करना चाहिए। दोष के चलते रहने देने से बड़ी २ हानियाँ सम्भव हैं। प्रथम तो कार्य त्रुटिपूर्ण होगा द्वितीय उस विशेष कार्य में गलितयाँ करने की आदत पड़ जायेगी तथा उससे दूसरे कार्य पर भी प्रभाव पड़ेगा।

दोषो को हम दो भागों में बांट सकते हैं।

(१) दोष जो प्रत्येक अभ्यास के हों।

(२) सर्व साधारण दोष जो किसी भी अभ्यास मे आ सकता है जैसे सांस रोकना, समय अथवा दिशा का सही ज्ञान न होना। सही आसन न लेना आदि।

शिक्षक में सुधारने तथा समालोचना की योग्यता तभी आ सकती है जब वह अभ्यास भली भाँति जानता हो; उनकी सही अवस्था, स्थितियों तथा सही सिखाने की विधियों से परिचित हो।

शिक्षक के लिए यह भी जानना आवश्यक है कि प्रत्येक अभ्यास के लिए किस प्रकार की चेष्टा की आवश्यकता है।

किसी अभ्यास में सुधार :-

(१) पहले साधारण दोषों का सुधार करना चाहिए तब व्यक्तिगत दोषों का सुधार करना चाहिए।

यदि किसी अभ्यास में अत्यधिक बालक त्रुटि कर रहे हो तो, सम्भव है कि उनके समझने में कठिनाई या अन्तर है अथवा शिक्षक

के प्रदर्शन में त्रुटि हो। कक्षा के काम को रोक कर उन्हें फिर समझना तथा प्रदर्शन देना चाहिए तथा नई रीति से फिर काम आरम्भ करना चाहिए।

(२) छोटी २ गल्तियाँ जो अभ्यास करते समय दिखाई देती हैं, वे सम्बोधन के द्वारा ध्यान में लाई जा सकती है। जैसे पैर सीधे, हाथ समानान्तर, आगे निगाह, घुटना सीधा रखना आदि।

(३) यदि किसी एक व्यक्ति में कोई बड़ी गलती हो तथा सुधर न रही हो तो पहले उसके सामने या उसकी ओर ध्या। आकर्षित कराना चाहिए। यदि वह इस पर भी न समझे तो ना। लिया जा सकता है। पहले विद्यार्थी को अपने आप अपनी गल्ती सुधारने का अवसर देना चाहिए।

(४) दो अभ्यासों के बीच का समय समझाने, प्रदर्शन करने या साधारण सुधार के लिए उपयोग किया जा सकता है। कक्षा के समक्ष गलती करने वाले बालक के गलती का सुधार करने ं बालक मान हानि समझने लगता है तथा सम्भव है कि वही बालक दूसरों के हँसी तथा चिढ़ाने का पात्र बन जाय इस से उसके व्यक्तित्व के विकास में ठेस पहुंचेगी।

दोष सुधारक व्यायाम Corrective Exercise :-

कायफ़ोसिस "गोल कंधा" kyphsis.

(१) पीठ पर लेट कर दाहिने हाथ को पेट पर रख कर पेट को दबाना चाहिए तथा सीना ऊपर उठाना चाहिए। हाथ नीचे होने चाहिए किन्तु सीना ऊपर ही होना चाहिए तत्पश्चात् आराम करना चाहिए।

(२) पीठ पर लेट कर, हाथ बगल में रखकर, पेट को अन्दर करके, सीना उठाना चाहिए।

(३) हाथ बगल में करके पीठ पर लेटना, हाथों को सीने पर लाकर कोहनी को जमीन की तरफ दबाना चाहिए जिससे उपरी पीठ की पेशियां सिकुड़ें।

(४) पीठ के बल लेट कर व्यायाम नं० ३ करना चाहिए तथा उसके साथ सीना उठाना चाहिए, पेट अन्दर, ऊपर उठाना है, हाथ तथा कन्धे आराम की हालत में किन्तु सीना ऊपर रहे।

(५) किसी बार (Bar) अथवा रोमनरिंग (Roman Ring) पर लेटना चाहिए।

लोरड़ोसिस Lordosis :—

१—ऊपर के पांचो व्यायाम करना चाहिए।

२—स्टूल पर बैटकर शरीर आगे झुकाना चाहिए, जमीन छूना चाहिए, पीठ सीधी रख कर ऊपर उठना चाहिए।

३—खड़े होकर आगे झुकना चाहिए फिर वापस आना चाहिए।

४—पीठ पर लेट कर घुटने मोड़ने चाहिए।

५—साधारण आसन के व्यायाम करना चाहिए।

मेरुदण्ड का बगल का दबाव Scoliosis;—

१—अपने स्थान पर दौड़ना चाहिए।

२—किसी भी चीज़ पर लटकना चाहिए।

३—कमर बगल में झुकाना व वापस आना चाहिए।

४—हाथ मोड़ कर खड़े होना चाहिए तथा हाथ ऊपर उठाना और पंजों पर उठना चाहिए।

चपटा पैर Flat feet.

१—एक पैर पर बैलेन्स Balance करना चाहिए तथा पैर दायें बायें फैले हुये होंगे।

२—पैरों से छोटी चीज उठाना चाहिए उदाहरणार्थ चम्मच अथवा कोई और छोटी चीज़ गिरा कर पैर से उठाना चाहिए।

३—पंजों पर चलना चाहिए।

४—सीधे खड़े होकर पंजों पर उठना चाहिए तथा एड़ी को धीरे से नीचे करना चाहिए, साथ ही वजन पैर के बाहरी हिस्से पर रहें। पैरों से जमीन पकड़ कर आगे चलना चाहिए।

तोंद Visceroptosis :-

१—कायफ़ोसिस के व्यायाम नं० १व५ करना चाहिए।

२—आसन के साधारण व्यायाम करना चाहिए।

३—बैठ कर कमर दाहिने बायें घुमाना चाहिए।

४—पैरों में फ़ासला देकर खड़े होना, कमर को आगे पीछे झुकाना चाहिए।

५—पैरों के फासले से खड़े होकर जमीन छूना तथा ऊपर आना चाहिए।

कम वजन Under weight :—

१—कायफोसिस का व्यायाम नं० १व५ करना चाहिए।

२—स्थान पर दौड़ना चाहिए।

३—खड़े होकर हाथ मुड़े हुए रख कर पंजों पर उठना चाहिए।

४—साधारण व्यायाम करना चाहिए।

५—पीठ पर विश्राम करना चाहिए।

अधिक वजन Over weight.

१ कमर की कसरत करनी चाहिए।

२ पैर तथा पेट की कसरत करना चाहिए।

३ साधारण व्यायाम करना चाहिए।

मुहँ से सांस लेना Mouth Breathing :—

१ मुँह से सांस लेने तथा मुँह से छोड़ने का अभ्यास करना चाहिए।

२ मुँह बन्द रख कर नाक से सांस लेना चाहिए।

———

# शारीरिक आसन में दोषों का चिकित्सा व्यायाम

## REMEDIAL EXERCISES AS RELATED TO POSTURE DEFECTS AND DEFORMITIES

शारीरिक शिक्षा की इस शाखा को चिकित्सा जमनास्टिक Remedial gymnastic or corrective physical education कहते हैं। इसके द्वारा शरीर का सही आसन (Good posture) ठीक किया जाता है। चिकित्सा जमनास्टिक व्यक्तिगत दोष निवारण के लिए है अतएव यह कक्षा पृथक होगी क्योंकि इसमें व्यक्तिगत ध्यान तथा शिक्षा की आवश्यकता होगी।

दूषित आसन के कारण Causes of Bad Posture :—

१ वे साधारण अवस्थायें जिनके द्वारा मांस पेशियों की तथा शारीरिक निर्बलता होती है। जैसे जल्दी बढ़ना, आवश्यकता से अधिक कार्य करना, घर तथा पाठशाला में दूषित वायु का सेवन, रोग, साधारण स्वास्थ्य का अभाव, दूषित भोजन तथा व्यायाम और खेल में भाग न लेना।

२ दृष्टि का विकार तथा चश्मा के प्रयोग द्वारा उन्हें ठीक न करना।

३ मेज कुर्सी का ठीक न होना।

४ किसी विशेष अवस्था में बहुत देर तक रहना।

५ ठीक नाप के कपड़े का न होना।

६ श्रवण में कठिनाई।

७ किसी चोट आदि के कारण अस्थियों का ठीक न बढ़ना।

८ बैठने के आसन में दोष।

९ एक पैर पर वजन देकर चलना अथवा खड़ा होना।

१० सोने का गलत आसन (Posture).

११ एक ही हाथ के नीचे दबाकर किताबें लेना तथा सर्वथा ऐसा ही करना।

१२ मानसिक थकावट।

१३ शारीरिक थकावट आदि सही आसन (Good posture) के न होने के कारण हैं।

आसन (Posture) के प्रति शिक्षा :—

प्रत्येक शिक्षक को गलत आसन की जानकारी होना चाहिए तथा उसके कारणों को समझना चाहिए। जब तक इस बात पर कक्षा में तथा दूसरे स्थानों पर ध्यान न दिया जाय तब तक शारीरिक शिक्षा देने वालों के कार्य से विशेष लाभ प्राप्त नहीं हो सकेगा। यदि बालकों को प्रभावपूर्ण तथा रुचिकर रूप में विभिन्न प्रदर्शनों के माध्यम से इसके दोष तथा गुण बताये जायें तो बालकों का ध्यान इस ओर आकर्षित होगा। यदि स्कूल की अवस्था के कारण आसन पर कोई प्रभाव पड़ता हो तो उसे दूर करना चाहिए। क्रमिक विकास के लम्बे इतिहास में मनुष्य के सीधे खड़े होने का डौल अभी हाल ही में प्राप्त हुआ है। सीधे खड़े होने का क्रमिक

विकास समाप्त हो गया है या नहीं, कहना कठिन है। कुछ ऐसे परिणाम दिखाई देते हैं जिससे पता चलता है कि यह अभी समाप्त नहीं हुआ है। इस डौल की एक असुविधा यह है कि शरीर के ऊपरी अवयव शरीर के सामने के हिस्से को सम्भालने के बदले उन्हे स्वयं ही सम्हालना पड़ता है और यह अधिक वजन धड़ के ऊपरी हिस्से के द्वारा सम्हाला जाता है यदि वे मांस पेशियाँ जो स्कंध मेखला को सहारा देती हैं निर्बल हो जाय जिससे वे आगे झूल जायें और अपना वजन वक्षस्थल की दिवारों पर डाल दें, तो परिणाम स्वरूप श्वास क्रिया में बाधा पहुंचेगी।

आसन की मांस पेशियां (The muscles of the Posture) :-

आसन की मांस पेशियां शरीर के सामने तथा पीछे हिस्से में होती हैं।

यह समझना आवश्यक है कि वे मांस पेशियाँ जिनके द्वारा सीधा आसन सम्भलता है उनका उदगम नीचे के भाग में होता है तथा एक पर दूसरे हड्डी का संतुलन करने की चेष्टा करता है। पैर की मांस पेशियां अर्धवृत्त को स्थिर करती हैं जिसके द्वारा एक मजबूत आधार बन सके। जंघास्थि के सामने तथा पीछे की मांस पेशियां जंघास्थि को पैरों पर स्थिर करती हैं। उर्वास्थि जंघास्थि के सामने तथा पीछे की मांस पेशियां जंघास्थि को पैरों पर स्थिर करती हैं। उर्वास्थि, जंघास्थि के सामने चर्तुशिरस्का (Quadriceps) तथा पीछे गास्ट्रोस्नेमियस (Gastronemius) के द्वारा संतुलित होती हैं। कूल्हा मेखला की स्थिति उदर के मांस पेशियों के द्वारा स्थिति की जाती है। मेरु दण्ड, कूल्हा मेखला के स्थिर आधार पर

रीढ़ के प्रसरण पेशियां उदर के दिवारों की मांस पेशियां तथा गर्दन की मांस पेशियों के द्वारा संतुलित होता है ।

अच्छा आसन (Good Posture) :-

शरीर की बनावट तीन प्रकार की है :-

(१) मेसोमोर्फ़ या ऐथलेटिक (The Mesomorph or Athletic) :-

इस में छाती और कंधे चौड़े, कमर पतली, धड़ और अंग मांस पेशियों का होता है । वसा कम होता है ।

(२) ऐन्डोमोर्फ़ या पायकनिक (The Endomorph or Pyknic) :

गर्दन छोटी तथा मोटी, कंधे मजबूत और खूबसूरती से बने हुये तथा ऐथलेटिक प्रकार से ज्यादा गोल, सर, छाती, उदर भारी मुंह, धड़ तथा अंग काफी वसा से ढके हुए होते हैं ।

(३) ऐक्टोमोर्फ़ या एस्थेनिक (The Ectomorph or Asthenic):-

गर्दन, धड़, अंग लम्बे, पतले, छाती लम्बी संकरी तथा चपटी पसली दिखती हुई होती है । पेशियां कम, वसा कम, तथा जोड़ छोटे होते हैं ।

साधारणतः इन में लोगों का वर्गीकरण किया जा सकता है तो भी कुछ ऐसे व्यक्ति मिलेंगे जो इन वर्गों के मिश्रण हों ।

व्यक्तिगत आसन के दोष (Individual Postural Defects) :

मेरुदण्ड में सही मोड़ का न होना (Spinal Curvature), चपटा तलवा इस तरह के लोग दो हिस्से में विभाजित किए जा सकते हैं ।

(१) अकड़े जोड़ वाले Stiff Jointed):-

इनके लिए सही आसन लेना कठिन है । वे चिकित्सा जिमना-

स्टिक के बाद ही सही आसन ले सकते हैं।

ढीले जोड़ वाले (Loose Jointed) :-

इनका आसन ठीक नहीं किन्तु वे जब चाहें तो ठीक आसन ले सकते हैं।

दोनों हिस्सों के लिए पर्याप्त व्यायाम है उनके निम्नलिखित विभाग हो सकते हैं :-

(१) काम करने वाले व्यायाम (Active Exercise) :-

साधारण व्यायाम, बिना किसी की सहायता के काम किया जाता है। कक्षा में विद्यार्थी सीखता है और अभ्यास अपने आप करता है।

(२) सहायता के द्वारा करने वाले व्यायाम (Assistive) :-

शिक्षक विद्यार्थी की सहायता करता है।

(३) बाधा के द्वारा व्यायाम (Resistive) :-

'अ' इसमें पेशियां सिकुड़ती हैं तथा बाधा के विरुद्ध शक्ति प्रयोग करती है।

'ब' इसमें रुकावट पेशियों की सिकुड़न को परास्त करती है।

(४) जिसमें विषयी स्वंय व्यायाम नहीं करता (Passive) :-

इसमें जिसको व्यायाम करना है वह गति नहीं करता। इसके लिए किसी दूसरे से या यन्त्र के द्वारा गति की जाती है।

यह साधारण शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में नहीं आता है। कभी कभी कंधे भी कसरत या रीढ़ की कसरत मे जहाँ साथियों के द्वारा व्यायाम के काम मे सहायता ली जाती है, व्यायाम करने के लिए

वहाँ, यह व्यवहार में आता है। कुछ साधारण शारीरिक अस्वाभाविकता जिनमें चिकित्सा जिमनास्टिक की आवश्यकता होती है। इसमें अधिकतर रीढ़ की हड्डी को ही होती है।

गोल कंधे (Round Shoulders,"Kyphosis") :-

इसमें रीढ़ की हड्डी बाहर की ओर झुकती है। पीठ कशेरुकाओं में ज्यादती से मोड़ा, सिर आगे की ओर झुका हुआ, प्यूबिस (Pubis) आगे झुका हूआ, घुटना फैला हुआ तथा अंदर घुमा हुआ, पैर ज्यादती से बाहर की ओर खुले होते हैं। इसका कारण, है गलत आसन की आदतें, मांस पेशियों की निर्बलता, तेजी से बढ़ना, हड्डियां पेशियों से जल्दी बढ़ जाती हैं जो मांस पेशियों के संतुलन में और अच्छे आसन के धारण में बाधक होती है। अन्य कारण हैं, रिकेट्स (Rickets) बड़ा सिर, निकला हुआ पेट , दबी हुई पसलियां, कुबड़ी पीठ, रीढ़ का क्षय रोग।

चिकित्सा :-

पीठ के ऊपरी हिस्से में पेशियों को छोटा तथा बलिष्ट करना। यदि आवश्यकता हो तो सीने की पेशियों को मजबूत करना चाहिए। सिर की स्थिति, गोल पीठ और कधे, प्युबिस का झुकाव और पैरों पर बराबर वजन न देने पर ध्यान देना चाहिए।

कसरत :-

कसरत लेट कर किया जा सकता है। कसरत करते समय बालू की तकिया स्कंध मेखला के नीचे रखना चाहिए। चलते समय सिर ऐसी अवस्था में रखना चाहिये जिससे आंखो से आगे उनकी सतह से कुछ ऊपर देखें। वालबार (Wall Bar) पर कंधे की कसरत

अत्यन्त लाभ दायक होगी।

मेरुदण्ड का ज्यादती से अन्दर झुकाव (Excessive Inward Curvature of the Spine) :-

लोरडोसिस (Lordosis) में रीढ़ की हड्डी अत्यन्त अन्दर की ओर घुस जाती है। इसके साथ तोंद भी बाहर निकला हुआ होगा, सिर आगे की ओर झुका हुआ होगा। कूल्हा पीछे खींचा हुआ होता है और घुटने ज्यादा खुले हुए होते हैं।

कारण :-

मांस पेशियों में निर्बलता के कारण तथा थकावट आने के कारण इस प्रकार होता है। आसन की बुरी आदतों के कारण, कूल्हे का स्थान से हट जाना, कूल्हे की संधि का रोग तथा रिकेट्स Rickets आदि भी इसके कारण हैं।

चिकित्सा :-

पीठ के निचले हिस्से की मजबूती तथा उदर के पेशियों की मजबूती आवश्यक है। कूल्हे को सही स्थान पर करना चाहिए तथा घुटनों को सही स्थान पर लाना चाहिए। लम्बी रीढ़ की पेशियों को लम्बा करना और कूल्हे को लम्बा करना चाहिए। जांघ की रगों को छोटा करना चाहिए।

कसरत :-

लेट कर उठ बैठना घुटने मुड़े हुए हों। लेट कर धड़ के नीचे के हिस्से को एक ओर से दूसरी ओर घुमाना चाहिए, घुटने मुड़े रखने चाहिए। कूल्हे को पीछे खींचना चाहिए, घुटने मुड़े रखने चाहिए और मुँह के बल लेटे हुए पीठ के पीछे की खाली जगह को

किसी कड़े फर्श के ऊपर दबाना चाहिए। उदर की पेशियों का बढ़ाने के लिए सांस की कसरत आवश्यक है, श्वास करः आड़ी तिरछी पेशियों को बढ़ाने के लिए।

(३) रीढ़ की हड्डी का बगल से अंदर मुड़ना (Scoliosis)

इसमें रीढ़ की हड्डी बगल से अन्दर की ओर झुकती है। कंधा झुक जाता है तथा एक तरफ कूल्हा ऊँचा हो जाता है। हाथ तथा शरीर का कोण एक ओर अधिक होता है।

यह दो प्रकार का होता है। आसन के कारण तथा बनावट के कारण। पहिला प्रकार व्यायाम से सही हो सकता है किन्तु दूसरा प्रकार ठीक करना कठिन है।

कारण :-

मांस पेशियों की निर्बलता, सही भोजन तथा ठीक मात्रा में न मिलना। रिकेट्स, रीढ़ की हड्डी आदि का रोग होने से तथा लकवा भी इसका कारण होता है। जहाँ रीढ़ की हड्डी की बीमारी हो वहां व्यायाम नहीं होना चाहिए।

चिकित्सा :-

शरीर का साधारण स्वास्थ्य ठीक करना, शरीर के लचीलेपन को संतुलित करना। मांस पेशियों की साधारण मजबूती, नये मांस पेशियों की आदत बनाना जिस से शरीर के दोनों बगल के हिस्से में संतुनल हो।

कसरत :-

साधारण रीढ़ की हड्डी की कसरत, बीम (Beam) पर

लटकने की कसरत। सब तरह की लटकने की कसरत] सहायक सिद्ध होती है। सांस की कसरत तथा साधारण संतुलन की कसरत। ब्रेस्ट स्ट्रोक Breast stroke से तैरना भी लाभदायक होता है।

(४) चपटा पैर Flat feet. :-

कभी २ पैरों से बड़ी कठिनाई होती है ये शरीर के पूरे वजन का दिन में अधिकांश समय ले चलती हैं इस से अर्धवृत में हानि होती है।

इसके मुख्य दो प्रकार हैं। लम्बे २ गिरने वाला अर्धवृत्त जिसमें पूर्ण पैर चपटा हो जाता है तथा आड़ा तिरछा गिरने लगता है। पहले पैर के अन्दर का हिस्सा अर्धवृत न होते हुये जमीन पर चपटा पड़ता है। दूसरे प्रकार का व्यक्ति अपने एड़ी को बाहर की ओर गिराता है। ऐसे व्यक्तियों के अँगूठे चलने के समय बाहर की ओर होंगे तथा डीलडौल सख्त होगा। तलवों में भी दर्द होगा।

कारण :-

पेशियों की कमजोरी, पैरों पर जरूरत से ज्यादा जोर पड़ना, गलत नाप के जूते पहनना, अगूठों को बाहर फेंकते हुये चलने की आदत आदि ही इसका कारण होती हैं।

चिकित्सा :-

जूतों को आवश्यकतानुसार सही बनवाना, मालिश तथा पैरों की कसरत लाभदायक होगी।

कसरत ;-

पैरों से एक दूसरे के समानान्तर चलना। पैरों के बगल के हिस्से पर चलना। एड़ी और उंगलियों पर चलना, उंगलियों से जमीन पकड़ कर एड़ी पर चलना, ढलान पर चलना, उंगलियों पर घुटना मोड़कर चलना चाहिए।

---

[६१]

# स्वास्थ्य के विचार

## CONCEPT OF HEALTH

संस्थाओं मे स्वास्थ्य शिक्षा Health Education in Institutions:

शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम के परिणाम स्वरूप भारतवर्ष के सम्पूर्ण शैक्षिक संस्थाओं में प्रत्येक बालक के अंदर आरोग्य जीवन में खेलने की आदत, व्यायाम तथा स्वास्थ्य विकसित होना चाहिए। जैसे ही खेल व्यायाम तथा स्वास्थ्य परम्परागत हो जायेगा, राष्ट्रीय शक्ति तथा चरित्र निश्चित हो जायेंगे।

शिक्षकों तथा स्कूल के अधिकारी वर्ग द्वारा यह चेष्टा होना चाहिए कि बालकों के लिए एक आरोग्य वातावरण प्राप्त हो। साफ-सुथरा स्कूल का घेरा, क्रमानुसार चारों ओर की चीजें साफ, साफ शौचालय आदि के द्वारा उच्च नागरिकता की भावना बालकों में उत्पन्न की जा सकती है। स्वस्थकर जीवन भी आदत के द्वारा बनाया जा सकता है।

कक्षा, कमरे की मेज कुर्सियाँ, प्रकाश, वायु प्रवेश, सफाई आकर्षण, आदि का उचित प्रबन्ध आवश्यक हैं जिससे बालकों का स्वास्थ सुरक्षित हो रहे और अनेक स्वस्थकर भावनायें बनें।

स्वस्थकर रहने सिखाने की एक ही प्रणाली है वह है स्वास्थ्य

में अभ्यास करने के द्वारा तथा बालकों की सहायता करना जिससे वह स्वस्थ रहने का अभ्यास कर सकें।

प्रभावशाली डाॅक्टरी निरीक्षण जिस का सहयोग शारीरिक तथा स्वास्थ्य शिक्षा से हो।

वर्ष में एक बार डाक्टरी निरीक्षण ही काफी नहीं है न ही अनेकों डाक्टरी निरीक्षण उपयुक्त हैं जिनके निरीक्षण के परिणाम पर ध्यान न दिया जाय तथा उसको ठीक नहीं किया जाय। डाक्टरी निरीक्षण समय पर होना चाहिये। डाक्टरी निरीक्षण अत्यन्त आवश्यक है। डाक्टरी निरीक्षण का सम्बन्ध शारीरिक शिक्षा का अध्यापन से होना चाहिए जिससे डाक्टरी परिक्षण के परिणाम के अनुसार उन बालकों का स्वास्थ्य सुरक्षित रहे तथा जिन्हें डाक्टरी चिकित्सा जिमनास्टिक चिकित्सा या पौष्टिक भोजन की आवश्यकता हो व्यवस्था कर दी जाय इस से पहिले कि वे शारीरिक व्यायाम कक्षा में भाग ले सके।

स्वासथ्य शिक्षा :-साधारण शिक्षा से कोई लाभ नहीं है यदि व्यक्ति यह न जानता हो कि जीवन में कैसे रहना है तथा शिक्षा काल में मान्यता प्राप्त आदतों के साथ स्वास्थ्य के उन आदतों को जो जीवन परयन्त लाभदायक सिद्ध होती हैं, अर्जित करना आवश्यक है, नहीं तो उसे कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

स्वास्थ्य-शिक्षा के द्वारा बालकों को मानव शरीर का ज्ञान दें तथा उसकी रक्षा के उपाय तथा उसके पूर्ण विकास की क्रिया परिचय कराये। साधारण शिक्षा की अवस्था तथा शैक्षिक वातावरण इस प्रकार होना चाहिए कि स्वास्थ्य की आदत साधारण नैसरगिक प्रकार से बगैर उस ओर विशेष ध्यान आकर्षित कराये

सीखा जा सके।

स्वस्थकर शैक्षिक वातावरण के साथ साथ जिस में स्वास्थ्य की आदत अर्जित करने में प्रेरणा मिलेगी। सप्ताह में उपयुक्त समय, स्वास्थ्य शिक्षा के लिए देना चाहिए जिस से बालक निम्नलिखित बातों से परिचित हो सकें।

(१) शरीर रचना तथा शरीर क्रिया से परिचित हो सकें।

(२) इस बात की महत्ता को समझ ले कि स्वस्थकर रहना मानसिक योग्यता, सामाजिक मान्यता तथा नैतिक शक्ति के लिए अनिवार्य है।

(३) जिससे प्रारम्भिक सहायता, आवश्यकता पड़ने पर दे सकें।

(४) व्यायाम करने न करने के भले बुरे परिणाम मालूम हों।

(५) रोग के कारण तथा उससे बचने के उपाय जाने।

(६) संतुलित भोजन के विषय ज्ञान तथा भिन्न भिन्न भोजन पदार्थ के गुण शक्ति के लिए मरम्मत के लिए बढ़ाव के लिए और गलत भोजन के परिणाम जानें।

(७) स्वयं स्वस्थ रह कर अच्छे गौरव के पात्र हों तथा स्वयं ही स्वस्थ रहें और दूसरों को भी उनके लाभ बतायें।

## परीक्षण प्राप्त किए व्यक्तियों द्वारा कार्य का निर्देश तथा निरीक्षण

इसके लिए उन व्यक्तियों की आवश्यकता है जिन्होंने ऊँच

प्रशिक्षण प्राप्त किए हैं। शैक्षणिक तथा अध्यात्मिक गुणों को एक अच्छे शारीरिक कार्यक्रम के द्वारा अर्जित करना ध्येय है। उन अध्यापकों की आवश्यकता नहीं जो केवल व्यायाम करा सकें बालकों को। आवश्यकता उन शिक्षकों की है जिनका कोई ध्येय, उद्देश्य आदर्श हो, मानव प्रकृति के ज्ञान में रुचि हो तथा पर्याप्त शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण में योग्यता रखते हो। तथा इसके साथ ही बुद्धि तथा कौशल द्वारा बालकों के रुचि तथा आवश्यकताओं का निरीक्षण कर सकें। जो बालक स्कूल जाने वाले हैं उनके लिए सर्वश्रेष्ठ नेतृत्व की आवश्यकता है विशेषकर शिक्षा के इस मुख्य क्षेत्र में जो मनुष्यत्व के चरित्र निर्माण के तत्वों से विशेष सम्बन्ध रखते हैं।

**डाक्टरी निरीक्षण फ़ार्म** (Medical Inspection form) :-

नाम... ... ... ... ... जन्म तिथि... ... ... ... ...
पता... ... ... ... ... स्कूल... ... ... ... ... ...

### संक्रामक रोग का इतिहास

पिता का व्यवसाय... ... ... ... ... ...
परिवार... ... ... ... ... ... ...
टीका लगा या नही... ... ... ... ... ...

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| तिथि | | | | |
| स्कूल वर्ष | | | | |
| कक्षा | | | | |
| ऊँचाई | | | | |
| वजन | | | | |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| पोषण | | | | |
| दृष्टि, दाहिना-बायां | | | | |
| श्रवण दाहिना-बांया | | | | |
| दांत तथा मसूड़े | | | | |
| टान्सिल | | | | |
| ऐडोनोयड्स | | | | |
| गर्दन की ग्रन्थि | | | | |
| f पलीन | | | | |
| नाक | | | | |
| त्वचा | | | | |
| गुप्त रोग | | | | |
| हृदय | | | | |
| फेफड़ा | | | | |
| कायफोसिस | | | | |
| लोरडोसिस | | | | |
| स्कोलियोसिस | | | | |
| तोंद | | | | |
| पैर | | | | |
| नाड़ी की अवस्था | | | | |
| हर्निया | | | | |
| लगने वाली वीमारियां | | | | |
| चिकित्सा की सिफारिश | | | | |
| शारीरिक शिक्षा से अवकाश | | | | |
| चिकित्सा जमनास्टिक कक्षा की सिफारिश | | | | |
| माता पिता को सूचना | | | | |

## परिणाम का रिकार्ड

| तिथि | माता पिता का कार्य | चिकित्सा | जिमनास्टिक चिकित्सा | परिणाम |
|---|---|---|---|---|

[६२]

# वर्तमान जीवन के खतरे

## HAZARDS IN MODERN LIFE

सभ्यता का आरम्भ मनुष्य का, प्रकृति के ऊपर विजय द्वारा घोषित हुआ है। मनुष्य को पहियों के ऊपर बोझ ले जाने तथा छपाई आदि के अविष्कार में हजारों वर्ष लग गये। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक मनुष्य साधारण कृषि वातावरण में रहता था तथा बहुत कम नगर थे जो व्यापारियों तथा अधिकारी वर्ग को आकर्षित करते थे। जनता भूमि पर निर्भर करती थी। थोड़े ही समय में अधिकतर लोग व्यवसायिक जीवन में लग गये जो दुकानों में, माल-घरों में, तथा अनेक व्यापार स्थानों में आर्थिक समस्या के कारण बड़े समूह में जमा होने लगे।

आधुनिक जीवन औद्योगिक जीवन है। अधिकतर लोग शहरों में रहते हैं तथा रहना चाहते हैं। अधिक लोग जिनके पूर्वज खुली हवा के शुद्ध वातावरण मे प्रकृति के साथ पले तथा हर पग पर मांस पेशियों की शक्ति का व्यवहार करते थे उनके वंशज अब घर के अन्दर शहरों में पाये जाते हैं और दिन प्रति दिन कार्य करते हैं किन्तु उतना व्यायाम भी नहीं हो पाता है कि उन्हे एक बून्द पसीना ही आ जाय।

इस औद्योगिक जीवन के तत्व सर्वत्र ज्ञात हैं। हाथ के काम के स्थान पर यन्त्रों से काम करने लगे, जो कार्य पहले मनुष्य शक्ति से होता था वह भाप शक्ति द्वारा किया जाता है, पारिवारिक घरेलू कार्य मिलों के काम में परिवर्तित हो गये, श्रमिकों में विभाजन, काम करने वाले सामूहिक रीति से एकत्र होते हैं। बालक तथा स्त्रियाँ पुरुषों की भाँति काम करती हैं।

इनके अलावा अन्य समस्यायें हैं जो इस जटिल औद्योगिक जीवन के फलस्वरूप हैं अर्थात् राज्य कार्य की भीषण समस्यायें सुरक्षा का अभाव उन अधिक लोगों के लिए जो थोड़े स्थान में रहते हैं तथा लम्बी चौड़ी सेनायें जो इन अवस्थाओं के कारण आवश्यक हो जाती हैं।

शहर में सुविधाओं के होते हुए भी उसकी असुविधायें अधिक हैं। शहर मनुष्य के जीवन के खतरे को बड़े रूप में प्रकाशित करता है। मनुष्यों को थोड़े क्षेत्र में एकत्र करके वह उसके चित्र को भयानव बना देता है। जो साधारण सरल समाज में प्रकृति उत्तेजित हो र शांत हो जाती है। जन समूह का एकत्र होना तथा उनके लिए सेवाओं की समस्या जो सदैव दबाव डालती रही है उसके निवारण के लिए जटिल सरकारी संस्थाओं तथा संगठनो की आवश्यकता होती है।

सरकार अपने अनेकों रूप में से एक के द्वारा कम से कम स्वास्थ, सुरक्षा, शिक्षा, मनोरंजन, नौकरी तथा नागरिकों की भलाई के सम्पर्क में आती है।

सरकार के बढ़ने तथा कार्य में वृद्धि के कारण ये आवश्यक

नहीं कि समाज को जिन चीज़ों की आवश्यकता है वह मिल जाय। यह सब उन राजनैतिक प्रभावों पर निर्भर है जो सरकार का नियन्त्रण करता है।

शहर ने, अधिकतर इस औद्योगिक युग में, जन सुरक्षा समस्या को पेचीदा कर दिया है।

मोटर गाड़ियाँ जो तेज़ी से सड़कों पर चलती हैं जो घोड़ों के द्वारा चलने वाली गाड़ियों के लिए बनी थी, पास बने हुए घरों में आग लग जाती हैं, गैस का प्रयोग, बिजली का प्रयोग तथा उन बनावटी यन्त्रों का प्रयोग आदि के द्वारा सुरक्षा समस्या और भी जटिल हो गई है तथा ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो गई हैं जिनके लिए कभी सोचा भी नहीं जा सकता था। क्या मनुष्य का शीघ्रता से सहयोग तथा अनुकूलता इतनी विकसित हो सकती है कि उसे इन खतरों से बचा सके ? या इसका उत्तर बिल्कुल नये सिरे से शहरों का फिर से निर्माण करने में है ?

प्राचीन सरल साधारण जीवन से वर्तमान जटिल औद्योगिक समाज में परिवर्तन, शारीरिक शिक्षा के लिए अनेकों समस्यायें उत्पन्न कर देती हैं। कुछ आधुनिक सभ्यता के तत्व हैं जो बचपन तथा युवा अवस्था में विकास तथा बढ़ाव पर प्रभाव डालती है जिससे उनका जीवन जो बाद में आता है उसी रंग में रंग जाता है।

ये आर्थिक दशायें उन कुछ स्त्रोतों में हैं जो शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त बनने में सहायता देती है तथा इनकी वैज्ञानिक मान्यता है जिनके द्वारा कार्य क्रम का चुनाव तथा उनका परिणाम प्राप्त

हो। मुख्य आर्थिक अवस्थायें जो शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में सम्बन्धित है वह हैं; दूसरे स्थानों से आकर बसना, समाज को नगर सम्बन्धित अवस्थाओं में देखना, मिलों कारखानों में परिश्रम करने वाले, मशीन के द्वारा काम करना, सामूहिक उत्पादन प्रणाली, उद्योग में महिलायें, यातायात का साधन, व्यापारिक मनोरंजन, अवकाश का समय, सुरक्षा तथा संसार नेतृत्व।

आधुनिक सभ्यता में बाल विकास की अवस्थाये तथा विशेषता का ध्यान रखते हुए उनका लालन पालन करना तथा शिक्षा देना है। शारीरिक शिक्षा के द्वारा उनके बढ़ाव तथा विकास पर ध्यान देना परम आवश्यक है।

शारीरिक शिक्षा में व्यक्तिगत विकास के अनुसार कार्य क्रम निर्धारित करना आवश्यक है।

आधुनिक काल में खतरों से, शारीरिक शिक्षा ही केवल बालकों को सुरक्षित कर सकती है तथा उनके बढ़ाव तथा विकास का उचित नियोजन कर सकती है।



[६३]

# भारत वर्ष में स्वास्थ्य समस्यायें

## HEALTH PROBLEM IN INDIA.

कुछ वर्ष पहिले भारतीय जनता की साधारण आयु प्राय: २२ वर्ष की होती थी किन्तु अब २६ वर्ष की हो गई है। जब इस बात पर ध्यान दिया जाता है कि ४६ करोड़ मनुष्यों की साधारण आयु केवल २६ साल की है तथा जब इसकी तुलना विदेशों से करते हैं जहाँ बालक २६ वर्ष के बाद युवा होते हैं तो स्वास्थ्य की समस्या का कुछ अन्दाजा होता है। किसी विद्वान ने कहा है कि सारा भारतवर्ष एक 'रोगी' देश है, उनके इस कथन में कुछ सत्यता है।

जीवन के किसी स्तर पर देखा जाय तो यह ज्ञात होगा कि प्रत्येक अवस्था में ५ प्रतिशत ऐसे लोग हैं जो पूर्ण रूप से स्वस्थ होंगे। बाकी किसी न किसी प्रकार से रोग ग्रस्त हैं चाहे वह शारीरिक हो अथवा मानसिक। इसका परिणाम यह होता है कि भारत एक देश के विचार से वैसा परिश्रमी व्यस्त रहने वाला स्वस्थ देश नहीं है जैसे दूसरे देशों के नागरिक हैं।

इसके कई एक कारण हैं। इसका मुख्य कारण अशिक्षित होना है। ८७ प्रतिशत लोग अशिक्षित हैं जो अपने तथा अपने हित के विषय में कुछ नहीं जानते। प्राकृतिक रीति से किसी न किसी प्रकार जन्म

लेते, जीवित रहते तथा थोड़ी आयु में जीवन त्याग देते थे। आर्थिक स्थिति के कारण भी स्वास्थ्य की अनेकों समस्यायें उत्पन्न हैं।

अधिकतर लोगों की आर्थिक अवस्था ऐसी है कि वे आधारित आवश्यकताओं की भी पूर्ति नहीं कर सकते हैं। भोजन, वस्त्र, चिकित्सा, सुरक्षा, शिक्षा, निवास आदि जो आधारित आवश्यकतायें हैं उनका आनन्द स्वप्न में भी दुर्लभ है। ऐसी स्थिति में अस्वस्थता अवश्यमभावी है।

मनुष्यों की कुछ व्यक्तिगत आवश्यकतायें निम्नलिखित हैं :—

(१) बनावटी तथा क्रियात्मक त्रुटियों से मुक्त होना।

(२) स्वस्थ कर तथा शक्तिशाली होना।

(३) वैसी आदतें हों जो स्वास्थ्य तथा योग्यता में सहायक हों

(४) कुछ मात्रा में शारीरिक योग्यता।

(५) व्यक्ति को इमानदारी, आत्मनियंत्रण, उत्साह तथा दूसरे गुण अर्जित करना।

(६) शरीर रचना तथा क्रिया की देखभाल का ज्ञान।

(७) स्कूल घर तथा बाहर के स्वस्थ वातावरण में रहना।

(८) स्वस्थ नागरिक से देश की सेवा करना।

(९) अवकाश के समय का सदुपयोग।

(१०) मनोरंजन के उपयुक्त साधन।

(११) योग्यता के अनुसार प्रगति का अवसर तथा अवकाश मिलना चाहिए।

शिक्षा संस्थाओं, सार्वजनिक संस्थाओं में उचित स्वास्थ्य शिक्षा, उचित चिकित्सा तथा रोग के अवरोध में चिन्ताजनक कमी है।

सरकार प्रयत्नशील हैं फिर भी समस्या का समाधान ोने में समय लगेगा।

शहरों की अपेक्षा ग्रामों की दशा और शोचनीय है। ब्लाक डेवेलेपमेन्ट, ग्राम पंचायत, कोआपरेटिव फार्मिग आदि संस्थाओं के सहयोग से जीवन स्तर उठाने की चेष्टा की जा रही है तथा कुछ सफलता भी प्राप्त हुई है।

स्वास्थ्य, जीवन का अंग ही नहीं किन्तु स्वास्थ्य जीवन है। तथा जीवन स्वास्थ्य है।

राजनैतिक स्वतन्त्रता के साथ यदि व्यक्ति को शारीरिक मानसिक तथा आत्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त न हो तो वह स्वस्थ न हो सकेगा।

स्वास्थ्य संबंधी समस्या जटिल है तथा उसका हल आसान नहीं है। फिर भी इसमें निराश होने की आवश्यकता नहीं। आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक व्यक्ति तथा समाज इस बात पर सहयोग दे तथा यह ध्येय रखे कि व्यक्तिगत स्वास्थ्य तथा सामाजिक स्वास्थ्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है तथा हम उसे प्राप्त करेंगे तो कोई ऐसी शक्ति नहीं जो हमें अपने लक्ष्य को प्राप्त करने से रोक ले।

[६४]

# भारतवर्ष के साधारण रोग

## DISEASES COMMON IN INDIA

हैजा Cholera :-

भारतवर्ष में यह रोग सबसे अधिक पाया जाता है। गर्मी के दिनों में यह अधिक होता है। इसमें दस्त तथा कै होने लगता है। यह संक्रामक रोग है।

कारण :—

गन्दगी तथा बासी भोजन से यह होता है। गाँवों में यह अधिकतर होता है।

यह रोग विकृत भोजन द्वारा हो जाता है। विशेष कर पीने के पानी के गन्दे होने से भी होता है। जो कीटाणु रोगी के दस्त और कै में से उड़कर फ़ैल जाते हैं उनसे यह रोग फ़ैल जाता है। हैजे के रोगी में यह कीटाणु बहुत दिन तक रहते हैं जिससे रोग के अन्य लोगों में फ़ैलने की सम्भावना होती है।

बचने के उपाय :—

जिस गाँव अथवा मोहल्ले में यह रोग हो उस मुहल्ले में न जाँय अथवा रोगी को ऐसे स्थान पर रखा जाय जहाँ से अन्य लोगों को रोग लगने की सम्भावना न हो। भोजन को मक्खी, धूल आदि

से बचाकर रखना चाहिए। पानी को उबाल लेना चाहिए पीने से पूर्व तथा उसमें लाल दवा "परमैगनेट आफ़ पोटास" डालना चाहिए। सब्जी भाजी तथा फल भी लाल दवा में धोकर खाने चाहिए।

दूध आदि का सेवन भली भाँति पका कर करना चाहिए। ध्यान रहे रोगी को सर्वदा अलग रखना चाहिए निवास स्थान की स्वच्छता का ध्यान चाहिए रखना चाहिए। ऐन्टी कालरा वैक्सीन के टीका लगवा लेने से यह रोग होने की सम्भावना नहीं होती है इस टीके का प्रभाव तीन माह तक रहता है।

पेंचिस Dysentry :—

पेंचिस में दस्त आने के साथ आँव तथा रक्त भी आता है। इस से पेट में मरोड़ तथा पेट में काफ़ी दर्द बना रहता है। बुखार भी किसी-किसी को आने लगता है।

पेंचिस दो प्रकार की होती है। एक बनस्पति के कीटाणुओं से (Bacillary Dysentry) दूसरी पशुओं के कीटाणुओं (Amoebic Dysentry) से होती है।

यह आंतो की बीमारी है तथा इसके कीटाणु रोगी के मल में पाये जाते हैं।

बचने के उपाय :—

क्योंकि यह रोग पानी, खाने की वस्तुओं, मक्खियों, तथा अन्य गन्दे कीटाणुओं से फैलता है इसलिए इन कीटाणुओं से बचने तथा भोजन आदि की सफ़ाई का प्रबन्ध करना चाहिए।

इस रोग को उसी प्रकार रोकना चाहिए जिस प्रकार हैजा

रोका जाता है। उदाहरणार्थ, पानी उबाल कर पिया जाय, भोजन ताजा तथा शुद्ध हो, कच्ची खाने की चीजों को लाल दवा से धो लेना चाहिए। भोजन मक्खियों से बचाना चाहिए। मैले का उचित प्रबन्ध करना।

मियादी बुखार Typhoid Fever :—

इस रोग का एक प्रकार का विषैला कीटाणु होता है जिसके शरीर में प्रवेश करने से यह रोग हो जाता है।

कारण :—

इस रोग के कीटाणु मल व मूत्र में पाये जाते हैं। गन्दा भोजन पानी अथवा दूध के कारण कीटाणु मनुष्य के पेट में प्रवेश कर जाते हैं तथा इसी कारण यह रोग उत्पन्न हो जाता है।

यह रोग भी संक्रामक रोग है।

बचने के उपाय :—

इस रोग से बचने के लिए उन सभी बातों का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है जिन बातों का ध्यान हैजे, पेचिस आदि संक्रामक रोगों से बचने के लिए रखा जाता है। इस रोग से बचने के लिए ऐन्टी टाईफाइड इन्जेकशन शीघ्र लगवा लेना चाहिए।

मलेरिया Malaria :—

इस प्रकार के बुखार में रोगी को बहुत ठंडा लगता है तथा बुखार तेज हो जाता है।

कारण :—

एनोफ़िलिस नामक मच्छर के काटने से मलेरिया का बुखार

आने लगता है। मलेरिया का मच्छर साधारण मच्छर से भिन्न होता है। मलेरिया फसली (Seasonal) बुखार के कीटाणुओं से भी हो जाता है।

जो बुखार रोगी को हर तीसरे रोज आता है उसे प्लाज़मोडियम बाईवेक्स या तीजारी का बुखार कहते हैं तथा जब बुखार हर चौथे दिन आता है तो उसे प्लाज़मोडियम मैलेरी कहते हैं अथवा चौथी का बुखार कहते हैं।

जो बुखार कभी भी ठंडा लगकर तेजी से आता है उसे प्लाज़्मोडियम फैन्सीपैरम कहते हैं।

यह कीटाणु मनुष्य के शरीर में, आमतौर से एक मादा मच्छर के काटने से पहुंचते हैं। कीटाणु मच्छर के पेट में होते हैं जो काटने पर रक्त में मिला दिये जाते हैं जहाँ ये असंख्य रूप में हो जाते हैं, यहाँ तक कि सारा रक्त इनके द्वारा भर जाता है।

यह बुखार दौरा, कंपकपी तथा अधिक ठंड से आरम्भ होता है। बुखार उस समय बड़े ज़ोर का होता है जब कि लाल रक्त कण फटकर कीटाणुओं को ख़ून में मिलाते हैं।

बचने का उपाय–

इसकी सबसे उत्तम दवा कुनीन की गोली है।

इससे बचने के लिए विशेष मच्छर मारने वाली दवाओं का प्रयोग करना चाहिए। यह दवा वहाँ डालनी चाहिए जहाँ मच्छरों के अन्डे होते हैं उदाहरणार्थ गड्ढे के रुके हुए पानी में यह अधिक होते हैं। वहाँ केरोसीन तेल डालना चाहिए। पैरिस ग्रीन भी डाला जाता है।

सड़े हुए गन्दे पानी को साफ करना चाहिए, मसहरी का प्रयोग करना चाहिए।

नीबू का तेल (Citronella oil) लगाने से मच्छर भाग जाते हैं।

प्लेग (Plague) :-

इस रोग में, जांघो में गिल्टी हो जाती है तथा बहुत तेज़ बुखार आता है।

कारण :-

गिल्टी वाला प्लेग चूहों में वर्तमान एक विशेष विशैले कीटाणु से होता है। उस किटाणु को पिस्सू कहते हैं। यह किटाणु पहले चूहे को काटता है जिसके कारण वह मर जाता है ततपश्चात यह मनुष्य पर आक्रमण करता है। यह रोग इन्ही कीटाणुओं द्वारा फैलता है। इन कीटाणुओं के काटने के पश्चात गिल्टी निकल आती है तथा तेज़ बुखार हो जाता है।

प्लेग की एक प्रकार और भी है जिसे न्यूमोनिक रोग (Pneumonic Plague) कहते हैं। यह फेफड़ों पर असर करता है। तथा यह सांस और थूक के कारण फैलता है।

बचने का उपाय :-

जब चूहा अपने आप ही घर में मर जाता है तो उसे जला देना चाहिए। उसे हाथों से नहीं छूना चाहिए। जिस स्थान पर प्लेग हो वह स्थान छोड़ देना चाहिए। रोगी के वस्त्र आदि कीटाणु नाशक औषधि से साफ़ करने चाहिए। रोगी को अलग स्वच्छ स्थान पर रखना चाहिए। बचाव के लिए प्लेग का टीका लगवाना चाहिए। तथा वह हर सम्भव कार्य करना चाहिए जिससे विशैले कीटाणु

फैलने न पायें और रोग का अंत हों जाय।

चेचक (Small Pox) :-

यह एक अत्यत्त भयानक रोग है जिसमें अधिक मृत्यु होती है रोगी की; और यदि भगवान की कृपा से रोगी बच भी जाय तो रोगी के शरीर तथा मुंह पर काले दाग बने रह जाते हैं। आंखों तथा कानों में भी इस रोग का प्रभाव होना है। इस रोग में, रोगा के पूरे शरीर में दाने हो जाते हैं। यह संक्रामक रोग है।

बचने के उपाय :-

रोगी को बिलकुल अलग रखना चाहिए। बच्चे के जन्म लेने के पाँचवे महीने के बाद टीका लगवाना आवश्यक है। बड़े लोंगों को भी इससे बचने के लिए टीका लगवाना चाहिए। चेचक के रोगी को अलग तथा कम प्रकाश वाले कमरे में रखना चाहिए तथा रोगी को ठंड लगने से भी बचाना चाहिए क्योंकि निमोनिया होने का डर होता है। रोगी के कपड़े अलग रखने चाहिए

सफ़ाई आदि के लिए उसी प्रकार सावधानी बरतनी चाहिए जिस प्रकार अन्य संक्रामक रोगों के लिए किया जाता है।

खसरा (Measles) :-

यह छोटे बच्चों को अधिक होता है इसमें घमौरी अथवा अंधौरी के समान छोटे-छोटे दाने शरीर में निकल आते हैं। जो लाल रंग के होते हैं। यह दाने तीसरे अथवा चौथे दिन मुरझा जाते हैं।

इससे बचने के लिए उसी प्रकार सावधान रहना चाहिए जिस प्रकार अन्य संक्रामक रोगों से रहा जाता है।

दस्त आना Diarrhoea

इसमें पेट के खराबी के कारण रोगी को कई एक दस्त हो जाते है।

कारण :—किसी प्रकार के चिकने भोजन अथवा दूषित पानी या दूध अथवा सड़ा हुआ बासी भोजन खा लेने से दस्त आने लगते हैं। पाचन क्रिया भली भाँति नहीं होती है।

यह रोग भय, जिगर की खराबी या खतरनाक बीमारी के कुप्रभाव आदि से भी हो जाता है। इस रोग को साधारण नहीं समझना चाहिए। इस रोग के कारण रोगी अत्यन्त कमजोर हो जाता है।

बचने के उपाय :-भोजन आदि पर नियन्त्रण रखना चाहिए। सलफ़र ड्रग्स, ऐन्ट्रोवायफार्म, तथा ईस्ट की गोलियाँ लाभदायक सिद्ध होती हैं। पानी उबाल कर पीना चाहिए। यदि किसी रोग के कारण है तो शीघ्र उपचार चाहिये।

काली खांसी Whooping Caugh

यह छोटे बच्चों को अधिक होती है। यह साधारण खाँसी-जुकाम की भाँति आरम्भ होता है तथा बिगड़ कर काली खाँसी अथवा कुकुर खाँसी का रूप धारण कर लेती है। यह खाँसी साधारण खाँसी से अलग पहचानी जा सकती है क्योंकि कि जब रोगी को इस प्रकार की खाँसी होती है तो वह काफी देर तक खाँसता है और कभी कभी कै भी करता है।

बचने का उपाय :-हूपिंग कफ़ वैकसीन लगवाने से रोग को रोका जा सकता है।

इनफ्लेंजा Influenza

इनफ्लूंजा, श्वास से (Respiratory) वायू (Gastric) नाड़ियों (nervous) के प्रकार का हो सकता है। इसका आक्रमण आकस्मिक होता है। यह वायरस इनफेकशन (Virus Infection) है तथा यह छींकों या सांस के द्वारा कीटाणुओं के निकलने से फैलता है। इसमें जुकाम के साथ बुखार आता है।

बचने का उपाय तथा उपचार :—यह संक्रामक रोग है अतएव रोगी से दूर रहना चाहिए। रोगी को आराम करना चाहिए। पौष्टिक भोजन का सेवन करना चाहिए, खुली हवा तथा रोशनी में रहना चाहिए। रोगी को ठंड से बचना चाहिए।

क्षय रोग Tuberculosis

यह रोग फेफड़े, आँतों, हड्डियों तथा ग्रन्थियों (Glands) के खराब होने से होती है। यह रोग दो प्रकार से होता है पशुओं से, गाय (Bovine Strain) तथा मनुष्य से (Human Strain) इस रोग में पहले रोगी को हल्का हल्का बुखार आता है परन्तु जब रोग बिगड़ जाता है तो बुखार तेज हो जाता है शरीर में दर्द भी होता है। हाथ पैरों में सूजन तथा मुंह से खून भी आने की सम्भावना होती है रोग के बढ़ने पर। क्षय रोग Tuberculalr-bacilia के कीटाणुओं से होता है। यह सांस तथा भोजन द्वारा मनुष्य पर आक्रमण करते हैं।

बचने के उपाय तथा उपचार :-रोगी को अलग रखना चाहिए। दूध अधिक मात्रा में लेना चाहिए। खांसी, बुखार, पेट की खराबी आदि होने पर शीघ्र उपचार करना चाहिए। थूकने के बर्तन अलग

रखा होना चाहिए जिसमें कीटाणु नाशक औषधि होनी चाहिए। कपड़ों की स्वच्छता पर अवश्य ध्यान देना चाहिए। मानसिक थकावट तथा चिन्तन न करना चाहिए।

यह बीमारी जिस घर में हो, वहाँ के बच्चों को सर्वदा पृथक रखना अत्यन्त आवश्यक है। पूर्ण रूपेण विश्राम करना चाहिए।

चर्म रोग Skin Disease

यह विशेष कर गन्दगी तथा लगने के द्वारा होती है इस के भिन्न भिन्न प्रकार हैं। त्वचा के सुराख हमेशा साफ रखे जांयें। त्वचा को लगने वाली रोग से बचाना चाहिए। स्नान करना आवश्यक हैं। यही बचने के उपाय है।

---

# व्यक्तिगत तथा सामूहिक स्वास्थ्य

## वायु, प्रकाश, साफ वायु का आना जाना
## सफाई, तथा कूड़ा फेंकना

Sanitation, air, light, ventilation, cleanliness and disposal of garbage

स्वास्थ्य रक्षा स्वास्थ्य का ठीक रखना तथा रोगों से बचने की विद्या है। स्वास्थ रक्षा के नियमों का पालन करना ही सफाई से लाभ उठाना है जिनके द्वारा स्वास्थ के नियम पालन किए जाते हैं। यद्यपि स्वास्थ्य के नियम सारे संसार में एक है किन्तु उनके पालन करने की रीति भिन्न-भिन्न होती हैं। ये रीतियाँ साधारणतः देश, समय, जाति प्रथा आदि के ऊपर निर्भर रहता है।

स्वास्थ रक्षा में व्यक्तिगत स्वास्थ्य तथा समाज स्वास्थ्य दोनों आता है।

व्यक्तिगत स्वास्थ्य-स्वस्थ्य दैनिक चर्य्या जिसमें समय से काम करना, समय से विश्राम, समय से पौष्टिक भोजन हो, व्यक्तिगत सफ़ाई, स्नान, मलमूत्र त्याग, साफ़ वस्त्र, बाल, नाखून इत्यादि आते हैं। दांत, कान, मुह नाक की सफ़ाई इसमें आवश्यक है।

खुले में रहना, शुद्ध वायु का सेवन, प्रकाश में रहना, शुद्ध जल

का प्रयोग, सही मनोरंजन, शरीर मन तथा आत्मा की पवित्रता आवश्यक है ।

समाज की सफ़ाई :—वातावरण की सफाई, सड़क, मुहल्ले, नगर, देश यह प्रत्येक व्यक्ति का उत्तरदायित्व है कि वह इस बात को देखें कि वातावरण किसी प्रकार दूषित न हो । इधर उधर मल-मूत्र त्यागना, थूकना, कूड़ा आदि न फेंकना चाहिए । नाले आदि में पानी न सड़े । हर उपाय से संक्रामक रोग को शीघ्रता के साथ रोकना तथा चिकित्सा करना चाहिए ।

सार्वजनिक स्वास्थ स्थान, सफ़ाई से उपयोग किए जायें । मेंले त्योहार, समारोह, के समय शुद्ध वस्तुओं का प्रयोग हों ।

वैसी वस्तुयें न बिकनी चाहिए जिनके द्वारा रोग हो जाने का सन्देह हो । पानी पीने का जल स्त्रोत साफ़ हो तथा किसी प्रकार से गन्दगी न होने पाये क्योकि यह बीमारी का कारण हो सकता है । लोगों को स्वास्थ्य के विषय में शिक्षित किया जाय ।

वायु :-

मनुष्य के जीवन के लिए आक्सीजन सबसे ज्यादा आवश्यक है । इसकी सहायता से पची हुई खुराक जलकर बदन में गर्मी तथा शक्ति पैदा करती है । हवा में नाइट्रोजन तथा कार्बन डाई आक्साईड भी होता है ।

हवा धूल से सबसे ज्यादा अशुद्ध होती है धूल में असंख्य हानिकारक पदार्थ होते हैं तथा स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं । थूक तथा मलमूत्र के सूखने पर जो कीटाणु हवा में मिल जाते हैं वे अत्यन्त हानिकारक होते हैं ।

शहर की हवा को धुंआ और गैस खराब कर देती है जो कि आग जलने से तथा मिलो से आता है। पत्थर के कोयले के धुँऐ से भी हानि होती है। इन सभों में सबसे अधिक जहरीली कार्बन मोनो आक्साईड होती है।

हवा का आना जाना :-

स्वास्थ को बनाये रखने और शरीर के आराम के लिए ऐसी साफ हवा का इकट्ठा करना जिसका तापक्रम तरी और चाल स्वास्थ्य के लिए ठीक हो तथा जो गर्म तर और अशुद्ध हवा को निकाल दे उसको हवा का आना-जाना (Ventilation) कहते हैं। वायु मण्डल को बनाने के लिए हवा का आना जाना बनावटी या प्राकृतिक रीति से की जा सकती है। निम्नलिखित तीन रीतियों से यह कार्य हो सकता है।

(१) हवा के तेज चलने से।

(२) उचित गर्मी रहने से।

(३) गन्दगी को हटाने अथवा नाश करने से।

(१) हवा का चलना :—तेज हवा चलने से साफ हवा गन्दी हवा का स्थान लेता है। हवा की चाल सफ़ाई करती है। बिजली के पंखे आदि इसीलिये प्रयोग किए जाते हैं। हवा शरीर को ठंडा करने में सहायक है।

(२) उचित गर्मी :—गर्म हवा ऊपर उठती है तथा उस का स्थान ठंडी हवा ले लेती है। इसी तरह ठंडी हवा खिड़कियों तथा दरवाजों से अन्दर आती है।।

(३) गन्दगी का नाश करना :-हवा की गन्दगी दूर करने के

लिए आँधी, बरसात सूर्य का प्रकाश तथा पेड़-पौधे लाभदायक होते हैं। बरसात का पानी हवा की गन्दगी को धो देता है। सूर्य का प्रकाश कीटाणुओं का नाश करता है। पौधे-कार्बनडाईआक्साईड हवा में से ले लेते है तथा उसके बदले आक्सीजन देते हैं।

हवा के आबागमन के बनावटी रीति, हवा का निकालना (Extraction), हवा का ढकेलना (Propultion) :-

हवा को निकालना-पंखो को चलाकर हवा निकालना, कमरों को गर्म करके हवा निकालना।

हवा का ढकेलना :- जैसे हवा अन्दर आती है उसी प्रकार उस के बाहर निकालने की भी व्यस्था होती है जैसे बड़े-बड़े हाल, थियेटर, असेम्बली हाल आदि में होता है।

सूर्य प्रकाश :-

सूर्य से जीवन प्राप्त होता है। इसके द्वारा मानव शरीर में रोग निवारण क्षमता, मांस पेशियों का विकास तथा पाचन क्रिया में वृद्धि होती है। सूर्य के प्रकाश में विटामिन डी अधिक मात्रा में मिलता है। इससे शरीर को बहुत लाभ होता है इसके ही द्वारा क्षय रोग, सूखे को बीमारी, गठिया रक्तहीनता आदि रोगों के उपचार में भी सहायता मिलती है। जिस स्थान पर सूर्य का प्रकाश नहीं पहुंचेगा वहां एक प्रकार की तरी रहेगी तथा ऐसी अवस्था में रोगों के कीटाणु बहुत ही बढ़ते है।

किसी स्थान को शुद्ध तथा स्वस्थकर रखने के लिए पर्याप्त मात्रा में सूर्य के प्रकाश का आना आवश्यक है। जिस प्रकार जब कोई पौधा अंधेरे में रहता है तो बहुत तेजी से बढ़ता है किन्तु

बहुत ही निर्बल रहता है; जो सूर्य के प्रकाश में बढ़ता है वह धीरे धीरे बढ़ता है किन्तु ताकतवर होता है, उसी प्रकार सूर्य के प्रकाश में रहने से शरीर स्वस्थ होगा तथा उसके अभाव से रोग उत्पन्न होने की शंका है। घरों में, कक्षाग्रहों में, दफ्तरों आदि में सूर्य की रोशनी के आने का प्रबन्ध होना आवश्यक है।

सफाई या गन्दगी का निवारण :-Cleanliness or disposal of garbage.

काम में न आने वाली चीजें, मलमूत्र कूड़ा-करकट इकट्ठा करने और दूर करने को सफाई कहते हैं। इसके निम्नलिखित उपाय हैं।

(१) मैला किसी बर्तन में एकत्रित करना चाहिए जो साफ भी हो जाय तथा वहाँ से मैला आसानी से फेंका जा सके। बर्तन ढक्कनदार होना चाहिए।

(२) कूड़े का स्थान खुली जगह में आबादी से दूर होना चाहिए।

(३) मल-मूत्र आदि जमीन में गढ़ा खोद कर डालना चहिए जिससे बदबू न आये तथा मक्खियाँ वहाँ न पहुंच सकें।

(४) जहाँ पीने का पानी हो उसके समीप यह स्थान नहीं होना चाहिए।

(५) स्कूल में मल-मूत्र नहीं त्यागना चाहिए यह बीमारी का कारण होता है।

(६) शौचालय ऐसा हो जहाँ से मल-मूत्र किसी बर्तन या आधुनिक प्रणाली के अनुसार सेपटिक टैंक या सीवर में सीधे जाना चाहिए।

(७) जब कभी बहुत लोगों के लिए कुछ दिनों के लिये शौचालय बनाना हो तो गहरी नालीदार (Deep tunell Latrine) होना चाहिए। यह कम से कम ६ फीट गहरी तथा दो फीट चौड़ी होनी चाहिए। यदि १२ फीट लम्बी हो तो १०० व्यक्तियों के लिए उपयुक्त है। इसमें किसी प्रकार की कीटाणु नाशक औषधि न डालना चाहिए। केवल मल मिट्टी से ढंक दें।

मल-मूत्र दूर करने के उपाय :-

(१) सूखे ढंग :-
- (१) जलाना
- (२) दबाना

(२) गीले ढंग :-
- (१) कीटाणु नाशक औषधि
- (२) तल छट
- (३) जमीन की सिचाई

लीद के दूर करने के उपाय :-
- (१) जलाना
- (२) दबाना
- (३) फैला कर सुखा देना।

गोबर :-खाद के लिए जमीन में गाड़ देना चाहिए।

कूड़ा करकट : बाल्टी (Dust Bins) में जमा करना चाहिए

कूड़ा करकट दूर करने के उपाय :-
- (१) जलाना
- (२) गड्ढे में भरना
- (३) ठेकदारों के हाथ वेचना

गन्दा पानी :-पानी की चिकनाहट किसी बक्से की तरह बर्तन जिसमें ठंडा पानी भरा हुआ हो उसके द्वारा रोक लेना चाहिए।

केवल पानी को गहरे गड्ढे के अन्दर जो बन्द नाली के द्वारा जाता हो, जाने देना चाहिए।

जहाँ पानी गन्दे नालियों से होकर जाता है वहां कोई कठिनाई नहीं होगी। केवल नालियाँ साफ होती रहना चाहिए जिसमें पानी न जमा हो।

मुर्दा जानवर :-गाड़ देना चाहिए अथवा जला देना चाहिए।

---

# [६६]

# भोजन

## FOOD

जीवन के लिए भोजन अत्यन्त आवश्यक हैं ताकि शरीर में कार्य करने की शक्ति, तापक्रम स्थिर रख सकना, टूटे हुए कोषो तथा तन्तुओं की मरम्मत तथा शरीर की वृद्धि सुचारू रूप से होती रहे।

स्वस्थ शरीर के लिए भोजन जिसमें सभी आवश्यक पदार्थ पाये जाते हैं निम्नलिखित हैं।

(१) प्रोटीन Protein
(२) श्वेतसार Carbohydrates
(३) वसा Fats
(४) जल Water
(५) विटामिन Vitamins
(६) लवण Miniral Salts

(१) प्रोटीन (Protein) :-

प्रोटीन रसायनिक मेल है जो नाईट्रोजन, कार्बन, हाइड्रोजन तथा आक्सीजन के मेल से बना हुआ है। मांस, पनीर, मच्छली, मटर तथा सेम आदि में प्रोटीन अत्यधिक पाया जाता है। दूध रोटी, मक्खन, अण्डे आदि में कुछ कम होता है। सब्जियों तथा फलों में

बहुत कम होता है। मांस पेशियां, त्वचा, आन्तरिक अंग तथा अन्य मुलायम तत्व अधिक प्रोटीन के बने हैं।

(२) श्वेतसार (Carbohydrates) :-

श्वेतसार, कार्बन हाईड्रोजन तथा आक्सीजन से तैयार होता है। चीनी पूर्णतया श्वेतसार है। रोटी, दाल आदि अनाजों में तथा दूसरे जड़ की चीजों में अधिक श्वेतसार होता है। श्वेतसार शक्ति (Energy) में जल्दी से बदला जा सकता है।

वसा (Fats) :-

वसा मक्खन, पनीर अण्डा आदि में पाया जाता है। वसा भोजन में कई एक काम करता है अर्थात :-

(i) वसा शक्ति का स्त्रोत है।

(ii) यह शक्ति जमा किया जा सकता है।

(iii) ये कुछ मात्रा में विटामिन देता है। जो स्वास्थ के लिए तथा शारीरिक बढ़ाव के लिए आवश्यक है।

(४) जल (Water):-

ज्यादातर, श्वेतसार तथा प्रोटीन में जल भिन्न भिन्न मात्रा में पाया जाता है। सब्जियों में जल अधिक मात्रा में पाया जाता है। प्रोटीन वाले भोजन जैसे मांस में कम जल होता है। यदि आधा सेर मांस की वैज्ञानिक रीति से जांच की जाय तो पौण्ड का २/३ हिस्सा पानी निकलेगा।

(५) विटामिन (Vitamins) :-

यह जटिल (Complex) पदार्थ है जो जीवन को बढ़ाने के लिए तथा शरीर को शक्तिशाली बनाने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। ये अनेकों प्रकार से शरीर में होने वाले विभिन्न रसायनिक

क्रियाओं में सहायता देता है किन्तु वे अपने आप में शक्ति के स्त्रोत नहीं हैं। मुख्य माने हुए विटामिन्स है, विटामिन ए०, बी०, सी० डी०,।

विटामिन ए०(Vit. A), पशुओं के वसा से बनता है जैसे दूध, मलाई, मक्खन, कलेजी, अण्डा, मच्छली का तेल आदि। ये सब्जियों में भी पाया जा है उदाहाणार्थ, गाजर, पालक टमाटर आदि में। विटामिन ए० की बहुत कमी से, स्वास्थ्य पर बहुत से बुरे परिणाम हो सकते हैं।

विटामिन्स कम होने के कारण शरीर में बीमारियों से मुकाबला कर सकने की शक्ति कम हो जाती है; श्वांस क्रिया में दोष, आंखों का उठ आने का रोग, रतौंधी तथा दृष्टि कम हो जाने का भय होता है। त्वचा भी सूखने लगती है तथा झुर्रीयां भी पड़ जाती हैं अन्य रोग भी हो जाते हैं।

साधारण भोजन में काफी मात्रा में विटामिन ए० मिल जाता है। केवल विशेष अवस्था में उपरोक्त स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

विटामिन बी० (Vit. B) अधिकतर बीजों में पाया जाता है। जैसे गेहूं, दाल, खमीर, मूगफली, जौ, चावल तथा अण्डा आदि में। यदि अधिक दिन से इसकी कमी होती है तो आँतों की बीमारी हो जाती है। तथा एक प्रकार का नाड़ी और त्वचा का रोग भी हो जाता है।

विटामिन सी (Vit. C) ताजे फलों तथा हरी सब्जियों मे पाया जाता है। जैसे नारंगी नीबू, सेब, टमाटर, सलाद, गोभी के पत्तों आदि में। दूध में बिटामिन सी० कुछ कम होता है।

यदि यह भोजन में बहुत दिनों तक न प्रयोग किया जाय तो स्कर्वी Scurvy की बीमारी हो जाने का भय होता है। ऐसी अवस्था में त्वचा के नीचे से रक्त निकलता, मसूढ़ों में रक्त प्रवाह; आँतों के दीवार से तथा गुर्दों से रक्त प्रवाह होने लगता है।

विटामिन डी० (Vit. D) कलेजी मछली के तेल तथा अण्डे में पाया जाता है। हड्डियों के बढ़ाव के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसके बिना हड्डियों की बीमारी हो जाती है। विशेषकर रिकेट (Ricket) हो जाता है जिसमें कैलशियम के बगैर हड्डी मुलायम हो जाती है और हड्डियों के सिरे पर जो बढ़ाव होता है उसमें कमी हो जाती है।

विटामिन डी अल्ट्रा वायलेट (Ultra Violet Rays) के द्वारा प्राप्त किया जाता है।

(६) लवण अथवा खनिज पदार्थ :-Minerals

खनिज पदार्थ जो शरीर के लिए आवश्यक है साधारण नमक कैलशियम, फासफोरस, लोहा, आयोडीन आदि हैं। इनके किसी एक के कमी से शरीर के कार्यों में साधारण गड़बड़ी हो जाती है। फासफोरस तथा कैलशियम काफी मात्रा में दूध में पाये जाते हैं लोहा, मांस, सब्जियों में तथा फलों में पाया जाता है। आयोडीन पीने के पानी में होता है।

---

[६७]

# संतुलित भोजन

## BALANCED DIET

(१) संतुलित भोजन में, भोजन के सभी आवश्यक तत्व जैसे प्रोटीन, श्वेतसार, वसा, लवण, रेशेदार पदार्थ, विटामिन तथा जल होना चाहिए।

(२) उपयुक्त तत्व उचित मात्रा में होना चाहिए जिससे आयु, लिंग, अवस्था तथा जलवायु इत्यादि के अनुसार जितनी कैलोरी की जितनी आवश्यकता हो उतनी पूरी हो सके।

(३) जब बालक बढ़ने की अवस्था में होते हैं तो उन्हें अधिक पौष्टिक पदार्थों की आवश्यकता होती है। १२ से १६ वर्ष की आयु के बालक को और अधिक भोजन की आवश्यकता होगी। संतुलित भोजन के निर्माण में बच्चों की आदत का भी ध्यान रखना चाहिए कि वे क्या खाना पसंद करते करते हैं।

संतुलित भोजन में निम्नलिखित वस्तुएँ इस प्रकार होनी चाहिए।

| | |
|---|---|
| प्रोटीन | ९० — १०० ग्राम |
| वसा | ८० — ९० ग्राम |
| श्वेतसार | ३६०— ४५० ग्राम |

## संतुलित भोजन का एक उदाहरण

| भोजन सामग्री | मात्रायें औन्स में | ग्राम में मात्रा | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | प्रोटीन | वसा | श्वेतसार | कैलोरी |
| आटा | १२ | ४६.८० | ६.४२ | २४४.२ | १८८२ |
| चावल | ६ | १३.८० | ०.५१ | १३३.८ | ५९५ |
| मांस | २ | ११.९४ | ३.९६ | ०.० | ८४ |
| दूध | २० | १८.८० | २०.४० | २७.२ | ३६० |
| तेल | १ | ०.० | २८.०० | ०.० | २५२ |
| घी | १.५ | ०.० | ३४.६० | ०.० | ३१२ |
| जड़ वाली सबज़ी | ८ | ४.४० | ०.३६ | ३१.८ | १४८ |
| गोभी (पत्ते वाली) | ८ | ३.१० | ०.२४ | १०.२ | ५६ |
| दाल | १ | ६.५० | ०-९९ | १६.२ | १०० |
| फल (आम) | [illegible] | ०.१६ | ०.८८ | २०.८ | ९२ |
| | ६३.५ | १०५.५० | ९६.४२ | ४८४.२ | ३२२१ |
| १० प्रतिशत नष्ट होने से, कम | ६.३ | १०.५० | ९.६४ | ४८.४ | ३२२ |
| टाटल | ५७.२ | ९५.०० | ८६.७८ | ४३५.८ | २८९९ |

### स्कूल में दोपहर का खाना Mid-day Meal in Schools

विलायत में १९४४ एजूकेशन ऐक्ट के अनुसार दोपहर का खाना स्कूल का दायित्व है।

भारतवर्ष में किसी प्रकार की विशेष व्यवस्था इसके लिए नहीं है। स्कूल अपनी इच्छानुसार जो प्रबन्ध कर सकते हैं करते हैं। यद्यपि सब बातों को देखते हुये जिसमें स्वास्थ्य ही प्रमुख नहीं है, यद्यपि यह महत्वपूर्ण है, बालकों के लिए, दोपहर के खाने की व्यवस्था स्कूल से होनी चाहिए।

इससे कई एक लाभ है।

१. कम से कम एक समय सन्तुलित भोजन बालकों को मिलेगा।

२. बालकों के संग बैठकर भोजन करने से आपस में समानता तथा भ्रात्र भाव उत्पन्न होगा।
३. बच्चे स्कूल के पश्चात् खेल के कार्यक्रम के लिए आसानी से रुक
४. सकेंगे। स्कूल के पहले का शारीरिक शिक्षा का कार्यक्रम सरलता से हो सकेगा।
५. देश के स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होगा।
६. भोजन के अलावा सामाजिक प्रशिक्षण भी बालकों को मिलेगा।
७. दैनिक स्वास्थ्य की बातों की ओर ध्यान आकर्षित करने का स्वर्णावसर प्राप्त होगा।
८. बालकों के मध्य बैठ कर शिक्षक गण भी यदि भोजन करें, तो बालकों को उन के प्रति प्रेम तथा श्रद्धा उत्पन्न होगी। अनुशासन हीनता की कम सम्भावना होगी।

---

[६८]

# शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन की प्रणालियां

## METHODS OF PHYSICAL EDUCATION AND RECREATION

शारीरिक शिक्षा की भिन्न भिन्न प्रणालियां :-

प्रणालियां उन बिधियों और तरीकों को कहते हैं जिनका उपयोग बच्चों में निश्चित विषय को पढ़ाने के लिये तथा उन्हे सिखाने के लिये एक शिक्षक प्रयोग करता है। प्रणालिया शिक्षकों के अनुभव और व्यापक ज्ञान पर निर्भर है। शिक्षा की भांति शारीरिक शिक्षा में भी कितनी ही प्राणलियां अपनायी गयी हैं। उन में कौन सी प्रणाली सर्वोत्तम है और सरल है इसका अनुभव सिखाने वाले और सीखने वाले पर निर्भर है। विषय को सिखाने की सफलता अपनायी गयी प्रणाली है। प्रणालियां विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान तथा वर्तमान योग्यता के आधार पर ही प्रयोग में लायी जाती है। वातावरण और परिस्थिति में प्रणालियाँ बदली जा सकती हैं। शिक्षक का कर्तव्य है कि वह शिक्षा का लक्ष, ध्येय और उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुये प्रणालियां अपनाये। इसी प्रकार शारीरिक शिक्षा जगत में भी प्रणालियों का चयन होगा। वास्तव

में प्र ाली का तात्पर्य यह है कि शिक्षक अपने पाठ्य विषय को क्षा े के समक्ष किस रूप में रखता है । इस से अधिकांश विद्यार्थी स र ता से और कम समय में अनुसरण कर सकें । विद्वानों का कथन है कि अच्छी प्रणाली अपनाने से कम परिश्रम और शीघ्र सफलता प्राप्त होती है । प्रणालियों में भिन्न भिन्न पहलू अपनाये जाते हैं। शारीरिक शिक्षण में निम्नलिखित मुख्य प्रणालियां हैं ।

शारीरिक शिक्षण में निम्नलिखित प्रणालियां हैं ।

| | | |
|---|---|---|
| 1. | Discussion Method | तर्क वितर्क विधि |
| 2. | Laboratory • | प्रयोग विधि |
| 3. | Demonstration | नमूना |
| 4. | Dramatic | नाटक |
| 5. | Lecture | व्याख्यान |
| 6. | Command | आदेश |
| 7. | Rhythemical or serial | ताल वद्ध या क्रमशः |
| 8. | Imitation | अनुकरण विधि |
| 9. | At will | मनोइच्छा विधि |
| 10. | Set Drill memorized & Rhythemical | निश्चित ड्रिल स्मरण करके ताल से करना । |
| 11 | Combination of two or more of the above | उपरोक्त में से दो या तीन का मिश्रण करके । |

(१) तर्क वितर्क विधि—इस विधि में विषय पर वार्तालाप और तर्क वितर्क करके सिखाया जाता है ।

(२) प्रयोग विधि—इस विधि में विषय का प्रयोग की कसौटी पर परिणाम निकाल लिया जाता है । सिखने वालों को यह समझ

दिया जाता है कि कार्य किस प्रकार से होगा।

(२) नमूना—इस विधि में विषय का नमूना और प्रदर्शन दे कर सिखाया जाता है। नमूना शारीरिक शिक्षक के द्वारा प्र तुत किया जाता है। इस विधि में ध्यान रखना है कि प्रत्येक व्यायाम तथा प्रति क्रिया का नमूना उसके-प्रत्येक पहलुओं और स्थलों को सही रूप में प्रदर्शित करें।

(३) नाटक—इस विधि में विषय नाटक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। जिस से सिखने वाले अपने विषय को अपने आप करके मांसिक अनुभूतियों को प्राप्त कर लेते हैं। इस में मुख्य अव्यव जानवर, पक्षी, सिपाही, जल सैनिक, कुली, इत्यादि का स्वयं अनुकरण करते हं।

(४) व्याख्यान—इस विधि में शारीरिक शिक्षा को उच्च-श्रेणी के लड़कों को सिखाने के लिये यह विधि अपनायी जाती है। विषय पर एक व्याख्या दे दिया जाता है। विषय में सभी स्थलों और पहलुओं की भूमिका शिक्षक स्वयं करता है।

आदेश commanding :-

इस विधि में विषय को आदेश देकर सिखाया जाता है। आदेश सिखने वालों को बताता है कि उन्हें किस तरह और क्या करना है। आदेश संक्षिप्त होते हुये भी कसरत की पूरी व्याख्या प्रस्तुत करता है। आदेश पर ही सिखने वालों का प्रावधान तथा रुची निर्भर करते हैं। आदेश की ध्वनि सीखने वालों की संख्या पर निर्भर होनी चाहिये। भाषा और शैली ऐसी चाहिए कि सर्व साधारण समझ सकें।

आदेश दो प्रकार के होते हैं। प्रति कार आदेश और ताल बद्ध आदेश।

प्रतिकार आदेश—इस प्रकार का आदेश वहाँ प्रयोग किये जाते हैं जहां कि परिणाम एक ही गति रहती है। शिक्षक आदेश करता है और शिक्षार्थी उसी अवस्था को प्राप्त करते है जो कि पूर्व आदेश में दी गयी है इस प्रकार के आदेश में गति का तीव्र होना आवश्यक नहीं वरन ठीक सही अवस्था पर महानता दी जाती है। यह उस समय व्यवहार में आते हैं जिस समय सही, सावधानी, यथार्थ स्थितिज संकुचन(Static contiaction) की आवश्यकता होती है। आदेश का तैयार तथा व्याख्या करने वाला भाग (Explanatory part prepratory) यह बताता है कि शिक्षार्थियों को शीघ्रतां, स्पृस्यता, सक्षिप्तता, से क्या करना है। शिक्षक को विषय का पूरा मांसिक खाका अथवा की जाने वाली प्रतिक्रिया की सही अवस्था और गति को विद्यार्थियों के समक्ष प्रगट कर देनी चाहिये।

आदेश में थमने का स्थान छात्रों को समय देता है कि वे गति का मांसिक चित्र खींच लें और ठीक समझ जायें कि क्या करना है तथा क्रियात्मक भाग स्पष्ट होना चाहिए।

यह एक शब्द होता है जो विलक्षणता से बोला जाता है।

| हिस्सा | तैयारी | थम | क्रिया |
|---|---|---|---|
| | (१) | (२) | (३) |
| | हाथ कंधे | — | मोड़ो |

प्रत्येक आदेश में यह बताना आवश्यक है कि (१) कौन सा अंग काम करेगा (२) किस ओर गति होगी (३) किस प्रकार की गति होगी। अर्थात क्या, कैसे, कब करना है। आदेश ऐसे दी

जाती है जैसे केवल एक व्यक्ति हो।

(१) ताल बद्ध करने की विधि—यह विधि उस समय अपनायी जाती है जब व्यायाम एक साथ मिला कर की जाये या ताल से की जायें। क्योंकि इस प्रकार कार्य करने से (Physiological और Hygienic प्रभाव संभव है। ताल वद्ध आदेश रुकने की अवस्था की अपेक्षा गतियों को महानता देती हैं। यह एक निश्चित समय में अधिक मांस पेशियों में संकुचन और विमोचन का अवसर प्रदान करती है। यह विधि चार भागों में हैं।

(१) तैयारी भाग, (२) रुकना (३) क्रियात्मक भाग (४) गिनना या एक साथ ताल से करना (५) बदलना (६) एक के बाद दूसरा (७) थमना।

| आदेश | तैयारी | थम | क्रिया |
|---|---|---|---|
| | (१) | (२) | (३) |
| हाथों को कंधे पर मोड़ना वापस लाना ताल से | | " | आरम्भ |

(८) अनुकरण विधि—इस विधि में शिक्षक स्वयम् कसरत करता है और शिक्षार्थी उसका अनुसरण करते हैं। इस प्रकार की विधि तभी अपनाई जाती है जब सभी विद्यार्थी कसरतों से पूर्व परिचित हों या छोटे बच्चों के लिये यह विधि विशेष रीति से अपनायी जाती हैं जिससे वे शिक्षक का अनुकरण कर सकें।

(९) मनोइच्छा बिधि–इस विधि के अनुसार शिक्षार्थी बताये हुये कसरतों को अपने समय में अपनी इच्छा के अनुसार करते है। कठिन व्यायामों का अध्ययन इस विधि द्वारा होता है। व्यक्तिगत कठिनाइयों का इस विधि से निवारण किया जाता है।

(१०) निश्चित ड्रिल स्मरण करके ताल से करना :-इस विधि के डम्ब्ल, वान्ड, पोल, इन्डियन क्लब, फ्री हान्ड ड्रिल किये जाते हैं।

(११) मिश्रण विधि--इस विधि में उपरोक्त सभी विधियों में से एक दो या अधिक को मिला कर अपनाया जाता है। यह विधि अध्यापक के अनुभव तथा समय की आवश्यकता पर निधारित है।

शारीरिक शिक्षा प्रणालियों के अन्दर निम्नलिखित बातें आती है।

(१) कक्षा प्रबन्ध-इस के अन्तर्गत कक्षा की बनावट और उचित संगठन आता है जिससे कक्षा अवलोकन दृष्टि से सुन्दर और अच्छी लगें। दर्शक लोगों को उसका अनुशासन अभद्र न लगे--कक्षा प्रबन्ध में सभी क्षात्रों की उपस्थिति ली जाती है और जिस कार्य को कराया जाता है उसकी भूमिका दी जाती हैं।

(२) सीखने में प्रेरणा--इसके अर्न्तगत बच्चों में ऐसी भावना और उमंगें उत्पन्न की जाती है जिससे उनकी रुचि को विकास मिलें। उनकी मूल-प्रवृत्तियाँ और संवेग स्वयम प्रक्रिया की ओर आकर्षित हो जायें। सभी शिक्षार्थी अपनी प्रतिभा के अनुसार शैक्षिक गुण सीख सकें।

(३) प्रक्रिया का चुनाव---इसके अन्तर्गत वे प्रकियायें चुनी जाती ह जो शिक्षार्थियों की आयु शारीरिक क्षमता और योग्यता तथा रुचि के अनुकूल हो। वह प्रक्रिया समाज और भाग लेनें वालों के आधार पर चुनी जानी चाहिये। प्रक्रियायों के चुनाव मे शिक्षार्थियों का स्तर भी ध्यान में रखना चाहिये।

(४) माध्यम---शिक्षार्थियों को सिखाने के लिये माध्यम इस प्रकार से चुनना चाहिये जो सरल और सहज हो। जैसे भाषा, सिनेमा, प्रतियोगिता आदि।

(५) ध्येय–शिक्षण विधियों का प्रारंम्भ में एक निश्चित ध्येय होना चाहिये। कहीं ऐसा न हो कि शिक्षण विधि की आड़ में ध्येय ही लुप्त हो जाये।

(६) परिणाम---सिखाने के उपरान्त शिक्षकों को परिणाम देखना चाहिये और उसके फल स्वरूप प्रणाली में सुधार और परिवर्तन करना चाहिए।

(७) वातावरण--स्कूल का संगठन और सिखाने की प्रणाली के साथ शिक्षण विधियों के लिये एक उचित वातावरण पैदा करना चाहिये जिससे बच्चों को यह अवसर मिले कि वह स्वयम स्कूल आयें और स्कूल के कार्यों में रुचि लें। जब कोई भी प्रणाली वास्तिविक रूप से क्रियात्मक जीवन में व्यवहार में आयेगी तभी उनके माप दण्ड का पता चलेगा।

किसी शारीरिक प्रवीणता अथवा कौशलता को सिखाने की बिधि :

प्रारम्भिक या पूर्व ज्ञान देना।

विद्यार्थियों को सर्व प्रथम पूर्व अनुभव देना आवश्यक है जिस से कि अभ्यास की आवश्यकताओं को समझ सके और उसमें रुचि उत्पन्न करे। यहां पूर्व ज्ञान देने से अर्थ परिचय का है।

(२) विषय को शिष्य तथा शिक्षक के मेल से विशलेषित करना जिससे उसके आधार भूत पहलुओं और स्थलों में अभ्यास हो सके।

(३) सभी आधार भूत सिद्धान्त मिश्रित रूप से सर्व साधारण रूप में अभ्यास होने चाहिए।

(४) सहायक खेल तथा ड्रिल्स का इन कौशलों और चातुर्य को निकालने के लिये करना चाहिये इसके उपरांत इन्हें खेलो में व्यवहार करना चाहिए।

(५) चातुर्यो और कौशलों की वास्तविक रूप रेखा सम्पूर्ण खेल में प्रस्तुत करना चाहिए और आवश्यकतानुसार पुनरावृति तथा त्रुटि निवारण करना चाहिये।

नवीन कसरतों को सिखाना :-

(१) शिक्षक को कसरत पूर्ण रूप से जानना चाहिये और उसमें कसरत नमूना, व्याख्या तथा आदेश देने की क्षमता होनी चाहिए। उसे कसरत की आवश्यकता पड़ने पर सम्पूर्ण निवारण करने की क्षमता होनी चाहिये।

(२) उसे साहसी और उत्साही होने के साथ कसरत की रूचि उत्पन्न करने तथा बुद्धिमता से प्रेरणा देने की योग्यता होनी चाहिए।

(३) उसे प्रत्येक कसरत का अलग अलग उद्देश्य की व्याख्या करनी चाहिये। शिक्षार्थियों के समक्ष कसरत का स्पष्ट मासिक चित्र प्रस्तुत करना चाहिये। शिक्षार्थियों को सही अवस्था तथा सही मांसपेशियों की गति विधि करना सीखना चाहिये। कसरतों में घटिया त्रुटियों का निवारण तथा अच्छे कार्यो की प्रशंसा करना चाहिये। शिक्षार्थियों को कसरत धीरे धीरे अभ्यस्त करना चाहिए।

(४) शिक्षकों को कसरतों की पुनरावृत्ति तथा ताल बद्ध

कार्य उचित समय तक करना चाहि ो । कसरतों को सिखने के बाद उन्हे लगातार और ताल बद्ध करने का अभ्यास करना चाहिए ।

नयी कसरत सिखाने की विधि :-

(१) मांसिक चित्र देना ।

(२) सही अवस्था और सही गति देने के लिये अभ्यास ।

(३) लगातार और ताल बद्ध कार्य करना ।

स्वदेशी कसरत सिखाने की विधि :-

यह ज्यादा ताकत वाली अभ्यास तथा खेल हैं । स्वदेशीय होने के कारण विद्यार्थियों को भाता है । इन कसरत में मानव का पूर्ण शरीर कसरत करता है । इस प्रकार की कसरतों को सिखाने के लिये दोनों प्रकार के आदेश ताल बद्ध तथा प्रतिकार व्यवहार आते हैं । इनके उद्देश्य शरीर को विभिन्न अवस्थाओं में ढालना आज्ञा पालन, तालबद्ध कार्यों से मनोरंजन, समाज भावना, संकोच, निवारण साम्प्रदायिकता, जात पात, छुआ छूत मिटाना आदि है ।

तरीका :--पहले कसरत की भूमिका प्रस्तुत कि जाती है तब उसे विभिन्न स्थलों में तोड़ कर नमूना प्रस्तुत करते हैं ।

(२) कसरत की विभिन्न अवस्थाओं को नम्बरों से कराते समय समझाना ।

(३) पूरी कक्षा का अभ्यास न० से कराना । उचित सुधार तथा पुनरावृत्ति का ध्यान अवश्य रखना चाहिए ।

(४) व्यक्तिगत अभ्यास अपने समय में । इस समय सभी छात्रों को अपनी इच्छा अनुसार कसरत अभ्यास की स्वतंत्रता है ।

(५) अभ्यास पूरी कक्षा को ताल से करानां। इस के अभ्यास के बाद, कक्षा को अपने आप तालबद्ध काम करते हुये न० गिनना चाहिये।

सहायक तथा छोटे खेल सिखाने की विधि :-

(१) सर्व प्रथम खेल का नाम।
(२) कक्षा की बनावट।
(३) खेल की संक्षिप्त व्याख्या।
(४) खेल का नमूना।
(५) कोई प्रश्न।
(६) अभ्यास के लिये खेल।

कथन है Kill the game before it is dead खेल को करने से पहिले मार दो और फिर दूसरा आरम्भ करो।

बड़े खेल :-

बड़े खेलों को सिखाने के लिए निम्नलिखित विधि अपनायी जायेगी।

१ खेल की भूमिका और संक्षिप्त इतिहास।
२ खेल के मैदान की माप तथा साधारण सूचनायें।
३ खेल के आधार भूत पहलुओं और तथ्यों का प्रर्दशन तथा अभ्यास।

४ छात्रों में से कुछ लड़के चुन कर खेल की साधारण रूप रेखा प्रस्तुत करना।

५ खेल में सभी आधार भूत तथ्यों को जोड़ कर अभ्यास

तथा खेल की चतुराइयों को समझाना और खेल के नियमों तथा ढंग का विवरण देना।

६ खेल का कुछ समय के लिए अभ्यास उसके सहायक खेलों द्वारा। उसके उपरान्त स्थानीय खेल रक्षात्मक और आक्रमणात्मक खेलों को बताते हुए अभ्यस्त कराना, सम्भावित त्रुटियों का निवारण करना चाहिये।

७ सारांश:— छात्रों को इकट्ठा करके सुखद सूचनायें देनी चाहिये।

---

# कक्षा प्रबन्ध

कक्षा प्रबन्ध सिखाने की समस्याओं के अलावा जो समस्यायें हैं उनमे सम्बन्धित हैं। ये समस्यायें विद्यार्थियों के शिक्षा से सीधे सम्बन्धित नहीं है किन्तु शिक्षा प्रणालियों के असर के निर्धारित करने में बहुत महत्वपूर्ण हैं। योग्य प्रबन्ध शिक्षा के विधिवत प्रसारमें सहायक तथा वातावरण पर अनुकूल प्रभाव डालने में सहायता देता है। इसके द्वारा बालकों के लिए अवसरों की निश्चयता प्राप्त होती जिससे मान्य सामाजिक, संवेगात्मक तथा शैक्षणिक अनुभव प्राप्त होता है तथा चोट, थकान से सुरक्षा आवश्यकता से अधिक काम करने से बचाव हो सके। कक्षा प्रबन्ध में निम्नलिखित बातें आती हैं। १ शिक्षक का व्यक्तित्व २ कार्य करने की प्रणाली ३ वातावरण की शारीरिक अवस्था की ओर ध्यान ४ सुरक्षा व्यवस्था ५ सामग्री का प्रयोग ६ समय की बचत ७ बालकों का वर्गीकरण ८ कार्यक्रम निर्धारित करना ९ प्रतियोगिता का प्रबन्ध १० अंक देना।

कक्षा प्रबन्ध का उद्देश्य:—

कक्षा प्रबन्ध की प्रणाली ऐसी होनी चाहिये जिससे शैक्षणिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सुविधा तथा साधन प्राप्त हों। शैक्षणिक उद्देश्यों के प्राप्ति के लिये निम्नलिखित का होना आवश्यक है।

(१) विद्यार्थियों के व्यक्तिगत आवश्यकताओं का निर्धारित करना तथा उनकी देख भाल करना ।

(२) सामूहिक रीति से कार्य में भाग लेना जिससे प्रतियोगिता बराबर हो ।

(३) वस्तु परितोषिक को हटाना तथा प्राकृतिक प्रेरणा प्रयोग में लाना । खेल एक प्रसन्नता का अनुभव होना चाहिये ।

(४) बालकों को योजना, प्रबन्ध तथा खेल के पेच के कार्य में सहायता देने का अवसर देना । यह प्रौढ़ देख रेख में होगा ।

(५) कार्य का स्तर ऐसा हो कि उचित चेष्टा से अधिक से अधिक विद्यार्थी सफलता प्राप्त करें ।

(६) सही कार्य, सही प्रणाली तथा स्वस्थ शिक्षक विद्यार्थी सम्बन्ध के द्वारा मान्य मानसिक तथा संवेगात्मक आदतो तथा भावनाओं का विकास करना ।

(७) समय, स्थान तथा साधन जो खेल तथा स्पोर्टस् के लिए उपलब्ध हो उनका उचित प्रयोग करना ।

(८) सुरक्षा व्यवस्था करना जिससे स्वास्थ्य का बचाव हो अनआवश्यक संकटो को दूर करना तथा दुर्घटना का अवरोध ।

(९) सफलता के स्तर नियुक्ति करना, निर्णय तथा लेखा के लिये नियोजन जिससे शैक्षणिक उद्देश्यों के प्रति उन्नति मालूम होती रहे ।

(१०) रेकार्ड का रखना ।

(११) शारीरिक प्रकृति के कार्यों की ओर मनोरंजन की आदत अर्जित करना जिससे ये कार्य अजीवन होते रहें ।

(१२) शिक्षकों को व्यवसायिक उन्नति की ओर बढ़ने के लिए अवसर प्रदान करना।

(१३) उन उपायों का नियोजन करना जिससे सर्व साधारण यह मान लें तथा प्रशंसा करें कि एथेलेटिक्स, शिक्षा का एक प्रबल माध्यम है अतएव एक महत्वपूर्ण सामाजिक माध्मय है।

(१४) लड़कियों के तथा लड़कों के आवश्कताओं को पहचानना ।

(१५) जो शिक्षक कार्य कर रहे हों उनके मनोरंजन क्रिया का प्रबन्ध।

(१६) यह जान लेना की क्रम की सफलता नेतृत्व पर है।

उपस्थिति लेखा:—

उपस्थिति लेखा आवश्यक है क्योंकि इससे यह पता चलता है कि कक्षा में कितने बालक आ रहे हैं अथवा नहीं आ रहे हैं। इस जानकारी से शिक्षा देने में कुछ उलट फ़ेर किया जा सकता है। जो बालक कुछ दिन से उपस्थित नहीं हैं उनके विषय में जानकारी हासिल की जा सकती है तथा जहां आवश्यकता हो वहीं सहायता दी जा सकती है। जो बालक स्कूल से अनुपस्थित रहते हैं और उन का कुछ विशेष कारण नहीं जान पड़ता उसकी सूचना माता पिता को बिना बिलम्ब देना चाहिए। इससे कितने ही निर्दोष बालक भटकते हुए मार्ग पर जाने से बच जायेंगे।

उपस्थिति लेखा की कई एक रीतियाँ हैं। समय तथा स्थान के अनुसार जो रीति उचित मालूम हो वह प्रयोग में लाना चाहिये। ध्यान रहे कि उपस्थिति लेखा में अधिक समय न लगे और वह एक

सच्ची प्रणाली हो जिसमें धोखा न हो सके।

साधारणतः अध्यापक लड़कों या लड़कियों के नाम एक एक करके पुकारते हैं और इस रीति से उपस्थिति तथा अनुपस्थिति मालूम करते हैं। इस प्रथा में बहुत समय लगता है। दूसरी प्रथा है कि बालकों को विशेष स्थान खड़े रहने या बैठने के लिए नियुक्त किया जाता है। जो स्थान खाली हो वह बालक अनुपस्थित है।

तीसरी प्रथा है कि बालकों को क्रमशः अंक दे दिये जाते हैं और लेखा उपस्थिति के लिए वे विधिवत अंक उच्चारण करते हैं। जो अंक न बोला जाय वह अनुपस्थित है। अंक लगातार करने के लिए अनुपस्थित अंक शिक्षक बोलते हैं। यह एक उत्तम प्रणाली है जिसमें लेखा शीघ्र हो जाता है और भूल होना अधिक संभव नहीं।

अनुपस्थिति तथा देर से आना :—

बालकों को प्रशिक्षित करना चाहिए कि वे सब काम समय से करें। स्कूल तथा कक्षा में उन्हे सही समय पर उपस्थित होना चाहिए। यदि कोई बालक अधिक अनुपस्थित रहता है या देर से आता है तो बिना सोचे समझे उसे दण्ड नहीं देना चाहिए। हो सकता है कि उसकी अनुपस्थिति तथा देर से आने का कारण वह स्वयं न हो। परिवार, वातावरण, समाज की समस्याओं से कोई बालक स्कूल में अनुपस्थित तथा लेट हो सकता है।

यह सर्व उत्तम है कि ऐसे बालकों के अनुपस्थिति तथा देर आने के कारण का पता चलाया जाय तथा यथा सम्भव कारण दूर करने की चेष्टा की जाये।

विशेष अनुपस्थिति तथा देर आने की सूचना माता पिता को

अवश्य होना चाहिए।

जो लापरवाही से ऐसा करते हैं उन्हे दण्ड मिलना चाहिए।

युनिफार्म तथा (इन्सपेक्सन) निरीक्षण :-

यह अत्यन्त आवश्यक है कि बालकों को कार्य के अनुसार वस्त्र पहिनाया जाय। यह आर्थिक दृष्टि तथा कार्य के दृष्टि दोनों से लाभकर है। विशेष रूप से शारीरिक शिक्षा क्लास के लिए विशेष वस्त्र की आवश्यकता है जिसके कारण कार्य करने की स्वतन्त्रता हो और पसीने तथा मैले से कपड़े पर जल्दी असर न हो। कार्य के अनुसार वस्त्र धारण करने से एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव व्यक्ति पर पड़ता है और वह उसके कारण मानसिक तथा शारीरिक तैयारी मालूम करता है। शारीरिक शिक्षा के विशेष वस्त्र में बनियाईन या कमीज, हाफ पैन्ट तथा जूता आदि हैं। बड़े लड़के लम्बे पैन्ट पहन सकते हैं।

लड़कियों के लिए वस्त्र भिन्न हैं।

प्रत्येक कक्षा में वस्त्र का निरीक्षण होना चाहिए जिससे बालक लापरवाही न करने लगे।

निरीक्षण में वस्त्र की सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए। शिक्षक को भी उसी वस्त्र में होना चाहिए जिसमें बालकों को बुलाया जाता है।

कक्षा खोलना Formation :—

एक शिक्षक जो कक्षा का प्रबन्ध तथा संगठन अच्छी रीति से करने के योग्य हैं उसे कौशल, आधार भूत का अभ्यास तथा सामूहिक प्रतियोगिता के लिए कक्षा के उतम खोलने का प्रयोग करना

है। प्रायः जो कक्षा का खोलना होता है वे वृत्ताकार मोड़दार, सीधी लाइन, एक पीछे कनार, आगे पीछे, चार कतारों में, दो कतारो में होती हैं।

यह आवश्यक है कि कक्षा में प्रत्येक बालक में गतिवाही कौशल के अभ्यास के लिए उचित अवसर दिया जाय। कक्षा का खोलना इस ध्येय से होना चाहिए कि अधिक से अधिक बालक किसी अभ्यास को सही रीति से अधिकता से थोड़े समय में कर लें। कक्षा खोलने में यह भी ध्यान होना चाहिए कि शिक्षक बालकों के समीप आसानी से आ सकें तथा बालक शिक्षक को अच्छी तरह देख सकें।

मुख्य कक्षा खोलना दो प्रकार से हो सकता है।

(१) बालक समूह में एकत्र हों, छोटे छोटे समूहों में भी कार्य हो सकता है यह अनौपचारिक विधि से कार्य होगा।

(२) साधारणतः बालक एक लाइन में खड़े होते हैं और कार्य के प्रकार के अनुसार सीधी लाइन, दो, तीन या चार लाइनों या वृत्तकार, या अर्धवृत आदि खोलना होता है। आपस की दूरी ६ वर्ग फिट होगी।

## सामग्री की रक्षा

सामग्री कितनी ही प्रकार की होती हैं अतएव यह सम्भव नहीं कि सबके लिये एक ही नियम रक्षा हेतु बना लिया जाये। भिन्न-भिन्न साम्रगियों के लिए भिन्न-भिन्न उपाय होगा। इस लिये यह आवश्यक है कि सम्पूर्ण सामग्री का एक सूची बना ली जाये और एक प्रकार का सामान एक स्थान पर अंकित हो तथा उसी के साथ उसकी रक्षा का उपाय भी दिया हुआ हो।

सब सामान के लिये एक नियम जो सर्व साधारण होगा वह है

सफाई। प्रत्येक सामग्री साफ होनी चाहिये।

साधारणतः निम्न लिखित प्रकार की सामग्री शारीरिक शिक्षा में प्रयोग होती है।

ऊनी, सूती तथा कानवास, तम्बू, जाल, चमड़े की सामग्री, लकड़ी की सामग्री, रबड़, बाँस,तख्ते, भिन्न-भिन्न औज़ार, तांत का सामान, लोहे का सामान, चटाई नारियल की।

सामान साफ करने के बाद सूखी हालत या जिन पर ग्रीस या तेल लगाना हो या पाउडर छिड़कना हो, कर के खुली हवा में रखना चाहिये समय समय पर धूप में रख कर उसकी सफाई करते रहना चाहिये विशेषकर बरसात में। सामान ज़मीन पर नहीं रखना चाहिये।

सामान टेकने से या किसी स्ट्रैण्ड पर या लटका कर रखा जाता है। जो टेढ़ी मेढ़ी होनी वाली सामग्री है उसे प्रेस में रखना चाहिये।

तांत की चीजो को कीड़े से बचाना है। मैट इत्यादि भी किसी तख्ते के ऊपर रखना चाहिये।

गोदाम जहां सामान जमा रहता है सदा साफ करना चाहिये। वहां रोशनी आने की तथा साफ हवा आने की व्यवस्था अवश्य होनी चाहिये।

सामान निकालने के समय किसी न किसी के अधिकार में निकालना चाहिये जिसमे वह व्यक्ति उनका उत्तरदायित्व हो।

कार्य समाप्त करने के पश्चात् उसी समय जहां से सामान निकाला जाना है वहाँ उसी स्थान पर वापस रखना चाहिये।

जो समान कार्य योग्य नहीं है उन्हे दूसरे सामान से पृथक रखना चाहिये।

## बालकों को समूह में विभाग करना

शिक्षा के ध्येय से एक समान बालकों को एक समूह में रखना शारीरिक शिक्षा विशेषज्ञो से मान्यता प्राप्त है तथा वे इसका प्रचार भी करते हैं। किस आधार पर समूह विभाजित करना है इसमें मतभेद हैं।

कितनों का मत है कि चुनाव उनके कार्य में सफलता के अनुसार होना चाहिये।

बहुत से शिक्षक बालकों को समानता के अनुसार विभागों में भाग करने के पक्ष में नहीं हैं। यह विचार प्रायः विश्वव्यापी है कि बालकों का वर्गीकरण ध्येय के स्थिर करने के उद्देश्य से त ा सफलता के स्तर के लिये तथा प्रतियोगिता के लिये अत्यन्त ही आवश्यक तथा उचित है।

इस कार्य के लिये अनेको प्रणालियां दी गयी हैं।

(1) Anthrpometric and Physical Capacity Test.

(2) Rogers Strength Index.

(3) The Brace Motor Ability Tests.

(4) McCloy's Test of Athletic Power Classification-Index I, II & III.

(5) Cozen'sTest o' General Athletic Ability.

(6) Physical Fitness Tests by Crampton, Mcurdy, Meylan, Foster, Basach,Barringer, Schmider, Camp bell & others.

# रेकार्ड रखना

## RECORD

किसी भी विषय में रेकार्ड रखने तथा उससे सहायता या आदेश लेने से विषय उन्नति करता तथा स्थायी रहता है। शारीरिक शिक्षा में एक प्रगति मय पग अर्थ पूर्ण रेकार्ड के रखने में हुआ है। इस रेकार्ड के रखने में अनेकों चीजें आती हैं जैसे विद्यार्थी सम्बन्धी भिन्न २ सुचनायें, कार्यक्रम की भिन्न भिन्न चीजें, सामान तथा साधन सम्बन्धी बातें, आदि। विशेषता:—शारीरिक शिक्षा में रेकार्ड प्रत्येक बालक के योग्यता, भाव, सफलता, चेष्टा तथा उन्नति पर ध्यान देता है। इस से न केवल बालक की उन्नति का ही पता चलता है किन्तु शिक्षक के कार्य का मूल्य का पता चलता है उसे विधिवत करता तथा उसका विस्तार बतलाता है।

रेकार्ड यदि केवल एक लेखा पत्र रखने के लिये हो तो उससे कोई लाभ नहीं। रेकार्ड के द्वारा शैक्षणिक ध्येय में सहायता मिलना चाहिए।

रेकार्ड अंक करने में सरल तथा समस्याओं के समझने में इन्हें ऐसे रखना चाहिए कि आवश्यकता अनुसार शीघ्र ही प्राप्त हो। वर्ष के अंत में इन्हीं के आधार पर वार्षिक लेखा तैयार हो सकता है जो भविष्य के लिये आदेश दे सकता है।

(१) उपस्थिति लेखा :- जो स्वस्थ्य हैं उनके लिये शारीरिक शिक्षा अनिवार्य है और उन्हें ७५ प्रतिशत उपस्थिति प्राप्तकरना चाहिए। अभ्यास तथा सिद्धान्त के कार्य का लेखा पृथक पृथक होना चाहिए। उन विद्यार्थियों को जो पहली टीम में खेलते हों सिद्धान्त के क्लास से अवकाश नही देना चाहिए जब तक वे उस समय स्कूल के लिये न खेल रहे हों।

(२) चिकित्सा तथा डाक्टरी कारण से अनुपस्थिति मान्य है। प्रत्येक विद्यार्थी का व्यक्तिगत प्रगति लेखा तथा पूर्ण वर्ष का कार्य लेखा।

इसी के आधार पर शारीरिक शिक्षा विषय का अंक दिया जायेगा। इसमें एक मोटे रजिस्टर में प्राय: एक पृष्ट पर एक विद्यार्थी का नाम होगा। प्रत्येक कक्षा के लिये एक रजिस्टर उपयुक्त होगा।

(३) शारीरिक परीक्षा तथा डाक्टरी जाँच का रेकार्ड।

(४) खेल के सामान का स्टाक रजिस्टर।

प्रत्येक पृष्ठ पर एक सामान का नाम यदि वह सामान अधिकता से प्रयोग हो। जो सामान अल्प प्रयोग के हैं उनमें तीन चार के नाम एक पृष्ठ में आ सकते हैं।

प्रत्येक सामान के नीचे स्त्रोत जहाँ से वे मिले हैं तथा मुल्य अंकित होना आवश्यक है। यदि सामान किसी से खो जाये तो उस से मूल्य ले लेना उचित है।

जो सामान प्रयोग के योग्य न हो उन्हें एक पृथक स्थान पर लिख लेना चाहिए।

प्रत्येक वर्ष के अंत में पूरे सामान की जांच होना चाहिये और एक मोटी लाल लकीर से समाप्त कर देना चाहिये जिससे नये वर्ष के आरम्भ का ज्ञात हो।

वर्ष के अन्त में उचित अधिकारी यदि सामान का जांच कर के हस्ताक्षर कर दें तो उत्तम है। इससे किसी प्रकार के अनुचित प्रयोग का सम्भव नहीं होगा।

जो आपरेट्स या फिक्सचर खेल के मैदान या जिमनेजियम में में हो उनका भी लेखा रखना चाहिए। उनके मरम्मत तथा देख-भाल का दिनांक तथा मूल्य अंकित रहना चाहिए।

(५) गेम्स फण्ड का कैश रजिस्टर होना चाहिए।

स्कूल की जो प्रथा हो उसी आधार पर यह रखा जायेगा।

शारीरिक शिक्षक अध्यापक के पास १० रूपये तक एडवान्स रहना चाहिए जिसके द्वारा वह आवश्यक छोटा कार्य या मरम्मत अपनी इच्छा से करा लें। इसके लिए भी एक रजिस्टर रखना आवश्यक है जिसमें दैनिक व्यय सही रीति से दिखाया जाये।

---

# पाठ्य योजन
## LESSON PLAN

एक शिक्षक को शिल्पकार तथा निर्माणकर्त्ता दोनों ही होना है। एक शिल्पकार सही तथा ठीक आयोजन बनाता है और निर्माणकर्त्ता उस आयोजन के अनुसार निर्माण करता है। शिक्षा में आयोजन परम आवश्यक है। शिक्षक को यह योग्यता होनी चाहिये, की वह आयोजन करे और उसका संचालन करे।

पाठ्ययोजन की तैयारी से शिक्षक को निम्नलिखित सहायता मिलती है।

(१) स्पष्ट परिभाषित ध्येय का निर्धारित करना जो बालकों के द्वारा दिये हुये समय में प्राप्त किया जा सके।

(२) अनेक क्रियाओं में से उन क्रियाओं का चुनाव जिनका सम्बन्धित मूल्य अधिक है तथा जो प्रत्येक कक्षा स्तर या स्कूल के कार्यकाल में सिखाये जा सकें।

(३) बुद्धिमानी से इस बात का निर्णय करना कि शिक्षा में कौन सी प्रणाली तथा विधि का प्रयोग हो जिससे निर्धारित ध्येय सरलता तथा सुगमता से प्राप्त किये जा सकें।

पाठ्ययोजन जो साधारणतः प्रयोग में आते हैं वे है

इकाई आयोजन या यूनिट प्लान unit plan जिसमें आयोज़न एक से अधिक दिन के लिये होता है। यूनिट प्लान में कई एक दिन का आयोजन आ सकता है या पूरे कार्यकाल का कार्य आ सकता है।

किसी कक्षा के पूरे वर्ष में पाठ्यक्रम सिखाने के लिये कई एक यूनिट हो सकते हैं। प्राय: एक विषय पर एक युनिट होगा या किसी विषय में एक से अधिक युनिट भी हो सकते हैं। वार्षिक आयोजन के अन्तर्गत पाठ्यक्रम के जितने युनिट होंगे, आ जाते हैं। जैसे किसी कक्षा को फुटबाल सिखाना हो तो उसके आधार भूत तथ्यों का एक युनिट हो सकता है, स्थानीय खेल तथा चतुरता का दूसरा युनिट हो सकता, नियम आदि का तीसरा युनिट हो सकता है। इसी तरह पाठ्यक्रम के प्रत्येक विषय के लिये होगा। ये सम्पूर्ण युनिट सम्पूर्ण वर्ष के लिये होंगे।

दैनिक पाठ योजना, एक दिन में किसी घंटे में पढ़ाने के लिये जो आदेश आदि होते हैं, होता है। इस योजना में जो कुछ सिखाना हो उसके सही विश्लेषण के विभाग क्रमश: लिये जाते हैं तथा सिखाये जाते हैं। ये विश्लेषण किसी युनिट के हो सकते हैं।

उदाहरणार्थ यदि न० १ युनिट फुटबौल है। तो इस युनिट में आधार भूत तथ्यों का विश्लेषण होगा। जैसे गेन्द मारना, रोकना, हेड करना, ड्रिबल करना इत्यादि इन विश्लेषणों में से एक या दो जैसे-जैसे समय की अनुमति हो दैनिक योजना में लिये जायेंगे और उन्हीं पर शिक्षा दी जायेगी।

वार्षिक योजना में यह यह ध्यान रखने की आवश्यकता है कि

समय कितना मिलेगा तथा एक यूनिट का क्या समय होगा। उसी आधार पर यूनिट दैनिक पाठ्य योजना में विभक्त होंगे।

मौसम के अनुसार योजना :-

भारतवर्ष में तथा दूसरे देशों में भी कुछ ऐसे कार्य होते हैं जो विशेष मौसम में होते है। इन कार्यो का उस मौसम के अनुसार योजना कहते हैं।

कुछ खेल ऐसे हैं जो ख़ास मौसम ही में अच्छे लगते हैं तथा उसी मौसम में उसे खेलने में रुचि लगती है। जैसे फुटबाल प्राय: वर्षा काल में ही खेला जाता है। शरद काल में इसमें आनन्द नहीं आयेगा। तैरना ग्रीष्म तथा वर्षा काल ही में भाता है। ऐसे मौसम के अनुसार के खेलों के आयोजन को मौसम के अनुसार आयोजन कहते हैं। मौसम के अनुसार आयोजन में प्रदर्शन, शारीरिक शिक्षा सप्ताह, पारितोषिक वितरण अवसर,एथेलेटिक्स प्रतियोगिता, द्वन्द प्रतियोगिता, मेला, पर्यटन, कैंपिंग इत्यादि आते हैं।

मौसम के अनुसार आयोजना को भी वार्षिक आयोजना के अन्तर्गत लाया जाता है इस में मौसम के अनुसार कार्य वर्ष के उसी हिस्से में रखते हैं जहां उसका स्थान है।

योजना की मुख्य बातें :-

योजना में ध्येय का विवरण आवश्यक है। क्रियाओ का वर्णन जो सिखाये जायेंगे तथा प्रणाली और विधि का एक संक्षिप्त विवरण।

पाठ योजना शिक्षक के लिये एक लचीला आदेश के रूप में होना चाहिए न कि कोई एक ठोस चीज हो जिसमें परिवर्तन

सम्भव नहीं। इसके द्वारा शिक्षक की स्वतंत्रता तथा विश्वास अधिक हो जाता है।

पाठ्य योजना में ध्येय की विशेषता :-

आधुनिक समाजिक दर्शन तथा शिक्षा दर्शन से हम यह प्राप्त कर सकते हैं कि जीवन में मूल्यवान क्या है? शारीरिक शिक्षा में ध्येय जीवन के मूल्य से सम्बन्धित है जो शारीरिक शिक्षा के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

ध्येय के निम्नलिखित गुण होना चाहिये -

(१) उन कार्यों से सम्बन्धित हो जो जीवन में उपयोगी हैं।
(२) स्पष्ट हो जिससे पाठ्य योजना में आ सके।
(३) विद्यार्थियों को बतायें कि उन्हे क्या करना है?
(४) सरल तथा एक समान भाषा में होना चाहिये।
(५) विद्यार्थियों के दृष्टि कोण से आधारित होना चाहिए।
(६) ऐसा हो जिसका माप किया जा सके।

पाठ योजना से से लाभ :-

(१) विशेष उद्देश्य का होना।
(२) नये तथा पूराने पाठ्य में उचित सम्बन्ध।
(३) विषय का संगठन तथा चुनाव की स्वतंत्रता तथा एक विशेष विधि।
(४) शिक्षक के लिये मुख्य विधि की ओर आदेश।
(५) पाठ की उपयुक्त पुनरावृत्ति।
(६) शिक्षा के परिणाम की जांच।
(७) शिक्षक को सम्बन्धित प्रश्नों तथा उदाहरण के लिए

(५) जमा होना तथा विसर्जन।

इस प्रकार के पाठ्य योजना में कार्य के द्वारा प्रसन्नता विधि तथा मन बहलाव, औपचारिक कार्यों में तथा शासन के साथ सम्मिलित किया जाता है साथ ही साथ प्रत्येक पाठ में नवीन तथा रुचिकर बातें सीखने को मिलती हैं।

(१) अनौपचारिक सामूहिक प्रतियोगिता :

इस में प्रायः पूर्व ज्ञान की बडे मांस पेशियों की क्रियायें तेजी के साथ लगातार प्रायः ३ से ५ मिनट तक की जाती हैं। इन क्रियाओं में अनौपचारिक भावना वर्तमान रहती है। (पूरे समय का एक बटा दो भाग इसके प्रयोग में लेना चाहिए )।

इसमें निम्न क्रियायें हो सकती हैं।

प्राकृतिक क्रियायें--दौड़ना, कूदना फेकना आदि।

मार्चिंग-- (Marching) भिन्न भिन्न प्रकार के।

मिली हुई क्रियायें--दौड़ना, कूदना, चलते हुये समूह बनाना छोटे खेल Stuntls)—भाग कर जोड़ा बनाना, छूना अनुकरण खेल पशु पक्षियो के गति का अनुकरण।

प्रारंभिक क्रियायें या गर्म करने कसरत :

रिले, वस्तु को छूकर भागना, सामने लकीर तक दौड़कर पीछे जाना।

ताल की क्रियायें:-लोक नृत्य, जिमनास्टिक नृत्य,

शिक्षक का अनुकरण:-जिस प्रकार शिक्षक कार्य करे उसका अनुकरण।

निम्नश्रेणी के खेल-सामूहिक खेल-बड़े खेलों के विश्लेषित खेल.

(२) औपचारिक क्रिया :-

व्यायाम, शारीरिक विकास तथा स्वास्थ्य के लिये। इनके

द्वारा शरीर लचीला तथा नियन्त्रित रहता है। यह कार्य आदेश के अनुसार होता है तथा इसमें शीघ्रता, सही, तथा एक साथ कार्य करने पर ध्यान दिया जाता है। इसमें बड़े मांस पेशियों पर विशेष ध्यान दिया जाता है। समय ५-१० मिनट तक।

(३) विशेष क्रियायें :-

स्वदेशीय कसरतें, मार्चिग, जिमनास्टिक, पिरामिड, बड़े खेलों के आधार भूत तथ्ये, ट्रैक तथा फील्ड ऐथेलेटिक्स, द्वन्द, ताल वद्ध व्यायाम, क्षमता अभियान।

(४) मनोरंजक क्रियायें :-

यह योजना का सबसे मन भावना भाग है। इसकों कोई भी क्रिया हो सकती हैं। पूर्ण समय का आधा भाग इसके लिये प्रयोग करना चाहिये।

(५) जमा होना तथा विसर्जन :-

प्रत्येक पाठ के लिये विधिवत एकत्रित होना तथा विर्संजन आवश्यक है। जिस प्रकार की भी क्रिया हो रही हो अन्त में विद्यार्थियों का एक स्थान पर एकत्रित होना तथा विधिवत विसर्जन आवश्यक होगा। इस के लिये किसी प्रकार से विर्सजित किया जा सकता है।

## व्यायाम का वर्गीकरण

### Classification of Exercises

व्यायाम का वर्गीकरण उन अंगो के आधार पर होता है जिस अंग का व्यायाम उन के द्वारा होता हैं।

जैसे हाथ, कमर, पैर, पेट, बगल इत्यादि। इस प्रकार का वर्गीकरण व्यायाम का साधारण वर्गीकरण है।

व्यायाय का विशेष वर्गीकरण आयु के आधार पर होगा। आयु की विशेष रुचि, शरीर रचना तथा शरीर क्रिया आवश्यकताओं के अनुसार प्रत्येक वर्ग के लिये व्यायाम का वर्गीकरण किया जायेगा।

क्रियाओं के विशेश रूप के अनुसार भी व्यायाम का वर्गीकरण होता है। जैसे ऐथेलेटिक्स में स्टॉट या आरम्भ के लिये विशेष व्यायाम होंगे। हर्मर के लिये विशेष व्यायाम होंगे। हर्डल के लिये विशेष व्यायाम होगा।

बास्केट बाल में जो गतियां होती है उन्ही के आधार पर विशेष व्यायाम निर्माण किया जायेगा।

## प्रगति

### Progression

अल्प कठिन से अधिक कठिन, सरल से जटिल अवस्था के पहुंचने को प्रगति कहते हैं। प्रगति प्रत्येक विषय में होती है।

(१) प्रत्येक व्यायाम में प्रगति :-

प्रयप्ति अभ्यास के पश्चात प्रत्येक विद्यार्थी को व्यायाम में प्रगति दिखानी चाहिये। प्रत्येक व्यायाम में कुछ न कुछ क्रम तथा भाग होते हैं जिन पर ध्यान देना चाहिये।

जैसे जैसे अभ्यास होता जाये प्रतिक्रिया में सही होना तथा शीघ्रता से होना चाहिये। व्यायाम जितना अधिक सीख लिया जाये उतना ही फुर्ती तथा शक्ति से होना चाहिये। घंटे का अधिक समय नये व्यायाम के सीखने में प्रयोग नहीं करना चाहिये। जो सीख लिये

गये हैं उनमें क्षमता प्राप्त करने की चेष्टा होनी चाहिये। जैसे ही क्षमता प्राप्त हो, नया व्यायाम सीखना चाहिये।

एक पाठ से दूसरे पाठ में प्रगति :-

एक पाठ से दूसरे पाठ मे बहुत अन्तर नहीं होना चाहिये। न एक पाठ से उसके बाद के पाठ में बहुत परिवर्तन होना चाहिये। जो आसान अभ्यास एक पाठ में हो उसके बाद के पाठ में उसी प्रकार की एक नयी क्रिया देना चाहिये जिससे बालकों की रुचि बनी रहे। पिछली क्रियाओं पर ही नयी क्रियाये आधारित होना चाहिये। इसी क्रम से पाठ सरल से जटिल होता चला जायेगा।

प्रत्येक पाठ में कुछ न कुछ नयी वस्तु होनी चाहिये या क्रिया के रूप में उन्नति होना चाहिये। एक ही क्रिया को सुचारु रूप तथा सुगमता से करने को प्रगति कह सकते है। जो कुछ सीख लिया गया है उसकी पुनरावृत्ति समय पर होनी चाहिये।

जटिल क्रियाओं के सीखने के पहिले सरल क्रियाओं में क्षमता होनी चाहिये।

पहिले एक एक क्रिया सीखना चाहिये तब उन्हें सम्मिलित अवस्था में आसानी से सीखा जा सकता है।

## शारीरिक शिक्षा में ताल की महत्वता

## Importance of Rhythm in Physical Education Activities

संसार की सभी वस्तुयें किसी न किसी ताल से कार्य करती है। विश्व में चाँद, सूर्य, तारे मौसम एक ताल से कार्य करते हैं।

प्रत्येक चीज में एक न एक ताल है। जो ताल विरुद्ध काम होगा वह सही नहीं होगा।

इसी नियम के सत्यता को लेते हुये शारीरिक शिक्षा में ताल की बड़ी महत्वता है।

बालक ताल बद्ध क्रिया को प्रसन्नता से करते हैं तथा उन्हे शारीरिक शिक्षा तथा साधारण शिक्षा देने का यही एक विशेष माध्ययम है। बालक ताल बद्ध क्रिया में रुचि लेते है तथा सरलता से सीख लेते हैं।

व्यायाम से शरीर को उस समय तक लाभ नहीं हो सकता जब तक वह ताल से न किया जाये। शरीर में शारीरिक क्रिया लाभ उस समय तक नहीं हो सकता जब तक कि मांस पेशियों में तनाव तथा ढीलापन किसी दिये ताल क्रम से न किया जाये। जब मांस पेशियों पर तनाव तथा ढीलापन किसी ताल क्रम से कुछ समय तक किया जाता है तभी उपयुक्त लाभ होता है।

प्रत्येक क्रिया की अपनी ताल होती है। साधारणतः नियम यह है कि ताल अधिक तेज या अधिक कम न हो। मध्य ताल साधारणतः व्यवहार में आता है।

यह आवश्यक है कि अच्छा परिणाम के लिये पाठ के प्रत्येक व्यायाम ताल से हो, केवल सतुलन के व्यायाम को छोड़ कर।

प्रत्येक व्यक्ति का सतुलन भिन्न-भिन्न होता है इस लिये एक साथ ताल से नहीं किया जाता। सामूहिक सतुलन के कार्य के लिए समय इतना दिया जाता है कि अपने समय मे करते हुये भी सभी एक साथ कर लेते हैं। आदेश खींच कर लम्बे रूप में दिया जाता है।

भारतीय शारीरिक शिक्षा प्रणाली में प्राय: सभी कार्य उत्तम ताल में किये जाते हैं।

शारीरिक शिक्षा पाठ में कार्य ताल से उसी समय कराया जाता है जब विद्यार्थी कार्य को भली भांति सीख लेते हैं। इस समय विशेष ध्यान कार्य के ताल पर दिया जाता है न कि सुधार पर।

ताल में एक साथ कार्य करने का अर्थ सहयोग है जो एक श्रेष्ठ प्रजातांत्रिक गुण हैं और अच्छे नागरिकता के लिए तथा समाज विकास के लिये अत्यन्त आवश्यक है। शारीरिक शिक्षा के ताल बद्ध क्रिया के सामूहिक रूप में यह गुण भली-भांति सिखाया जा सकता है।

---

[७२]

# ग्राम, नगर, तथा उद्योगिक मनोरंजन के पक्ष

## ASPECTS OF RURAL, URBAN AND INDUSTRIAL RECREATION

ग्राम में मनोरन्जन :–

भारतवर्ष ऐसे देश के लिए जहाँ २/३ लोग गावों में रहते हैं वहां गाँवों की दशा राष्ट्र निर्माण में बहुत ही महत्वपूर्ण है। जैसे दूसरी चीजों में वैसे ही शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन में भी गांव पीछे रह गये हैं।

ग्रामीणों के जीवन दर्शन एक अनोखी चीज है। प्रत्येक वस्तु को दैविक देन के रूप में मान लेते है अतएव अपनी गिरी हुयी दशा भी भगवान की कृपा ही समझते हैं और उसी में सन्तुष्ट होने की चेष्टा करते हैं।

ग्रामीणों के लिए मनोरंजन का जीवन प्रायः शून्य है। उनके लिए मनोरन्जन के उपयुक्त साधन नहीं हैं। गावों में लोग प्रायः प्रातः काल से गोधुली तक परिश्रम करते और अपने निवास स्थान पर पहुंच कर खाने पीने तथा विश्राम करने के सिवा और कुछ नहीं।

परिश्रम से विश्राम पाने के लिए बहुत से लोग मादक वस्तुओं का व्यवहार करते है।

ग्रामीणों के लिए एक मनोरन्जन का साधन वार्तालाप है जो प्रायः चौपाल में आपस में बैठकर होती है। ये साधारण वार्तालाप घरेलू बातों, मौसम, खेत, पशु सम्बन्धी, शादी ब्याह दूसरे की निन्दा आदि के रूप में होता है। ये शैक्षणिक स्तर से बहुत गिरा हुआ होगा क्योंकि उनके विचार विस्तृत तथा गहरे नहीं होते। साधारणतः जो आयु में सबसे बड़ा होता है उसी की बात सच समझी जाती और मान्यता प्राप्त भी करती है।

स्वास्थ्य शिक्षा, शारीरिक शिक्षा तथा मनोरन्जन का प्रारम्भिक ज्ञान भी उन्हे नहीं होता। यह अत्याधिक आवश्यक है कि जीवन विकास की ये उचित तथा आवश्यक सुविधायें उनके लिए उपलब्ध की जायें।

शैशवकाल से लेकर प्रौढ़ अवस्था तक प्रत्येक वर्ग के लिये उचित मनोरन्जन साधन होना आवश्यक है। स्त्रियों के लिए परिवार तथा परिश्रम छोड़कर जीवन में कुछ है ही नहीं। वर्ष में एक या दो मेले तथा त्यौहार इत्यादि जो आते हैं वही उनके आनन्द का अवसर होता है और इनके लिए बहुत ही उत्सुक रहती है तथा अपनी रीति से बड़ी बड़ी तैयारियां करती हैं।

ग्रामीणों के शारीरिक परिश्रम में कमी नहीं होती किन्तु इस कठिन परिश्रम और शरीर विकास के परिश्रम जो शारीरिक शिक्षा द्वारा दी जाती है उसमें अन्तर है। ग्रामीण अपने कार्य को कर्त्तव्य या काम के रूप में करते हैं इसलिए यह कर्त्तव्य अपने आप तथा

प्रसन्नता प्रदान करने वाली नहीं होती। वह एक बोझ है जिसे उठाना आवश्यक है।

परिश्रम से विश्राम के लिए, मन बहलाव के लिए और मानसिक विकास के लिए किसी न किसी प्रकार का उचित मनोरन्जन ग्रामीणों के लिए परम आवश्यक है।

ग्रामीणों की दूसरी समस्या खाली समय का सदुपयोग है। इनका काम मौसम के अनुसार चलता है। कभी कभी बहुत अधिक काम होता है, कभी आवश्यकता से अधिक अवसर होता है। इस अवसर का उपयुक्त प्रयोग ये कर नहीं पाते। इन बिचारों को पता भी नहीं कि यह खाली समय का सदुपयोग कैसे हो।

अशैक्षिकता इनकी सबसे बड़ी कमी है। शारीरिक शिक्षा का यह कर्तव्य है कि मनोरन्जन के साधन तथा प्रकार उनके लिए उपलब्ध किये जायें। जब तक गांवों की उन्नति नहीं होती, भारत वर्ष सही उन्नति नहीं कर सकेगा। भारतवर्ष विशेषतः गांव ही है।

नगर का मनोरन्जन तथा शिल्पकारी :—

नगर में उद्योग धंधा तथा शिल्पकारी के बढ़ने से लोग उसी ओर आकर्षित होते हैं। गावों की अपेक्षा नगर का जीवन कुछ अधिक आकर्षित होता है अतएव प्रत्येक की चेष्टा यही होती है कि नगर में ही निवास हो। सामाजिक कारण होते हुए भी आर्थिक कारण विशेष है। मनुष्यों का यह विचार है कि धन उपार्जन के लिए नगर ही उत्तम है। अतएव योग्य व्यक्ति जिन्हे उत्साह तथा फुर्ती है यहां आ जाते हैं। यही एक कारण है कि गांव ऐसे योग्य व्यक्तियों से वंचित हो जाता है और उसकी उन्नति नहीं हो पाती।

साधारण विचार यह होता है कि गांव नगर से स्वस्थकर है तो भी गांवों में शहरों की अपेक्षा अधिक बीमारियां होती हैं।

इस प्रकार के नगर में जन समूह के बढ़ जाने से कितनी आवश्यकतायें बढ़ जाती हैं और इन आवश्यकताओं के हल करने में शारीरिक शिक्षा का एक बहुत बड़ा हाथ है।

इस प्रकार की भीड़ जो नगर में हो जाती है उसके कारण निवास स्थान का अभाव, खेलने के स्थान की कमी, प्राकृतिक रीति के मनोरन्जन की कमी इत्यादि के कारण, शारीरिक शिक्षा का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि ऐसे कौशल तथा मनोरन्जन में रुचि बढ़ायें जिससे बड़े बड़े मांस पेशियों का काम ब्राह्य अवस्था में तेजी तथा शक्ति के साथ हो सके।

नगर की ऐसी अवस्था के कारण बहुधा साधन प्राप्त भी नहीं होते क्यों कि बहुत से लोग हैं जिन्हे कौशल आता है तथा मनोरन्जन की रुचि भी है किन्तु साधन उपलब्ध नहीं।

इन सभों का परिणाम यह होता है कि बालक जन्म से ही निर्बल होते हैं तथा उनमें न कौशल होता न मनोरन्जन की रुचि ही रहती है और इस कारण जो खाली समय उनके पास होता है उसका सदुपयोग नहीं कर पाते।

यह शिक्षा की समस्या है कि यह आविष्कार हो कि युवकों का अनुभव कैसा हो जिससे वे आदत, गुण, कौशल, रुचि आदि का विकास हो जिसकी समाज को आवश्यकता है और फिर ऐसे साधन उपलब्ध करें जिसके द्वारा इन गुणों का विकास सम्भव हो सके।

जो जीवन को एक प्रगति की दृष्टि से देखते हैं उनके लिये

कोई और दूसरा मार्ग है ही नहीं। यह वह शक्ति है जो हर एक क्षण नयी तथा उतम जीवन की रीति का आविष्कार करती तथा वह उन सम्भावनाओं को जो मनुष्य के जीवन तथा वातावरण में व्यापक है अर्जित करती है। मनुष्यों की आवश्यकता, शक्ति, स्वस्थ-कर रीति तथा खाली समय का सदुपयोग, क्रियावाही गतिवाही कौशल तथा प्रजातांत्रिक आर्दशों के लिए अत्यन्त अधिक है। ऐसी आवश्यकतायें मनुष्य के आन्तरिक प्रकृति प्रतिबिम्बित करती है और सामाजिक समस्याओं में जहां वह अपने को पाता है इनकी बढ़ती और हो जाती है।

शिल्पकारी के कारण अधिकतर काम बैठ के करने की हो गई है। ९० फी सदी लोग बैठ कर व्यवसाय में लगे हुए हैं जिनके पूर्ण समय कार्य करने के बाद कदाचित एक बून्द पसीना भी न आता हो। यह बैठ कर जीवन व्यतीत करने की हानि तथा खतरा परिवार स्कूल तथा व्यवसाय सभी में पायी जाती है।

आधुनिक शिल्पकारी तथा व्यवसाय में विशेषज्ञता पर अधिक ध्यान दिया जाता है। किसी काम के लिए एक या दो विशेषज्ञ होते हैं। इसके उपरान्त मशीन से काम करने के कारण व्यक्तियों की सहायता की आवश्यकता नहीं होती। विशेषज्ञता तथा मशीन के साथ काम करने के कारण व्यक्तियों को पारस्परिक उत्तेजना तथा प्रतिक्रिया का अवसर नहीं मिल पाता। वह मूक यन्त्र के साथ अकेलापन महसूस करने लगता है और कठिन कार्य की जो चतुरता तथा सरलता से की जाती है उसमें भी व्यक्ति थकान का अनुभव करने लगता है। ऐसी अवस्था में मानसिक तथा शारीरिक विकार

उत्पन्न होते हैं। इनके निवारण का एक श्रेष्ठ उपाय उचित मनोरन्जन के द्वारा है जहां एकत्रित भावनाओं का प्रवाह तथा थकान से विश्राम तथा चिन्ता से प्रसन्नचित्त अनुभव प्राप्त हो सके।

नगर में भी मनोरन्जन के सही साधन नहीं हैं। प्रायः नगरों में व्यापारिक मनोरन्जन उपलब्ध है जहां व्यक्ति विकास तथा शिक्षा का अधिक ध्यान न देकर आर्थिक लाभ पर विशेष ध्यान दिया जाता है। ऐसे मनोरन्जन तथा मन बहलाव के कारण उनके बड़े मांसपेशियों में कोई प्रभाव नहीं होता और शारीरिक कार्यों के सफलता प्राप्ति के कारण जो संतोष मिलना चाहिए नहीं मिलता।

शिल्पकारिक मनोरन्जन के अनेकों रूप हो सकते हैं। मन बहलाव तथा मनोरन्जन का ध्यान रखते हुए यह उपयुक्त है कि इन पर सांस्कृतिक मान्यता प्राप्त हो। जैसे बड़े बड़े शहरों में मनोरन्जन के लिए नाइट क्लब होते है जहां बहुत ही निम्न स्तर के मनोरन्जन प्राप्त होते हैं और वास्तव में नैतिक दृष्टि से ऐसे क्लबों के होने से न होना अच्छा है। क्योंकि विशेषतः ऐसे स्थानों में समय की बरबादी, धन की बरबादी तथा जीवन की बरबादी अधिकता से होती है। जहां मदिरा पान तथा भोग विलास मनोरन्जन के लिए होंगे उसमें कुछ समय के लिए कदाचित् मनोरन्जन मालूम हो लेकिन वह वास्तविक मनोरन्जन जिसमें मानसिक, शारीरिक तथा नैतिक विकास ही नहीं होगा।

शिल्पकारिक अवस्था में जहां व्यक्तियों को भिन्न भिन्न समय पर काम करना पड़ता है वहाँ उनके लिये उसके समय के अनुसार मनोरन्जन का प्रबन्ध होना चाहिए।

शारीरिक शिक्षा में शिल्पकारी के बढ़ने से जो समस्यायें आ गयी हैं उनका सही हल करना होगा। जहां भी हो जैसे भी हो, मनुष्य की स्वास्थ्य अवस्था सर्वदा आवश्यक होगी तथा शारीरिक स्वास्थ्य के बिना किसी प्रकार की उन्नति नहीं हो सकती। शारीरिक स्वास्थ्य का अर्थ है मानसिक, शारीरिक तथा आत्मिक स्वास्थ्य और इसके प्राप्ति में सही मनोरन्जन सबसे अधिक सहायक है, चाहे वह गांव में हो या नगर के शिल्पकारिक अवस्था में।

---

[७३]

# परीक्षा, माप तथा वर्गीकरण

## TESTS MEASUREMENTS & CLASSIFICATION

जब दूसरे विषयों की तरह शिक्षा भी एक व्यवहारिक विज्ञान समझा गया है तो तत्व जो इसकी विशेषता है वे साफ साफ झलकती हैं। बहुत सी प्रणालियाँ जो शिक्षा में अपनायीं गई हैं उनका नियमित व्यवस्था, यथाक्रम वर्णन तथा यन्त्र सम यर्थातता की जा सकती है। वर्गीकरण के लिए मान्य परीक्षा तथा उन्नति के माप के लिये परीक्षा ने इनका उपयोग सही परिणाम के अंकित करने के कारण बढ़ा दिया है। सम्भव है कि इस माप में जो स्वयं में अन्त है किन्तु पूर्ण नहीं इस तरह लग्न हो सकते, कि अवस्था की आत्मिक तत्व की ओर पूर्ण रूप से ध्यान न दिया जाये। इन व्यक्तिगत कार्यों के करने तथा माप में उसकी समाजिक महत्वता भुला देने की सम्भावना है। किसी मान्य स्तर की प्राप्ति में सम्भव है कि शिक्षा की योग्यता का स्तर जो आदेश पर निर्धारित है लुप्त हो जायें। माप जो आंकड़ों में अंकित है ओर जो देखे जा सकते हैं वे अनदेखी चीजों को जो वास्तविक होती हैं उनके महत्व को कम कर देती हैं।

बालकों के प्रत्येक प्रकार के विकास महत्वपूर्ण हैं और शिक्षक उनकी उन्नति आदतों के अर्जित करने में, रुचि के विकास में, भाव-

नाओं के परिवर्तन में तथा उन उन्नति में जो देखे जा सकते हैं जानना चाहिए। इसका अर्थ है कि वैसा माप प्रयोग में लाया जाय की बाहर की चीजों का मूल्यांकन करते हुए आन्तरिक विशेषताओं तथा चरित्र का भी मूल्यांकन विशेषज्ञों के द्वारा की जाये जिससे ये व्यक्ति के विकास में सहायक हों। परीक्षा अपने में अन्त नहीं। वे केवल माध्यम है जिनके द्वारा बालकों के शिक्षा कार्य में उन्नति की जा सकती है। परीक्षा तथा उसके माप में महत्वपूर्ण प्राप्ति हो सकती है किन्तु सर्वश्रेष्ठ प्रश्न यह उठता है कि व्यक्ति का इस परीक्षा तथा माप के बाद क्या होगा ?

परीक्षा के द्वारा कार्य में व्यक्तिगत रुचि की उन्नति, योग्यता के विकास तथा सही साधनों के चुनाव के द्वारा शिक्षा के वैज्ञानिक प्रणाली पर जोर दिया जाता है। हमें क्रियाग्राही कौशल में व्यक्तिगत सफल स्तर की प्राप्ति के विषय बहुत कुछ जानना है तथा उस कार्यक्रम को भी जो न केवल संतोष जनक बढ़ाव उत्पन्न करेगा, किन्तु अत्यन्त संतोष जनक व्यक्तिगत अनुभव तथा उच्चतम स्वीकृत सामाजिक परिणाम प्रदान करेगा।

परीक्षा तथा माप के उद्देश्य :-

(१) व्यक्तिगत आवश्यकता के अनुसार कार्यक्रम बनाना तथा उनको जानना।

(२) व्यक्तिगत विकास का भिन्न भिन्न कार्यों में माप।

(३) शिक्षा का परिणाम नियुक्त करना।

(४) शिक्षा प्रणाली में सहायक होना।

(५) वर्तमान परिणाम के आधार पर भविष्य की रूप रेखा

(६) एक साधारण स्तर की नियुक्ति ।

(७) माप के अनुसार वर्गीकरण ।

(८) रुचि तथा प्रेरणा उत्पन्न करना ।

(९) अविष्कार के लिए सामग्री ।

परीक्षा तथा माप की विशेषता :-

कहा जा चुका है कि शारीरिक शिक्षा वैज्ञानिक आधार पर निर्भर है तथा व्यवहारिक विज्ञान होने के कारण परीक्षा तथा माप सम्भव हैं। इसलिए इनकी विशेषता वैज्ञानिक ही होगी।

(१) परीक्षा तथा माप व्यवस्था अनुकूल हो :-

जो वस्तु व्यवस्थित हो उसी की परीक्षा तथा माप हो। इसकी जांच इसके परिणाम के द्वारा जो दूसरी जगह व्यवहार में आयेगी सही या गलत समझा जायेगा।

(२) विश्वास योग्य हो :-

परीक्षा तथा माप ऐसे हों जो एक दी हुई अवस्था में सदैव ठीक आयें। विश्वास योग्य होने पर ही उस पर निर्भर किया जा सकता है। ऐसी अवस्था में ही वह किसी आधार का कार्य कर सकेगा।

(३) उसका परिणाम देखा जा सके तथा उसके प्रमाण हों।

(४) सरल हों ।

(५) प्रयोग के द्वारा एक स्तर नियुक्त हो जो नियम का आधार हो।

शारीरिक शिक्षा में भिन्न भिन्न प्रकार के परीक्षा हैं :

(१) डाक्टरी निरीक्षण ।

(२) शारीरिक क्षमता तथा योग्यता ।

(३) शारी रक शिक्षा विषयों में योग्यता परीक्षा ।

शारीरिक शिक्षा परीक्षा तथा माप के तत्व :-

शक्ति, वेग, लचीलापन, सहने की शक्ति, सामतुल्य, शोभायुक्त सम्पादन ।

अभी तक भारतवर्ष में इस विषय में प्रगति नही हुई है और न कोई ऐसा शारीरिक परिक्षण या माप है जो सम्पूर्ण भारतवर्ष के लिए एक सा हो । कहीं कहीं पर इस विषय में कुछ काम हुआ है । शारीरिक क्षमता अभियान जो केन्द्रीय सरकार की ओर से चलाया गया है केवल एक ऐसी परीक्षा है जो समस्त भारतवर्ष के लिए एक है । किसी विशेष स्थान के लिए वहाँ की जलवायु या भौगोलिक स्थिति तथा लोक रीति तथा संस्कृति के आधार पर परीक्षा के तत्वों की सहायता से शारीरिक परीक्षा तथा माप की जा सकती है ।

क्रिष्चियन कालेज आफ फिज़ीकल एज्युकेशन में शारीरिक परीक्षण तथा माप के लिए निम्न लिखित आइटम है ।

एजीलिटि रन Agility run
वरटिकल जम्प Vertical Jump
पूश अप Push up
चिनिंग Chinning
र्कलस Curls

एथेलेटिक्स के पांच आइटम Pentathlon तथा दस आइटम Decathlon भी परीक्षा के रूप में किये जा सकते हैं ।

एक अच्छे स्तर के शारीरिक परीक्षा तथा माप में निम्नलिखित का ध्यान देना आवश्यक है ।

(१) दौड़ना, कूदना, चढ़ना तथा फेंकना ये प्राकृतिक कार्य परीक्षा में होना आवश्यक है।

(२) तेज गति, लचीलापन, शक्ति तथा सहने की शक्ति में परीक्षा।

(३) औसत योग्यता का मालूम करना जिससे परीक्षा न बहुत कठिन न बहुत आसान हो जाये। परीक्षा ऐसी होना चाहिये जो व्यक्ति के शारीरिक गुणों को आजमाने क लिये ललकारे तथा यह एक यथाविधि व्यायाम करने की आदत डालने में सहायक हो।

(४) परीक्षा में भाग लेने वालों को इसका पर्याप्त पूर्व ज्ञान हो जिससे वे अपनी तैयारी कर सकें।

(५) माप में पास या फेल बताये जा सकते हैं या किसी तालिका के अनुसार कार्य के लिये अंक दिये जा सकते हैं जिसके अनुसार वर्ग निर्धारित किया जायेगा।

## **वर्गी करण** Classification

अच्छी शिक्षा के लिए आवश्यक हो जाता है कि एक योग्यता के बालक एक स्थान पर एक साथ सिखाये जायें। एक योग्यता के व्यक्तियों को एक साथ लाने को वर्गीकरण कहते हैं।

वर्गीकरण के लाभ :-

(१) व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

(२) प्रतियोगिता अच्छी तथा निष्पक्ष होती है।

(३) व्यक्तिगत रुचि बनी रहती है।

(४) कार्यक्रम में आसानी होती है।

वर्गीकरण के लिये किसी एक तत्व को आधार बनाने में सफलता नहीं होगी।

एक उत्तम वर्गीकरण का सिद्धान्त जिसे मैकलोयस क्लासिफी-केशन Mc-Cloy's Classfication कहते हैं जो आयु, लम्बाई तथा वजन पर निर्धारित है दिया जाता है।

कालेज के विद्यार्थियों के लिये इन्डेक्स

=(६×लम्बाई)=वजन

हाई स्कूल के के लिये इन्डेक्स

=(२०×आयु)+(६+ऊंचाई)+वजन

हायर ऐलिमेन्ट्री स्कूल इन्डेक्स

=(१०× आयु)+वजन

एक दूसरी महत्व पूर्ण वर्गीकरण प्रणाली जिसे निलसन तथा कोजन क्लासीफिकेशन इन्डेक्सNeilson and cozen classification Index कहते हैं।

इन्डेक्स=(२०×आयु)+(५.५५×लम्बाई)+वजन।

वर्गीकरण के सिद्धान्त नीचे दिये हुये हैं।

(१) आयु×वजन×लम्बाई।
(२) व÷ल×आ।
(३) ल×आ।
(४) ल×व — ल=लम्बाई इन्च में
(५) आ×व — व=वजन पौन्ड में
(६) व÷ल — अ=आयु महीनों में
(७) ल÷अ
(८) व÷अ

किसी एक सिद्धान्त के अनुसार इन्डेक्स निकाल लेना चाहिये और उन्हें जितने वर्ग चाहिये उन में वर्गीकरण कर दें।

---

# ट्रैक बनाना

## LAYING OUT OF AN OVAL RUNNING TRACK

ट्रैक बनाने के समय निम्नलिखित पर ध्यान देना आवश्यक है।

दर्शकों की आवश्यकतायें तथा सुगमता,

भाग लेने वालों की आवश्यकतायें तथा सुगमता,

ज़मीन की प्रकृति,

प्रतियोगिता के समय वर्षा,

हवा का बहाव,

सूर्य की किरणें,

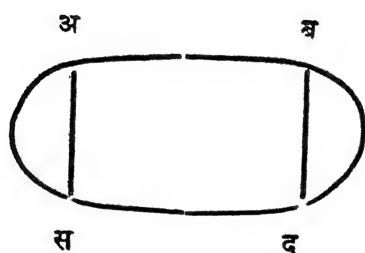
ऐथेलेटिक की दूसरे साधन,

सुरक्षित स्थान,

यातायात के खड़े होने का स्थान,

उपरोक्त के लिये पर्याप्त स्थान स्थित करने के पश्चात ट्रैक के लिये उचित स्थान निकालना है। कितने क्षेत्र की आवश्यकता है वह दिये हुये नियम से बताया जा सकता है।

लम्बाई=ट्रैक का सीधा दौड़+२ ×गोलाई का अर्धव्यास +२ ×लेन (Lanc) की चौड़ाई। चौड़ाई=गोलाई का व्यास +२ ×लेन की चौड़ाई।




## ट्रैक बनाने की प्रणाली

अ ब आधार नियुक्त करना। फिर चतुर्भुज अ, ब द, स बनाना। अ स तथा ब द के कन्द्र से एक अर्ध वृत्त खींचना। इस लकीर के आधार पर चारों ओर बराबर ६ नाली या लेन खीच लेने पर दौड़ने का ट्रैक तैयार हो जायेगा।

दो सौ मीटर से ऊपर के नाप के ट्रैक बन सकते हैं किन्तु स्तर का ट्रैक ४०० मीटर का ट्रैक माना जाता है।

ट्रैक बनाने में इस बात पर ध्यान देना है कि अधिक से अधिक सीधी लम्बाई मिले तथा गोलाई के मोड़ ऐसे हों जो तीव्र न हो क्योंकि उस पर दौड़ने में कठिनाई होगी। इस कारण गोलाई के मोड़ का स्तर नाप ९५' स १२५' तक के बीच में मान लिया गया है।

४०० मीटर ट्रैक में ये सुगमता प्राप्त है। ४०० मिटर ट्रैक का निर्माण;

यदि ट्रैक की लम्बाई अ ब तथा स द ८०·३ मीटर या २६३''५, ३/५'' हो तो मोड़ के ऊपर की दूरी ११९·७ मीटर या ३९२''८ ४/५'' होगी। दोनो अर्धवृत्त तथा दोनो लम्बाई का योग

१,३१२'.४ ४/५" या १,३१२·४००' या ४००, मीटर होगा। क्योंकि एक अर्ध वृत्त पर दौड़ने की दूरी ११९.७ मीटर या ३९२·७३५ फुट है, उस का अर्ध व्यास ३८·१ मीटर या १२५ फुट होगा। इस अर्ध व्यास को दौड़ने की दूरी का अर्ध व्यास कहते हैं।

अर्ध व्यास प्राप्त करने की नियम :-

$$\text{व्यास} = २\pi R \left(\pi = \frac{२२}{७}\right)$$

मान लिया लम्बाई–८०.३ मीटर है तो दोनो सीध की लम्बाई १६०·६ मीटर होगा।

तो अर्ध वृत्त की दूरी ४००—१६०.६=२३९.४ मीटर होगा।

$\therefore$ २३९.४= २×२२/७ × r

$\therefore$ ११९७/५ मी०=२×२२/७× r

$$\therefore r = \frac{११९७ \times ७}{५ \times २ \times २२} = \frac{८३७९}{२२०} = ३८.१ \text{ मी०}$$

$\because$ अर्ध व्यास = ३८. १ मीटर

वास्तविक दौड़ने के लिये अर्ध व्यास लकीर से १ फुट अन्दर नापा जाता है इस लिये अर्ध वृत्त के अर्ध व्यास के वास्तविक चिन्ह लगाने के लिये नाप में १ फुट कम लिया जायेगा अर्थात ३७. ८ मीटर या १. २४ फुट।

नियम के अनुसार ४०० मीटर की दौड़ तक प्रत्येक ऐथेलिट को अपनी नाली या लेन में दौड़ना पड़ता है जिस की चौड़ाई १.२२ या ४" होनी चाहिये।

यह स्पष्ट है कि जो ऐथलिट अन्दर की लकीर के समीप दौड़ता है। उसे उस ऐथलिट से जो बाहर की लेन में दौड़ता है

कम दूरी तय करनी पडती हैं। इस लिये प्रत्येक ऐथेलेटिक को बराबर दौड़ की दूरी सम्भव करने के लिये स्टागैर Staggar किया जाता है।

स्पोर्टस के नियम के अनुसार पहले लेन की दूरी वृत्त से १२ इन्च दूर नापा जाता है किन्तु उसके बाद के लेन उनके अन्दर के लेन से ८ इन्च की दूरी पर नापा जाता है। इसका कारण है कि देखा गया है कि दौड़ने वाले अपने लेन की बायीं लकीर से इसी दूरी पर खड़े होकर एक काल्पनिक लकीर पर दौड़ते हैं।

मान लिया कि एक दौड़ में जिस में एक ही गोलाई है अ, ब, स, क्रमानुसार १, २, तथा ३ लेन में हैं।

अब अ लकीर से १२ इन्च अन्दर रहेगा। ब और स प्रायः ८ इन्च लकीर से अन्दर रहेंगे।

इस लिये अ से ब की दूरी ३'. ८ इन्च होगी।

(पहले लेन की बाकी ३ इन्च + दूसरे लेन की ८ इन्च = ३'.८ इन्च)

यह दूरी उस समय होगी जब लेन ४ इन्च चौड़ी हो। इसी तरह स की दूरी ब से ४ इन्च होगी। अब देखना है कि ब को अ से तथा स को ब से कितनी अधिक दूरी दौड़ना पड़ता है।

मान लिया कि गोलाई की दौड़ने की दूरी का अर्ध व्यास अ ब १, अ ब २ अ ब ३ है और इनकी गोलाई की परिधि प १, प २, प ३ है।

∴ प १ = ग अ ब १ प २ = ग अ ब २, प ३ ग अ ब ३

∴ अ से ब की दौड़ने की अर्द्ध गोलाई की दूरी = प २—प १

= ग ( अ ब २—अ ब १)

= २२/४ × ११/३

= २४२/२१

= ११. ६ २/७ इन्च होगी।

स की ब से अर्ध गोलाई दौड़ने की दूरी।

(अ ब ३—अ ब २) = ४' (लेन में खड़े होने की दूरी)

∴ प ३—प २=π (अ ब ३—अ ब २)
=२२/७×४=८८/७
=१२·६ ६/७ इन्च होगी।

इसी प्रकार ब से स की दूरी,
=१२, ६ ६/७ होगी।

इस नाप के अनुसार अ आरम्भ करने की लकीर पर खड़ा होकर दौड़ेगा। ब उससे ११. ६ २/७ इन्च आगे खड़ा होकर दौड़ेगा और स और उसके बाद के दौड़ने वाले एक दूसरे से १२. ६ ६/७ इन्च की दूरी आगे खड़े होकर दौड़ेंगे।

–इसलिये नियम यह हुआ कि किसी लेन या नाली के स्यगैर निकालने के लिए निम्नलिखित फारमूला प्रयोग किया जायेगा।

π× लेन में दौड़ने वाले की बायें ओर के दौड़ने वाले से दूरी।

ऊपर दी हुई दूरी एक अर्ध गोलाई की है। ट्रैक में दो गोलाई होगी अतएय यह दूरी दुगुनी कर दी जायेगी। इस प्रकार दूसरे और तीसरे लेन की स्टागैर की पूर्ण दूरी २५. १ १/२ इन्च होगा तीसरे लेन के स्टागैर लगाने के लिए दूसरे लेन से यह दूरी नहीं माप की जायेगी किन्तु आरम्भ की लाइन से (Scratch line) से दूसरे तथा तीसरे लेन की स्टागैर योग करके की जायेगी जो २३. इन्च १/२ इन्च + २५", ७, १/२ इन्च = ४८.' २ इन्च होगा।

इस के आगे की स्टागैर का चिन्ह भी इसी इसी तरह नाप कर लगाया जायेगा।

२०० मीटर दौड़ के लिये स्टोगैर आधा होगा।

४×४०० मीटर रिले के लिये पहले लैप के दौड़ में ही केवल स्टागैर होगा। बटान का बदलना पहले लेन में बिना किसी बाधा के अन्त करने के तरतीब के अनुसार होगा।